निवेदन

जैन साहित्य विशाल है। महान् हित साधक है। संसार की दावाग्नि से संतप्त जीवों को शान्ति पहुँचाने वाला है।

परन्तु यह अधिकांश प्राकृत (अर्धमागधी) और संस्कृत में है। जैन साहित्य में प्रवेश करने के वास्ते थोकड़ों का ज्ञान अनिवार्य्य आवश्यक है।

गुजराती साहित्य के सुपरिचित लेखक धीरज भाई ने परिश्रम पूर्वक थोकड़ों का संग्रह किया है। उनका और प्रकाशक महोदय का प्रयत्न स्तुत्य है।

युवाचार्य्य पं० मुनिश्री छगनलालजी म० ने उसका हिन्दी अनुवाद करना उपयोगी समझा। एतदर्थ हमने प्रकाशक महोदय से अनुमति माँगी। उन्होंने सहर्ष अनुमति दी। उनका आभार प्रदर्शन करते हुए आज हम हिन्दी पाठकों के लाभार्थ यह स्तोक-संग्रह प्रकाशित कर रहे हैं। यदि इस से मुमुक्षु भव्य महानुभावों को कुछ लाभ पहुँचा तो हम अपने परिश्रम को सार्थक समझेंगे।

खलचीपुरा निवासी श्रीमान् मगनमलजी सा० कुदृदाल ने इस के संशोधन का परिश्रम उठाया इसलिये उनका आभार मानता हूँ।

मंत्री



विषयानुक्रमणिका



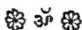
नं०	विषय	पृष्ठ
१	नव तत्व सग्रह	१
२	पच्चीस क्रिया	२३
३	छ काय के बोल	३०
४	पच्चीस बोल	६५
५	सिद्ध द्वार	७७
६	चौबीस दण्डक	८३
७	आठ कर्म की प्रकृति	१२८
८	गतागति द्वार	१४१
९	छ आरों का वर्णन	१५५
१०	दश द्वार के जीव स्थानक	१७२
११	श्री गुण स्थान द्वार	१९३
१२	तेंतीस बोल	२२२
१३	नंदी सूत्र में ५ ज्ञान का विवेचन	२५०
१४	तेंतीस पदवी	२८१
१५	पाच शरीर	२९३
१६	पाच इन्द्रिय	३०१
१७	रूपी अरूपी का बोल	३०७
१८	बडा वासठिया	३१०
१९	बावन बोल	३३५
२०	श्रोता अधिकार	३५१
२१	९८ बोल का अल्प बहुत्व	३६१
२२	पुद्गल परावर्त	३७०
२३	जीवों की मार्गणा का ५६३ प्रश्न	३८१
२४	चार कषाय	४१५

२५ श्वासोश्वास	४१७
२६ अस्वाध्याय	४१६
२७ बत्तीस सूत्रों के नाम	४२१
२८ अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार	४२२
२६ गर्भ विचार	४२८
३० नक्षत्र और विदेश गमन	४४८
३१ पाच देव	४५५
३२ आराधिक विराधिक	४६०
३३ तीन जाग्रिका (जागरण)	४६२
३४ छ काय के भव	४६७
३५ अवधि पद	४६८
३६ धर्म ध्यान	४७१
३७ छ लेश्या	४८२
३८ योनि पद	४८६
३६ आठ आत्मा का विचार	४६१
४० व्यवहार समकित के ६७ बोल	४६५
४१ काय-स्थिती	५०१
४२ योगों का अल्प बहुत्व	५१०
४३ पुद्गलों का अल्प बहुत्व	५१२
४४ आकाश श्रेणी	५१६
४५ बल का अल्प बहुत्व	५१८
४६ समकित के ११ द्वार	५२१
४७ खण्डाजोयणा	५२३
४८ धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण	५३६
४६ मार्गानुसारी के ३५ गुण	५४१
५० श्रावक के २१ गुण	५४३
५१ जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल	५४४

५२ तीर्थंकर गोत्र नाम बांधने के २० कारण	५४६
५३ परम कल्याण के ४० बोल	५४८
५४ तीर्थंकर के ३४ अतिशय	५५२
५५ ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा	५५४
५६ देवोत्पत्ति के १४ बोल	५५७
५७ षद् द्रव्य पर ३१ द्वार	५५८
५८ चार ध्यान	५६८
५६ आराधना पद	५७१
६० विरह पद	५७३
६१ संज्ञा पद	५७५
६२ वेदना पद	५७८
६३ समुद्घात पद	५८१
६४ उपयोग पद	५८६
६५ उपयोग अधिकार	५६०
६६ नियठा	५६२
६७ संजया (सयति)	६०५
६८ अष्ट प्रवचन (५ समिति ३ गुप्ति)	६१६
६६ ५२ अनाचार	६२०
७० आहार के १०६ दोष	६२४
७१ साधु समाचारी	६३४
७२ अहोरात्रि की घड़ियों का यन्त्र	६३७
७३ दिन पहर माप का यन्त्र	६३८
७४ रात्रि पहर देखने (जानने) की विधि	६४०
७५ १४ पूर्व का यन्त्र	६४२
७६ सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल	६४३
७७ १४ राज लोक	
७८ नारकी का नरक वर्णन	
७६ " विस्तार	

८० वाण व्यन्तर विस्तार ६६०
८१ ज्योतिषी देव विस्तार ६६४
८२ वैमानिक देव ६७१
८३ सख्यादि २१ बोल अर्थात् टालाटाला ६७८
८४ प्रमाण नय ६८०
८५ भाषा पद ६८६
८६ आयुष्य के १८०० भागा ७०३
८७ सोपक्रम-निरुपक्रम ७०५
८८ छियमण-वद्धमाण ७०७
८९ सायचया सोयचया ७०८
९० कृत सचय ७०९
९१ द्रव्य (जीवाजीव) ७११
९२ सस्थान द्वार ७१३
९३ सस्थान के भागे ७१५
९४ पैताणु -चाइ ७१६
९५ अवगाहन का अल्प बहुत्व ७२१
९६ चरम पद ७२३
९७ चरमा-चरम ७२७
९८ जीव परिणाम पद ७२९
९९ अजीव परिणाम ७३२
१०० बारह प्रकार का तप ७३४





थोकड़ा संग्रह



(१) श्री नव तत्त्व

विवेकी [1]समदृष्टि जीवों को नव [2]तत्त्व जानना आवश्यक है।

नव तत्त्वों के नाम।

१ जीव[3] तत्त्व, २ अजीव[4] तत्त्व, ३ पुन्य[5] तत्त्व, ४ पाप[6]

---

[1] जीवादि नव तत्त्वों की संशय रहित एवं शुद्ध मान्यता वाले तथा आध्यात्म निर्णय बुद्धि वाले को समदृष्टि कहते हैं।

[2] तत्त्व-सार पदार्थ को तत्त्व कहते हैं जैसे दूध में सार पदार्थ मलाई है। आत्मा का स्वभाव ज्ञानपना है परन्तु मोक्ष जाने में जीवादि नव पदार्थ का यथार्थ जान पना होना सो तत्त्व है।

[3] जिस वस्तु में जानने देखने की शक्ति होवे वह जीव है। यह अरूपी (आकार रहित) है और सदा काल जीवता है।

[4] जो वस्तु ज्ञान रहित है वह अजीव है, अजीव रूपी (आकार वाला) तथा अरूपी दोनों प्रकार का है।

[5] जो आत्मा को (जीव को) पवित्र बनाता है, ऊंची स्थिति पर लाता है सुख की सामग्री मिलाता है वह पुण्य है।

[6] जो जीव को अपवित्र बनाता है, नीची स्थिति में डालता है दुःख की (प्रतिकूल) सामग्री मिलाता है वह पाप है।

तत्त्व, ५ आश्रव[7] तत्त्व, ६ संवर[8] तत्त्व, ७ निर्जरा[9] तत्त्व, ८ बंध[10] तत्त्व, ९ मोक्ष[11] तत्त्व।

प्रथम जीव तत्त्व के लक्षण तथा भेद।

जीव तत्त्व-जो चैतन्य लक्षण, सदा, स-उपयोगी असंख्यात प्रदेशी, सुख दुःख का बोधक, सुख दुःख का वेदक एवं अरूपी हो उसे जीव तत्त्व कहते हैं। जीव का एक भेद है कारण, सब जीवों का चैतन्य लक्षण एक ही प्रकार का है इस लिये संग्रह नय से जीव एक प्रकार का होता है।

जीव के दो भेद-१ त्रस, २ स्थावर, अथवा १ सिद्ध, २ संसारी।

जीव के तीन भेद-१ स्त्री वेद, २ पुरुष वेद, ३ नपुंसक वेद, अथवा १ भव्य सिद्धिया, २ अभव्य सिद्धिया ३ नोभव्य सिद्धिया नोअभव्य सिद्धिया।

---

७ जीव के साथ कर्मों का संयोग होना-जड़ (अजीव) वस्तु का मेल होना आश्रव है।

८ जीव के साथ कर्मों का संयोग रुक जाना, जड़ से मेल नहीं होना संवर है।

९ जीव के साथ अनादि काल से जड़ पदार्थ (कर्म) मिला हुआ है उस जड़ पदार्थ-कर्म-का थोड़ा २ दूर होना निर्जरा है।

१० जीव के साथ जड़ वस्तु-कर्म-का संयोग होने के बाद दोनों का (लोह अग्नि वत्) एक मेक हो जाना बन्ध है।

११ जीव का कर्मों से अलग होजाना-पूरा छुटकारा होना मोक्ष है।

जीव के चार भेद–१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३मनुष्य, ४ देव, अथवा १ चक्षु दर्शनी, २ अचक्षु दर्शनी, ३ अवधि दर्शनी, ४ केवल दर्शनी।

जीव के पांच भेद–१ एकेन्द्रिय, २बेन्द्रिय, ३तेन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५पचेन्द्रिय, अथवा १ संयोगी, २ मन योगी, ३ वचन योगी, ४ काय योगी, ५ अयोगी।

जीव के छः भेद–१ पृथ्वी काय, २ अपकाय, ३तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ त्रस काय, अथवा १ सकषायी, २ क्रोध कषायी, ३ मान कषायी, ४ माया कषायी, ५ लोभ कषायी, ६ अकषायी।

जीव के सात भेद–१ नारकी, २ तिर्यञ्च, ३ तिर्यञ्चाणी, ४ मनुष्य, ५ मनुष्याणी ६ देव, ७ देवागना।

जीव के आठ भेद–१ सलेश्यी, २ कृष्ण लेश्यी, ३ नील लेश्यी, ४ कापोत लेश्यी, ५ तेजो लेश्यी, ६ पद्म लेश्यी, ७ शुक्ल लेश्यी, ८ अलेश्यी।

जीव के नव भेद–१ पृथ्वी काय, २ अप काय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ बेन्द्रिय, ७ तेन्द्रिय, ८ चौरिन्द्रिय, ९ पञ्चेन्द्रिय।

जीव के दश भेद–१ एकेन्द्रिय, २ बेइन्द्रिय, ३ त्री इन्द्रिय, ४ चौइन्द्रिय, ५ पञ्चेन्द्रिय, इन पाँचों के अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये दश।

जीव के इग्यारे भेद–१ एकेन्द्रिय,

३ त्री-इन्द्रिय, ४ चौरिन्द्रिय, ५ नारकी, ६ तिर्यञ्च, ७ मनुष्य, ८ भवनपति, ९ वाणव्यन्तर १० ज्योतिषी, ११ वैमानिक ।

जीव के बारह भेद—१ पृथ्वी काय, २ अप काय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ५ वनस्पति काय, ६ त्रस काय, इन छः का अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये १२ ।

जीव के तेरह भेद—१ कृष्ण लेश्यी, २ नील लेश्यी, ३ कापोत लेश्यी, ४ तेजो लेश्यी, ५ पद्म लेश्यी, ६ शुक्ल लेश्यी, इन छः का अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये बारह और १ अलेश्यी एवं १३ ।

जीव के चौदह भेद—१ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त, २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता, ३ बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता, ४ बादर एकेन्द्रिय का पर्याप्ता, ५ बेइन्द्रिय का अपर्याप्ता, ६ बेइन्द्रिय का पर्याप्ता, ७ त्री-इन्द्रिय का अपर्याप्ता, ८ त्री-इन्द्रिय का पर्याप्ता, ९ चौरिन्द्रिय का अपर्याप्ता, १० चौरिन्द्रिय का पर्याप्ता, ११ असञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय का अपर्याप्ता, १२ असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्ता, १३ संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का अपर्याप्ता, १४ संज्ञी पञ्चेन्द्रिय का पर्याप्ता ।

विस्तार नय से जीव के ५६३ भेदः—

१ नारकी के चौदह भेद, २ तिर्यञ्च के अड़तालीस,

३ मनुष्य के तीन सो तीन, और ४ देवता के एकसो अठाणु।

नारकी के भेदः-१ घम्मा, २ वंसा ३ सीला, ४ अंजना ५ रिष्टा, ६ मघा, और ७ माघवती, इन सातों नरकों में रहने वाले (नेरियों) जीवों के अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं १४ भेद।

तिर्यञ्च के ४८ भेदः- १ पृथ्वी काय, २ अपकाय, ३ तेजस्काय, ४ वायु काय, ये चार सूक्ष्म और चार बादर (स्थूल) एवं ८ इन आठ के अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १६।

वनस्पति के छः भेदः-१ सूक्ष्म, २ प्रत्येक, और ३ साधारण इन तीन के अपर्याप्ता व पर्याप्ता ये ६ मिल कर २२ भेद, १ बेइन्द्रिय, २ त्री इन्द्रिय ३ चौरिन्द्रिय इन ३ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ये छः मिलकर २८।

तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय के २० भेदः-१ जलचर, २ स्थलचर, ३ उरपर, ४ भुजपर, ५ खेचर। ये पाँच गर्भज और पाँच संमूर्छिम एवं १० इन १० के अपर्याप्ता और पर्याप्ता। ये २० मिल कर तिर्यञ्च के कुल (१६+६+६+२०) ४८ भेद हुवे।

मनुष्य के ३०३ भेदः-१५ कर्मभूमि के मनुष्य, ३० अकर्म भूमि के और ५६ अंतर द्वीप के एवं १०१ चेत्र के गर्भज मनुष्य का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एवं २०२ औ

१०१ क्षेत्र के संमूर्छिम मनुष्य (चौदह स्थानोत्पन्न) का अपर्याप्ता । इस प्रकार मनुष्य के ३०३ भेद हुवे ।

देवता के भेदः-१० असुर कुमारादिक और१५पर-माधर्मी एव २५ भेद भवनपति के, १६ प्रकार के पिशाचादि देव व १० प्रकार के जृभिका एव २६ भेद वाणव्यन्तर के, ज्योतिषी देव के १० भेद-५ चर ज्योतिषी और ५ अचर (स्थिर)ज्योतिषी। तीन किल्विषी १२ देव लोक, ९ लोका-न्तिक, ९ ग्रैवेयक (ग्रीवेक) ५ अनुत्तर विमान । इन ९९ (१०+१५+१६+१०+१०+३+१२+९+९+५) जाति के देवों का अपर्याप्ता व पर्याप्ता एव देवता के १९८ भेद जानना ।

एव सब मिलाकर ५६३ भेद जीव तत्त्व के जानना इन जीव को जानकर इनकी दया पालनी चाहिये जिससे इस भव में व पर भव में परम सुख की प्राप्ति हो ॥

॥ इति श्री जीव तत्त्व ॥

(२) अजीव तत्त्व के लक्षण तथा भेद ।

अजीव तत्त्वः-जो जड़ लक्षण,चैतन्य रहित, वर्णा-दिक रुप सहित तथा रहित, सुख दुःख को नहीं वेदने वाला हो उसे अजीव तत्त्व कहते हैं ।

अजीव के १४ भेद-१ धर्मास्तिकाय का स्कंध,

२ उसका देश, ३ तथा उसका प्रदेश, ४ अधर्मास्तिकाय का स्कंध, ५ देश तथा ६ प्रदेश, ७ आकास्ति काय का स्कंध, ८ देश तथा ६ प्रदेश, १० काल ये १० भेद अरुपी अजीव के, १ पुद्गलास्ति काय का स्कंध, २ देश तथा ३ प्रदेश-तीन तो ये और चौथा परमाणु पुद्गल एव चार भेद रुपी अजीव के मिला कर अजीव के १४ भेद हुये।

विस्तार नय से अजीव के ५६० भेद-

३० भेद अरुपी अजीव के-१ धर्मास्ति काय, द्रव्य से एक, २ क्षेत्र से लोक प्रमाण, ३ काल से आदि अत रहित, ४ भाव से अरुपी, ५ गुण से चलन सहाय। ६ अधर्मास्ति काय द्रव्य से एक,७ क्षेत्र से लोक प्रमाण, ८ काल से आदि अत रहित ६ भाव से अरुपी, १० गुण से स्थिर सहाय, ११ आकास्ति काय द्रव्य से एक, १२ क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण, १३ काल से आदि अत रहित, १४ भाव से अरुपी, १५ गुण से अवगाहनादान तथा विकाश लक्षण, १६ काल द्रव्य से अनत, १७ क्षेत्र से अढ़ी द्वीप प्रमाण, १८ काल से आदि अत रहित, १६ भाव से अरुपी, २० गुण से वर्तना लक्षण, ये २० और १० भेद ऊपर कहे हुये इस प्रकार कुल ३० भेद अरुपी अजीव के हुवे।

रुपी अजीव के ५३० भेद-५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ५ संस्थान, ८ स्पर्श, इन २५ में से जिसमें जितने बोल पाये जाते है वे सब मिला कर कुल ५३० भेद होते हैं।

विस्तार ५ वर्ण-१ काला, २ नीला, ३ लाल, ४ पीला, ५ सफेद, इन पांचों वर्णों में २ गन्ध, ५ रस, ५ संस्थान, और ८ स्पर्श, ये २० बोल पाये जाते हे इस प्रकार ५×२०=१०० बोल वर्णाश्रित हुवे ।

२ गन्ध-१ सुरभि गंध २ दुरभि गध इन दोनों में ५ वर्ण, ५ रस, ५ संस्थान और ८ स्पर्श ये २३ बोल पाये जाते है इस प्रकार २×२३=४६ बोल गंध आश्रित हुवे।

५ रस-१ मिष्ट, २ कटुक, ३ तीक्ष्ण, ४ खट्टा, ५ कषायित इन ५ रसों में ५ वर्ण, २ गंध, ८ स्पर्श, और ५ सस्थान ये २० बोल पाये जाते हैं इस तरह ५×२०=१०० बोल रसाश्रित हुवे।

५ संस्थान-१ परिमंडल सस्थान-चुडी के आकारवत्, २ वर्तुल सस्थान-लड्डू समान, ३ त्रश सस्थान-सिंघाडे समान, ४ चतुरस्त्र संस्थान-चौकी समान, ५ आयत सस्थान-लम्बी लकड़ी समान, इन संस्थानों में ५ वर्ण, २ गंध, ५ रस, ८ स्पर्श ये २० बोल पाये जाते है इस तरह ५×२०=१०० बोल संस्थान आश्रित हुवे ।

८ स्पर्श—१ कर्कश, (कठोर) २ कोमल, ३ गुरु, ४ लघु, ५ शीत, ६ उष्ण, ७ स्निग्ध, ८ रुक्ष, एक-एक

स्पर्श में ५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ६ स्पर्श और ५ संस्थान इस प्रकार २३-२३ बोल पाये जाते हैं। अर्थात् आठ स्पर्श में से दो स्पर्श कम कहना कर्कश का पूछा होवे तो कर्कश और कोमल, ये दो छोडना। इसी प्रकार लघु का पूछा होवे तो लघु व गुरु छोडना, शीत का पूछा होवे तो शीत व उष्ण छोड़ना, स्निग्ध का पूछा होवे तो स्निग्ध व रुक्ष छोडना, ऐसे हरेक स्पर्श का समझ लेना। एक-एक स्पर्श के २३-२३ के हिसाब से २३×८=१८४ बोल स्पर्श आश्रित हुवे।

१०० वर्ण के, ४६ गन्ध के १०० रसके, १०० संस्थान के और १८४ स्पर्श के इस प्रकार सब मिलाकर ५३० भेद रूपी अजीव के हुवे। इनमें अरुपी अजीव के ३० भेद मिलाने से कुल ५६० भेद अजीव के जानना। इस प्रकार अजीव के स्वरूप को समझ कर इन पर से जो मोह उतारेगा वो इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पावेगा।

॥ इति अजीव तत्त्व ॥



(३) पुन्य तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

पुन्य तत्त्व—जो शुभ करणी के व शुभ कर्म के उदय से शुभ उज्वल पुद्गल का बन्ध पड़े व जिसके फल भोगते समय आत्मा को मीठे लगे उसे पुन्य तत्त्व कहते हैं।

इसके नव भेद–१ अन्न पुन्य २ पानी पुन्य ३ लयन पुन्य(मकानादि)४ शयन पुन्य(पाटलादि)५ वस्त्र पुन्य ६ मनः पुन्य ७ वचन पुन्य ८ काय पुन्य ६ नमस्कार पुन्य । इन नव प्रकार से जो पुन्य उपार्जन करता है वह ४२ प्रकार से शुभ फल भोगता है ।

४२ प्रकार के शुभ फल –१ शाता वेदनी २ तिर्यंच आयुष्य युगल में ३ मनुष्यायुष्य ४ देव आयुष्य ५ मनुष्य गति ६ देव गति ७ पंचेन्द्रिय की जाति ८ औदारिक शरीर ६ वैक्रिय शरीर १० आहारिक शरीर ११ तेजस शरीर १२ कार्मण शरीर १३ औदारिक अङ्गोपाङ्ग १४ वैक्रिय अङ्गोपाङ्ग १५ आहारिक अङ्गोपाङ्ग १६ वज्र ऋषभ नाराच संघयन १७ समचतुरस्र संस्थान १८ शुभ वर्ण १६ शुभ गन्ध २० शुभ रस २१ शुभ स्पर्श २२ मनुष्यानुपूर्वि २३ देवानुपूर्वि २४ अगुरु लघु नाम २५ पराघात नाम २६ उश्वास नाम २७ आताप नाम २८ उद्योत नाम २६ शुभ चलने की गति ३० निर्माण नाम ३१ तीर्थंकर नाम ३२ त्रस नाम ३३ बादर नाम ३४ पर्याप्त नाम ३५ प्रत्येक नाम ३६ स्थिर नाम ३७ शुभ नाम ३८ सौभाग्य नाम ३६ सुस्वर नाम ४० आदेय नाम ४१ यशो कीर्ति नाम ४२ ऊंच गोत्र ।

पुन्य के इन भेदों को जान कर जो पुन्य आदरेंगे उन्हें

इस भव में व पर भव में निराबाध सुखों की प्राप्ति होवेगी।

॥ इति पुन्य तत्त्व ॥



(४) पाप तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

पाप तत्त्वः-जो अशुभ करणी से, अशुभ कर्म के उदय से, अशुभ, मेला पुद्गल का बंध पडे व जिसके फल भोगते समय आत्मा को कड़वे लगे उसे पाप तत्त्व कहते हैं।

पाप के १८ भेदः-१ प्राणातिपात २ मृषावाद ३ अदत्तादान ४ मैथुन ५ परिग्रह ६ क्रोध ७ मान ८ माया ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ क्लेश १३ अभ्याख्यान १४ पैशुन्य १५ परपरिवाद १६ रति अरति १७ माया मृषा १८ मिथ्या दर्शन शल्य इन १८ भेद प्रकार से जीव पाप उपार्जन करता है वह ८२ प्रकार से भोगता है।

८२ प्रकार से भोगे जाते हैं-१ मति ज्ञानावरणीय २ श्रुत ज्ञानावरणीय ३ अवधि ज्ञानावरणीय ४ मनःपर्यव ज्ञानावरणीय ५ केवल ज्ञानावरणीय ६ निद्रा ७ निद्रा-निद्रा ८ प्रचला ९ प्रचला प्रचला १० थिणद्धि निद्रा ११ चक्षु दर्शनावरणीय १२ अचक्षु दर्शनावरणीय १३ अवधि दर्शनावरणीय १४ केवल दर्शनावरणीय १५ अशाता वेदनीय १६ मिथ्यात्व मोहनीय १७ अनंतानु-

वधी क्रोध १८ मान १६ माया २० लोभ २१ अप्रत्या- ख्यानी क्रोध २२ अप्रत्याख्यानी मान २३ अप्रत्या० माया २४ अप्रत्या० लोभ २५ प्रत्याख्यानी क्रोध २६ प्रत्या० मान २७ प्रत्या० माया २८ प्रत्या० लोभ २६ सञ्जल का क्रोध ३० संज्वल का मान ३१ संज्वल का माया ३२ संज्वल का लोभ ३३ हास्य ३४ रति ३५ अरति ३६ भय ३७ शोक ३८ दुर्गंच्छा ३६ स्त्री वेद ४० पुरुष वेद ४१ नपुंसक वेद ४२ नरक आयुष्य ४३ नरक गति ४४ तिर्यंच गति ४५ एकेन्द्रिय पना ४६ बेइन्द्रिय पना ४७ त्रीइन्द्रिय पना ४८ चौरिन्द्रिय पना ४६ ऋषभ नाराच संघयन ५० नाराच संघयन ५१ अर्ध नाराच संघ यन ५२ कीलिका संघयन ५३ सेवार्त संघयन ५४ न्यग्रोध परिमंडल संस्थान ५५ सादिक संस्थान ५६ वामन संस्थान ५७ कुब्ज संस्थान ५८ हुण्डक संस्थान ५६ अशुभ वर्ण ६० अशुभ गन्ध ६१ अशुभ रस ६२ अशुभ स्पर्श ६३ नरकानुपूर्वी ६४ तिर्यंचानुपूर्वी ६५ अशुभ गति ६६ उप- घात नाम ६७ स्थावर नाम ६८ सूक्ष्म नाम ६६ अपर्याप्त पना ७० साधारण पना ७१ अस्थिर नाम ७२ अशुभ नाम ७३ दुर्भाग्य नाम ७४ दुःस्वर नाम ७५ अनादेय नाम ७६ अयशो कीर्ति नाम ७७ नीच गोत्र ७८ दानान्त- राय ७६ लाभान्तराय ८० भोगान्तराय ८१ उपभोगान्त- ८२ वीर्यान्तराय एवं ८२ प्रकार से पाप के फल भोगे

जाते हैं। ये पाप जान कर जो पाप के कारण को छोड़ेंगे वे इस भव में तथा पर भव में निराबाध परम सुख पावेंगे।

॥ इति पाप तत्त्व ॥

(५) आश्रव तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

आश्रव तत्त्व-जीव रूपी तालाब के अन्दर अव्रत तथा अप्रत्याख्यान द्वारा, विषय कषाय का सेवन करने से इन्द्रियादिक नालों के अन्दर से जो कर्म रूपी जल का प्रवाह आता है उसे आश्रव कहते हैं।

यह आश्रव जघन्य २० प्रकार से और उत्कृष्ट ४२ प्रकार से होता है।

जघन्य २० प्रकार-१ श्रोतेन्द्रिय असंवर २ चक्षु इन्द्रिय असंवर ३ घ्राणेन्द्रिय असंवर ४ रसेन्द्रिय असंवर ५ स्पर्शेन्द्रिय असंवर ६ मन असंवर ७ वचन असंवर ८ काय असंवर ९ वस्त्र वर्तनादि भण्डोपकरण अयत्ना से लेवे तथा रक्खे १० सुची कुशाग्र मात्र भी अयत्ना से काम में लेवे ११ प्राणातिपात १२ मृषावाद १३ अदत्तादान १४ मैथुन १५ परिग्रह १६ मिथ्यात्व १७ अव्रत १८ प्रमाद १९ कषाय २० अशुभ योग।

विशेष रीति से आश्रव के ४२ भेद.

५ आश्रव, ५ इन्द्रिय विषय, ४ कषाय ३ अशुभ योग-

२५क्रिया, ये४२ भेद आश्रव के जान कर जो इन्हें छोड़ेगा वह इस भव में तथा पर भव में निरा चोध परम सुख पावेगा।

॥ इति आश्रव तत्त्व ॥



(६) संवर तत्त्व के लक्षण तथा भेद.

संवर तत्त्व–जीव रूपी तालाब के अन्दर इन्द्रियादिक नालों व छिद्रों के द्वारा आने वाले कर्म रूपी जल के प्रवाह को व्रत प्रत्याख्यानादि द्वारा जो रोकता है उसे संवर तत्त्व कहते है संवर के सामान्य से २० भेद व विशेष ५७ भेद है।

सामान्य २० भेदः–१ श्रुतेन्द्रिय निग्रह (संवरे) २ चक्षु इन्द्रिय निग्रह ३ घ्राणेन्द्रिय निग्रह ४ रसेन्द्रिय निग्रह ५ स्पर्शेन्द्रिय निग्रह ६ मन निग्रह ७ वचन निग्रह ८ काया निग्रह ९ भण्डोपकरण यत्ना से लेवे तथा रक्खे १० सुची कुशाग्र भी यत्ना से काम में लेवे ११ दया १२ सत्य १३ अचौर्य १४ ब्रह्मचर्य १५ अपरिग्रह (निर्ममत्व) १६ सम्यक्त्व १७ व्रत १८ अप्रमाद १९ अकषाय २० शुभ योग।

संवर के ५७ भेद –

पांच समितिः–१ इर्या समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदान भण्डमात्र निक्षेपना समिति

५ उच्चार पासवण खेल जल संघायण परिठावणिया समिति।

तीन गुप्तिः–६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति।

२२ परिषहः–९ क्षुधा परिषह १० तृषा परिषह ११ शीत १२ ताप १३ डम-मत्सर १४ अचल १५ अरति १६ स्त्री १७ चरिया १८ निसिहिया १९ शय्या २० आक्रोरी २१ वध २२ याचना २३ अलाभ २४ रोग २५ तृण स्पर्श २६ मैल २७ सत्कार पुरस्कार २८ प्रज्ञा २९ अज्ञान ३० दर्शन (इन २२ परिषह का जय)

१० यति धर्मः–३१ शांति ३२ निर्लोभता ३३ सरलता ३४ कोमलता ३५ अल्पोपधि ३६ सत्य ३७ सयम ३८ तप ३९ ज्ञान दान ४० ब्रह्मचर्य (इन १० यति धर्म का पालन करना)

१२ भावना –४१ अनित्य भावनाः-संसार के सब पदार्थ धन, यौवन, शरीर, कुटुम्बादिक अनित्य, अस्थिर है व नाशवान हैं इस प्रकार विचार करना।

४२ अशरण भावनाः–जीव को जब रोग पीड़ादिक उत्पन्न होवे तब कोई शरण देने वाला नहीं, लक्ष्मी, कुटुम्ब परिवार आदि कोई साथ में नहीं आता ऐसा विचार करना।

४३ससार भावनाः–जीव कर्म करके ससार में चोरासी लाख जीव योनि के अन्दर नव नवी ममान भटके। पिता

इसके १२ भेद्–१ अनशन २ उनोदरि ३ वृत्ति संक्षेप (भिक्षाचारि) ४ रस परित्याग ५ कायक्लेश ६ प्रति संलीनता । (यह छ बाह्य तप) ७ प्रायश्चित ८ विनय ९ वैयावृत्य १० स्वाध्याय ११ ध्यान १२ कायोत्सर्ग । (यह छ अभ्यन्तर तप)

इन बारह प्रकार के तप को जान कर जो इन्हें आदरेगा वह इस भव में व परभव में निराबाध परम सुख पायेगा ।

॥ इति निर्जरा तत्त्व ॥



८ बन्ध तत्त्व के लक्षण तथा भेद ॥

क्षीर नीर, धातु मृत्तिका, पुष्प–अतर, तिल–तेल इत्यादि की तरह आत्मा के प्रदेश तथा कर्मों के पुद्गल का परस्पर सम्बन्ध होने को बन्ध तत्त्व कहते हैं।

बन्ध के चार भेद्–१ प्रकृति बन्ध—आठ कर्मों का स्वभाव २ स्थिति बन्ध–आठों कर्मों के रहने के समय का मान ३ कर्मों के तीव्र मंदादिक रस सो अनुभाग बन्ध ४ कर्म पुद्गल के दल जो आत्मा के प्रदेश के साथ बन्धे हुवे हैं, वे प्रदेश बन्ध। यह चार प्रकार का बन्ध का स्वरुप मोदक के दृष्टान्त के समान है । जैसे कई प्रकार के द्रव्यों के संयोग से बना हुवा मोदक (लड्डू) की

प्रकृति वात पित्तादि की घातक होती है। वैसे ही आठों कर्म जिस जिस गुण के घातक हो वो १ प्रकृति बन्ध। जैसे वह मोदक पक्ष, मास, दो मास तक रह सक्ता है सो २ स्थिति बन्ध। जैसे वह मोदक कटुक तीक्ष्ण रस वाला होता है वैसे कर्म रस देते हैं सो ३ अनु भाग बन्ध। जैसे वह मोदक न्यूनाधिक परिमाण वाला होता है वैसे कर्म पुद्गल के दल भी छोटे बड़े होते हैं सो ४ प्रदेश बन्ध। इस प्रकार बन्ध का ज्ञान होने पर जो यह बन्ध तोड़ेगा वह निराबाध परम सुख पावेगा।

॥ इति बन्ध तत्त्व ॥



६ मोक्ष तत्त्व के लक्षण तथा भेद

बन्ध तत्त्व का उलटा मोक्ष तत्त्व है अर्थात् सकल आत्मा के प्रदेश से सर्व कर्मों का छूटना, सर्व बन्धों से मुक्त होना, सकल कार्य की सिद्धि होना तथा मोक्ष गति को प्राप्त होना सो मोक्ष तत्त्व।

मोक्ष प्राप्ति के चार साधनः—१ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र ४ तप।

सिद्ध पन्द्रह तरह के होते हैं:—१ तीर्थ सिद्धा २ अतीर्थ सिद्धा ३ तीर्थंकर सिद्धा ४ अतीर्थंकर सिद्धा ५ स्वयं बोध सिद्धा ६ प्रत्येक बोध सिद्धा ७ बुद्ध बो

यनी ७ मनुष्य गति वाले ८ अप्रमादी ६ क्षायिक सम्यक्त्वी १० अवेदी ११ अकषायी १२ यथाख्यात चारित्री १३ स्नातक निग्रंथी १४ परम शुक्ल लेश्यी १५ पंडित वीर्यवान १६ शुक्ल ध्यानी १७ केवल ज्ञानी १८ केवल दर्शनी १६ चरम शरीरी। इस तरह १६ बोल वाले जीव मोक्ष में जाते है। जघन्य दो हाथ की उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की अवगाहन वाले जीव मोक्ष में जाते हैं, जघन्य नव वर्ष के उत्कृष्ट क्रोड़ पूर्व के आयुष्य वाले कर्म भूमि के जीव मोक्ष में जाते है। जब सब कर्मों से आत्मा मुक्त होवे तब वह अरूपी भाव को प्राप्त होती है, कर्म से अलग होते ही एक समय में लोक के अग्र भाग पर आत्मा पहुंच कर अलोक को स्पर्श कर रह जाती है। अलोक में नहीं जाती कारण कि वहा धर्मास्ति काय नहीं होती इसलिये वहीं स्थिर हो जाती। दूसरे समय में अचल गति प्राप्त कर लेती है। वहा से न तो चव कर कोई आती और न हलन चलन की क्रिया होती, अजर अमर, अविनाशी पद को प्राप्त हो जाती व सदा काल आत्मा अनंत सुख की लहर में निमग्न रहती है।

॥ इति मोक्ष तत्त्व ॥

॥ इति श्री नवतत्त्व सम्पूर्ण ॥

पच्चीस क्रिया।

१ काईया क्रियाः-के दो भेद १ अणुवरय काईया
२ दुपउत्त काईया।

१ अणुवरय काईया-जब तक यह शरीर पाप से निवर्ते नहीं, वहा तक उसकी क्रिया लगे।

२ दुपउत्त काईया-दुष्ट प्रयोग में शरीर प्रवर्ते तो उसकी क्रिया लगे।

२ आहिगरणियाः-क्रिया के दो भेद १ संजोजना हिगरणिया २ निव्वत्तणाहिगरणिया।

१ खड्ग मुशल शस्त्रादिक प्रवर्तावे तो सजोजना हिगरणिया क्रिया लगे।

२ नये अद्धिकरण शस्त्रादिक सग्रह करे तो निव्वत्तणाहिगरणिया क्रिया लगे।

३ पाउसिया क्रियाः-के दो भेद १ जीव पाउसिया
२ अजीव पाउसिया।

१ जीव पर द्वेष करे तो जीव पाउसिया क्रिया लगे।

२ अजीव पर द्वेष करे तो अजीव पाउसिया क्रिया लगे।

४ पारितावणियाः-क्रिया के दो भेद १ सहथ्थ पारितावणिया २ परहथ्थ पारितावणिया।

११ दिठ्ठिया क्रिया–के दो भेद १ जीव दिठ्ठिया २ अजीव दिठ्ठिया ।

१ अश्व गजादिक–को देखने के लिये जाने से जीव दिठ्ठिया क्रिया लगे ।

२ चित्राभरणादि–को देखने के लिये जाने से अजीव दिठ्ठिया क्रिया लगे ।

१२ पुठ्ठिया क्रिया–के दो भेद १ जीव पुठ्ठिया २ अजीव पुठ्ठिया ।

१ जीव का स्पर्श करे तो जीव पुठ्ठिया क्रिया लगे ।

२ अजीव ने स्पर्शे तो अजीव पुठ्ठिया क्रिया लगे ।

१३ पाडुच्चिया क्रिया–के दो भेद १ जीव पाडुच्चिया २ अजीव पाडुच्चिया ।

१ जीव का बुरा चितवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो जीव पाडुच्चिया क्रिया लगे ।

२ अजीव का बुरा चितवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो अजीव पाडुच्चिया क्रिया लगे ।

१४ सामंतो वणिवाईया क्रिया–के दो भेद १ जीव सामंतो वणिवाईया २ अजीव सामंतो वणिवाईया ।

१ जीव का समुदाय रक्खे तो जीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे ।

२ अजीव का समुदाय रक्खे तो अजीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे ।

१५ साहत्थिया—के दो भेद १ जीव साहत्थिया २ अजीव साहत्थिया।

१ जीव का अपने हाथों के द्वारा हनन करे तो जीव साहत्थिया क्रिया लगे।

२ खड्गादि के द्वारा जीव को मारे तो अजीव साहत्थिया क्रिया लगे।

१६ नेसत्थिया क्रिया—के दो भेद १ जीव नेसत्थिया २ अजीव नेसत्थिया।

१ जीव को डाल देवे तो जीव नेसत्थिया क्रिया लगे।

२ अजीव को डाल देवे तो अजीव नेसत्थिया क्रिया लगे।

१७ आणवणिया क्रिया—के दो भेद १ जीव आणवणिया २ अजीव आणवणिया।

१ जीव को मंगावे तो जीव आणवणिया क्रिया लगे।

२ अजीव को मगावे तो अजीव आणवणिया क्रिया लगे।

१८ वेदारणिया क्रिया—के दो भेद १ जीव वेदारणिया २ अजीव वेदारणिया।

१ जीव को वेदारे तो जीव वेदारणिया क्रिया लगे।

२ अजीव को वेदारे तो अजीव वेदारणिया क्रिया लगे।

१९ अणाभोग वत्तिया क्रिया—के दो भेद १ अणाउत आयणता २ अणाउत पम्मज्जणता।

११ दिट्ठिया क्रिया–के दो भेद १ जीव दिट्ठिया २ अजीव दिट्ठिया ।

१ अश्व गजादिक–को देखने के लिये जाने से जीव दिट्ठिया क्रिया लगे ।

२ चित्रामणादि–को देखने के लिये जाने से अजीव दिट्ठिया क्रिया लगे ।

१२ पुट्ठिया क्रिया–के दो भेद १ जीव पुट्ठिया २ अजीव पुट्ठिया ।

१ जीव का स्पर्श करे तो जीव पुट्ठिया क्रिया लगे ।

२ अजीव ने स्पर्शे तो अजीव पुट्ठिया क्रिया लगे ।

१३ पाडुच्चिया क्रिया–के दो भेद १ जीव पाडुच्चिया २ अजीव पाडुच्चिया ।

१ जीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो जीव पाडुच्चिया क्रिया लगे ।

२ अजीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो अजीव पाडुच्चिया क्रिया लगे ।

१४ सामंतो वणिवाईया क्रिया–के दो भेद १ जीव सामंतो वणिवाईया २ अजीव सामंतो वणिवाईया ।

१ जीव का समुदाय रक्खे तो जीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे ।

२ अजीव का समुदाय रक्खे तो अजीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे ।

१५ साहत्थिया—के दो भेद १ जीव साहत्थिया २ अजीव साहत्थिया।

१ जीव का अपने हाथों के द्वारा हनन करे तो जीव साहत्थिया क्रिया लगे।

२ खड्गादि के द्वारा जीव को मारे तो अजीव साहत्थिया क्रिया लगे।

१६ नेसत्थिया क्रिया-के दो भेद १ जीव नेसत्थिया २ अजीव नेसत्थिया।

१ जीव को डाल देवे तो जीव नेसत्थिया क्रिया लगे।

२ अजीव को डाल देने तो अजीव नेसत्थिया क्रिया लगे।

१७ आणवणिया क्रिया—के दो भेद १ जीव आणवणिया २ अजीव आणवणिया।

१ जीव को मंगावे तो जीव आणवणिया क्रिया लगे।

२ अजीव को मगावे तो अजीव आणवणिया क्रिया लगे।

१८ वेदारणिया क्रिया—के दो भेद १ जीव वेदारणिया २ अजीव वेदारणिया।

१ जीव को वेदारे तो जीव वदारणिया क्रिया लगे।

२ अजीव को वेदारे तो अजीव वेदारणिया क्रिया लगे।

१९ अणाभोग वत्तिया क्रिया—के दो भेद १ अणाउत आयणता २ अणाउत्त पम्मज्जणता।

११ दिट्ठिया क्रिया–के दो भेद १ जीव दिट्ठिया २ अजीव दिट्ठिया ।

१ अश्व गजादिक–को देखने के लिये जाने से जीव दिट्ठिया क्रिया लगे ।

२ चित्रामणादि–को देखने के लिये जाने से अजीव दिट्ठिया क्रिया लगे ।

१२ पुट्ठिया क्रिया–के दो भेद १ जीव पुट्ठिया २ अजीव पुट्ठिया ।

१ जीव का स्पर्श करे तो जीव पुट्ठिया क्रिया लगे ।

२ अजीव ने स्पर्शे तो अजीव पुट्ठिया क्रिया लगे ।

१३ पाडुच्चिया क्रिया–के दो भेद १ जीव पाडुच्चिया २ अजीव पाडुच्चिया ।

१ जीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो जीव पाडुच्चिया क्रिया लगे।

२ अजीव का बुरा चिंतवे तथा उस पर ईर्ष्या करे तो अजीव पाडुच्चिया क्रिया लगे ।

१४ सामंतो वणिवाईया क्रिया–के दो भेद १ जीव सामंतो वणिवाईया २ अजीव सामंतो वणिवाईया ।

१ जीव का समुदाय रक्खे तो जीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे ।

२ अजीव का समुदाय रक्खे तो अजीव सामंतो वणिवाईया क्रिया लगे ।

१५ साहत्थिया–के दो भेद १ जीव साहत्थिया २ अजीव साहत्थिया।

१ जीव का अपने हाथों के द्वारा हनन करे तो जीव साहत्थिया क्रिया लगे।

२ खड्गादि के द्वारा जीव को मारे तो अजीव साहत्थिया क्रिया लगे।

१६ नेसत्थिया क्रिया–के दो भेद १ जीव नेसत्थिया २ अजीव नेसत्थिया।

१ जीव को डाल देवे तो जीव नेसत्थिया क्रिया लगे।

२ अजीव को डाल देवे तो अजीव नेसत्थिया क्रिया लगे।

१७ आणवणिया क्रिया–के दो भेद १ जीव आणवणिया २ अजीव आणवणिया।

१ जीव को मंगावे तो जीव आणवणिया क्रिया लगे।

२ अजीव को मगावे तो अजीव आणवणिया क्रिया लगे।

१८ वेदारणिया क्रिया–के दो भेद १ जीव वेदारणिया २ अजीव वेदारणिया।

१ जीव को वेदारे तो जीव वेदारणिया क्रिया लगे।

२ अजीव को वेदारे तो अजीव वेदारणिया क्रिया लगे।

१९ अणाभोग वत्तिया क्रिया–के दो भेद १ अणाउत आयणता २ अणाउत पम्मज्जणता।

१ असावधानता से वस्त्रादिक का ग्रहण करने से अणाउत्त आयणता क्रिया लगे ।

२ उपयोग बिना पात्रादि को पूंजने से अणाउत पम्मज्जणता क्रिया लगे ।

२० अणवकंख वत्तिया क्रिया–के दो भेद १ आय-शरीर अणवकंख वत्तिया २ परशरीर अणवकख वत्तिया।

१ अपने शरीर के द्वारा पाप करने से आयशरीर अणवकख वत्तिया क्रिया लगे ।

२ अन्य के शरीर द्वारा पाप कर्म करने से परशरीर अणवकंख वत्तिया क्रिया लगे ।

२१ पेज्ज वत्तिया क्रिया–के दो भेद १ माया वत्तिया २ लोभ वत्तिया ।

१ माया से (कपट पूर्वक) राग धारण करे तो माया वत्तिया क्रिया लगे ।

२ लोभ से राग धारण करे तो लोभ वत्तिया क्रिया लगे ।

२२ दोस वत्तिया क्रिया–के दो भेद १ कोहे २ माणे ।

१ क्रोध से कोहे क्रिया लगे ।

२ मान से 'माणे' क्रिया लगे ।

२३ प्पउग क्रिया–के तीन भेद १ मणप्पउग २ वयप्पउग ३ कायप्पउग

१ मन क योग अशुभ प्रवर्तने से मणप्पउग क्रिया लगे।

२ वचन के योग अशुभ प्रवर्ताने से वयप्पउग क्रिया लगे।

३ काया के योग अशुभ प्रवर्ताने से कायप्पउग क्रिया लगे।

२४ सामुदाणिया क्रिया—के तीन भेद अणंतर सामुदाणिया, परंपर सामुदाणिया तदुभय, सामु० ।

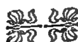
१ अणतर सामुदाणिया जो अन्तर सहित क्रिया लगे।

२ परंपर सामुदाणिया जो अन्तर रहित क्रिया लगे।

३ तदुभय सामुदाणिया जो अन्तर सहित और रहित क्रिया लगे ।

२५ इरिया वहिया क्रिया—मार्ग में चलने से यह क्रिया लगती है ।

॥ इति पचीस क्रिया सम्पूर्ण ॥



९ इन्द्र नील रत्न १० चन्द्र नील रत्न ११ गेरुड़ी (गरुक) रत्न १२ हंस गर्भ रत्न १३ पोलाक रत्न १४ सौगन्धिक रत्न १५ चन्द्र प्रभा रत्न १६ वेरुली रत्न १७ जल कान्त रत्न १८ सूर्य कान्त रत्न एवं सर्व ४७ प्रकार की पृथ्वी काय।

इसके सिवाय पृथ्वी काय के और भी बहुत से भेद है। पृथ्वी काय के एक कंकर में असंख्यात जीव भगवत ने सिद्धान्त में फरमाया है। एक पर्याप्ता की नेश्रा से असंख्यात अपर्याप्त है। जो इन जीवों की दया पालेगा वह इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पावेगा।

पृथ्वी काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का उत्कृष्ट नीचे लिखे अनुसारः—

कोमल मिट्टी का आयुष्य एक हजार वर्ष का।
शुद्ध मिट्टी का आयुष्य बारह हजार वर्ष का।
बालु रेत का आयुष्य चौदह हजार वर्ष का।
मेन सिल का आयुष्य सोलह हजार वर्ष का।
ककरों का आयुष्य अठारह हजार वर्ष का।
वज्र हीरा तथा धातु का आयुष्य बावीश हजार वर्षका।
पृथ्वी काय का संस्थान मसुर की दाल के समान है।
पृथ्वी काय का " कुल " बारह लाख केराड़ जानना।



अप काय।

अप काय के दो भेद—१ सूक्ष्म २ बादर।

सूक्ष्मः- सारे लोक में भरे हुवे है, हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आखो से दीखे नहीं व जिसके दो भाग हो सकते नहीं उसे सूक्ष्म अपकाय कहते हैं।

बादरः—लोक के देश भाग में भरे हुवे हैं, हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, आखो से नजर आवे उसे बादर अपकाय कहते हैं।

इसके १७ भेदः—१ ढार का जल २ हिम का जल ३ धूवर का जल ४ मेघरवा का जल ५ ओस का जल ६ ओले का जल ७ बरसात का जल ८ ठण्डा जल ९ गरम जल १० खारा जल ११ खट्टा जल १२ लवण समुद्र का जल १३ मधुर रस के समान जल १४ दूध के समान जल १५ घी के समान जल १६ ईख (शेलडी) के रस जैसा जल १७ सर्व रसद समान जल।

इसके सिवाय अपकाय के और भी बहुत से भेद है। जल के एक बिन्दु में भगवान ने असख्यात जीव फरमाये हैं। एक पर्याप्त की नेश्रा से असख्य अपर्याप्त है। इनकी अगर कोई जीव दया पालेगा तो वह इस भव में व पर भव में निराबाध सुख पावेगा।

अप काय का आयुष्य जघन्य अन्तर मुहूर्त का, उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का । जल का संस्थान जल के परपोटे समान । " कुल " सात लाख करोड जानना ।



तेजस काय ।

तेजस काय के २ भेद—१ सूक्ष्म २ बादर ।

सूक्ष्मः—सर्व लोक में भरे हुये है । हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आँखो से दीखे नहीं व जिसके दो भाग होवे नहीं, उसे सूक्ष्म तेजस्काय कहते है ।

बादरः—तेजस् काय अढाई द्वीप में भरे हुवे है । हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, जल में डूबे, आँखो से दीखे व जिस के दो भाग होवे उसे बादर तेजस् काय कहते हैं ।

बादर अग्नि काय के १४ भेद—१ अङ्गारे की अग्नि २ भोमर (उष्ण राख) की अग्नि ३ टुटती ज्वाला की अग्नि ४ अखण्ड ज्वाला की अग्नि ५ निम्भाड़ (कुम्भकार का अलाव-भट्टी) की अग्नि ६ चकमक की अग्नि ७ बिजली की अग्नि ८ तारा की अग्नि ९ अरणी (काष्ट) की अग्नि १० वांस की अग्नि ११ अन्य काष्टादि के घर्षण से उत्पन्न होने वाली अग्नि १२ सूर्यकान्त (आई गलास)

से उत्पन्न होने वाली अग्नि १३ दावानल की अग्नि १४ वड़वानल की अग्नि ।

इसके सिवाय अग्नि के और भी अनेक भेद हैं । एक अग्नि की चिनगारी में भगवान् ने असंख्यात जीव फरमाये हैं । एक पर्याप्त की नेश्रा से असंख्यात अपर्याप्त है । जो जीव इनकी दया पालेगा वह इस भव में व पर भव में निराबाध सुख पावेगा । तेजस् काय का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त का, उत्कृष्ट तीन अहोरात्रि (दिन रात) का । इसका संस्थान सुइयों की भारी के आकारवत् है । तेजस् काय का 'कुल' तीन लाख करोड़ जनना ।

वायु काय ।

वायु काय के दो भेद–१ सूक्ष्म २ बादर ।

सूक्ष्म–सर्व लोक में भरे हुवे हैं । हनने से हनाय नहीं, मारने से मरे नहीं, अग्नि में जले नहीं, जल में डूबे नहीं, आँखों से दीखे नहीं व जिसके दो भाग होवे नहीं, उसे सूक्ष्म वायु काय कहते हैं ।

बादर–लोक के देश भाग में भरे हुवे हैं । हनने से हनाय, मारने से मरे, अग्नि में जले, आखों से दीखे व जिसके दो भाग होवे उसे बादर वायु काय कहते हैं ।

५ भीलामा ६ आसापालव ७ आम ८ महुए ९ रायन १० जामन ११ बेर १२ निम्बोली (री) इत्यादि।

बहु अट्ठी-१ जामफल २ सीताफल ३ अनार ४ बील फल ५ कोठा (कवीठ) ६ कैर ७ निम्बू ८ टीमरु ९ बड़ के फल १० पीपल के फल इत्यादि बहु अट्ठी के बहुत से भेद हैं।

२ गुच्छ-नीचा व गोल वृक्ष हो उसे गुच्छ कहते हैं जैसे १ रिंगनी २ भोरिंगनी ३ जवासा ४ तुलसी ५ आवची बावची इत्यादि गुच्छ के अनेक भेद हैं।

३ गुल्म-फूलों के वृक्ष को गुल्म कहते हैं। १ जाई २ जुई ३ डमरा ४ मरवा ५ केतकी ६ केवड़ा इत्यादि गुल्म के अनेक भेद हैं।

४ लता-१ नाग लता २ अशोक लता ३ चपक लता ४ मोंइ लता ५ पद्म लता इत्यादि लता के अनेक भेद हैं।

५ वेला जिस वनस्पति के वेला चाले सो वेला। १ ककड़ी २ तरोई ३ करेला ४ किंकोड़ा ५ कोला ६ कोठिंबड़ा ७ तुम्बा ८ खरबुजे ९ तरबुजे १० वल्लर आदि।

६ पावग-(पव्वय) जिसके मध्य में गाठे हो उसे पावग कहते है। १ ईख २ एरंड ३ सरकड़ ४ बेंत ५ नेतर ६ वांस इत्यादि पावग के अनेक भेद हैं।

७ तृण-१ डाभ का तृण २ आरातारा का तृण

३ कड़वाली का तृण ४ झेझवा का तृण ५ धरो का तृण ६ कालिया का तृण इत्यादि तृण के अनेक भेद है।

८ वलीया-(वलय) जो वृक्ष ऊपर जाकर गोलाकार बने हों, वे वलीयाः-१ सुपारी २ खारक ३ खजूर ४ केला ५ तज ६ इलायची ७ लोंग ८ ताड़ ९ तमाल १० नारियल आदि वलीया के अनेक भेद हैं।

९ हरित काय—शाक भाजी के वृक्ष सो हरित कायः-१ मूला की भाजी २ मेथी की भाजी ३ तांदलजाकी (चदलोई की) भाजी ४ सुवा की भाजी ५ लुणी की भाजी ६ वाथरे की भाजी आदि हरित काय के अनेक भेद हैं।

१० औषधि-चोवीश प्रकार के धान्य को औषधि कहते हैं।

धान्य के नाम-१ गोधूम (गेंहू) २ जव ३ जुवार ४ बाजरी ५ डागेर (शाल) ६ वरी ७ बंटी (वरटी) ८ बावटो ९ कागनी १० चिणयो झिणयो ११ कोदरा १२ मकी। इन बारह की दाल न होने से ये 'लहा (लामा)धान्य कहलाते है। १ मूग २ मोंठ ३ उड़द ४ तुवर ५ झालर (काबली चने) ६ वटले ७ चँवले ८ चने ९ कुलत्थी १० कांग (राजगरे के समान एक जाति का अनाज) ११ मसुर १२ अलसी इन बारह की दाल होने से इन्हे 'कठोल' कहते है।

लहा और कटोल इन दोनों प्रकार के धान्य को औषधि कहते हैं।

११ जल वृत्त—१ पोयणा (छोटे कमल की एक जाति) २ कमल पोयणा ३ घींतेलां (जलोत्पन्न एक फल) ४ सिंघाड़े ५ कमल कांकडी (कमलगट्टा) ६ सेवाल आदि जल वृत्त के अनेक भेद हैं।

१२ कोसंड (कुहाण)—१ वेल्ली के वेले २ वेल्ली के टोप आदि जमीन फोड़ कर जो निकाले सो कोसंड। इस प्रत्येक वनस्पति में उत्पन्न होते वक्त व जिनमें चक्र पड़े उनमें अनन्त जीव, हरी रहे, उस समय तक असख्यात जीव व पकने बाद जितने बीज हों उतने या संख्यात जीव होते है।

प्रत्येक वनस्पति का वृक्ष दश बोल से शोभा देता है—१ मूल २ कंद ३ स्कंध ४ त्वचा ५ शाखा ६ प्रवाल। ७ पत्र ८ फूल ९ फल १० बीज।



साधारण वनस्पति के भेद

कंद मूल आदि की जाति को साधारण वनस्पति कहते हैं। १ लसण २ डुंगली ३ अदरक ४ सूरण (कन्द) ५ रतालु ६ पेंडालु (तरकारी विशेष) ७बटाटा ८थेक (जुवार जैसे दाने की एक जाति) ९ सकर कन्द १० मूला का कन्द ११नीली हलद १२ नीली गली (घास की जड) १३ गाजर १४ अंकुरा १५सुरसाणी १६थुअर १७ मोथी १८अमृत वेल१९ कुवार (गंवार पाटा) २० चींड़ (घास विशेष) २१ बडवी (अरवी) का गांठिया २२ गरमर आदि कन्द मूल के अनेक भेद हैं।

इन्हें साधारण वनस्पति कहते हैं। सुई की अग्र (अनी) ऊपर आवे इतने छोटे से कन्द मूल के टुकडे में उन निगोदिये जीवों के रहने की असंख्यात श्रेणी हैं। एक एक श्रेणी में असंख्यात प्रतर है। एक एक प्रतर में असख्यात गोले हैं। एक एक गोले में असंख्यात शरीर हैं। एक एक शरीर में अनन्त अनन्त जीव हैं। इस प्रकार ये साधारण वनस्पति के भेद जानना। यदि जीव इस वनस्पति काय की दया पालेगा तो वह इस भव में व पर भव में निराबाध परम सुख पायेगा। वनस्पति का आयुष्य जघन्य अन्तर मुहूर्त का, उत्कृष्ट दश हजार वर्ष का। इनमें से निगोद का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त। चवे और उत्पन्न होवे। वनस्पति काय का संस्थान अनेक प्रकार का। इनका " कुल " २८ लच करोड जानना।

त्रस काय के भेद

त्रस काय—त्रस जीव जो हलन, चलन क्रिया कर सके। धूप में से छाया में जावे व छाया में से धूप में जावे उसे त्रस काय कहते हैं। उसके चार भेद-१ बेइन्द्रिय २ त्रीइन्द्रिय ३ चौरिन्द्रिय ४ पचेन्द्रिय।

बेइन्द्रिय के भेद-जिसके काय और मुख ये दो इन्द्रिय होवे उसे बेइन्द्रिय कहते हैं। जैसे-१ शख २ कोड़ी

है । इनमें असंख्यात नेरियों के रहने के लिये तीन लाख नरकावास व असंख्यात कुम्भियें हैं । इसके नीचे चार बोल—१ बीश हजार योजन का घनोदधि है, २ असंख्यात योजन का घनवाय है, ३ असंख्यात योजन का तनुवाय है, ४ असंख्यात योजन का आकाशास्तिकाय है।

६ तमस् प्रभा नरकः—का पिंड एक लाख सोलह हजार योजन का है । जिसमें से एक हजार योजन का दल नीचे व एक हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच में एक लाख चौदह हजार का पोलार है जिनमें ३ पाथड़ा व २ आंतरा हैं । इन में असंख्यात नेरियों के रहने के लिये ९९९९५ नरकावासा व असंख्यात कुम्भियें हैं इस के नीचे चार बोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि २ असंख्यात योजन का घनवाय ३ असंख्यात योजन का तनुवाय ४ असंख्यात योजन का आकाशास्ति काय है ।

७ तमः तमस् प्रभा नरकः का पिंड एक लाख आठ हजार योजन का है । ५२॥ हजार योजन का दल नीचे व ५२॥ हजार योजन का दल ऊपर छोड़ कर बीच में तीन हजार योजन का पोलार है । जिसमें एक पाथड़ा है आंतरा नहीं । यहा असंख्यात नेरियों के रहने के लिये असंख्यात कुम्भियें व पाच नरकावासा हैं । पांच नरकावासा—१ काल २ महा काल ३ रुद्र ४ महा रुद्र ५ अप्रतिष्ठान । इस के नीचे चार बोल १ बीस हजार योजन का घनोदधि है २

असख्यात योजन का घनवाय है ३ असख्यात योजन का तनुवाय है ४ असख्यात योजन का आकाशास्ति काय है इस के बारह योजन नीचे जाने पर अलोक आता है।

नरक की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की। इनका " कुल " पच्चीस लाख करोड़ जानना।



२ तिर्यंच का विस्तार

तिर्यंच के पाच भेद १ जलचर २ स्थलचर ३ उरपर ४ भुजपुर ५ खेचर इन में से प्रत्येक के दो भेद १ संमूर्छिम २ गर्भज।

१ जलचर–जल में चले सो जलचर तिर्यंच जैसे—१ मच्छ २ कच्छ ३ मगरमच्छ ४ कछुआ ५ ग्राह ६ मेंढक ७ सुसुमाल इत्यादिक जलचर के अनेक भेद हैं। इनका कुल १२॥ लाख करोड़ जानना।

२ स्थलचर–जमीन पर चले सो स्थलचर तिर्यंच इन के विशेष नामः–

१ एक खुरवाले–घोड़े, गधे, खचर इत्यादि

२ दो खुरवाले–(कटे हुए खुरवाले) गाय भैंस बैल, बकरे, हिरन रोज ससलिये आदि।

३ गंडीपद-(सोनार के एरण जैसे गोल पाव वाले) ऊंट, गेंडे, आदि ।

४ श्वानपद-(पंजे वाले जानवर) बाघ, सिंह, चीता, दीपडे (धब्बे वाले चीते) कुत्ते, बिल्ली, लाली, गीदड़, जरख, रींछ, बन्दर इत्यादि । स्थलचर का " कुल " दस लाख करोड़ जानना ।

३ उरपर-(सर्प) के भेदः-हृदय बल से जमीन पर चलने वाले सो उरपर । इनके चार भेद १ अहि २ अजगर ३ असालिया ४ महुरग ।

१ अहि-पांचों ही रंग के होते हैं-१ काला २ नीला ३ लाल, ४ पीला ५ सफेद ।

२ मनुष्यादि को निगल जावे सो अजगर ।

३ असालिया-यह दो घड़ी में १२ योजन (४८ कोस) लम्बा हो जाता है चक्रवर्ती (बलदेवादि) की राजधानी के नीचे उत्पन्न होता है । इसे भस्म नामक दाह होता है जिसमे आस पास की ४८ कोस की पृथ्वी गल जाती है जिससे आस पास के ग्राम, नगर, सेना, सब दब कर मर जाते हैं । इसे असालिया कहते हैं ।

४ उत्कृष्ट एक हजार योजन का लम्बा शरीर वाला महुरग (महोरग) कहलाता है यह अढ़ाई द्वीप के बाहर रहता है ।

उरपर (सर्प) का "कुल" दश लाख करोड जानना ।

४ भुजपर-(सर्प)-जो भुजाओं (हाथों) के बल चले सो भुजपर कहलाते हैं। इनके विशेष नाम-१ कोल २ नकुल (नोलिया) ३ चूहा ४ निस्मा ५ ब्राह्मणी ६ गिलहरी ७ कार्कीड़ा ८ चंदन गोह (ग्राह) ९ पाटला गोह (ग्राह विशेष) इत्यादि अनेक नाम हैं। इनका "कुल" नव लाख करोड जानना।

५ खेचर—आकाश में उडने वाले जीव खेचर (पक्षी) कहलाते हैं। इनके चार भेदः-१ चर्म पक्षी २ रोम पंखी ३ समुद्ग पक्षी ४ वीतत (विस्तृत) पंखी।

१ चर्म पक्षी—चमुना, चामचिडी चान-चटिया, चमगीदड इत्यादि चमड़े की पाख वाले सो चर्म पक्षी।

२ मयुर (मोर), कबूतर, चकले (चिड़ी), कौवे, कमेड़ी, मैना, पोपट, चील, बुगले, कोयल, ढेल, शकरे, हाल, तोते, तीतर, बाज इत्यादि रोम (बाल) की पाख वाले सो रोम पंखी ये दो प्रकार के पक्षी अढाई द्वीप के बाहर भी मिलते है और अन्दर भी।

३ समुद्ग पक्षी—डब्बे जैसे मीड़ी हुई गोल पांख वाले सो समुद्ग पक्षी।

४ विचित्र प्रकार की लम्बी व पोली पाख वाले सो वीतत पक्षी ये दोनों प्रकार के पक्षी अढाई द्वीप

योजन ऊंचा २५ योजन पृथ्वी में उंडा (गहरा) १०५२ १२/१९ [१२ कला] योजन चौड़ा, २४९३२ योजन और ३/४ कला लम्बा पीले सोने का 'चुल्लहेमवन्त' पर्वत है। इसकी बाहु ५३५० योजन और १५ कला की है, धनुष्य पीठीका २५२३० योजन और ४ कला की है, इस पर्वत के पूर्व पश्चिम सिरे से चोरासीसौं, चोरासीसो योजन जाजेरी लम्बी दो डाढे [शाखा] निकाली हुई हैं। एक २ शाखा पर सात सात अन्तर द्वीप है जगती[तलेटी]से ऊपर डाढा की ओर ३०० योजन जाने पर ३०० योजन लम्बा व चौड़ा पहला अन्तर द्वीप आता है वहा से चार सो योजन जाने पर, चार सो योजन लम्बा व चौडा दूसरा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ५०० योजन आगे जाने पर ५०० योजन लम्बा व चौडा तीसरा अन्तर द्वीप आता है। वहा से ६०० योजन आगे जाने पर ६०० योजन लम्बा व चौडा चौथा अन्तर द्वीप आता है। वहा से ७०० योजन आगे जाने पर ७०० योजन का लम्बा व चौडा पाचवा अन्तर द्वीप आता है। वहा से ८०० योजन आगे जाने पर ८०० योजन लम्बा व चौड़ा छठा अन्तर द्वीप आता है। वहां से ९०० योजन आगे जाने पर ९०० योजन लम्बा व चौडा सातवां अन्तर द्वीप आता है।

इस प्रकार एक २ शाखा पर,सात सात अन्तर द्वीप

हैं। इन्हें चार से गुणा करने पर [चार शाखा पर] २८ अन्तर द्वीप हुवे। ये अन्तर द्वीप 'चुल्ल हेमवन्त' पर्वत पर है। ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र की सीमा पर 'शिखरी' नामक पर्वत है,जो 'चुल्ल हेमवन्त' पर्वत के समान है। इस शिखरी नामक पर्वत के पूर्व पश्चिम के सिरों पर भी २८ अन्तर द्वीप हैं। इन दो पर्वत के सिरों पर कुल छप्पन अन्तर द्वीप हैं।



संमूर्छिम मनुष्य के भेद।

समूर्छिम मनुष्य–गर्भज मनुष्य के एक सो एक क्षेत्र में १४ स्थानक (जगह) पर उत्पन्न होते हैं।

१४ स्थानक के नाम

१ उच्चारे सुवा–बडी नीति–विष्टा में।
२ पासवण सुवा–लघु नीति–पेशाब (मूत्र) में।
३ खेले सुवा–खखार में।
४ सघाणे सुवा–श्लेपम–नाक के सेडे–में।
५ वंते सुवा–वमन–उल्टी–में।
६ पित्ते सुवा पित्त में।
७ पुइये सुवा रस्सी–पीप में।
८ सोणियेसुवा रुधिर–रक्त–में।
९ सुक्के सुवा–वीर्य रज में।

सो योजन का दल ऊपर छोड कर,नीच में आठ सो योजन का पोलार है। जिसमें सोलह जाति के व्यन्तर के नगर हैं। ये नगर कुछ तो भरत क्षेत्र के समान है। कुछ इन से बडे महाविदेह क्षेत्र समान हैं। और कुछ जंबु द्वीप समान बडे है।

पृथ्वी का सो योजन का दल जो ऊपर है, उसमें से दश योजन का दल नीचे व दश योजन का दल ऊपर छोड कर, बीच मे अस्सी योजन का पोलार है। इन में दश जाति के जृंभिका देव रहते है जो संध्या समय, मध्य रात्रि को, सुबह व दोपहर को 'अस्तु' 'अस्तु' करते हुने फिरते रहते हैं (जो हसता हो वो हंसते रहना, रोता हो वो रोते रहना, इस प्रकार कहते फिरते है) अतएव इस समय ऐसा वैसा नहीं बोलना चाहिये। पहाड, पर्वत व वृक्ष ऊपर तथा वृक्ष नीचे व मन को जो जगह अच्छी लगे वहा ये देव आकर बैठते है तथा रहते हैं।

ज्योतिषी देवः—इनके दश भेद १ चन्द्रमा २ सूर्य ३ गह ४ नक्षत्र ५ तारे। ये पाच ज्योतिषी देव अढाई द्वीप में चर हैं व अढाई द्वीप के बाहर ये पाच अचर (स्थिर) हैं। इन देवों की गाथाः—

तारा, रवि, चद, रिक्खा, बुह, सुक्का, जूव, भंगल, सणीआ,
सग सय नेउआ,दस,असिय,चउ,चउ,कमसो तीया चउसो।१।

अर्थः—पृथ्वी से ७६० योजन ऊचा जाने पर ताराओं का विमान आता है, पृथ्वी से ८०० योजन

ऊचा जाने पर सूर्य का विमान आता है, पृथ्वी से ८८० योजन ऊचा जाने पर चन्द्रमा का विमान आता है। पृथ्वी से ८८४ योजन ऊचा जाने पर नक्षत्र का विमान आता है, ८८८ योजन जाने पर बुध का तारा आता है, ८९१ योजन जाने पर शुक्र का तारा आता है, ८९४ योजन ऊचा जाने पर बृहस्पति का तारा आता है, ८९७ योजन ऊचा जाने पर मगल का तारा आता है, पृथ्वी से ९०० योजन ऊचा जाने पर शनिश्चर का तारा आता है।

इस प्रकार ११० योजन ज्योतिष चक्र जाडा है। पाच चर है पाच स्थिर हैं। अढाई द्वीप में जो चलते हैं वो चर और अढाई द्वीप के बाहर जो चलत नहीं वे स्थिर है। जहा सूर्य है वहा सूर्य और जहा चन्द्र है वहां चन्द्र।

वैमानिक के भेद—वैमानिक के ३८ भेद। ३ किल्विषी, १२ देवलोक, ९ लोकान्तिक, ९ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान एवं ३८।

किल्विषी देवः-तीन पल्योपम की स्थिति वाले प्रथम किल्विषी पहले दूसरे देवलोक के नीचे के भाग में रहते है २ तीन, सागर की स्थिति वाले दूसरे किल्विषी तीसरे चोथे देवलोक के नीचे के भागमें रहते हैं ३ तेरह सागर की स्थिति वाले तीसरे किल्विषी छठे देवलोक के नीचे के भागमें रहते है ये देव ढेढ (भङ्गी) देव

उत्पन्न हुवे हैं । वो कैसे ? तीर्थंकर, केवली, साधु, साध्वी के अपवाद बोलने से ये किल्विषी देव हुवे हैं ।

बारह देवलोक—१ सुधर्मा देवलोक २ इशान देवलोक ३ सनत कुमार देवलोक ४ महेन्द्र देवलोक ५ ब्रह्म देवलोक ६ लांतक देवलोक ७ महाशुक्र देवलोक ८ सहस्रार देवलोक ९ आणत देवलोक १० प्राणत देवलोक ११ आरण्य देवलोक १२ अच्युत देवलोक ।

बारह देवलोक कितने ऊंचे, किस आकार के, व इन के कितने कितने विमान हैं, इसका विवेचन ज्योतिषी चक्र के ऊपर असंख्यात योजन की करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर पहेला सुधर्मा व दूसरा इशान ये दो देवलोक आते है जो लगड़ाकार हैं । व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार (समान) है और दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) हैं । पहले में ३२ लाख और दूसरे में २८ लाख विमान हैं । यहां से असंख्यात योजन की करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचे जाने पर तीसरा सनंत कुमार व चौथा महेन्द्र ये दो देवलोक आते हैं । जो लगड़ा (ढांचा) के आकार हैं । एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है । दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के आकार (समान) हैं । तीसरे में बारह लाख व चौथे में आठ लाख विमान हैं । यहा से असंख्यात योजन का करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर पांचवां ब्रह्म देवलोक आता है । जो पूर्ण चन्द्रमा के

आकार का है। इस में चार लाख विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन का करोड़ा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर छट्ठा लांतक देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इस में ५० हजार विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन का करोडा करोड़ प्रमाणे ऊंचा जाने पर सातवां महा शुक्र देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इस में ४० हजार विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोडा करोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर आठवा सहसार देवलोक आता है। जो पूर्ण चन्द्रमा के आकार का है। इस में ६ हजार विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोडा करोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर नौवा आनत और दशवा प्राणत ये दो देवलोक आते हैं। जो लगडाकार है। व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है। दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के समान हैं। दोनों देवलोक में मिल कर ४०० विमान हैं। यहां से असंख्यात योजन के करोड़ा करोड प्रमाणे ऊंचा जाने पर इग्यारवा आरण्य और बारहवां अच्युत देवलोक आते हैं। जो लगडाकार है। व एक एक अर्ध चन्द्रमा के आकार का है, दोनों मिल कर पूर्ण चन्द्रमा के समान है। दोनों देव लोक में मिलकर ३०० विमान हैं। एवं बारह देव लोक के सर्व मिला कर ८४, ९६, ७०० विमान हैं।



मक्खी के पंख से भी अधिक पतली है। शुद्ध सुवर्ण से भी अधिक उज्वल, गोक्षीर समान, शंख, चन्द्र, बंक (बगुला) रत्न, चांदी, मोती का हार, व क्षीर सागर के जल से भी अत्यन्त उज्वल है। इस सिद्ध शिला के के बारह नाम-१ इषत् २ इषत् प्रभार ३ तनु ४ तनु तनु ५ सिद्धि ६ सिद्धालय ७ मुक्ति ८ मुक्तालय ९ लोकाग्र १० लोकस्तुभिका ११ लोक प्रति बोधिका १२ सर्व प्राणी भूत जीव सत्त्व सौख्या वाहिका। इसकी परिधि (घेराव) १, ४२, ३०, २४९ योजन, एक कोस १७६६ धनुष पोने छे आङ्गुल जाजेरी है। इस शिला के एक योजन ऊपर जाने पर-एक योजन के चार हजार कोस में से ३९९९ कोस नीचे छोड़ कर शेष एक कोस के छे भाग में से पाच भाग नीचे छोड कर शेष एक भाग में सिद्ध भगवान विराज मान हैं। यदि ५०० धनुष की अवगाहना वाले सिद्ध हुवे हो तो ३३३ धनुष और ३२ आङ्गुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है। सात हाथ के सिद्ध हुवे हो तो चार हाथ और सोलह आङ्गुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है। व दो हाथ के सिद्ध हुवे हो तो एक हाथ और आठ अङ्गुल की (क्षेत्र) अवगाहना होती है। ये सिद्ध भगवान कैसे है? अवर्णी, अगन्धी अरसी, अस्पर्शी, जन्म जरा मरण रहित और आत्मिक गुण सहित है। ऐसे सिद्ध भगवान को मेरा समय समय पर वंदना नमस्कार होवे।

छः काय का स्वरुप।



नाम	कुल करोडा करोड	[1]आयुष्य	वर्ण	संस्थान	[2]मुहूर्त में उ. जन्म मरण
१ पृथ्वी काय	१२ लाख	२२००० वर्ष	पीला	मसुर की दाल	१२८२४
२ अप काय	७ लाख	७००० "	सफेद	जल का परपोटा	१२८२४
३ तेजस् काय	३ लाख	३ अहोरात्रि	लाल	सुइयों की भारी	१२८२४
४ वायु काय	७ लाख	३००० वर्ष	नीला	ध्वजा पताका	१२८२४
५ वनस्पति काय	२८ लाख	१०००० वर्ष	विविध	विविध	३२०००प्र.व. / ६५५३६सा.व
६ त्रस काय					
बेइन्द्रिय	७ लाख	१२ वर्ष	"	"	८०
तेइन्द्रिय	८ लाख	४६ दिन	"	"	६०

१ जघन्य अन्तर मुहूर्त का २ जघन्य १ भव।

नाम	कुल क्रोडा क्रोड	[1]आयुष्य	वर्ण	संस्थान	[2]मुहूर्त में उ. जन्म मरण
चौइन्द्रिय	९ लाख	६ मास	,,	,,	४०
नरक	२५ लाख	ज १०००० व. उ. ३३ सागर	,,	,,	१
तिर्यंच	५३॥ लाख	३ पल्योपम	,,	,,	१
मनुष्य	१२ लाख	३ पल्योपम	,,	,,	१
देवता	२६ लाख	ज.१०००० व. उ. ३३ सागरोपम	,,	,,	१

१ जघन्य अन्तर मुहूर्त का २ जघन्य १ भव।

॥ इति छः काय का बोल सम्पूर्ण ॥

२५ बोल ।

१ पहले बोले 'गति चार–१ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति ।

२ दूसरे बोले 'जाति पाच–१ एकेन्द्रिय २ बेइ-न्द्रिय ३ त्रीइन्द्रिय ४ चौरिन्द्रिय ५ पचेन्द्रिय ।

३ तीसरे बोले 'काय छः–१ पृथ्वी काय २ अप काय ३ तेजस् काय ४ वायु काय ५ वनस्पति काय ६ त्रस काय ।

४ चौथे बोले 'इन्द्रिय पाच–१ श्रोतेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय ।

५ पांचवे बोले 'पर्याप्ति छः–१ आहार पर्याप्ति २ शरीर पर्याप्ति ३ इन्द्रिय पर्याप्ति ४ श्वासोश्वास पर्याप्ति ५ भाषा पर्याप्ति ६ मनः पर्याप्ति ।

६ छट्ठे बोले 'प्राण दश–१ श्रोतेन्द्रि बल प्राण २

---

१ जहां पर जीवों का आवागमन (आना जाना) होवे वह गति है ।

२ एक सा होना–एकाकार होना जाति है ।

३ समूह तथा बहु प्रदेशी वस्तु को काय कहते हैं ।

४ शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि वस्तुओं का जिसके द्वारा ग्रहण होता है उसे इन्द्रिय कहते हैं। ये पाच है–१ कान २ आंख ३ नाक ४ जीभ ५ शरीर (गले से पैर तक–धड़)

५ आहारादि रूप पुद्गल को परिणमन करने की शक्ति (यन्त्र) को पर्याप्ति कहते हैं ।

६ पर्याप्ति रूप यन्त्र को मदद करने वाले वायु (Steam) को प्राण कहते हैं ।

चक्षु इन्द्रिय बल प्राण ३ घ्राणेन्द्रिय बल प्राण ४ रसेन्द्रिय बल प्राण ५ स्पर्शेन्द्रिय बल प्राण ६ मनः बल प्राण ७ वचन बल प्राण ८ काय बल प्राण ९ श्वासोश्वास बल प्राण १० आयुष्य बल प्राण।

७ सातवे बोले शरीर पाच-१ औदारिक २ वैक्रिय ३ आहारिक ४ तैजस ५ कार्मण।

८ आठवें बोले योग पन्द्रह-१ सत्य मन योग २ असत्य मन योग ३ मिश्र मन योग ४ व्यवहार मन योग ५ सत्य वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग ११ वैक्रिय शरीर काय योग १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग १३ आहारिक शरीर काय योग १४ आहारिक मिश्र शरीर काय योग १५ कार्मण काय योग। चार मनका, चार वचन का व सात काय का एवं पन्द्रह योग।

९ नवचे बोले उपयोग बारह।

पांच ज्ञान का-१ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ अवधि ज्ञान ४ मनः पर्यव ज्ञान ५ केवल ज्ञान।

---

७ जो नाश को प्राप्त होता हो या जिसके नष्ट होने से-अदृश्य होने से जीव का नाश माना जाता है उसे शरीर कहते हैं।

८ मन, वचन काया की प्रवृत्ति को-चपलता को (प्रयोग को) जोग (योग) कहते हैं।

९ जानने पहिचानने की शक्ति को उपयोग कहते है, यही जीव का लक्षण है।

तीन अज्ञान का- १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विभग अज्ञान।

चार दर्शन के--१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन एवं बारह उपयोग।

१० दशवें बोले 'कर्म आठ--१ ज्ञानावरणीय २ दर्शना वरणीय ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र और ८ अन्तराय।

११ इग्यारहवे बोले गुण "स्थानक चौदह।

१ मिथ्यात्व गुणस्थानक २ सास्वादान गुणस्थानक ३ मिश्र गुणस्थानक ४ अव्रती समदृष्टि गुणस्थानक ५ देश व्रती गुणस्थानक ६ प्रमत्त सयति गुणस्थानक ७ अप्रमत्त सयति गुण स्थानक ८ (नियट्ठी) निवर्तीबादर गुण स्थानक ९ (अनियट्ठ) अनिवर्ती बादर गुण स्थानक १० सूक्ष्म सपराय गुण स्थानक ११ उपशान्त मोहनीय गुण स्थानक १२ क्षीण मोहनीय गुणस्थानक १३ सयोगी केवली गुण स्थानक १४ अयोगी केवली गुण स्थानक।

१२ बारहवे बोले पाच इन्द्रिय के २३ "विषय

---

१० जीव को पर भव म घुमावे, विभाव दशा में बनावे व अन्य रूप से दिखावे सो कर्म है।

११ सकर्मी जीवों की उन्नति की भिन्न २ अवस्था को गुणस्थान कहते हैं। अवस्था अनन्त हैं परन्तु गुणस्थान १४ ही हैं कक्षा (Class) वत्।

१२ जिस इन्द्रिय से जो २ वस्तु ग्रहण होती है वही उस इन्द्रिय का विषय है। कान का विषय शब्द।

१ श्रोतेन्द्रिय के तीन विषय–१ जीव शब्द २ अजीव शब्द ३ मिश्र शब्द।

२ चक्षु इन्द्रिय के पांच विषय-१ कृष्ण वर्ण २ नील वर्ण ३ रक्त वर्ण ४ पीत (पीला) वर्ण ५ श्वेत (सफेद) वर्ण।

३ घ्राणेन्द्रिय के दो विषय–१ सुरभि गन्ध २ दुरभि गन्ध।

४ रसेन्द्रिय के पांच विषय–१ तीक्ष्ण (तीखा) २ कटुक (कडवा) ३ कषायित (कषायला) ४ क्षार (खट्टा) ५ मधुर (मिष्ट मीठा)।

५ स्पर्शेन्द्रिय के आठ विषय–१ कर्कश २ मृदु ३ गुरू ४ लघु ५ शीत ६ उष्ण ७ स्निग्ध (चिकना) ८ रूक्ष (लुखा) एवं २३ विषय।

१३ तेरहवें बोले "मिथ्यात्व दश–१ जीव को अजीव समझे तो मिथ्यात्व २ अजीव को जीव समझे तो मिथ्यात्व ३ धर्म को अधर्म समझे तो मिथ्यात्व ४ अधर्म को धर्म समझे तो मिथ्यात्व ५ साधु को असाधु समझे तो मिथ्यात्व ६ असाधु को साधु समझे तो मिथ्यात्व ७ सुमार्ग (शुद्ध मार्ग) को कुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व ८ कुमार्ग को सुमार्ग समझे तो मिथ्यात्व ९ सर्व दुःख से

१३ जीवादि नव तत्वों की संशय युक्त वा विपरीत मान्यता होना तथा अनध्यवसाय निर्णय बुद्धि का न होना मिथ्यात्व है।

मुक्त को अमुक्त समझे तो मिथ्यात्व और १० सर्व दुख स अमुक्त को मुक्त समझे तो मिथ्यात्व।

१४ चौदहवे बोले नव ×तत्त्व के ११५ बोल।

प्रथम नव तत्त्व के नाम—१ जीव तत्त्व २ अजीव तत्त्व ३ पुण्य तत्त्व ४ पाप तत्त्व ५ आश्रव तत्त्व ६ संवर तत्त्व ७ निर्जरा तत्त्व ८ बन्ध तत्त्व ९ मोक्ष तत्त्व इन नव तत्त्व के लक्षण तथा भेद—प्रथम नव तत्त्व के अन्दर विस्तार पूर्वक लिखा गया है अतः यहां केवल संक्षेप में ही लिखा जाता है।

१ जीव तत्त्व के १४ बोल, २ अजीव तत्त्व के १४ बोल, ३ पुन्य के ९ बोल, ४ पाप के १८ बोल, ५ आश्रव के २० बोल, ६ सवर के २० बोल, ७ निर्जरा के १२ बोल, ८ बन्ध के ४ बोल और ९ मोक्ष के ४ बोल। एवं नव तत्त्व के सर्व ११५ बोल हुवे।

१५ पन्द्रहवे बोले =आत्मा आठ—१ द्रव्य आत्मा २ कषाय आत्मा ३ योग आत्मा ४ उपयोग आत्मा ५ ज्ञान आत्मा ६ दर्शन आत्मा ७ चारित्र आत्मा ८ वीर्य आत्मा।

१६ सोलहवे बोले *दण्डक २४—सात नरक के

× सार पदार्थ को तत्त्व कहते हैं।

= अपनापन—अपनापन ही आत्मा है। जीव की शक्ति किसी भी रूप में होना ही आत्मा है।

* जिस स्थान पर तथा जिस रूप में रह कर आत्मा कर्मों से दण्डाती है, वह दण्डक है। भेद अनन्त हैं परन्तु समावेश चौवीश में है।

हुवे को अनुमोदू नहीं वचन से ९ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं काय से एवं नव भांगे।

आंक एक बारह (१२) का—एक करण और दो योग से त्याग करे। इसके नव भागे—

१ करूं नहीं मन से वचन से २ करूं नहीं मन से काया से ३ करू नही वचन से काया से ४ कराऊं नहीं मन से वचन से ५ कराऊं नहीं मन से काया से ६ कराऊ नहीं वचन से काया से। ७ करते हुवे को अनुमोदू नहीं मन से वचन से ८ करते हुवे को अनुमोदू नहीं मन से काया से ९ करते हुवे को अनुमोदू नहीं वचन से काया से।

आक एक तेरह का—एक करण और तीन योग से त्याग करे। भागा तीन—

१ करू नहीं मनसे, वचन से, काया से, २ कराऊं नहीं मन से, वचन से, काया से, ३ करते हुवे को अनुमोदूं नहीं मन से, वचन से, काया से, एव कुल (९+९+३) २१ भांगा।

आक एक इकवीस का—दो करण और एक योग से त्याग करे। भांगा नव—

१ करू नहीं कराऊ नहीं मन से २ करूं नहीं कराऊ नहीं वचन से ३ करूं नहीं कराऊं नहीं काया से ४ करूं नहीं अनुमोदू नहीं मन से ५ करूं नहीं

अनुमोदू नहीं वचन से ६ करू नहीं अनुमोदू नहीं काया से ७ कराऊ नहीं अनुमोदू नहीं मनसे ८ कराऊ नहीं अनुमोदूं नहीं वचन से ९ कराऊ नहीं अनुमोदू नहीं काया से।

आंक एक बावीस का—दो करण और दो योग त्याग करे। भागा नव—

१ करुं नहीं, कराऊं नहीं, मन से, वचन से। २ करुं नहीं, कराऊ नहीं, मन से, काया से। ३ करुं नहीं, कराऊ नहीं, वचन से, काया से। ४ करु नहीं, अनुमोदू नहीं, मन से वचन से। ५ करुं नहीं, अनुमोदूं नहीं, मन से काया से। ६ करु नहीं, अनुमोदू नहीं, वचन से काया से। ७ कराऊ नहीं, अनुमोदू नहीं, मन से वचन से ८ कराऊ नहीं, अनुमोदू नहीं, मन से काया से ९ कराऊ नहीं, अनुमोदू नहीं, वचन से, काया से।

आंक एक तेवीश का—दो करण और तीन योग से त्याग लेवे। भागा तीन—

१ करु नहीं, कराऊ नहीं, मन से, वचन से, काया से। २ करु नहीं, अनुमोदू नहीं, मन से, वचन से, काया से। ३ कराऊ नहीं, अनुमोदू नहीं, मन से, वचन से, काया से। एव ४२ भागा।

आंक एक एकतीस का—तीन करण व एक योग से त्याग गृहण करे। भागा तीन—

१ करु नहीं, कराऊ नहीं, अनुमोदू नहीं, मन से। २

११ तिर्यंचणी में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१२ मनुष्य गर्भज में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१३ मनुष्यनी में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीश सिद्ध होते है।

१४ वाण व्यन्तर में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते है।

१५ वाण व्यंतर की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट पांच सिद्ध होते है।

१६ ज्योतिषी के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

१७ ज्योतिषी की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीश सिद्ध होते है।

१८ वैमानिक के निकले हुवे एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

१९ वैमानिक की देवियों में से निकले हुवे एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट वीस सिद्ध होते है।

२० स्वलिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते है।

२१ अन्य लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

२२ गृहस्थ लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

२३ स्त्री लिङ्गी एक समय मे जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते हैं।

२४ पुरुष लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

२५ नपुंसक लिङ्गी एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दश सिद्ध होते हैं।

२६ ऊर्ध्व लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

२७ अधो लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट बीस सिद्ध होते हैं।

२८ तिर्यक् (तीर्छा) लोक में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

२९ जघन्य अवगाहन वाले एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट चार सिद्ध होते हैं।

३० मध्यम अवगाहन वाले एक समय में जघन्य एक सिद्ध, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

३१ उत्कृष्ट अवगाहन वाले एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते हैं।

३२ समुद्र के अन्दर एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दो सिद्ध होते हैं।

५५ छठे आरे में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट दस सिद्ध होते हैं।

५६ अवसर्पिणी में एक समय में जघन्य एक,उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५७ उत्सर्पिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

५८ नोउत्सर्पिणी नो अवसर्पिणी में एक समय में जघन्य एक, उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।

ये ५८ बोल अन्तर सहित एक समय में जघन्य, उत्कृष्ट जो सिद्ध होते है सो कहे हैं। अब अन्तर रहित आठ समय तक यदि सिद्ध होवे तो कितने होते हैं ? सो कहते है।

१ पहले समय में जघन्य एक उत्कृष्ट १०८ सिद्ध होते हैं।
२ दूसरे ,, ,, ,, ,, ,, १०२ ,, ,,
३ तीसरे ,, ,, ,, ,, ,, ९६ ,, ,,
४ चौथे ,, ,, ,, ,, ,, ८४ ,, ,,
५ पाचवें ,, ,, ,, ,, ,, ७२ ,, ,,
६ छठे ,, ,, ,, ,, ,, ६० ,, ,,
७ सातवें ,, ,, ,, ,, ,, ४८ ,, ,,
८ आठवें ,, ,, ,, ,, ,, ३२ ,, ,,

आठ समय के बाद अन्तर पडे बिना सिद्ध नहीं होते।

॥ इति सिद्ध द्वार सम्पूर्ण ॥

चोवीस दण्डक।

चोवीस दण्डक का वर्णन सूत्र श्री जीवाभिगम जी में किया हुवा है।

गाथाः—

सरीरो गाहणा संघयण, संठाण कसाय तहहुंति सन्नाय।
लेसिंदिय समुघाए, सन्नी वेदेय पज्जत्ति॥ १॥
दिठि दसण नाणा नाण, जोगो वउग तह आहारे।
उववाय ठिइ समुहाये चवण गइ आगई चेवा॥ २॥

चोवीस द्वारों के नाम

(१) शरीर द्वार (२)×अवगाहणा द्वार (३)*संघयन द्वार (४) संस्थान = द्वार (५) कषाय द्वार (६) सञ्ज्ञा द्वार (७) लेश्या द्वार (८) इन्द्रिय द्वार (९) समुद्-घात द्वार (१०) सञ्ज्ञी असंज्ञी द्वार (११) वेद द्वार (१२) पर्याप्ति द्वार (१३) दृष्टि द्वार (१४) दर्शन द्वार (१५) ज्ञान द्वार (१६) योग द्वार (१७) उपयोग द्वार (१८) आहार द्वार (१९) उत्पत्ति द्वार (२०) स्थिति द्वार (२१) (समोहिया) मरण द्वार (२२) चवण द्वार २३ गति द्वार २४ आगति द्वार।

(१)शरीर द्वारः-शरीर पाच-१ औदारिक शरीर

× लम्बाई * शरीर की बनावट = शरीर की आकृति।

२ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तेजस् शरीर ५ कार्माण शरीर ।

इनके लक्षण:-औदारिक शरीर—जो सड़ जाय, पट जाय, गल जाय, नष्ट होजाय, बिगड जाय व मरने बाद कलेवर पड़ा रहे। उसे औदारिक शरीर कहते हैं।

२ (औदारिक का उलटा) जो सड़े नहीं, पड़े नहीं गले नहीं, नष्ट होवे नहीं व मरने बाद बिखर जावे उसे वैक्रिय शरीर कहते हैं।

३ चौदह पूर्व धारी मुनियों को जब शङ्का उत्पन्न होती है, तब एक हाथ की काया का पुतला बना कर महाविदेह क्षेत्र में श्री श्रीमंदर स्वामी से प्रश्न पूछने को भेजें। प्रश्न पूछ कर पीछे आने बाद यदि आलोचना करे तो आराधक व आलोचना नहीं करे तो विराधक कहलाते हैं। इसे आहारिक-शरीर कहते हैं।

४ तेजस् शरीर:—जो आहार करके उसे पचावे वो तेजस् शरीर।

५ कार्माण शरीर:—जीव के प्रदेश व कर्म के पुद्गल जो मिले हुवे हैं, उन्हें कार्माण शरीर कहते है।

(२) अवगाहन द्वार-जीवों में अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी (अधिक) औदारिक शरीर की अवगाहना जघन्य अङ्गुल

के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी—(वनस्पति-आश्री)।

वैक्रिय शरीर की—भव धारणिक वैक्रिय की जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की।

उत्तर वैक्रिय की जघन्य ङ्गुल के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट लच योजन की।

आहारिक शरीर की जघन्य मूढा हाथ की उत्कृष्ट एक हाथ का।

तेजस् शरीर व कार्माण शरीर की अवगाहन जघन्य अङ्गुल के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट चौदह राज लोक प्रमाणे तथा अपने अपने शरीर अनुसार।

(३)संघयन द्वारः—सघयन छ १वज्र ऋषभ नाराच सघयन २ ऋषभ नाराच सघयन ३ नाराच सघयन ४ अर्ध नाराच संघयन ५ कीलिका संघयन ६ सेवार्त्त सघयन।

१ वज्र ऋषभ नाराच सघयन—वज्र अर्थात् किल्ली, ऋषभ याने लपेटने का पाटा अर्थात् ऊपर का वेष्टन, नाराच याने दोनों ओर का मर्कट बध अर्थात् सन्धि और सघयन याने हाड़कों का संचय-अर्थात् जिस शरीर में हाड़के दो पुड़ से, मर्कट बध से बधे हुवे हों, पाटे के समान हाड़के वींटे हुवे हो व तीन हाड़कों के अन्दर वज्र की किल्ली लगी हुई हो वो वज्र ऋषभ नाराच सघयन (अर्थात् जिस शरीर

की हड्डिया, हड्डी की संधियां व ऊपर का वेष्टन वज्र का होवे किल्ली भी वज्र की होवे)।

२ ऋषभ नाराच संघयन-ऊपर लिखे अनुसार। अंतर केवल इतना कि इसमें वज्र अर्थात् किल्ली नहीं होती है।

३ नाराच संघयन-जिसमें केवल दोनों तरफ मर्कट बंध होते हैं।

४ अर्ध नाराच संघयन-जिसके एक तरफ मर्कट बंध व दूसरी (पडदे) तरफ किल्ली होती है।

५ कीलिका संघयन-जिसके दो हड्डियों की संधि पर किल्ली लगी हुई होवे।

६ सेवार्त्त संघयन-जिसकी एक हड्डी दूसरी हड्डी पर चढ़ी हुई हो (अथवा जिसके हाड अलग अलग हो, परंतु चमड़े से बंधे हुवे हो)।

(४) संस्थान द्वार-संस्थान छः-१समचतुरस्र संस्थान २ निग्रोध परिमण्डल संस्थान ३ सादिक संस्थान ४ वामन संस्थान ५ कुब्ज संस्थान ६ हुण्डक संस्थान।

१ पाव से लगा कर मस्तक तक सारा शरीर सुन्दराकार अथवा शोभायमान होवे सो समचतुरस्र संस्थान।

२ जिस शरीर का नाभि से ऊपर तक का हिस्सा सुन्दराकार हो परंतु नीचे का भाग खराब हो (वट वृक्ष सदृश) सो न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान।

३ जो केवल पाव से लगा कर नाभि (या कटि) तक सुन्दर होवे सो सादिक सस्थान।

४ जो ठेंगना (५२ अङ्गुल का) हो सो वामन संस्थान।

५ जिस शरीर के पाव, हाथ, मस्तक, ग्रीवा न्यूनाधिक हो व कूबड निकली होवे और शेष अवयव सुंदर होवे सो कुब्ज संस्थान।

६ हुण्डक संस्थान–रुड, मूढ, मृगा पुत्र, रोहवा के शरीर के समान अर्थात् सारा शरीर बेडौल होवे सो हुण्डक सस्थान।

(५) कषाय द्वार–कषाय चार–१ क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ।

(६) संज्ञा द्वारः–सज्ञा चार–१आहार सज्ञा २ भय संज्ञा ३ मैथुन सज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा।

(७) लेश्या द्वारः–लेश्या छः–१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

(८)इन्द्रिय द्वारः–इन्द्रिय पाच-१ श्रुतेन्द्रिय २ चक्षु इन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसेन्द्रिय ५ स्पर्शेन्द्रिय।

(९) समुद्घात द्वारः–समुद्घात सात १ वेदनीय समुद्घात २ कषाय समुद्घात ३ मारणांतिक समुद्घात

२० स्थिति द्वारः स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तेंवीस सागरोपम की।

२१ मरण द्वारः-समोहिया मरण, असमोहिया मरण। समोहिया मरण जो चींटी की चाल के समान चाले व असमोहिया मरण जो दड़ी के समान चाले (अथवा बन्दूक की गोला समान)

२२ चवण द्वारः--चोवीस ही दण्डक में जावे-पहले कहे अनुसार।

आगति द्वारः-चार गति में से आवे १ नरक गति में से २ तिर्यंच गति में से ३ मनुष्य गति में से ४ देव की गति में से।

गति द्वारः-पाच गति में जावे १ नरक गति में २ तिर्यञ्च गति में ३ मनुष्य गति में ४ देव गति में ५ सिद्ध गति में।

॥ इति समुच्चय चोवीस द्वार ॥

नारकी का एक तथा देवता के तेरह दण्डक एवं १४ दण्डक लिख्यते

शरीर द्वारः-

नारकी में शरीर पावे तीन १ वैक्रिय २ तेजस् ३ कार्माण। देवता में शरीर तीन १ वैक्रिय २ तेजस् ३ कार्माण।

अवगाहन द्वारः-

१ पहेली नारकी की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्य तवें भाग,उत्कृष्ट पोना आठ धनुष्य और छः अङ्गुल।

२ दूसरी नारकी की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट साड़ा पन्द्रह धनुष्य व चार अङ्गुल ।

३ तीसरी नारकी की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असख्यातवें भाग, उत्कृष्ट सवाएकतीस धनुष्य की ।

४ चौथी नरक की अवगाहना जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट साढा बासठ धनुष्य की ।

५ पाचवें नरक की जघन्य अङ्गुल के असंख्यातवें उत्कृष्ट १२५ धनुष्य की ।

६ छट्ठे नरक की जघन्य अगुल के असख्यातवें भाग, उत्कृष्ट २५० धनुष्य की ।

७ सातवें नरक की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट ५०० धनुष्य की । उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अगुल के असंख्यातवें भाग,उत्कृष्ट-जिस नरक की जितनी उत्कृष्ट अवगाहना है उससे दुगनी वैक्रिय करे (यावत् सातवें नरक की एक हजार अवगाहना जानना ।)



१ भवन पति के देव व देवियों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ की ।

२ वाण व्यन्तर के देव व देवियों की अवगाहन जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ की।

ज्योतिषी देव व देवियों की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ की।

वैमानिक की अवगाहना नीचे लिखे अनुसारः-

पहले तथा दूसरे देवलोक के देव व देवियों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट सात हाथ की। तीसरे, चौथे देवलोक के देव की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट छः हाथ की। पांचवें, छठे देवलोक के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट पाच हाथ की।

सातवें, आठवें देवलोक के देवों की जघन्य अंगुल के असख्यातवें भाग, उत्कृष्ट चार हाथ की।

नववें, दशवें, इग्यारहवें व बारहवें देवलोक के देवों की जघन्य अंगुल के असख्यातवें भाग, उत्कृष्ट तीन हाथ की। नव ग्रैवेक (ग्रीयवेक) के देवों की जघन्य अगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट दो हाथ की।

चार अनुत्तर विमान के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग,उत्कृष्ट एक हाथ की।

पाचवें अनुत्तर विमान के देवों की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट मूढा (एक मूठ कम) हाथ की। भवनपति से लगाकर बारह देवलोक पर्यन्त उत्तर

वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के सख्यातवें भाग, उत्कृष्ट लक्ष योजन की।

नव ग्रैवेक तथा पाच अनुत्तर विमान के देव उत्तर वैक्रिय नहीं करते।

३ संघयन द्वार।

नरक के नेरिये असघयनी। देव असघयनी।

४ संस्थान द्वार।

नरक में हुण्डक सस्थान व देवलोक के देवों का समचतुरस्र संस्थान।

५ कषाय द्वार।

नरक में चार कषाय व देवलोक में भी चार।

६ सज्ञा द्वार:—

नारकी में सज्ञा चार, देवलोक में सज्ञा चार।

७ लेश्या द्वार:—

नारकी में लेश्या तीन:—

पहली दूसरी नरक में कापोत लेश्या।
तीसरी नरक में कापोत व नील लेश्या।
चौथी नरक में नील लेश्या।
पाचवीं नरक में कृष्ण व नील लेश्या।
छट्ठी नरक में कृष्ण लेश्या।
सातवीं नरक में महाकृष्ण लेश्या।

भवन पति व वाणव्यन्तर में चार लेश्या १ कृष्ण २ नील ३ कापोत ४ तेजो।

ज्योतिषी, पहेला व दूसरा देवलोक में–१ तेजो लेश्या।
तीसरे, चौथे व पाचवें देवलोक में–१ पद्म लेश्या।
छठे देवलोक से नव ग्रेवेक(ग्रीयवेक)तक १ शुक्ल लेश्या।
पाच अनुत्तर विमान में–१ परम शुक्ल लेश्या।

८ इन्द्रिय द्वारः—

नरक में पांच व देवलोक में पाच इन्द्रिय।

९ समुद् घात द्वारः—

नरक में चार समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय।

देवताओं में पाच–१ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक ४ वैक्रिय ५ तेजस्।

भवन पति से बारहवें देवलोक तक पाच समुद्घात नव ग्रीयवेक से पांच अनुत्तर विमान तक तीन समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक।

१० संज्ञी द्वारः—

पहली नरक में संज्ञी व * असंज्ञी और शेष नरकों में संज्ञी।

* असंज्ञी तिर्यञ्च मर कर इस गति में उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्ता दशा में असंज्ञी है। पर्याप्ता होने बाद अवधि तथा विभंग ज्ञान उत्पन्न होता है। इस अपेक्षा से समझना चाहिये।

भवन पति, वाण व्यन्तर में—सज्ञी, असज्ञी।
ज्योतिषी से अनुत्तर विमान तक सज्ञी।

११ वेद द्वारः—

नरक में नपुंसक वेद, भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी, तथा पहले दूसरे देवलोक में १ स्त्री वेद २ पुरुष वेद शेष देवलोक में १ पुरुष वेद।

१२ पर्याप्ति द्वारः—

(भाषा, व मन दोनों एक साथ बाधते हैं) नरक में पर्याप्ति पाच और अपर्याप्ति पाच, देवलोक में पर्याप्ति पाच और अपर्याप्ति पाच।

१३ दृष्टि द्वारः—

नरक में दृष्टि तीन, भवन पति से बारहवें देवलोक तक दृष्टि तीन, नव ग्रीवेयक में दृष्टि दो (मिश्र दृष्टि छोड़ कर) पाच अनुत्तर विमान में दृष्टि १ सम्यग् दृष्टि।

१४ दर्शन द्वारः—

नरक में दर्शन तीन—१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन।

देवलोक में दर्शन तीन—१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन।

१५ ज्ञान द्वारः—

नरक में तीन ज्ञान व तीन अज्ञान। भवन पति से नव

ग्रीयवेक तक तीन ज्ञान व तीन अज्ञान । पाच अनुत्तर विमान में केवल तीन ज्ञान, अज्ञान नहीं ।

१६ योग द्वारः-

नरक में तथा देवलोक में इग्यारह इग्यारह योग-१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मन योग ४व्यवहार मनयोग ५सत्य वचन योग ६असत्य वचन योग ७मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ वैक्रिय शरीर काय योग१०वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग११कार्मण शरीर काय योग ।

१७ उपयोग द्वारः-

नरक, व भवन पति से नव ग्रीयवेक तक उपयोग नव-१ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५ श्रुत अज्ञान उपयोग ६ विभंग ज्ञान उपयोग ७ चक्षु दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन उपयोग ९ अवधि दर्शन उपयोग ।

पांच अनुत्तर विमान में ६ उपयोग तीन ज्ञान और तीन दर्शन ।

१८ आहार द्वारः-

नरक व देवलोक में दो प्रकार का आहार १ ओजस २ रोम छः ही दिशाओं का आहार लेते हैं । परन्तु लेते हैं एक प्रकार का-नेरिये अचित्त आहार करते हैं किन्तु अशुभ और देवता भी अचित्त आहार करते है किन्तु शुभ ।

१६ उत्पत्ति द्वार और २२ चवन द्वारः-

पहेली नरक से छट्ठी नरक तक मनुष्य व तिर्यंच पचेन्द्रिय-इन दो दण्डक के आते है-व दो ही (मनुष्य, तिर्यच) दण्डक में जाते है।

सातवीं नरक में दो दण्डक के आते हैं-मनुष्य व तिर्यच, व एक दण्डक में-तिर्यच पचेन्द्रिय-में जाते है।

भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी तथा पहले दूसरे देवलोक में दो दण्डक-मनुष्य व तिर्यच के आते है व पाच दण्डक में जाते हैं १ पृथ्वी २ अप ३ वनस्पति, ४ मनुष्य ५ तिर्यच पंचेंद्रिय।

तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक दो दण्डक मनुष्य और तिर्यच-का आवे और दो ही दण्डक में जावे।

नवमें देवलोक से अनुत्तर विमान तक एक दण्डक मनुष्य का आवे और एक मनुष्य-ही में जावे।

२० स्थिति द्वारः-

पहले नरक के नेरियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर की।

दूसरे नरक की ज० १ सागर की,उ० ३ सागर की।
तीसरे नरक की ज० ३ सागर की,उ० ७ सागर की।
चौथे नरक की ज० ७ सागर की,उ० १० सागर की।
पाचवें नरक की ज० १०सागर की, उ०१७सागर की।
छठे नरक की ज० १७सागर की,उ० २२ सागर की।

सातवें नरक की ज० २२ सागर की,उ० ३३ सागर की।

दक्षिण दिशा के असुर कुमारके देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट एक सागरोपम की। इनकी देवियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट ३॥ पल्योपम की। इनके नवनिकाय के देवों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट १॥ पल्योपम की। इनकी देवियों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की उत्कृष्ट पौन पल्य की।

उत्तर दिशा के असुर कुमार के देवों की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष की, उत्कृष्ट एक सागर जाजेरी। इनकी देवियों की स्थिति ज, दश हजार वर्ष की, उ. ४॥ पल्य की। नवनिकाय के देव की ज. दश हजार वर्ष उ. देश उणा (कम) दो पल्योपम की, इनकी देवियों की ज. दश हजार वर्ष की उ. देश उणा (कम)एक पल्योपम की।

वाण व्यन्तर के देव की स्थिति ज. दश हजार वर्ष की, उ. एक पल्य की। इनकी देवियों की ज. दश हजार वर्ष की, उ. अर्ध पल्य की।

चन्द्र देव की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. एक पल्य और एक लक्ष वर्ष की। देवियों की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. अर्ध पल्य और पचास हजार वर्ष की।

सूर्य देव की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. एक पल्य और एक हजार वर्ष की। देवियों की ज. पाव पल्य की उ. अर्ध पल्य और पाचसो वर्ष की।

ग्रह (देव) की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. एक पल्य की। देवी की ज.पाव पल्य की उत्कृष्ट अर्ध पल्य की।

नक्षत्र की स्थिति ज. पाव पल्य की उ. अर्ध पल्य की। देवी की ज. पाव पल्य की उ. पाव पल्य जाजेरी।

तारा की स्थिति ज. पल्य के आठवें भाग उ पाव पल्य की। देवी की ज. पल्य के आठवें भाग उ. पल्य के आठवें भाग जाजेरी।

पहले देवलोक के देव की ज. एक पल्य की उ. दो सागर की। देवी की ज. एक पल्य की उ. सात पल्य की। अपरिगृहिता देवी की ज. एक पल्य की उ. ५० पल्य की।

दूसरे देवलोक के देव की ज. एक पल्य जाजेरी उ. दो सागर जाजेरी, देवी की ज. एक पल्य जाजेरी उ. नव पल्य की। अपरिगृहिता देवी की ज. एक पल्य जाजेरी उ. पंचावन पल्य की।

तीसरे देवलोक के देव की ज. २ सागर की उ. ७ सागर
चौथे " " " " " २ " जाजेरी " ७ " जा.
पाचवें " " " " " ७ " की " १० " की
छट्ठे " " " " १० " " " १४ " "
सातवें " " " " १४ " " " १७ " "
आठवें " " " " १७ " " " १८ " "
नवें " " " " १८ " " " १९ " "
दशवें " " " " १९ " " " २० " "

इग्यारवें	"	"	"	"	२०	"	"	"	२१	" "
बारवें	"	"	"	"	२१	"	"	"	२२	" "
पहेली ग्रीयवेक	"	"		"	२२	"	"	"	२३	" "
दूसरी	"	"	"	"	२३	"	"	"	२४	" "
तीसरी	"	"	"	"	२४	"	"	"	२५	" "
चौथी	"	"	"	"	२५	"	"	"	२६	" "
पाचवी	"	"	"	"	२६	"	"	"	२७	" "
छट्ठी	"	"	"	"	२७	"	"	"	२८	" "
सातवीं	"	"	"	"	२८	"	"	"	२९	" "
आठवीं	"	"	"	"	२९	"	"	"	३०	" "
नवीं	"	"	"	"	३०	"	"	"	३१	" "
चार अनुत्तर विमान	"	"		"	३१	"	"	"	३३	" "

पांचवें अनुत्तर विमान की ज. उ. ३३ सागरोपम की।

२१ मरण द्वारः—

१ समोहिया और २ असमोहिया।

२३ आगति और २४ गति द्वारः—

पहली नरक से छट्ठी नरक तक दो गति—मनुष्य और तिर्यंच—का आवे और दो गति मनुष्य, तिर्यंच में जावे। सातवीं नरक में दो गति -मनुष्य, तिर्यंच का आवे और एक गति- तिर्यंच में जावे।

भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी यावत् आठवें देवलोक तक दो गति—मनुष्य और तिर्यंच का आवे और दो गति—मनुष्य और तिर्यंच में जावे।

नवें देवलोक से स्वार्थ सिद्ध तक एक गति-मनुष्य का आवे और एक गति-मनुष्य-में जावे।

॥ इति नारकी तथा देव लोक का २४ दण्डक ॥

॥ पांच एकेन्द्रिय का पांच दण्डक ॥

वायु काय का छोड शेष चार एकेन्द्रिय में शरीर तीन १ औदारिक २ तेजस् ३ कार्मण।

वायुकाय में चार शरीर १ औदारिक २ वैक्रिय ३ तेजस् ४ कार्मण।

अवगाहन द्वारः—

पृथ्व्यादि चार एकेन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग।

वनस्पति की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन जाजेरी कमल नाल आश्री।

३ संघयन द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में सेवार्त संघयन।

४ संस्थान द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में हुण्डक संस्थान।

५ कषाय द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में कषाय चार।

६ संज्ञा द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय में संज्ञा चार।

७ लेश्या द्वारः—

पृथ्वी, अप व वनस्पति काय के-अपर्याप्ता में लेश्या चार १ कृष्ण २ नील ३ कापोत ४ तेजो । पर्याप्ता में तीन–१ कृष्ण २ नील ३ कापोत। तेजस् (अग्नि) और वायुकाय में तीन–१ कृष्ण २ नील ३ कापोत।

८ इन्द्रिय द्वारः—

पाच एकेन्द्रिय में एक इन्द्रिय—स्पर्शेन्द्रिय ।

९ समुद्घात द्वारः—

वायु काय को छोड़ कर शेष चार एकेन्द्रिय में तीन समुद्घात १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक । वायु काय में चार १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणान्तिक ४ वैक्रिय।

१० सज्ञी द्वारः—

पाचों एकेन्द्रिय असज्ञी ।

११ वेद द्वारः—

पाच एकेन्द्रिय में नपुंसक वेद ।

१२ पर्याप्ति द्वारः—

पाच एकेन्द्रिय में पर्याप्ति चार (पहेली) अपर्याप्ति चार।

१३ दृष्टि द्वारः—

पाच एकेन्द्रिय में एक मिथ्यात्व दृष्टि ।

१४ दर्शन द्वार —

पांच एकेन्द्रिय में एक अचक्षु दर्शन ।

१५ ज्ञान द्वार —

पाच एकेन्द्रिय में दो अज्ञान १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान।

१६ योग द्वारः—

वायु काय को छोड़ कर शेष चार एकेन्द्रिय में योग तीन१ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग। वायु काय में योग पाच १ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ वैक्रिय शरीर काय योग ४ वैक्रिय मिश्र शरीर काय योग ५ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वारः—

पाच एकेन्द्रिय में उपयोग तीन १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ अचक्षु दर्शन।

१८ आहार द्वारः—

पांच एकेन्द्रिय तीन दिशाओं का, चार दिशाओं का, पाच दिशाओं का आहार लेवे व्याघात न पड़े तो छः दिशाओं का आहार लेवे आहार दो प्रकार का १ ओजस २ रोम ये १ सचित २ अचित ३ मिश्र तीनों तरह का लेते हैं।

१९ उत्पति द्वार २२ चवन द्वारः—

पृथ्वी, अप्, वनस्पति काय में नरक छोड़ कर शेष २३ दण्डक का आवे और दश दण्डक में जावे-पांच

एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य व तिर्यंच एव दश दण्डक।

तेजस् काय, वायु काय में दश दण्डक का आवे-पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य, तिर्यंच-एव दश और नव दण्डक में जावे, मनुष्य छोड़ कर शेष ऊपर समान।

२० स्थिति द्वारः-

पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट बावीस हजार वर्ष की।

अप् काय की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट सात हजार वर्ष की। तेजस् काय की ज. अन्तर मुहूर्त की उ. तीन अहोरात्रि की। वायु काय की ज. अन्तर मुहूर्त की उ. तीन हजार वर्ष की। वनस्पति काय की ज. अन्तर मुहूर्त की उ. दश हजार वर्ष की।

२१ मरण द्वारः-

इनमें समोहिया मरण और असमोहिया मरण दोनों होते है।

२३ आगति द्वार २४ गति द्वारः-

पृथ्वी काय, अप काय, वनस्पति काय, इन तीन एकेन्द्रिय में तीन-१ मनुष्य २ तिर्यंच ३ देव-गति का आवे और १ मनुष्य २ तीर्यंच- दो गति में जावे। तेजस् और वायु काय में १ मनुष्य २ तिर्यच दो गति का आवे और तिर्यंच- एक गति में जावे।

॥ इति पाच एकेन्द्रिय का पांच दण्डक सम्पूर्ण॥

बे इन्द्रिय, त्रेन्द्रिय, चौरिन्द्रिय और तिर्यंच समूर्छिम पचेन्द्रि के दण्डक–

शरीर द्वारः–

बेइन्द्रिय, त्रेन्द्रिय, चौरिन्द्रिय व तिर्यंच समूर्छिम पंचेन्द्रिय में शरीर तीन १ औदारिक २ तैजस् ३ कार्मण।

२ अवगाहन द्वारः–

बेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट बारह योजन की। त्रेइन्द्रिय की अवगाहना जघन्य अगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन गाउ (६ मील) की। चौरिन्द्रिय की जघन्य अगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चार गाउ की। तिर्यंच समूर्छिम पचेन्द्रिय की ज. अगुल के असंख्यातवें भाग उ. नीचे अनुसारः–

गाथा–जोयण सहस्स, गाउअ पुहुत्त तत्तो जोयण पुहुत्त,
दोण्ह तु धणुह पुहुत्तं समूर्छिमें होइ उच्चत्त

१ जलचर की एक हजार योजन की।

२ स्थलचर की प्रत्येक गाउ की (दो से नव गाउ तक की)

३ उरपर (सर्प) की प्रत्येक योजन की (दो से नव योजन तक)

१६ योग द्वार

इनमें योग पावे चार:-१औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग ४ व्यवहार वचन योग।

१७ उपयोग द्वार

बे इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय के अपर्याप्ति में पाच उपयोग १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ मति अज्ञान ४ श्रुत अज्ञान ५ अचक्षु दर्शन पर्याप्ति में तीन उपयोग-दो अज्ञान और एक-अचक्षु-दर्शन। चौरिन्द्रिय और तिर्यंच संमूर्छिम पंचेन्द्रिय के अपर्याप्ति में छः उपयोग १ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुत ज्ञान उपयोग ३ मति अज्ञान उपयोग ४ श्रुत अज्ञान उपयोग ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु। पर्याप्ति में चार उपयोग दो अज्ञान और दो दर्शन।

१८ आहार द्वार

आहार छः दिशाओं का लेवे, आहार तीन प्रकार का ओजस् २ रोम ३ कवल और १ सचित्त २ अचित्त ३ मिश्र।

१६ उत्पत्ति द्वार २२ चवन द्वार

बे इन्द्रिय, त्री इन्द्रिय, चौरिन्द्रिय में, दश दण्डक-पांच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, मनुष्य और तिर्यंच का आवे और दश ही दण्डक में जावे। तिर्यंच समूर्छिम पंचेन्द्रिय में दश दण्डक का आवे- (ऊपर कहे हुवे) और

ज्योतिषी वैमानिक इन दो दण्डक को छोड़ कर शेष २२ दण्डक में जावे।

२० स्थिति द्वार

बे इन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट बारह वर्ष की। त्रीइन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ४६ दिन की। चौरिन्द्रिय की ज० अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट छः मास की। तिर्यंच संमूर्छिम पचेन्द्रिय की नीचे अनुसार—

गाथा—पुव्व कोडि चउरासी, तेवन, बायालीस, बहुत्तर।
सहसाइं वासाइं समुछिमे आउयं होइ॥

जलचर की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट क्रोड़ पूर्व वर्ष की। स्थलचर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उ० चोराशी हजार वर्ष की। उरपर (सर्प) की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ५३ हजार वर्ष की, भुज पर (सर्प) की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ४२ हजार वर्ष की, खेचर की जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ७२ हजार वर्ष की।

२१ मरण द्वार

समोहिया मरण: चींटी की चाल के समान जिस की गति हो।

असमोहिया मरण—बन्दूक की गोली के समान जिसकी गति हो।

(१५) ज्ञान द्वारः-ज्ञान तीनः- १ मति ज्ञान २ श्रुतज्ञान ३ अवधि ज्ञान । अज्ञान भी तीन १ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ विभंग ज्ञान ।

(१६) योग द्वारः-योग तेराः--१ सत्य मनयोग २ असत्य मनयोग ३ मिश्र मनयोग ४ व्यवहार मनयोग ५ सत्य वचनयोग ६ असत्य वचनयोग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ९ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काययोग ११ वैक्रिय शरीर काययोग १२ वैक्रिय मिश्र शरीर काययोग १३ कार्मण शरीर काययोग ।

(१७) उपयोग द्वार.-तिर्यंच गर्भज में उपयोग ९ (नौ) १ मति ज्ञान उपयोग २ श्रुतज्ञान ३ अवधि ज्ञान उपयोग ४ मति अज्ञान उपयोग ५श्रुत अज्ञान उपयोग ६विभंग ज्ञान उपयोग ७चक्षु दर्शन उपयोग ८ अचक्षु दर्शन उपयोग ९अवधि दर्शन उपयोग।

(१८) आहार -आहार तीन प्रकार का ।

(१९) उत्पत्तिद्वारः (२२) चवन द्वारः-चोवीस दंडक में उपजे, चोवीस दंडक में जावे।

(२०) स्थिति द्वारः-जलचर कीः जघन्य अन्तर मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व वर्ष की।

स्थलचर कीः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य की।

उरपरि सर्प कीः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व वर्ष की।

भुजपरि सर्प कीः जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व वर्ष की।

खेचर कीः- जघन्य अन्त र्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्य के असख्यातवें भाग की।

(२१) मरण द्वारः-समोहिया मरण असमोहिया मरण।

(२३) आगति द्वार (२४) गति द्वारः-तिर्यंच गर्भज पचेंद्रिय में चार गति के जीव आवे और चार गति में जावे।

॥ तिर्यंच पंचेन्द्रिय का दंडक सम्पूर्ण ॥



मनुष्य गर्भेज पचेन्द्रिय का एक दडक

१ शरीर:–मनुष्य गर्भेज में शरीर पांच।

२ अवगाहना द्वार:—अवसर्पिणी काल में मनुष्य गर्भेज की अवगाहना पहिला आरा लगते तीन गाउ की, उतरते और दो गाउ की, दूसरा आरा लगते दो गाउ की, उतरते एक गाउ की।

तीसरे आरे लगते १ गाउकी उतरते आरे ५०० धनुष्य की
चौथे आरे ,, ५०० धनुष्यकी ,, ,, सात हाथ की
पाचवें ,, ,, ७ हाथ की ,, ,, एक हाथ की
छटे ,, ,, १ ,, ,, ,, ,, मूढा हाथ की

उत्सर्पिणी काल मे

पहिले आरे लगते मुढा हाथ की उतरते आरे १ हाथ की
दूसरे ,, ,, १ ,, ,, ,, ,, ७ हाथ की
तीसरे ,, ,, ७ ,, ,, ,, ,, ५०० हाथ की
चोथे ,, ,, ५०० धनुष्य की ,, ,, १ गाउ की
पाचवे ,, ,, १ गाउ की ,, ,, २ ,, ,,
छठे ,, ,, २ ,, ,, ,, ,, ३ ,, ,,

मनुष्य वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग उत्कृष्ट लक्ष जोजन जाजेरी (अधिक)

३ संघयन द्वार—संघयन छः ही पावे

४ संस्थान द्वार—संस्थान ,, ,, ,,

५ कषाय द्वार:—कषाय चार ,, ,,

६ संज्ञा द्वार—संज्ञा चार " "
७ लेश्या द्वार— लेश्या छः " "
८ इन्द्रिय द्वार-इन्द्रिय पाच " "
९ समुद् घात द्वार-समुद् घात सात" "
१० सज्ञी द्वार-ये सज्ञी हैं
११ वद द्वार—वेद तीन ही पावे
१२ पर्याप्ति द्वार इनमें पर्याप्ति छः अपर्याप्ति छः
१३ दृष्टि द्वार— " दृष्टि तीन
१४ दर्शन "— " दर्शन चार
१५ ज्ञान "— " ज्ञान पाच, अज्ञान तीन
१६ योग "— " योग पन्द्रह
१७ उपयोग"- " उपयोग बारह
१८ आहार "— " आहार तीन प्रकार का

१९ उत्पत्ति द्वार-मनुष्य गर्भज में-तैजस, वायु काय को छोड़ कर शेष नावीश दंडक का आवे।

२२ चवन द्वारः-चोवीश ही दण्डक में जावे-ऊपर कहे अनुसार।

२० स्थिति द्वार अवसर्पिणी काल मे

पहिले आरे लगते तीन पल्यकी स्थिति उतरते आरे दो पल्यकी
दूसरे " " दो " " " " " एक " "
तीसरे " " एक " " " " " करोड़ पूर्व,"
चौथे " " करोड़ पूर्व " " " "२००-

पाचवें " " २०० वर्ष उणी " " " " वीश वर्ष "
छट्ठे " " २० वर्ष की " " " सोलह " "

उत्सर्पिणी काल में

पहिले आरे लगते १६ वर्ष की स्थिति उतरते आरे २० वर्षकी
दूसरे " " २० वर्ष " " " " २०० वर्ष "
तीसरे " " २०० " " " " " करोड पूर्व "
चौथे " " करोड पूर्व की " " " एक पल्य "
पांचवें " " एक पल्य " " " " दो " "
छट्ठे " " दो " " " " " तीन " "

२१ मरण द्वारः—मरण दो—१ समोहिया और २ असमोहिया।

२३ आगति द्वारः—मनुष्य गर्भेज में चार गति का आवे १ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति।

२४ गति द्वारः—मनुष्य गर्भेज पांच ही गति में जावे।

॥ इति मनुष्य गर्भेज का दण्डक सम्पूर्ण ॥

मनुष्य संमूर्छिम का दण्डक

१ शरीरः—इनमें शरीर पावे तीन-औदारिक, तैजस, कामर्ण।

२ अवगाहना द्वार

इनकी अवगाहना जघन्य अगुल के असख्यातवें भाग व उत्कृष्ट अगुल के असंख्यातवें भाग।

३ सघयन द्वार-इनमें सघयन एक-सेवार्त्त

४ संस्थान "— " सस्थान एक-हुण्डक

५ कषाय "— " कषाय चार

६ सज्ञा "— " सज्ञा चार

७ लेश्या "— " लेश्या तीन कृष्ण,नील, कापोत

८ इन्द्रिय "— " इन्द्रिय पाच

६ समुद्घात द्वारः-इन में समु० तीन-वेदनीय, कषाय, मारणातिक।

१० संज्ञी ,,—,,ये असज्ञी हैं।

११ वेद द्वारः-इन में वेद एक-नपुंनक

१२ पर्याप्ति द्वारः-,,पर्याप्ति चार, अपर्याप्ति पाच

१३ दृष्टि,,-,, दृष्टि एक १ मिथ्यात्व दृष्टि

१४ दर्शन,,-,,दर्शन दो चक्षु और अचक्षु दर्शन

१५ज्ञान,-,ज्ञान नहीं, अज्ञान दो मति और श्रुत अज्ञान।

१६ योग,,-,,योग तीन १ औदारिक शरीर काय योग २ औदारिक मिश्र शरीर काय योग ३ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार

उपयोग चार १ मति अज्ञान उपयोग २ श्रुत अज्ञान उपयोग ३ चक्षु दर्शन उपयोग ४ अचक्षु दर्शन उपयोग

१८ आहार द्वार

आहार दो प्रकार का—ओजस्, रोम० वे-सचित, अचित, मिश्र तीनों ही तरह का लेते हैं।

१९ उत्पत्ति द्वार

मनुष्य समूर्छिम में आठ दण्डक का आवे १ पृथ्वी काय २ अप काय ३ वनस्पति काय ४ बे इन्द्रिय ५ त्री इन्द्रिय ६ चौरिन्द्रिय ७ मनुष्य ८ तिर्यंच पंचेन्द्रिय।

२२ चवन द्वार

ये दश दण्डक में जावे—पांच एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय मनुष्य और तिर्यंच।

२० स्थिति द्वार

इनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त की।

२१ मरण द्वार-मरण दो प्रकार का-समोहिया, असमोहिया।

२३ आगति द्वार-इन में दो गति का आवे-मनुष्य तिर्यंच।

२४ गति द्वार-दो गति में जावे—मनुष्य और तिर्यंच



युगलिया का दण्डक।

१ शरीर द्वार-युगलियों में शरीर तीन १ औदारिक २ तेजस् ३ कार्मण।

२ अवगाहना द्वार

हेम वय हिरण्य वय में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट एक गाउ की, हरिवास रम्यक वास में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट दो गाउ की, देव कुरू, उत्तर कूरू में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन गाउ की, छप्पन्न अन्तर द्वीप में आठ सो धनुष्य की।

३ संघयन द्वार

युगलियों में संघयन एक १ वज्र ऋषभ नाराच संघयन

४ संस्थान द्वार

युग लियों में संस्थान एक-१ समचतुरंस्र संस्थान।

५ कषाय द्वारः-युगालियों में कषाय चार।

६ संज्ञा द्वार- ,, ,, संज्ञा चार

७ लेश्या द्वार- ,, ,, लेश्या चार कृष्ण, नील, कपोत, तेजो

८ इन्द्रिय द्वार- ,, ,, इन्द्रिय पांच

९ समुद्घात ,, - ,, ,, समुद्घात तीन १ वेदनीय २ कषाय ३ मारणांतिक

१० संज्ञी द्वार-युगलिया संज्ञी।

११ वेद ,, —इनमें वेद दो १ स्त्री

१२ पर्याप्ति द्वारः—इनमें पर्याप्ति ६

१३ दृष्टि द्वारः— ❀ पांच देव कुरू,
में दृष्टि दो—१
मिथ्यात्व दृष्टि।

पाच हरिवास पांच रम्यक वास,
हिरण्य वय—इन बीश अकर्मभूमि में व ७
में दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि।

१४ दर्शन द्वारः—इनमें दर्शन दो १
अचक्षु दर्शन।

१५ ज्ञान द्वार — ❀ पांच देव कुरू, पाच
में दो ज्ञान—मति और श्रुत
२ अज्ञान- मति अज्ञान
अज्ञान, शेष बीश अकर्म भू
छप्पन्न अन्तर द्वीप में दो
मति अज्ञान और २ श्रुत

१६ योग द्वार

इन में योग ११:—१ सत्य मन योग २
योग ३ मिश्र मन योग ४ व्यवहार मन योग ५

❀ ३० अकर्म भूमि मे २ दृष्टि २ ज्ञान तथा २ अज्ञान होते हैं औ
अन्तर द्वीप में ही १ मिथ्यात्व दृष्टि व २ अज्ञान होते हैं ऐसा कह
वर्णन आता है।

वचन योग ६ असत्य वचन योग ७ मिश्र वचन योग ८ व्यवहार वचन योग ६ औदारिक शरीर काय योग १० औदारिक मिश्र शरीर काय योग ११ कार्मण शरीर काय योग।

१७ उपयोग द्वार

❀ पाच देव कुरु, पाच उत्तर कुरु में उपयोग ६– १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ मति अज्ञान ४ श्रुत अज्ञान ५ चक्षु दर्शन ६ अचक्षु दर्शन। शेष वीश अकर्म भूमि व छप्पन्न अन्तर द्वीप में उपयोग ४:–१ मति अज्ञान २ श्रुत अज्ञान ३ चक्षु दर्शन ४ अचक्षु दर्शन।

१८ आहार द्वार

युगलियों में आहार तीन प्रकार का।

१६ उत्पत्ति द्वार व २२ चवन द्वार

तीश अकर्म भूमि में दो दण्डक का आवे १ मनुष्य २ तिर्यंच और १३ दण्डक में जावे दश भवन पति के दश दण्डक, एक वाण व्यन्तर का, एक ज्योतिषी का, एक वैमानिक का–एव तेरह दण्डक।

छप्पन्न अन्तर द्वीप में दो दण्डक का आवे और तिर्यंच और इग्यारह दण्डक में और एक वाण व्यन्तर एव इग्यारह

---

* ३० अकर्म भूमि में ६ उपयोग (२ और ५६ अन्तर द्वीप में ४ उपयोग (२ ऐसा अन्य ग्रथो में वर्णन है।

२० स्थिति द्वार

हेमवय, हिरएय वय में जघन्य एक पल्य में देश उणी, उत्कृष्ट एक पल्य की।

हरिवास रम्यक वास में जघन्य दो पल्य में देश उणी उत्कृष्ट दो पल्य की, देव कुरू उत्तर कुरू में जघन्य तीन पल्य में देश उणी उत्कृष्ट तीन पल्य की।

छप्पन्न अन्तर द्वीप में जघन्य पल्य के असंख्यातवें भाग में देश उणी उत्कृष्ट पल्य के असख्यातवें भाग।

२१ मरण द्वार

मरण २:- १ समोहिया और २ असमोहिया।

२३ आगति द्वार

इनमें दो गति का आवे- १ मनुष्य और २ तिर्यंच।

२४ गति द्वार

ये एक गति -मनुष्य म जावे।

॥ इति युगलियों का दंडक संपूर्ण ॥

❀ सिद्धों का विस्तार ❀

१ शरीर द्वारः—सिद्धोंके शरीर नहीं।

२ अवगाहना द्वारः—५०० धनुष्य देएमान वाले जो सिद्ध हुवे हैं उनकी अवगाहना ३३३ धनुष्य और ३२ अंगुल।

सात हाथ के जो सिद्ध हुवे हैं उनकी अवगाहना चार हाथ और सोलह अंगुल की।

दो हाथ के जो सिद्ध हुवे है उनकी एक हाथ और आठ अगुल की।

३ संघयन द्वारः–सिद्ध असंघयनी (संघयन नहीं)।
४ संस्थान द्वार– ,, असंस्थानी (संस्थान नहीं)।
५ कषाय द्वार– ,, अकषायी (कषाय नहीं)।
६ संज्ञा ,, – ,, में संज्ञा नहीं।
७ लेश्या ,, – ,, ,, लेश्या ,,।
८ इन्द्रिय ,, – ,, ,, इन्द्रिय नहीं।
९ समुद्घात,,– ,, ,, समुद्घात ,,।
१० संज्ञी ,, – सिद्ध नहीं तो संज्ञी और न असंज्ञी।
११ वेद ,, – सिद्ध में वेद नहीं।
१२ पर्याप्ति द्वार- सिद्ध न पर्याप्ति है और न अपर्याप्ति है।
१३ दृष्टि द्वार–सिद्ध–सम्यग् दृष्टि।
१४ दर्शन द्वार–सिद्ध में केवल एक दर्शन केवल दर्शन।

१५ ज्ञान द्वारः–सिद्ध में केवल ज्ञान।

१६ योग द्वारः–सिद्ध में योग नहीं।

१७ उपयोग द्वारः–सिद्ध में उपयोग दो १ केवल ज्ञान २ केवल दर्शन।

१८ आहार द्वारः–सिद्ध में आहार नहीं।

१९ उत्पत्ति द्वारः - " " उत्पत्ति नहीं।

२० स्थिति द्वारः-सिद्ध की आदि है परन्तु अन्त नहीं।

२१ मरण द्वारः-सिद्ध में मरण नहीं।

२२ चवन " :- सिद्ध चवते नहीं।

२३ आगति " :-सिद्ध में एक गति मनुष्य-का आवे।

२४ गति " :- " " गति नहीं।

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त को मेरा तीनों काल पर्यन्त नमस्कार होवे।

॥ इति श्री सिद्ध भगवन्त का विस्तार सम्पूर्ण ॥



—: ॥ इति चोवीश दण्डक सम्पूर्णः—



※ आठ कर्म की प्रकृति ※

आठ कर्मों के नाम—१ ज्ञानावरणीय २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय ४ मोहनीय ५ आयुष्य ६ नाम ७ गोत्र ८ अन्तराय।

इनके लक्षण

१ ज्ञानावरणीय कर्म-सूर्य को ढाकने वाले बादल के समान

२ दर्शनावरणीय कर्म-- राजा के समीप पहुँचाने में जैसे द्वारपाल है उस (द्वारपाल) समान ।

३ वेदनीय कर्म -साता वेदनीय मधु लगी हुई तलवार की धार समान जिसे चाटने से तो मीठी मालूम होवे परन्तु जीभ कटजावे ।

असाता वेदनीय अफीम लगी हुई खड्ग समान।

४ मोहनी कर्म-- दारू (शराब) समान।

५ आयुष्य कर्म- राजा की बेड़ी समान जो समय हुवे बिना छूट नहीं सके। .

६ नाम कर्म -चीतारा (पेन्टर,) समान -जो विविध प्रकार के रुप बनाता है ।

७ गोत्र कर्म- कुम्भकार के चक्र समान जो मिट्टी के पिंड को घूमाता है।

८ अन्तराय कर्म--सर्व शक्ति रूप लक्ष्मी को

है जैसे राजा का भंडारी भंडार (खजाना) को रखता है।

आठ कर्म की प्रकृति तथा आठ कर्मों का बन्ध कितने प्रकार से होता है व कितने प्रकार से वे भोगे जाते हैं, तथा आठ कर्मों की स्थिति आदिः—

१ ज्ञानावरणीय कर्म

ज्ञानावरणीय कर्म की पाच प्रकृति १ मति ज्ञानावरणीय २ श्रुत ज्ञानावरणीय ३ अवधि ज्ञानावरणीय ४ मनःपर्यव ज्ञानावरणीय ५ केवल ज्ञानावरणीय।

ज्ञाना वरणीय कर्म छ प्रकारे बांधे—१ नाण-प्पडिणियाए—ज्ञान तथा ज्ञानी का अवर्णवाद बोले तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे २ नाण निन्हवणियाए-ज्ञान देने वाले के नाम को छिपावे तो ज्ञाना वरणीय कर्म बांधे ३ नाण अन्तरायेणं—ज्ञान में (प्राप्त करने में) अन्तराय (बाधा) डाले तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ४ नाण पउसेणं- ज्ञान तथा ज्ञानी पर द्वेष करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ५ नाण आसायणाए-ज्ञान तथा ज्ञानी की असातना (तिरस्कार, निरादर) करे तो ज्ञानावरणीय कर्म बांधे ६ विसंवायणा जोगेणं-ज्ञानी के साथ खोटा (झूठा) विवाद करे ज्ञानावरणीय कर्म बांधे।

॥ ज्ञानावरणीय कर्म १० प्रकारे भोगवे ॥

१ श्रोत आवरण २ श्रोत विज्ञान आवरण ३ नेत्र

आवरण ४ नेत्र विज्ञान आवरण ५ घ्राण आवरण ६ घ्राण विज्ञान आवरण ७ रस आवरण ८ रस विज्ञान आवरण ६ स्पर्श आवरण १० स्पर्श विज्ञान आवरण।

ज्ञानावरणीय कर्म की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तीश करोड़ा करोड़ी सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का।

❀ दर्शनावरणीय कर्म का विस्तार ❀

॥ दर्शनावरणीय कर्म की प्रकृति नव ॥

१ निद्रा -सुख से उंघे और सुख से जागे।

२ निद्रा निद्रा -दुःख से उंघे और दुःख से जागे।

३ प्रचला-बैठे २ उंघे।

४ प्रचला प्रचला बोलता बोलता व खाता खाता उंघे।

५ थीणाद्धि (स्त्यानर्द्धि) निद्रा-उंघ के अन्दर अर्धे वासुदेव का बल आवे। जब उंघ के अन्दर ही उठ बैठे, उठ कर द्वार (किवाड़) खोले, खोल कर अन्दर से आभूषणों का डिब्बा और वस्त्रों की गठड़ी लेकर नदी पर जावे। वो डिब्बा हजार मन की शिला उठा कर उसके नीचे रखे व कपड़ों को धो कर घर पर आवे, सुबह सोकर उठे परन्तु मालूम होवे नहीं कि रात को मैंने क्या २ किया। डिब्बे को ढूंढे परन्तु घर में मिले नहीं। ऐसी

छ महिने बाद फिर आवे उस समय डिब्बा जहा रक्खा होवे वहा से लाकर घर में रखे पश्चात् काल करे । ऐसी निद्रा लेने वाला जीव मर कर नरक में जावे । इसे स्त्यानर्द्धि निद्रा कहते है ।

६ चक्षु दर्शनावरणीय ७ अचक्षु दर्शना वरणीय ८ अवधि दर्शनावरणीय ९ केवल दर्शनावरणीय ।

❀ दर्शणा वरणीय कर्म छ प्रकारे बांधे ❀

१ दसण पडिणियाए–सम्यक्त्व तथा सम्यक्त्वी का अवर्णवाद बोले तो दर्शनावरणीय कर्म बाधे ।

२ दंसण निण्हवणियाए–बोध बीज सम्यक्त्व दाता के नाम को छिपाव तो दर्शनावर्णीय कर्म बाधे ।

३ दसण अतरायेणं—यदि कोई समकित ग्रहण करता हो उसे अन्तराय देवे तो दर्शनावरणीय कर्म बाधे ।

४ दसण पाउसियाए—समकित तथा सम्यक्त्वी पर द्वेप करे तो दर्शना वरणीय कर्म बाध ।

५ दसण आसायणाए–समकित तथा सम्यक्त्वी की असातना करे तो दर्शना वरणीय कर्म बाधे ।

६ दसण विसवायणा जोगेणं- सम्यक्त्वी के साथ खोटा व झूंठा विवाद करे तो दर्शना वरणीय कर्म बांधे ।

- दर्शना वरणीय कर्म नव प्रकारे भोगवे

१ निद्रा २ निद्रा निद्रा ३ प्रचला ४ प्रचला प्रचला

५ थीणद्धि (स्त्यानर्द्धि) ६ चक्षु दर्शना वरणीय ७ अचक्षु दर्शना वरणीय ८ अवधि दर्शना वरणीय ६ केवल दर्शना वरणीय।

दर्शना वरणीय कर्म की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तीश करोडा करोडी सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का।

❀ ३ वेदनीय कर्म का विस्तार ❀

वेदनीय कर्म के दो भेद—१ शाता वेदनीय २ अशाता वेदनीय। वेदनीय कर्म की सोलह प्रकृतिः—आठ शाता वेदनीय की और आठ अशाता वदनीय की।

। शाता वेदनीय कर्म की आठ प्रकृति।

१ मनोज्ञ शब्द २ मनोज्ञ रूप ३ मनोज्ञ गंध ४ मनोज्ञ रस ५ मनोज्ञ स्पर्श ६ मन सौख्य (सुखिया) ७ वचन सौख्य ८ काया सौख्य।

। अशाता वेदनीय कर्म की आठ प्रकृति।

१ अमनोज्ञ शब्द २ अमनोज्ञ रूप ३ अमनोज्ञ गंध ४ अमनोज्ञ रस ५ अमनोज्ञ स्पर्श ६ मन दुख ७ वचन दुख ८ काया दुख।

वेदनीय कर्म २२ प्रकारे बांधे इसमें शाता वेदनीय १० प्रकारे बांधे

* १ पाणाणु कंपियाए २ भूयाणु कंपियाए

* १ प्राणी अनुकम्पा २ भूत अनुकम्पा।

३ जीवाणु कंपियाए ४ सत्ताणु कंपियाए ५ बहूणं पाणाणं भूयाण जीवाणं सत्ताण अदुक्खणीयाए ६ असोयणियाए ७ अभुरणियाए ८ अटीप्पणियाए ९ अपीट्टणियाए १० अपरितावणियाए ।

। अशाता वेदनीय बारह प्रकार बांधे ।

११ पर दुखणियाए १२ पर सोयणियाए १३ पर झुरणियाए १४ परटीप्पणियाए १५ परपीट्टणियाए १६ परपरितावणियाए १७ बहुण पाणाण भूयाण जीवाण सत्ताण दुक्खणियाए १८ सोयणियाए १९ झुरणियाए २० टीप्पणियाए २१ पीट्टणियाए २२ परितावणियाए ।

वेदनीय कर्म सोलह प्रकारे भोगवे उक्त सोलह प्रकृति अनुसार ।

वेदनीय कर्म की स्थिति शाता वेदनीय की स्थिति जघन्य दो समय की उत्कृष्ट पन्द्रह करोडा करोड़ी सागरोपम की, अबाधा काल करे तो जघन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट १॥ हजार वर्ष का ।

---

३ जीव अनुकम्पा ४ सत्त्व अनुकम्पा ५ बहु प्राणी भूत जीव सत्त्व को दुख देना नहीं ६ शोक करना नहीं ७ झुरणा नहीं ८ टपक २ आसु (अश्रुपात) गिराना नहीं ९ पीटना नहीं और परितापना (पश्चाताप) करना नहीं ।

११ पर (दूसरा) को दुख देना १२ पर को शोक कराना १३ पर को झुराना १४ पर से आसु गिराना १५ पर को पीटना १६ पर को परिताप देना १७ बहु प्राणी भूत जीव सत्त्वों को दुख देना १८ शोक करना १९ झुरना २० टपक २ आसु गिराना २१ पीटना २२ परितापना करना ।

अशाता वेदनीय की स्थिति जघन्य एक सागरके सातहिस्सोंमें से तीन हिस्से और एक पल्य के असख्यातवें भाग उणी (कम) उत्कृष्ट तीश करोडा करोडी सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का ।

❀ ४ मोहनीय कर्म का विस्तार ❀

मोहनीय कर्म के दो भेदः-१ दर्शन मोहनीय २चारित्र मोहनीय ।

१ दर्शन मोहनीय की तीन प्रकृतिः-१ सम्यक्त्व मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय ३ मिश्र (सममिथ्यात्व) मोहनीय ।

२ चारित्र मोहनीय के दो भेदः-१ कषाय चारित्र मोहनीय २ नोकषाय चारित्र मोहनीय। कषाय चारित्र मोहनीय की सोलह प्रकृति, नौकषाय चारित्र मोहनीय की नव प्रकृति एव २८ प्रकृति ।

कषाय चारित्र मोहनीय की १६ प्रकृति ।

१ अनन्तानु बधी क्रोध पर्वत की चीर समान
२ ,, ,, मान - पत्थर के स्तम्भ समान
३ ,, ,, माया--वास की जड (मूल) ,,
४ ,, ,, लोभ—कीरमजी रग समान

इन चार प्रकृति की गति नरक की, स्थिति जाव जीव की और घात करे समकित की ।

५ अप्रत्याख्यानी क्रोध—तालाब की तीराड़ के समान

६ ,, ,, मान–हड्डि का स्थम्भ समान
७ ,, ,, माया–मेंढे के सींग समान
८ ,, लोभ–नगर की गटर के कर्दम (कादा) समान ।

इन चार की गति तिर्यंच की, स्थिति एक वर्ष की, घात करे देश व्रत की ।

९ प्रत्याख्याना वरणीय क्रोध वेलु (रेत) की भींत (दीवार) समान
१० ,, ,, मान–लकड़ के स्थम्भ समान
११ ,, ,, माया-गौमुत्रिका(बैल मुतणी)समान
१२ ,, ,, लोभ–गाडा का आंजन (कज्जल) ,,

इन चार की गति मनुष्य की, स्थिति चार माह की, घात करे साधुत्व की ।

१३ सञ्जलन को क्रोध–जल के अन्दर लकीर समान
१४ ,, ,, मान–तृण के स्थम्भ समान
१५ ,, ,, माया- वास की छोई (छिलका) समान
१६ ,, ,, लोभ पतग तथा हलदी के रग समान

इन चार की गति देव की, स्थिति पन्द्रह दिनों की, घात करे केवल ज्ञान की ।

। नोकषाय चारित्र मोहनीय की नव प्रकृति ।

१ हास्य २ रति ३ अरति ४ भय ५ शोक ६ दुगंछा ७ स्त्री वेद ८ पुरुष वेद ९ नपुंसक वेद ।

❀ मोहनीय कर्म छ प्रकारे बांधे ❀

१ तीव्र क्रोध २ तीव्र मान ३ तीव्र माया ४ तीव्र लोभ ५ तीव्र दर्शन मोहनीय ६ तीव्र चारित्र मोहनीय।

❀ मोहनीय कर्म पांच प्रकारे भोगवे ❀

१ सम्यक्त्व मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय ३ सम्यक्त्व मिथ्यात्व (मिश्र) मोहनीय ४ कषाय चारित्र मोहनीय ५ नोकषाय चारित्र मोहनीय।

॥ मोहनीय कर्म की स्थिति ॥

जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट ७० करोडा करोड सागरोपम की, अबाधा काल जघन्य अन्तर मुहूर्त का उत्कृष्ट सात हजार वर्ष का।



❀ आयुष्य कर्म का विस्तार ❀

आयुष्य कर्म की चार प्रकृतिः-१ नरक का आयुष्य२ तिर्यंच का आयुष्य३ मनुष्य का आयुष्य ४देव का आयुष्य।

आयुष्य कर्म सोलह प्रकारे बांधे

१नरक आयुष्य चार प्रकारे बांधे२तिर्यंच का आयुष्य चार प्रकारे बांधे ३ मनुष्य का आयुष्य चार प्रकारे बांधे ४ देव आयुष्य चार प्रकारे बांधे।

नरक आयुष्य चार प्रकारे बांधे—१ महा आरम्भ २ महा परिग्रह ३ मद मास का आहार ४ पंचेन्द्रिय वध।

तिर्यंच आयुष्य चार प्रकारे बाधे–१ कपट २ महा कपट ३ मृपावाद ४ खोटा तोल खोटा माप।

मनुष्य आयुष्य चार प्रकारे बाधे–१ भद्र प्रकृति २ विनय प्रकृति ३ सानुक्रोप दया) ४ अमत्सर (इर्षा रहित)।

देव आयुष्य चार प्रकारे बाधे–१ सराग सयम २संयमा संयम ३ बालतपोप कर्म ४ अकाम निर्जरा।

। आयुष्य कर्म चार प्रकारे भोगवे।

१ नेरिये नरक का भोगवे २ तिर्यंच, तिर्यंच का भोगवे ३ मनुष्य, मनुष्य का भोगवे ४ देव, देव का भोगवे।

आयुष्य कम की स्थिति

नरक व देव की स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष और अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तेतीश सागर और करोड पूर्व का तीसरा भाग अधिक।

मनुष्य व तिर्यंच की स्थिति जघन्य अन्तर मुहूर्त की उत्कृष्ट तीन पल्य और करोड पूर्व का तीसरा भाग अधिक।

नाम कर्म का विस्तार

नाम कर्म के दो भेदः–१ शुभ नाम २ अशुभ नाम।

नाम कर्म के ६३ प्रकृति जिसके ४२ थोक

१ गति नाम २ जाति नाम ३ शरीर नाम ४ शरीर अंगोपाग नाम ५ शरीर बधन नाम ६ शरीर संघात करणं नाम ७ संघयन नाम ८ संस्थान नाम ९ वर्ण नाम १० गध नाम ११ रस नाम १२ स्पर्श नाम १३ अगुरू लघु नाम १४ उपघात नाम १५ पराघात नाम १६ अणुपूर्वी नाम १७ उच्छ्वास नाम १८ उद्योत नाम १९ आताप नाम २० विहाय-गति नाम २१ त्रस नाम २२ स्थावर नाम २३ सूक्ष्म नाम २४ बादर नाम २५ पर्याप्त नाम २६ अपर्याप्त नाम २७ प्रत्येक नाम २८ साधारण नाम २९ स्थिर नाम ३० अस्थिर नाम ३१ शुभ नाम ३२ अशुभ नाम ३३ सौभाग्य नाम ३४ दुःभाग्य नाम ३५ सुस्वर नाम ३६ दुःस्वर नाम ३७ अोदय नाम ३८ अनोदय नाम ३९ यशःकीर्ति नाम ४० अयशोकीर्ति नाम ४१ तीर्थंकर नाम ४२ निर्माण नाम।

४२ थोक की ९३ प्रकृति

(१) गति नाम के चार भेदः—१ नरक गति २ तिर्यंच गति ३ मनुष्य गति ४ देव गति।

(२) जाति नाम के पाच भेदः—१ एकेन्द्रिय जाति २ बेन्द्रिय जाति ३ त्रीइन्द्रिय जाति ४ चौरिन्द्रिय जाति ५ पचेन्द्रिय जाति।

(३ शरीर नाम के पाच भेदः-१ औदारिक शरीर २ वैक्रिय शरीर ३ आहारिक शरीर ४ तैजस् शरीर ५ कार्मण शरीर।

(४) शरीर अंगोपाग के तीन भेदः-१ औदारिक शरीर अंगोपाग २ वैक्रिय शरीर अंगोपाग ३ आहारिक शरीर अंगोपाग।

(५) शरीर बधन नाम के पांच भेदः-१ औदारिक शरीर बधन २ वक्रिय शरीर बधन ३ आहारिक शरीर बंधन ४ तैजस् शरीर बंधन ५ कार्मण शरीर बधन।

(६)शरीर सघात करण नाम के पाच भेदः-१ औदारिक शरीर सघात करण २ वैक्रिय शरीर संघात करण ३ आहारिक शरीर संघात करण ४ तैजस शरीर सघात करण ५ कार्मण शरीर संघात करण।

(७) संघयन नाम के छः भेदः-१ वज्र ऋषभ नाराच संघयन २ ऋषभ नाराच संघयन ३ नाराच संघयन ४ अर्ध नाराच संघयन ५ कीलिका संघयन ६ सेवार्त संघयन।

(८) संस्थान नाम के ६ भेदः-१ समचतुरस्र संस्थान न्यग्रोध परिमंडल संस्थान ४ कुब्ज संस्थान ५ वामन संस्थान ६ हुडक संस्थान; ३९

(९) वर्ण नाम के पाच भेदः-१ कृष्ण २नील३ रक्त ४ पीत ५ श्वेत, ४४

(१० गंध के दो भेदः-१सुरभि गंध २दुरभि गंध,४६

(११)रस के पांच भेदः-१तीक्ष्ण २कटुक ३कषायित ४ चार (खट्टा) ५ मिष्ट, ५१

(१२) स्पर्श के आठ भेद. -१ लघु २गुरु ३कर्कश ४ कोमल ५ शीत ६ उष्ण ७ रुक्ष ८ स्निग्ध, ५६

(१३) अगुरु लघु नाम का एक भेद; ६०

(१४) उपघात नाम का एक भेद, ६१

(१५) पराघात नाम का एक भेद, ६२

(१६) अणुपूर्वी के चार भेद -१नरक की अणुपूर्वी २ तिर्यंच की अणुपूर्वी ३ मनुष्य की अणुपूर्वी ४ देव की अणुपूर्वी; ६६

(१७) उच्छ्वास नाम का एक भेद; ६७

(१८) उद्योत नाम का एक भेद, ६८

(१९) आताप नाम का एक भेद, ६९

(२०) विहाय गति नाम के दो भेदः· १ प्रशस्त विहाय गति-गन्ध हस्ती के समान शुभ चलने की गति २ अप्रशस्त विहाय गति,ऊँट के समान अशुभ चलने की गति७१

शेष २२ बोल जो रहे उन में से प्रत्येक का एक एक भेद एवं (७१+२२) ९३ प्रकृति।

नाम कर्म आठ प्रकार से बांधे जिस में शुभ नाम कर्म चार प्रकारे बांधे

१ काया की सरलता-काया के योग

मे प्रवर्तावे २ भाषा की सरलता वचन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे ३ भाव की सरलता–मन के योग अच्छे प्रकार से प्रवर्तावे ४ अक्लेश कारी प्रवर्तन खोटा व झूंठा विवाद नहीं करे।

अशुभ नाम कर्म चार प्रकारे बांधे–१ काया की वक्रता २ भाषा की वक्रता ३ भाव की वक्रता ४ क्लेशकारी प्रवर्तन।

॥ नाम कर्म २८ प्रकारे भोगवे ॥

शुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे–१ इष्ट शब्द २ इष्ट रूप ३ इष्ट गंध ४ इष्ट रस ५ इष्ट स्पर्श ६ इष्ट गति ७ इष्ट स्थिति ८ इष्ट लावण्य ९ इष्ट यशो कीर्ति १० इष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ इष्ट स्वर १२ कांत स्वर १३ प्रिय स्वर १४ मनोज्ञ स्वर।

अशुभ नाम कर्म १४ प्रकारे भोगवे–१ अनिष्ट शब्द २ अनिष्ट रूप ३ अनिष्ट गंध ४ अनिष्ट रस ५ अ–निष्ट स्पर्श ६ अनिष्ट गति ७ अनिष्ट स्थिति ८ अनिष्ट लावण्य ९ अनिष्ट यशो कीर्ति १० अनिष्ट उत्थान, कर्म बल वीर्य पुरुषाकार पराक्रम ११ हीन स्वर १२ दीन स्वर १३ अनिष्ट स्वर १४ अकान्त स्वर।

नाम कर्म की स्थिति जघन्य आठ मुहूर्त की उत्कृष्ट वीश करोडा करोडी सागरोपम की, अबाधा काल दो हजार वर्ष का।

❀ ७ गोत्र कर्म का विस्तार ❀

गौत्र कर्म के दो भेद–१ ऊच गौत्र २ नीच गौत्र।
गौत्र कर्म की सोलह प्रकृति जिसमें से ऊच गौत्र की आठ प्रकृति–

१ जाति विशिष्ट २ कुल विशिष्ट ३ बल विशिष्ट ४ रूप विशिष्ट ५ तप विशिष्ट ६ सूत्र विशिष्ट ७ लाभ विशिष्ट ८ ऐश्वर्य विशिष्ट।

नीच गौत्र की आठ प्रकृति १ जाति विहीन २ कुल विहीन ३ बल विहीन ४ रूप विहीन ५ तप विहीन ६ सूत्र विहीन ७ लाभ विहीन ८ ऐश्वर्य विहीन।

गौत्र कर्म सोलह प्रकारे बांधेः—

ऊच गौत्र आठ प्रकारे बांधे १ जाति अमद (अभिमान नहीं करे) २ कुल अमद ३ बल अमद ४ रूप अमद ५ तप अमद ६ सूत्र अमद ७ लाभ अमद ८ ऐश्वर्य अमद।

नीच गौत्र आठ प्रकारे बांधे–१ जाति मद २ कुल मद ३ बल मद ४ रूप मद ५ तप मद ६ सूत्र मद ७ लाभ मद ८ ऐश्वर्य मद।

गौत्र कर्म सोलह प्रकारे भोगवे–ऊंच गौत्र आठ प्रकारे भोगवे और नीच गौत्र आठ प्रकारे

उक्त नाम कर्म की सोलह प्रकृति के समान ही सोलह प्रकारे भोगवे।

गौत्र कर्म की स्थितिः—जघन्य आठ मुहूर्त की उत्कृष्ट बीश करोडा करोड सागरोपम की, अबाधा काल दो हजार वर्ष का।

८ अन्तराय कर्म का विस्तार

अन्तराय कर्म की पांच प्रकृतिः—१ दानांतराय २ लाभांतराय ३ भोगांतराय ४ उपभोगांतराय ५ वीर्यांतराय।

अंतराय कर्म पांच प्रकारे बांधे—ऊपर समान।

अंतराय कर्म पांच प्रकारे भोगवे—ऊपर समान।

अंतराय कर्म की स्थिति—जघन्य अन्तर मुहूर्त की, उत्कृष्ट तीश करोडा करोड सागरोपम की, अबाधा काल तीन हजार वर्ष का।

॥ इति आठ कर्म का विस्तार सम्पूर्ण ॥





❋ गता गति द्वार ❋

गाथा

बारस चउवीसाइ संतर एगसमय कत्तीय ।
उवट्टण परभव आऊय, च अठेव आगरिसा ॥

❀ पहिला बारस द्वार ❀

नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव इन चार गतियों में उत्पन्न होने का। चवने का अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त का अतर पड़े। सिद्ध गति में अतर पड़े तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छः मास का। चवने का अन्तर नहीं पड़े।

❀ दूसरा चउविश द्वार ❀

(१) पहेली नरक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय, उत्कृष्ट-चोवीश मुहूर्त का।

(२) दूसरी नरक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट सात दिन का।

(३) तीसरी नरक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट पन्द्रह दिन का

(४) चोथी नरक में „ „ „ „ एक माह का
(३) पाचवीं „ „ „ „ „ „ दो „ „
(६) छठी „ „ „ „ „ „ चार „ „
(७) सातवीं „ „ „ „ „ „ छ „

भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी, पहिला दूसरा देव लोक में अतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट चोवीश मुहूर्त का, तीसरे देव लोक में अंतर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट नव दिन और वीश मुहूर्त का।

चोथे देव लोक में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह दिन और दश मुहूर्त का।

पाचवे देव लोक में अतर पडे तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट साड़ा बावीश दिन का।

छट्ठे देव लोक में अतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट पैंतालीश दिन का।

सातवें देवलोक में अतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट अस्सी दिन का।

आठवें देवलोक में अतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट सो दिन का।

नववें, दशवें देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता माह का, इग्यारहवें बारहवें देवलोक में जघन्य एक समय उत्कृष्ट संख्याता वर्ष का, ग्रीयेवक की पहेली त्रीक में अतर पडे तो जघन्य एक समय वा उत्कृष्ट संख्याता सो वर्ष का, ग्रीयवेक की दूसरी त्रीक में ज० एक समय उ० संख्याता हजार वर्ष का ग्रीयवेक की तीसरी त्रीक में ज० एक समय उ० संख्याता लच वर्ष का चार अनुत्तर " " " " " पल्य के असंख्यातवें भाग

पांचवें स्नाथे सिद्ध विमान में ज० एक समय उ० सख्यातवें भाग।

पाच एकेन्द्रिय में अन्तर नहीं पड़े।

तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यच समूर्छिम में अन्तर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर मुहूर्त का।

तिर्यच गर्भज व मनुष्य गर्भज में जघन्य एक समय उत्कृष्ट बारह मुहूर्त का। मनुष्य समूर्छिम में जघन्य एक समय उत्कृष्ट चोवीश मुहूर्त का।

सिद्ध में अंतर पड़े तो जघन्य एक समय उत्कृष्ट छ माह का। इसी प्रकार सिद्ध को छोड़कर शेष में चवने का अंतर उक्त उत्पन्न होने के अंतर समान जानना।

❀ तीसरा सअतर निरंतर द्वार ❀

स अतर अर्थात् अतर सहित, निरतर अर्थात अंतर रहित उत्पन्न होवे।

पाच एकेन्द्रिय के पाच दण्डक छोडकर शेष उन्नीस दण्डक में तथा सिद्ध में सअतर तथा निरतर उत्पन्न होवे।

पाच एकेन्द्रिय के पाच दण्डक में निरंतर उत्पन्न होवे ऐसे ही उद्वर्तन (चवने का) जानना (सिद्ध को छोडकर)

४ एक समय में किस बोल में कितने उत्पन्न होवे व चवे उसका द्वार।

सात नरक, ७, दश भवनपति, १७, दाण व्यतन्र, १८, ज्योतिषी, १९, पहेले देवलोक से आठवें

तक, २७ तीन विकलेन्द्रिय, ३०. तिर्यंच संमूर्छिम, ३१. तिर्यंच गर्भज, ३२. मनुष्य संमूर्छिम, ३३ इन तेंतीश बोल में एक समय में जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट उपजे तो असंख्याता उपजे। नवमा, दशवा, इग्यारवा, व बारहवा देवलोक ये चार देवलोक ४, नव ग्रीयवेक, १३, पांच अनुत्तर विमान १८ मनुष्य गर्भज १६ इन उन्नीश बोल में जघन्य एक समय में एक, दो, तीन उत्कृष्ट संख्याता उपजे, पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु, इन चार एकेन्द्रिय में समय समय असंख्याता उपजे वनस्पति में समय समय असंख्याता (यथास्थाने) अनंता उपजे।

सिद्ध में एक समय में जघन्य एक, दो तीन उत्कृष्ट एक सो आठ उपजे ऐस ही उद्वर्तन (चवन) सिद्ध को छोड़ कर शेप सर्व का जानना (उत्पन्न होने के समान)।

पांचवा कत्तो (कहा से आवे), छट्ठा उद्वर्तन (चव कर जावे) ये दोनों द्वार।

५६- में से जिस जिस बोल के आकर उत्पन्न होवे वो आगति और चव कर ५६३ में से जिस जिस बोल में जावे वो गति (उद्वर्तन)

(१) पहेली नरक में २५ बोल की आगति १५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच, ५ असज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय ये २५

भूमि और १ जलचर एव १६ बोल इसमें स्त्री मर कर नहीं आती है केवल पुरुष तथा नपुसंक मरकर आते हैं। गति दश बोल की--पांच सञ्ज्ञी तिर्यंच का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

२५ भवन पति और २६ वाण व्यन्तर इन ५१ जाति के देवताओं में आगति १११, बोल की-१०१, संज्ञी मनुष्य का पर्याप्ता, पाच सञ्ज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय और पाच असञ्ज्ञी तिर्यंच एवं १११ का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की-१५ कर्म भूमि, पाच संज्ञी तिर्यंच, बादर पृथ्वी काय, बादर अपकाय, बादर वनस्पति काय एवं तेवीश का पर्याप्ता और अपर्याप्ता।

ज्योतिषी और पहेला देवलोक में ५०बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, ३० अकर्म भूमि, ५ सञ्ज्ञी तिर्यंच एव ५० का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवनपति समान।

दूसरा देवलोक में ४० बोल की आगति-१५ कर्म भूमि, पाच संज्ञी तिर्यंच ये २० और ३० अकर्म भूमि में से पाच हेम वय और पांच हिरण वय छोड शेष २० अकर्म भूमि एव ४० बोल का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवन पति समान।

पहेला किल्विषी में ३० बोल की आगति-१५कर्म भूमि, ५ सञ्ज्ञी तिर्यंच, ५ देव कुरु, ५ उत्तर कुरू एवं ३० का पर्याप्ता। गति ४६ बोल की भवन पति समान।

९ लोकांतिक, नव ग्रीयवेक, व पहेली दूसरी नरक एवं ३२। गति १४ बोल की-सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता।

(४) बलदेव की आगति ८२ बोल की चक्रवर्ति के ८२ बोल कहे वो और एक दूसरी नरक एवं ८३। गति ७० बोल की-वैमानिक के ३५ भेद का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ७०।

(५) केवली की आगति १०८ बोल की- ९९जाति के देव में से--१५ परमाधर्मी और तीन किल्विषी एवं १८ घटाना- शेष ८१ बोल, और १५ कर्म भूमि, ५ सज्ञी तिर्यंच, पृथ्वी, अप, वनस्पति, पहेली, दूसरी, तीसरी व चोथी नरक एवं (८१+१५+५+१+१+१×४) १०८ बोल का पर्याप्ता, गति मोक्ष की।

(६) साधु की आगति २७५ बोल की ऊपर के १७९ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड शेष १७१ बोल, ९९ जाति के देव, व पहेली नरक से पाचवी करक तक (१७१+९९+५) एवं २७५ बोल। गति ७० बोल की बलदेव समान।

(७) श्रावक की आगति २७६ बोल की-साधु के २७५ बोल व छट्ठी नरक का पर्याप्ता एवं २७६ बोल।

गति ४२ बोल की -१२ देवलोक, ९ लोकांतिक इन २१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ४२।

(८) सम्यक्त्व दृष्टि की आगति ३६३ बोल की ९९

की १२४ बोल की–उक्त १२६ बोल में से दूसरे देव लोक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता घटाना।

५६ अतर द्वीप के युगलियों की २५ बोल की आगति–१५ कर्म भूमि, ५ संज्ञी तिर्यंच, ५ असंज्ञी तिर्यंच एव २५ गति १०२ बोलकी–२५ भवन पति, २६ वाण व्यन्तर,–इन ५१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं १०२ ये २२ बोल सम्पूर्ण इन २२ बोल में चोवीश दण्डक की गता गति कहा गई है।



नव उत्तम पद्वी में से मांडलिक राजा छोड़ शेष आठ पद्वीधर मिथ्यात्वी तथा तीन वेद–एवं १२ बोल की गतागति—

(१) तीर्थंकर की आगति ३८ बोल की–वैमानिक का ३५ भेद व पहेली दूसरी, तीसरी नरक एवं ३८, गति मोक्ष की।

(२) चक्रवर्ति की आगति ८२ बोल की–९९ जाति के देव में से–१५ परमाधर्मी, तीन किल्विषी–ये १८ छोड़ शेष ८१ व पहेली नरक एव ८२, गति १४ बोल की–सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एव १४ (यदि ये दीक्षा लेवे तो गति देव की या मोक्ष की)

(३) वासुदेव की आगति ३२ बोल की–१२ देवलोक,

६ लोकांतिक, नव ग्रीयवेक, व पहेली दूसरी नरक एव ३२। गति १४ बोल की–सात नरक का अपर्याप्ता और पर्याप्ता ।

(४) बलदेव की आगति ८२ बोल की चक्रवर्ति के ८२ बोल कहे वो और एक दूसरी नरक एव ८३। गति ७० बोल की–वैमानिक के ३५ भेद का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एवं ७० ।

(५) केवली की आगति १०८ बोल की- ६६जाति के देव में से--१५ परमाधर्मी और तीन किल्बिषी एव १८ घटाना- शेष ८१ बोल, और १५ कर्म भूमि, ५ सन्नी तिर्यंच, पृथ्वी, अप, वनस्पति, पहेली, दूसरी, तीसरी व चोथी नरक एव (८१+१५+५+१+१+१×४) १०८ बोल का पर्याप्ता, गति मोक्ष की ।

(६) साधु की आगति २७५ बोल की ऊपर के १७६ बोल में से तेजस् वायु का आठ बोल छोड शेष १७१ बोल, ६६ जाति के देव, व पहेली नरक से पाचवी नरक तक (१७१+६६+५) एव २७५ बोल । गति ७० बोल की बलदेव समान ।

(७) श्रावक की आगति २७६ बोल की–साधु के २७५ बोल व छट्ठी नरक का पर्याप्ता एव २७६ बोल ।

गति ४२ बोल की -१२ देवलोक, ६ लोकांतिक इन २१ का अपर्याप्ता और पर्याप्ता एव ४२ ।

(८) सम्यक्त्व दृष्टि की आगति ३६३ बोल की ६६

छोड़ते हैं—१जाति २ गति ३ स्थिति ४ अवगाहना ५ प्रदेश और ६ अनुभाव ।

❀ आठवा आकर्ष द्वार ❀

तथाविध प्रयत्न करके कर्म पुद्गल का ग्रहण करने व खेंचने को आकर्ष कहते हैं जैसे गाय पानी पीते समय भय से पीछे देखे व फिर पीवे वैसे ही जीव जाति निद्धत्तादि आयुष्य को जघन्य एक, दो, तीन उत्कृष्ट आठ आकर्ष करके बांधता हैं ।

आकर्ष का अल्प तथा बहुत्व

सब से थोडा जीव आठ आकर्ष मे जाति निद्धत्तायुष्य को बांधने वाले, उससे सात से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे छ से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे पांच से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे चार से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे तीन से बांधने वाले संख्यात गुणा, उससे दो से बांधने वाले संख्यात गुणा उससे एक से बांधने वाले संख्यात गुणा ।

॥ इति गतागति सम्पूर्ण ॥



छः आरों का वर्णन

दश करोड़ा करोड़ी सागरोपम के छः आरे जानना ॥ (१) चार करोड़ा करोड़ी सागरोपम का 'सुखमा सुखमी' (एकान्त सुख वाला) नाम का पहिला आरा होता है इस आरे में मनुष्य का देहमान (शरीर) तीन गाउ (कोस) का व आयुष्य तीन पल्योपम का होता है उतरते आरे में देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पल्योपम का जानना । इस आरे में मनुष्य के शरीर में २५६ पृष्ट करंड (पासली, हड्डी) व उतरते आरे में १२८ पासलियां होती है । संघयन वज्र ऋषभ नाराच व संस्थान समचतुरंस्र होता है । महास्वरूपवान सरल स्वभावी स्त्री पुरुष का जोड़ा होता है जिनको आहार की इच्छा तीन दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाणे × आहार करते है । इस समय मिट्टी का स्वाद भी मिश्री के समान मिष्ट होता है व उतरते आरे मिट्टी का स्वाद शर्करा जैसा होता है । इस समय मनुष्यों को दश प्रकार के कल्प वृक्षों द्वारा ❀ मन वांछित सुख की प्राप्ति होती है यथाः—

× पहिले आरे में तूर जितना, दूसरे आरे में बोर जितना और तीसरे आरे में आवले जितना आहार युगल मनुष्य करते हैं ऐसा ग्रन्थकार कहते हैं ।

❀ जिस कल्प वृक्ष के पास जो फल है वो वही फल देता है इस तरह दश ही कल्प वृक्ष मिल कर दश वस्तु देते हैं परन्तु जिस वस्तु की मन में चिन्ता करते हैं उसे देने में समर्थ नहीं होते है ।

'मतगाय 'भिंगा, 'तुड़ीयंगा 'दीव 'जोई 'चितगा,
'चितरसा 'मणवेगा, 'गिहगारा ''अनियगणाउ ।

अर्थ—१ ' मतङ्ग वृक्ष ' जिससे मधुर फल प्राप्त होते हैं २ ' भिङ्गा वृक्ष ' से रत्न जडित सुवर्ण भाजन (पात्र) मिलते हैं ३ ' तुडियङ्गा वृक्ष ' से ४९ जाति के वादित्र (वाजित्र) के मनोहर नाद सुनाई देते है ४ 'दीव वृक्ष' से रत्न जडित दीपक समान प्रकाश होता है ५ जोति (जोई) वृक्ष रात्रि में सूर्य समान प्रकाश करते है ६, चितङ्गा, वृक्ष से सुगंधी फूलों के भूषण प्राप्त होते हैं ७ 'चितरसा' वृक्ष से (१८ प्रकार के) मनोज्ञ भोजन मिलते हैं ८ ' मनोवेगा ' से सुवर्ण रत्न के आभूषण मिलते है ९ ' गिहगारा ' वृक्ष से ४२ भजल के महल मिल जाते हैं १० ' अनिय गणाउ ' वृक्ष से नाक के श्वास से उड़ जावे ऐसे महीन (पतले व उत्तम वस्त्र प्राप्त होते हैं । प्रथम आरे के स्त्री पुरुष का आयुष्य जब छे महिनें का शेष रहता है उस समय युगलिये परभव का आयुष्य बाधते हैं और तब युगलनी एक पुत्र पुत्री के जोड़े को प्रसूतती (जन्म-देती) है । उन बच्चे बच्ची का ४९ दिन तक पालन करने बाद वे होशियार हो दम्पती बन सुखोपभोगानुभव करते हुवे विचरते हैं और युगल युगलनी का क्षण मात्र भी वियोग नहीं होता है उनके माता पिता एक को छींक और दूसरे को उबासी आते ही मर कर देव गति में जावे

हैं। (क्षेत्राधिष्टित) देव उन युगल के मृतक शरीर को क्षीर सागर में प्रक्षेप कर मृत्युसंस्कार (मरण क्रिया) करते हैं। गति एक देव की।

इस आरे में वैर नहीं, ईर्ष्या नहीं, जरा (बुढापा) नहीं, रोग नहीं, कुरूप नहीं, परिपूर्ण अंग उपांग पाकर सुख भोगते हैं ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना। ॥ इति प्रथम आरा संपूर्ण ॥

※ दूसरा आरा ※

(२)उक्त प्रकार प्रथम आरे की समाप्ति होते ही तीन करोड़ करोडी सागरोपम का 'सुखमा' (केवल सुख) नामक दूसरा आरा आरम्भ होता है उस वक्त पहिले से वर्ण, गंध, रस, स्पर्श के पुद्गलों की उत्तमता में अनन्त गुणी हीनता हो जाती है इस आरे में मनुष्य का देहमान दो कोस का व आयुष्य दो पल्योपम का होता है। उतरते आरे एक कोस का शरीर व एक पल्योपम का आयुष्य रह जाता है घट कर पासलिये केवल १२८ रह जाती है व उतरते आरे ६४। मनुष्यों में वज्र ऋषभ नाराच संघयन व समचतुरस्र संस्थान होता है इस आरे के मनुष्यों को आहार की इच्छा दो दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद शर्करा जैसा रह जाता है व उतरते आरे गुड़ जैसा।

इस आरे में दश प्रकार के कल्पवृक्ष दश प्रकार का मनो-वाञ्छित सुख देते हैं (पहेला आरा समान) मृत्यु के छै महिने जब शेष रहते है तब युगलनी एक पुत्र पुत्री का प्रसव करती है बच्चे बच्ची का ६४ दिन पालन किये बाद वे (पुत्र पुत्री) दम्पती बन सुखोपभोग करते हुवे विचरते हैं और उनके माता पिता एक को छींक और दूसरे को उबासी आते ही मरकर देव गति में जाते हैं क्षेत्राधिष्ठित देव इन के मृतक शरीर को क्षीर सागर में डाल कर मृतक क्रिया करते हैं। गति एक देव की। इस आरे में ईर्ष्या नहीं, वैर नहीं, जरा नहीं, रोग नहीं, कुरुप नहीं, परिपूर्ण अङ्ग उपाङ्ग पाकर सुख भोगते है। ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना। ॥ इति दूसरा आरा सम्पूर्ण ॥

❀ तीसरा आरा ❀

(३)यों दूसरा आरा समाप्त होते ही दो करोड़ा करोड़ सागरोपम का 'सुखमा दुखमा' (सुख बहुत दुःख थोड़ा) नामक तीसरा आरा शुरु होता है तब पहिले से वर्ण गंध रस स्पर्श की उत्तमता में हीनता हो जाती है। क्रम से घटते घटते मनुष्यों का देहमान एक गाउ (कोश) का व आयुष्य एक पल्योपम का रह जाता है उतरते आरे ५०० धनुष्य का देहमान व करोड पूर्व का आयुष्य रह जाता है।

इस आरे में वज्रऋषभ नाराच संघयन व समचतुरस्र संस्थान होता है। शरीर में ६४ पासलियें होती हैं व उतरते आरे केवल ३२ पासलियें रह जाती हैं। इस आरे में मनुष्यों को आहार की इच्छा एक दिन के अन्तर से होती है तब शरीर प्रमाने आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद गुड जैसा रहजाता है तथा उतरते आरे कुछ ठीक। इस आरे में दश प्रकार के कल्पवृक्ष दश प्रकार का मनो वांछित सुख देते हैं मृत्यु के जब छे महिने शेष रहजाते है तब युगलिये परभव का आयुष्य बांधते हैं व उस समय युगलनी एक पुत्र व पुत्री का प्रसव करती है। बचे बच्चों का ७६ दिन पालन किये बाद वे (पुत्र पुत्री) दम्पती बन सुखोपभोग करते हुवे विचरते हैं और उनके माता पिता एक को छींक और दूसरे को उबासी आते ही मरकर देव गति में जाते है क्षेत्राधिष्ठित देव इनके मृतक शरीर को क्षीर सागर में डाल कर मृतक क्रिया करते हैं। गति एक देव की।

इन तीन आरों में युगलियों का केवल युगल धर्म रहता है। जिसमें वैर नहीं, ईर्ष्या नहीं, जरा नहीं, रोग नहीं, कुरुप नहीं, परिपूर्ण अङ्ग उपाङ्ग पाकर सुख भोगते हैं ये सब पूर्व भव के दान पुन्यादि सत्कर्म का फल जानना।

॥ इति युगलिया धर्म सम्पूर्ण ॥

कल्याणीक उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में हुवे १ पहेला कल्याणीक- दशवें प्राणत देवलोक से चव कर देवानन्दी की कोख में जब उत्पन्न हुवे तब २ दूसरे कल्याणीक में गर्भ का हरण हुवा ३ तीसरे कल्याणीक में जन्म हुवा ४ चौथे कल्याणीक में दीक्षा ग्रहण की और पाचवें कल्याणीक में केवल ज्ञान प्राप्त हुवा। स्वाति नक्षत्र में भगवन्त मोक्ष पधारे। इस आरे में गति पाच जानना। श्री महावीर स्वामी मोक्ष पधारे उसी समय गौतम स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा व बारह वर्ष पर्यन्त केवल प्रवर्ज्या पाल कर गौतम स्वामी मोक्ष पधारे। उसी समय श्री सुधर्मा स्वामी को केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा जो आठ वर्ष तक केवल प्रवर्ज्या पालकर मोक्ष पधारे। उसी समय श्री जम्बू स्वामी को केवल ज्ञान प्राप्त हुवा। इन्होंने ४४ वर्ष तक केवल प्रवर्ज्या पाली व पश्चात् मोक्ष पधारे एवं सर्व मिलाकर श्री महावीर स्वामी के मोक्ष पधारने बाद ६४ वर्ष तक केवल ज्ञान रहा पश्चात् विच्छेद (नष्ट) गया। इस आरे में जन्मे हुवे को पाचवे आरे में मोक्ष मिल सकता है परन्तु पाचवें आरे में जन्मे हुवे को पाचवें आरे में मोक्ष नहीं मिल सकता। श्री जम्बू स्वामी के मोक्ष पधारने के बाद दश बोल विच्छेद हुवे–१परम अवधि ज्ञान २ मनः पर्यव ज्ञान ३ केवल ज्ञान ४ परिहार विशुद्ध चारित्र ५ सूक्ष्म संपराय चारित्र ६ यथाख्यात

चारित्र ७ पुलाक लब्धि ८ क्षपक-उपशम श्रेणी ९ आहारिक शरीर १० जिन कल्पी साधु ये दश बोल विच्छेद हुये। ॥ इति चौथा आरा सम्पूर्ण ॥

❀ पाचवां आरा ❀

चौथे आरे के समाप्त होते ही २१००० वर्ष का 'दुखम' नामक पाचवा आरा प्रविष्ट होता है तब पूर्वापेक्षा वर्ण, गंध, रस, स्पर्श की उत्तम पर्यायों में अनन्त गुण हीनता हो जाती है। क्रमसे घटते घटते सात हाथ का (उत्कृष्ट) शरीर व २०० वर्ष का आयुष्य रह जाता है। उतरते आरे एक हाथ का शरीर व बीस वर्ष का आयुष्य रह जाता है-इस आरे के सघयन छः, सस्थान छः, उतरते आरे सेवार्त्त सघयन, हुडक संस्थान व शरीर में केवल १६ पासलिये व उतरते आरे केवल आठ पासलियें जानना। मनुष्यों को इस आरे में दिन में दो समय आहार की इच्छा होती है तब शरीर प्रमाणे आहार करते हैं। पृथ्वी का स्वाद कुछ ठीक जानना व उतरते आरे कुम्भकार (कुम्हार) की भट्टी की राख समान। इस आरे में गति चार (मोक्ष गति छोड़ कर) पाचवें आरे के लक्षण के ३२ बोल।

१ नगर (शेहर) गाव जैसे होवे।
२ ग्राम स्मशान जैसे होवे।

३ सुकुलोत्पन्न दास दासी होवे ।
४ प्रधान (मंत्री) लालची होवे ।
५ यम जैसे क्रूर दंड, दाता राजा होवे ।
६ कुलीन स्त्री लज्जा रहित (दुराचारिणी) होवे ।
७ कुलीन स्त्री वेश्या समान कर्म करने वाली होवे ।
८ पिता की आज्ञा भंग करने वाला पुत्र होवे ।
९ गुरु की निन्दा करने वाला शिष्य होवे ।
१० दुर्जन लोग सुखी होवे ।
११ सज्जन लोग दुखी होवे ।
१२ दुर्भिक्ष अकाल बहुत होवे ।
१३ सर्प विच्छु, दंश मत्कुणादि क्षुद्र जीवों की उत्पत्ति बहुत होवे ।
१४ ब्राह्मण लोभी होवे ।
१५ हिंसा धर्म प्रवर्तक बहुत होवे ।
१६ एक मत के अनेक मतान्तर होवे ।
१७ मिथ्यात्वी देव बहुत होवे ।
१८ मिथ्यात्वी लोग की वृद्धि होवे ।
१९ लोगों को देव दर्शन दुर्लभ होवे ।
२० वैताढ्य गिरि के विद्या धरों की विद्या का प्रभाव मन्द होवे ।
२१ गो रस (दूध, दही, घी) में स्निग्धता (चिकनाई) कम होवे ।

२२ बलद (ऋषभ) प्रमुख पशु अल्पायुषी होवे।
२३ साधु साध्वियों के मास, कल्प, चतुर्मास आदि में रहने योग्य क्षेत्र कम होवे।
२४ साधु की १२ प्रतिमा व श्रावक की ११ प्रतिमा के पालक नहीं होवे (श्रावक की ११ प्रतिमा का विच्छेद कोई कोई नहीं मानते)।
२५ गुरु शिष्य को पढ़ावे नहीं।
२६ शिष्य अविनीत (क्लेशी) होवे।
२७ अधर्मी, क्लेशी, कदाग्रही, धूर्त, दगाबाज व दुष्ट मनुष्य अधिक होवे।
२८ आचार्य अपने गच्छ व सम्प्रदाय की परंपरा समाचारी अलग अलग प्रवतावेंगे तथा मूर्ख मनुष्यों का मोह मिथ्यात्व के जाल में डालेंगे, उत्सूत्र प्ररपक लोगों को भ्रम में फंसाने वाले, निन्दनीक कुबुद्धिक व नाम मात्र के धर्मी जन होवेंगे व प्रत्येक आचार्य लोगों को अपनी २ परंपरा में रखने वाले होवेंगे।
२९ सरल, भद्रिक, न्यायी, प्रमाणिक पुरुष कम होवे।
३० म्लेछ राजा अधिक होवे।
३१ हिन्दू राजा अल्प ऋद्धि वाले व कम होवे।
३२ सुकुलोत्पन्न राजा नीच कर्म करने वाले होवे।
इस आरे में अन्न सर्व विच्छेद हो जावेगा, लोहे

धातु रहेगी, व चर्म की मोहरे चलेगी जिसके पास ये रहेंगे वे श्रीमन्त (धनवान) कहलावेंगे । इस आरे में मनुष्यों को उपवास मास खमण समान लगेगा ।

[इस आरे में ज्ञान सर्व विच्छेद हो जावेगा केवल दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन रहेंगे । कोई कोई मानते है कि १ दशवैकालिक २ उत्तराध्ययन ३ आचारांग ४ आवश्यक ये चार सूत्र रहेंगे । इस मे चार जीव एकावतारी होंगे –१ दुपसह नामक आचार्य २ फाल्गुनी नामक साध्वी ३ जीनदास श्रावक ४ नाग श्री श्राविका ये सर्व २००४ पाचवे आरे के अन्त तक श्री महावीर स्वामी के युगंधर जानना ।]

आषाढ सुदि १५ को शक्रेन्द्र का आसन चलायमान होवेगा तब शक्रेन्द्र उपयोग द्वारा मालूम करेंगे कि आज पाचवा आरा समाप्त होकर छट्ठा आरा लगेगा ऐसा जान कर शक्रेन्द्र आवेंगे व आकर चार जीवों को कहेंगे कि कल छट्ठा आरा लगेगा अतः आलोचना व प्रतिक्रमण द्वारा शुद्ध बनो अनन्तर ऐसा सुन कर वो चारों जीव सर्वों को क्षमा कर, निशल्य हो कर संथारा करेंगे । उस समय संवर्तक महासंवर्तक नामक हवा चलेगी जिससे पर्वत, गढ, कोट, कुवें, बावडीयें आदि सर्व स्थानक नष्ट होजावेंगे केवल १ वैताढय पर्वत २ गंगा नदी ३ सिंधु नदी ४ ऋषभ कुट ५ लवण की खाडी ये पाच स्थानक बच रहेंगे

शेष सब नष्ट होजावेंगे। वे चार जीव समाधि परिणाम से काल करके प्रथम देवलोक में जावेंगे पश्चात् चार बोल और विच्छेद होवेंगे १ प्रथम प्रहर में जैन धर्म २ दूसरे प्रहर में मिथ्यात्वियों के धर्म ३ तीसरे प्रहर में राजनीति और चौथे प्रहर में बादर अग्नि विच्छेद हो जावेगा।

पाचवे आरे के अन्त तक जीव चार गति में जाते हैं केवल एक पाचवी मोक्ष गति में नहीं जाते हैं। ॥ इति पांचवा आरा ॥

❀ छट्ठा आरा ❀

उक्त प्रकार से पञ्चम आरे की समाप्ति होते ही २१००० वर्ष के 'दुःखमा दुखमी' नामक छट्ठ आरे का आरम्भ होगा। तब भरतक्षेत्राधिष्ठित देव पञ्चम आरे के विनाश पाते हुवे पशु मनुष्यों में से बीज रूप कुछ मनुष्यों को उठाकर वैताढ्य गिरि के दक्षिण और उत्तर में जो गङ्गा और सिन्धु नदी है उनके आठों किनारों में से एक एक तट में नव२ विल है एवं सर्व ७२ विल हैं और एक एक विल में तीन् तीन मंजिल हैं उनमें से उन पशु व मनुष्यों को रक्खेंगे। छट्ठे आरे में पूर्वादेवा वर्ण गध, रस, स्पर्श आदि पुद्गलों की पर्यायों की उत्तमता में अनन्त गुणी हानि हो जावेगी। क्रम से घटते घटते इस आरे में

देह मान एक हाथ का, आयुष्य २० वर्ष का उतरते आरे मूठ कम एक हाथ का व आयुष्य १६ वर्ष का रह जावेगा। इस आरे में संघयन एक सेवार्त्त,सस्थान एक हुंडक उतरते आरे भी ऐसा ही जानना । मनुष्य के शरीर में आठ पंसलिये व उतरते आरे केवल चार पंसलिये रह जावेगी । इस आरे में छः वर्ष की स्त्री गर्भ धारण करने लग जावेगी व कुत्ती के समान परिवार के साथ विचरेगी । गङ्गा सिन्धु नदी का ६२॥ योजन का पट है जिनमें से रथ के चक्र समान थोड़ा पाट व गाड़े की धूरी डूबे इतना गहरा जल रह जायगा जिनमें मत्स कच्छ आदि जीव जन्तु विशेष रहेंगे । ७२ बिल के अन्दर रहने वाले मनुष्य संध्या तथा प्रभात के समय उन मत्स कच्छ आदि जीवों को जल से बाहार निकाल कर नदी के किनारे रेत में गाढ कर रख देंगे वे जीव सूर्य की तेजी व उग्र शरदी से भुना जानेंगे जिनका मनुष्य आहार करलेवेंगे इनके चमड़े व हड्डियों को चाट कर तिर्थंच अपना निर्वाह करेंगे । मनुष्यों के मस्तक की खोपड़ी में जल लाकर मनुष्य पीवेंगे। इस प्रकार २१००० वर्ष पूर्ण होवेंगे जो मनुष्य दान पुन्य रहित, नमोकार रहित व्रत प्रत्याख्यान रहित होवेंगे केवल वे ही इस आरे में आकर उत्पन्न होवेंगे ।

ऐसा जान कर जो जीव जैन धर्म पालेगा तथा जैन

धर्म पर आस्ता (श्रद्धा) रखेगा वह जीव इस भवसागर से पार उतर कर परम सुख को प्राप्त करेगा ।

॥ इति छठे आरा का भाव सम्पूर्ण ॥



बेइन्द्रियादिक ने अपर्याप्त होते समय होवे व पर्याप्त होने बाद मिट जावे संज्ञी पंचेन्द्रिय को पर्याप्त होने बाद भी होवे उसे सास्वादान समदृष्टि कहते हैं शास्त्र सूत्र जीवाभिगम दण्डक के अधिकार से।

३ मिश्रदृष्टि जीव स्थानक का लक्षणः-जो मिथ्यात्व में से निकला परन्तु जिसने समकित प्राप्त की नहीं इस बीचमें अध्यावसाय के रस से प्रवर्तता हुआ आयुष्य कर्म बांधे नहीं, काल भी करे नहीं, वहा से थोड़े समय के अन्दर, अनिश्चयता से तीसरे जीव स्थानक से गिर कर पहेले जीव स्थानक आवे अथवा वहा से चौथे आदि जीव स्थानक पर जावे तब आयुष्य बांधे, काल भी करे। शास्त्र सूत्र भगवती शतक तीशवें अथवा २६ वें।

४ अव्रती सम दृष्टि जीव स्थानक का लक्षणः-जो शंका कांक्षा रहित हो कर वीतराग के बचनों पर शुद्ध भाव से श्रद्धान करे तथा प्रतीति लाकर रोचे, चोरी प्रमुख विरुद्ध आचरण आचरे नहीं,-इसलिये कि उसकी लोक में हिलना होवे नहीं-व व्यवहार में समकित रहे। शास्त्र सूत्र उत्तराध्ययन के २८ वें मोक्ष मार्ग के अध्ययन से।

५ देशव्रती जीव स्थानक का लक्षणः-जो यथा-तथ्य समकित सहित, विज्ञान विवेक सहित देश पूर्वक व्रत अङ्गिकार करे, जो जघन्य एक नमोकारशी प्रत्याख्यान तथा एक जीव की घात करने का प्रत्याख्यान

उत्कृष्ट श्रावक की ११ प्रतिमा आदरे उसे देशव्रती जीव स्थानक कहते हैं। शाख सूत्र भगवती शतक सतरवा उद्देशा दूसरा।

६ प्रमत्त संयति जीव स्थानक का लक्षणः—जो समकित सहित सर्व व्रत आदरे, जो (अप्रमत्त जीवस्थानक के सञ्वलन के चार कषाय है उन से) प्र, अर्थात् विशेष मत्त कहेता माता (मस्त) होवे सञ्ज्वलन का क्रोध मान माया लोभ उसे प्रमत्त संयति जीवस्थानक कहते है परंतु प्रमादी नहीं कहते हैं।

७ अप्रमत्त संयति जीव स्थानक का लक्षणः—जो अ, कहेता नहीं, प्र, कहेता विशेष, मत्त, कहेता माता-सञ्ज्वलन का क्रोध मान माया लोभ एव छट्ठे जीवस्थानक से जो कुछ पतला होवे उसे अप्रमत्त संयति जीवस्थानक कहते है।

८ निवर्ती बादर जीव स्थानक का लक्षणः—जो निवर्ती- कहेता निवर्ता (दूर, अलग) है सञ्ज्वलन का क्रोध तथा मान से उसे निवर्ती बादर जीवस्थानक कहते है।

९ अनिवर्ती बादर जीवस्थानक का लक्षणः—अनिवर्ती कहेता नहीं निवर्ता सञ्ज्वलन के लोभ से उसे अनिवर्ती बादर जीवस्थानक कहते हैं।

१० सूक्ष्म सपराय जीवस्थानक का लक्षणः- जहा थोड़ा सा सञ्ज्वलन का लोभ का उदय है वो सूक्ष्म सपराय कहलाता है।

११ उपशान्त मोहनीय जीवस्थानक का लक्षणः जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियें उपशमाई हैं उसे- उपशान्त मोहनीय जीव स्थानक कहते हैं।

१२ क्षीण मोहनीय जीवस्थानक का लक्षणः- जिसने मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति का क्षय किया है उसे क्षीण मोहनीय स्थानक कहते हैं।

१३ सयोगी केवली जीवस्थानक का लक्षणः- जो मन वचन व काया के शुभ योग सहित केवल ज्ञान केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है उसे सयोगी केवली जीव स्थानक कहते हैं।

१४ अयोगी केवली जीवस्थानक का लक्षणः- जो शरीर सहित मन वचन काया के योग रोक कर केवल ज्ञान केवल दर्शन में प्रवर्त रहा है उन्हें अयोगी केवली जीव स्थानक कहते हैं।

❀ २ स्थिति द्वार ❀

१ मिथ्यात्व जीवस्थानक की स्थिति तीन तरह की

(१) अनादि अपर्यवसितः जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं और अन्त भी नहीं ऐसा अभव्य जीवों का मिथ्यात्व जानना।

(२) अनादि सपर्यवसितः-जिस मिथ्यात्व की आदि नहीं परन्तु अन्त है ऐसा भव्य जीवों का मिथ्यात्व जानना।

(३) सादि सपर्यवसितः-जिस मिथ्यात्व की आदि है और अन्त भी है। अनादि काल से जीव को यह मिथ्यात्व लगा है। परन्तु किसी समय भव्य जीव समकित की प्राप्ति करता है व ससार परिभ्रमण योग कर्म के प्राधान्य से फिर समकित से गिर कर मिथ्यात्व को अगीकार करता है। ऐसे भव्य जीवों को समदृष्टि पडिवाइ कहते हैं इस मिथ्यात्व जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन में देश न्यून। ऐसे जीव निश्चय से समकित पाकर मोक्ष जाते हैं। शास्त्र सूत्र जीवाभिगम दण्डक के अधिकार से।

२-३ दूसरे व तीसरे जीव स्थानक की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की।

चोथे जीव स्थानक की स्थितिः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट ६६ सागरोपम जाजेरी।

पाचवे जीव स्थानक की स्थितिः-जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून।

छट्ठे जीव स्थानक की स्थिति-परिणाम आश्री जघन्य एक समय उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून।

प्रवर्तन आश्री जघन्य-अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्यून। धर्म देव आश्री, शास्त्र सूत्र भगवती शतक १२ उद्देश ६।

सातवें, आठवें, नववें, दशवें, इग्यारवें, जीव स्थान-

की स्थिति जघन्य एक समय की उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की । शाख सूत्र भगवती शतक पच्चीशवां ।

बारहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट अन्तर मुहूर्त की ।

तेरहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट करोड़ पूर्व में देश न्युन ।

चौदहवें जीव स्थानक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त की । वह अन्तरमुहूर्त कैसाः—

लघु स्वर (ह्रस्व स्वर—अ, इ, उ, ऋ, लृ,) का उच्चारण करने में जितना समय लगे उसे अन्तर्मुहूर्त कहते हैं ।

❀ ४ क्रिया द्वार ❀

काइया क्रिया इत्यादिक २५ क्रिया में से जो२ क्रिया जिस२ जीव स्थानक पर जिन२ कारणों से लगती है उसका विस्तार पूर्वक वर्णन, कर्म आठ हैं जिनमें चोथा मोहनीय कर्म सरदार है । इसकी २८ प्रकृतिः—कर्म प्रकृति के थोकड़े में लिखे हुवे मोहनीय कर्म की प्रकृति की सत्ता, उदय क्षयोपशम, क्षय आदि से जो२ क्रिया लगे और जो२ नहीं-लगे उसका वर्णनः—

(१) पहेला मिथ्यात्व जीव स्थानक पर—मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से अभव्य को २६ प्रकृति की सत्ता है—१ समकित मोहनीय २ मिश्र मोहनीय ये दो छोड़कर

शेप २६. कुछ भव्य जीव को २८ प्रकृति का उदय होता है। जिसमें मिथ्यात्व का वल विशेप। दो की नीमा व तीन की (वाद) मजना १ समकित मोहनीय २ मिश्र मोहनीय इन दो की नीमा. १ अक्रिया वादी २ अज्ञान वादी ३ विनय वादी इन तीन की मजना इस तरह चोवीश संपराय क्रिया लगे।

(२) दूसरे जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियों में से वीस का उदय होता है, उसमें सास्वादन का वल विशेप होता है उसमें दो की नीमा १ मिथ्यात्व मोहनीय २ मिश्र मोहनीय। दो का वाद होता है १ अक्रिया-वादी, २ अज्ञान वादी जिससे चोवीश संपराय क्रिया लगती है।

(३) मिश्र दृष्टि जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से २८ का उदय इनमें मिश्र का वल विशेप है उसमें दो की नीमा और दो का वाद १ समकित मोहनीय २ मिथ्यात्व मोहनीय इन दो की नीमा, १ अज्ञान वादी २ विनय वादी इन दो का वाद इस तरह २४ सप-राय क्रिया लगती है।

(४) अवर्ती समदृष्टि जीव स्थानक में-मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सात का क्षयोपशम २१ का उदय। अनन्तानु बंधी क्रोध मान माया लोभ ५ समकित मोह-नीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय इन सात का क्षयोपशम २०

का उदय-ऊपर कहे हुवे सात चयोपशम में एक मिथ्या दर्शन वत्तिया क्रिया नहीं लगे २१ के उदय में २३ संपराय क्रिया लगे ।

(५) देश व्रती जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से ११ का चयोपशम व १७ का उदय १ अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय ८ अप्रत्याख्यानी क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ इन ११ का चयोपशम व उक्त ११ बोल छोड़ कर शेष (२८-११) १७ का उदय, ११ चयोपशम में मिथ्यात्व दर्शन वत्तिया क्रिया व अप्रत्याख्यान क्रिया ये दो क्रिया नहीं लगे १७ के उदय में २२ संपराय क्रिया लगे ।

(६) प्रमत्त संयति जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १५ का चयोपशम १३ का उदय १ अनन्तानुबंधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय ८ अप्रत्याख्यानी क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ १२ प्रत्याख्यानी क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ इन १५ का चयोपशम उक्त १५ बोल छोड़ कर शेष १३ बोल का उदय १५ के चयोपशम में २२ संपराय क्रिया नहीं लगे १३ के उदय में १ आरंभिया २ माया वत्तिया ये दो क्रिया लगे छट्ठे जीव स्थानक आरंभ नहीं करे परन्तु घृत के कुंभवत् ।

(७) जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सोलह का क्षयोपशम, १२ का उदय १५ बोल तो ऊपर कहे वो और १ सज्वलन का क्रोध एवं १६ का क्षयोपशम २८ प्रकृति में से ये १६ छोड़ शेष १२ का उदय। १६ के क्षयोपशम में २३ संपराय क्रिया नहीं लगे। १२ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

आठवें जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से सात का उपशम तथा क्षायिक (क्षय) १० का क्षयोपशम और ११ का उदय। सात उपशम तथा क्षायिक— १ अनन्तानुबधी क्रोध २ मान ३ माया ४ लोभ ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय अप्रत्याख्यानी चार, प्रत्याख्यानी चार एवं ८, ९ सज्वलन का क्रोध १० सज्वलन की माया ११ लोभ एव ११ का उदय। १० के क्षयोपशम में २३ सपराय क्रिया नहीं लगे। ११ के उदय में एक माया वत्तिया क्रिया लगे।

नववें जीव स्थानक में मोहनीय कर्म की २८ प्रकृति में से १० का उपशम तथा क्षायिक, ११ का क्षयोपशम ७ का उदय। अनन्तानुबधी के चार ५ समकित मोहनीय ६ मिथ्यात्व मोहनीय ७ मिश्र मोहनीय और तीन वेद एव १० का उपशम तथा क्षायिक, अप्रत्याख्यानी चार प्रत्यख्यानी चार, ८, ९ सज्वलन का क्रोध १० मान ११ माया एव ११ का क्षयोपशम, नो कषाय के नव में से तीन

अथवा आठ कर्म की उदीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य कर्म छोड कर)।

छट्ठे, सातवें, आठवें, नववें जीव स्थानक पर सात, आठ, छः की उदीरणा करे (सात की करे तो आयुष्य छोड़ कर और छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय कर्म छोड़ कर)।

दशवें जीव स्थानक पर छः व पांच की उदीरणा करे (छः की करे तो आयुष्य और वेदनीय छोड कर और पांच की करे तो आयुष्य, वेदनीय व मोहनीय ये तीन छोड़ कर)।

इग्यारहवें जीव स्थानक पर पांच कर्म की उदीरणा करे (आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय कर्म छोड़ कर)।

बारहवें, तेरहवें जीव स्थानक पर दो कर्म की उदीरणा करे नाम और गोत्र कर्म की।

चौदहवें जीव स्थानक पर एक भी कर्म की उदीरणा नहीं करे।

८ कर्म का उदय व ९ कर्म की निर्जरा द्वार।

पहेले से दशवें जीव स्थानक तक आठ कर्म का उदय और आठ कर्म की निर्जरा इग्यारहवें व बारहवें जीव स्थानक पर मोहनीय कर्म छोड़ कर शेष सात कर्म का उदय और सात कर्म की निर्जरा तेरहवें चौदहवें जीव स्थानक पर चार कर्म का उदय और चार कर्म की निर्जरा १ वेदनीय २ आयुष्य ३ नाम-४ गौत्र।

❀ १० छः भाव का द्वार ❀

छः भाव का नाम १ औदयिक २ औपशमिक ३ क्षायिक ४ क्षायोपशमिक ५ पारिणामिक ६ सान्निपातिक

छः भाव के भेदः—

१ औदयिक भाव के दो भेदः—१ जीव औदयिक २ अजीव औदयिक ।

१ जीव औदयिक के दो भेदः—१ औदयिक २ औदयिक निष्पन्न १ जिसमें आठ कर्म का उदय हो वो औदयिक और आठ कर्म के उदय से जो २ पदार्थ उत्पन्न होवे (निपजे) वो औदयिक निष्पन्न ।

आठ कर्म के उदय से जो २ पदार्थ उत्पन्न होवे उस पर ३२ बोल ।

गाथाः—

गई, काय, कसाय, वेद, लेस्स मिच्छ दिठि, अविरिए
असन्नी अनाणी आहारे, छउमत्थ सजोगी ससारथ्थ असिद्धेय।

अर्थः—गति चार ४ काय छ, १०, कषाय ४, १४, वेद तीन, १७, लेश्या ६, २३, २४ मिथ्यात्व दृष्टि २५ अव्रतीत्व (अव्रतीपना) २६, असंज्ञीत्व २७, अज्ञान २८ आहारिक पना २९ छद्मस्थपना ३० सजोगी (सयोगीपना) ३१ सासारिकपना (ससार में रहना) ३२ असिद्धपना एवं ३२ बोल जीव औदयिक से पावे ।

२ अजीव औदयिक के १४ भेद १ औदारिक शरीर २ औदारिक शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ३ वैक्रिय शरीर ४ वैक्रिय शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ५ आहारिक शरीर ६ आहारिक शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ७ तैजस् शरीर ८ तैजस् शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ९ कार्मण शरीर १० कार्मण शरीर से परिणाम ने वाले पुद्गल ११ वर्ण १२ गन्ध १३ रस १४ स्पर्श।

२ औप शामिक भाव के दो भेद:—औपशमिक और २ औपशमिक निष्पन्न। मोहनीय कर्म की जो २८ प्रकृति उपशमाई वो औपशमिक और मोहनीय कर्म उपशम करने से जो२ पदार्थ निपजे वो औपशमिक निष्पन्न।

उपशमाने (उपशान्त करने) से जो २ पदार्थ निपजे उसपर गाथा (अर्थ सहित):—

कसाय पेज्जदोसे, दसण मोह खीजे चरित्त मोहणीजे,।
सम्मत्त चरीत्त लद्धी, छउ मथ्थे वीयरागे य ॥

अर्थः-कषाय चार, ४, ५ राग ६ दोष ७ दर्शन मोहनीय ८ चारित्र मोहनीय इन आठ की उपशमता ९समकित तथा उपशम चारित्र की लब्धी की प्राप्ति होवे १० छद्मस्थपना ११ यथाख्यात चारित्र पना ये ११ बोल उपशम से पावे इसी प्रकार ये ११ बोल उपशम निष्पन्न से भी पावे।

३ क्षायिक भावना के दो भेदः-१ क्षायिक २

क्षायिक निष्पन्न। जिनमें से क्षायिक से आठ कर्म का क्षय होवे। आठ कर्म खपाने (क्षय करने) के बाद जो२ पदार्थ निपजे उसे क्षायिक निष्पन्न कहते हैं।

क्षायिक निष्पन्न के आठ भेद

१ ज्ञाना वर्णीय कर्म का क्षय होवे तब केवल ज्ञान उत्पन्न होवे २ दर्शना वरणीय कर्म का क्षय होवे तब केवल दर्शन उत्पन्न होवे ३ वेदनीय कर्म का क्षय होवे तब निराबाधत्वपन उत्पन्न होवे ४ मोहनीय कर्म का क्षय होवे तब क्षायिक सम्यक्त्व उत्पन्न होवे ५ आयुष्य कर्म का क्षय होवे तब अक्षयत्वपन उत्पन्न होवे ६ नाम कर्म का क्षय होवे तब अरूपीपन उत्पन्न होवे ७ गोत्र कर्म का क्षय होवे तो अगुरूलघु पन उत्पन्न होवे ८ अंतराय कर्म का क्षय होवे तो वीर्यपना उत्पन्न होवे।

४ क्षायोपशमिक भाव के दो भेदः—१ क्षायोपशमिक २ क्षायोपशमिक निष्पन्न। उदय में आये हुवे कर्मों को खपावे और जो कर्म उदय में नहीं आये उन्हें उपशमावे उसे क्षायोपशमिक भाव कहते हैं। क्षायोपशम करने से जो२ पदार्थ निपजे उन्हें क्षायोपशमिक निष्पन्न कहते हैं।

क्षायोपशम से जो २ पदार्थ निपजे उस पर गाथाः—
दस उव उग तिदिठि चउ चरित्त, चरित्ता चरित्तं य।
दाणाइ पच लद्धि, वीरियत्ति पच इंदिए ॥ १ ॥

दुवालस अंग धरे, नव पुव्वी जाव चउदस पुविए ।
उवसम, गणी पडि मा्अ, इइ चउसम नीककहे ॥ २ ॥

अर्थ--छद्मस्थ के १० उपयोग, १०; ३ दृष्टि, १३ ४ चारित्र पहेला, १७, १८ श्रावकत्व, दानादि पंचलब्धि २३, ३ वीर्य, २६; ५ इन्द्रिय, ३१, १२, अंग की धारना ४३, नव पूर्व यावत् १४ पूर्व का ज्ञान होना, ४४ उपशम ४५ आचार्य की प्रतिमा ४६ एवं ४६ बोल क्षायोपशमिक भाव से निपजे । क्षायोपशमिक निष्पन्न भाव से भी ये ४६ बोल ।

५ पारिणामिक भाव से दो भेद १ सादि पारिणामिक २ अनादि पारिणामिक इन में से प्रथम पारिणामिक भाव के दश भेद १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ जीवास्तिकाय ५ पुद्गलास्तिकाय ६ अद्धाकाल ७ भव्य ८ अभव्य ६ लोक १० अलोक ये दश सर्वदा विद्यमान हैं सादि पारिणामिक के भेद नीचे अनुसार ।

गाथा

जुना सुरा, जुना गुला, जुना घिय, जुना तदुल चेव ।
अभय, अभयरुख, सद्ध गधव्व नगरा ॥ १ ॥
उक्कावाए दिसिदाहे, गज्जीए मिज्जुए, णिग्घाए ।
जुवए जक्खालित्तए, धुमिया महीता रजोघाए ॥ २ ॥

चंदो वरागा, सुरोवरागा, चदो पडिवेसा सुरोपडिवेसा।
पडिचदा पडिसुरा, इन्द धणु उदग, मच्छ, कविहसा अमोहे॥३॥

वासा, वासहरा चेव, गाम, घर सागरा।
पयल पायाल भवणा अ, निरअ पासाए॥४॥

पुढ विसत्त कप्पो बार, गेविज्य अणुत्तर सिद्धि।
पम्माणु पोग्गल दोपएसी, जाव अणत पएसी खंधे॥५॥

अर्थः पुरानी शराब, पुराना गुड़, पुराना घी पुराने चांवल, बादल, बादल की रेखा, सध्या का वर्ण, गंधर्व के चिह्न, नगर के चिह्न (१) १ उल्का पात २ दिशि दाह ३ गर्जना ४ विद्युत ५ निर्घात (काटक) ६ शुक्ल पक्ष का बालचन्द्र ७ आकाश में यक्ष का चिह्न ८ कृष्ण धूयर ९ उज्वल धूयर १०, रजोघात (२) चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, चन्द्र का जलकुण्ड, सूर्य जल कुण्ड एक ही समय दो चान्द दो सूर्य दीखाई देवे, इन्द्र धनुष्य-जल पूर्ण बादल, मच्छ के चिह्न, बन्दर के चिह्न, हंस का चिह्न, और बाण का चिह्न (३) क्षेत्र, वर्ष धर, पर्वत, ग्राम, घर नगर प्रासाद (महेल), पाताल, कलश, भवन पति के भवन नरक वासे, (४) सात पृथ्वी, कल्प (देव-लोक) बारह, नव ग्रीयवेक, पाच अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला, परमाणु पुद्गल दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनत प्रदेशी स्कंध। (५) इन बोलों में पुद्गल जावे तथा आवे, गले

दुवालस अंग धरे, नव पुव्वी जाव चउदस पुविए ।
उवसम, गणी पडि माश्र, इइ चउसम नीकक्खे ॥ २ ॥

अर्थ'–छद्मस्थ के १० उपयोग, १०; ३ दृष्टि, १३ ४ चारित्र पहेला, १७, १८ श्रावकत्व, दानादि पंचलब्धि २३, ३ वीर्य, २६; ५ इन्द्रिय, ३१, १२, अंग की धारना ४३, नव पूर्व यावत् १४ पूर्व का ज्ञान होना, ४४ उपशम ४५ आचार्य की प्रतिमा ४६ एवं ४६ बोल क्षायोपशमिक भाव से निपजे। क्षायोपशमिक निष्पन्न भाव से भी ये ४६ बोल।

५ पारिणामिक भाव से दो भेद १ सादि पारिणामिक २ अनादि पारिणामिक इन में से प्रथम पारिणामिक भाव के दश भेद १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ जीवास्तिकाय ५ पुद्गलास्तिकाय ६ अद्धाकाल ७ भव्य ८ अभव्य ६ लोक १० अलोक ये दश सर्वदा विद्यमान है सादि पारिणामिक के भेद नीचे अनुसार।

गाथा

जुना सुरा, जुना गुला, जुना घिय, जुना तंदुल चेव ।
अभय, अभयरुख, सद्ध गधव्व नगरा ॥ १ ॥
उक्कावाए दिसिदाहे, गज्जीए मिज्जुए, णिग्घाए ।
जुवए जक्खालित्तए, धुमिया महीता रजोघाए ॥ २ ॥

चदो वरागा, सुरोवरागा, चदो पडिवेसा सुरोपडिवेसा ।
पडिचदा पडिसुरा,इन्द धणु उदग,मच्छा,कविहसा अमोहे॥३॥

वासा, वासहरा चेव, गाम, घर णगरा ।
पयल पायाल भवणा अ, निरअ पसाए ॥ ४ ॥

पुढ विसत्त कप्पो बार, गेविज्य अणुत्तर सिद्धि ।
पम्माणु पोग्गल दोपएसी, जाव अणत प्पएसी खधे ॥५॥

अर्थः पुरानी शराब, पुराना गुड़, पुराना घी पुराने चावल, बादल, बादल की रेखा, सध्या का वर्ण गधर्व के चिह्न, नगर के चिह्न (१) १ उल्का पात २ दिशि दाल ३ गर्जना ४ विद्युत ५ निर्घात (काटक) ६ शुक्ल पत्त का बालचन्द्र ७ आकाश में यत्त का चिह्न ८ कृष्ण धूयर ६ उज्वल धूयर १०, रजोघात (२) चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, चन्द्र का जलकुण्ड, सूर्य जल कुण्ड एक ही समय दो चान्द दो सूर्य दीखाई देवे, इन्द्र धनुष्य-जल पूर्ण बादल, मच्छ के चिह्न, बन्दर के चिह्न, हस का चिह्न, और बाण का चिह्न (३) चेत्र, वर्ष धर, पर्वत, ग्राम, घर नगर प्रासाद (महेल), पाताल, कलश, भवन पति के भवन नरक वासे, (४) सात पृथ्वी, कल्प (देव-लोक) बारह, नव ग्रीयवेक, पाच अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला,परमाणु पुद्गल दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनत प्रदेशी स्कंध। (५) इन बोलों में पुद्गल जावे तथा आवे, गले

दुवालस अंग घरे, नव पुव्वी जाव चउदस पुविए ।
उवसम, गणी पडि माश्र, इइ चउसम नीकक्ले ॥ २ ॥

अर्थः-छद्मस्थ के १० उपयोग, १०; ३ दृष्टि, १३ ४ चारित्र पहेला, १७, १८ श्रावकत्व, दानादि पंचलब्धि २३, ३ वीर्य, २६; ५ इन्द्रिय, ३१, १२, अंग की धारना ४३, नव पूर्व यावत् १४ पूर्व का ज्ञान होना, ४४ उपशम ४५ आचार्य की प्रतिमा ४६ एवं ४६ बोल क्षायोपशमिक भाव से निपजे । क्षायोपशमिक निष्पन्न भाव से भी ये ४६ बोल ।

५ पारिणामिक भाव से दो भेद १ सादि पारिणामिक २ अनादि पारिणामिक इन में से प्रथम पारिणामिक भाव के दश भेद १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ जीवास्तिकाय ५ पुद्गलास्तिकाय ६ अद्धाकाल ७ भव्य ८ अभव्य ९ लोक १० अलोक ये दश सर्वदा विद्यमान हैं सादि पारिणामिक के भेद नीचे अनुसार ।

गाथा

जुना सुरा, जुना गुला, जुना घिय, जुना तदुल चेव ।
अभय, अभयरुख, संझ, गधव्व, नगरा ॥ १ ॥
उक्कावाए दिसिदाहे, गज्जीए मिज्जुए, णिग्घाए ।
जुवए जख्खालित्ताए, धुमिचा महीता रजोघाए ॥ २ ॥

चदो वरागा, सुरोवरागा, चदो पडिवेसा सुरोपडिवेसा ।
पडिचदा पडिसुरा, इन्द धणु उदग, मछा, कविहसा अमोहे॥ ३॥

वासा, वासहरा चेव, गाम, घर णगरा ।
पयल पायाल भवणा अ, निरअ पासाए ॥ ४ ॥

पुढ विसत्त कप्पो बार, गेविज्य अणुत्तर सिद्धि ।
पम्माणु पोग्गल दोपएसी, जाव अणत प्पएसी खंधे ॥५॥

अर्थः पुरानी शराब, पुराना गुड, पुराना घी पुराने चावल, बादल, पादल की रेखा, सध्या का वर्ण गंधर्व के चिह्न, नगर के चिह्न (१) १ उल्का पात २ दिशि दाल ३ गर्जना ४ विद्युत ५ निर्घात (काटक) ६ शुक्ल पच का बालचन्द्र ७ आकाश में यक्ष का चिह्न ८ कृष्ण धूयर ९ उज्वल धूयर १०, रजोघात (२) चन्द्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, चन्द्र का जलकुण्ड, सूर्य जल-कुण्ड एक ही समय दो चान्द दो सूर्य दीखाई देवे, इन्द्र धनुष्य जल पूर्ण बादल, मच्छ के चिह्न, बन्दर के चिह्न, हस का चिह्न, और बाण का चिह्न (३) क्षेत्र, वर्ष धर, पर्वत, ग्राम, घर नगर प्रासाद (महेल), पाताल, कलश, भवन पति के भवन नरक वासे, (४) सात पृथ्वी, कल्प (देव-लोक) बारह, नव ग्रीयवेक, पाच अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला, परमाणु पुद्गल दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् अनत प्रदेशी स्कंध। (५) इन बोलों में पुद्गल जावे तथा आवे, गले

जीव स्थानक तक पावे २४ वा भांगा क्षपक श्रेणी के आठवें से बारहवें जीव स्थानक (११ वा छोड कर) तक पावे

पाच संयोगी का एक भांगा ।

भांगा	औदयिक	औपशमिक	क्षायिक	क्षायोपशमिक	पारि.
२६	१	१	१	१	१

इस यत्र के २६ भागें में पाच भागा पारिणामिक है शेष २१ भागा अपारिणामिक है ।

❀ इति श्री जीव स्थानक सम्पूर्ण ❀





ॐ श्रीगुणस्थान द्वार ॐ

गाथा

नाम, लक्खण, गुण ठिइ, किरिया, सत्ता, बंध, वेदय, ।
उदय, उदिरणा, चेव, निज्जरा, भाव, कारणा ॥१॥
परिसह, मग्ग, आयाय, जीवाय भेदे, जोग, उविउग, ।
लेस्सा, चरण, सम्मतं, आया बहुच्च, गुणठाणेहिं, ॥२॥

(१) नाम द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान २ सास्वादान गु० ३ मिश्र गु० ४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि गु० ५ देशव्रती गु० ६ प्रमत्त सजति (संयति) गु० ७ अप्रमत्त सजति गु० ८ नियट्टि (निवर्ती) बादर गु० ९ अनियट्टि (अनिवर्ती) बादर गु० १० सूक्ष्म संपराय गु० ११ उपशान्त मोहनीय गु० १२ क्षीण मोहनीय गु० १३ सजोगी केवली गु० १४ अजोगी केवली गु० ।

(२) लक्षण द्वार

१ मिथ्यात्व गुणस्थान का लक्षण—श्री वीतराग के वचनों को कम, ज्यादा, विपरीत श्रद्धे (सर्दहे) परुपे फरसे उसे मिथ्यात्व गु० कहते है । जैसे कोई कहे कि जीव अगुठे समान है, तडुल समान है, शामा (तिल) समान है दीपक समान है, आदि ऐसी परुपना करे (ओ-

छो) परुपना है । अधिक परुपना-एक जीव सर्व लोक ब्रह्माण्ड मात्र में व्याप रहा है ऐसी परुपना अधिक परुपना है । यह आत्मा पांच भूतों से उत्पन्न हुई है व इसके नष्ट होने पर जीव भी नष्ट होता है पांच भूत जड है इनसे चैतन्य उपजे व नष्ट होवे ऐसी परुपना विपरीत सर्दहे, परुपे फरसे उसे मिथ्यात्व कहते हैं। जैन मार्ग से आत्मा अकृत्रिम [स्वभाविक] अखण्ड अविनाशी व नित्य है सारे शरीर में व्यापक है विचारे [तब] गौतम स्वामी वंदना करके श्री भगवंत को पूछने लगे " स्वामीनाथ ? मिथ्यात्वी जीव को किन गुणों की प्राप्ति होवे ? तब श्री महावीर स्वामी ने जवाब दिया कि यह जीव रूपी दड़ी (गेंद) कर्म रूपी डंडे (गुटाटी) मे ४ गति २४ दंडक ८४ लाख जीवयोनि में वारं वार परिभ्रमण करता रहता है परन्तु संसार का पार अभी तक पाया नहीं ।

दूसरे गुण स्थानक का लक्षणः-जिस प्रकार (जैसे) कोई पुरुष खिर खाण्ड का भोजन करके फिर वमन करे उस समय कोई पुरुष उससे पूछे " कि भाई खीर खाण्ड का कैसा स्वाद है ?" उस समय उसने उत्तर दिया " थोडा सा स्वाद है " इस प्रकार भोजन के (स्वाद) समान समकित व वमन के (स्वाद के) समान मिथ्यात्व ।

दूसरा दृष्टान्तः-जैसे घंटे का नाद प्रथम मेघ

गंभीर होता है और फिर थोडी सी झनकार शेप रह जाती है उसी प्रकार गहेर गंभीर शब्द के समान समकित और झनकार समान मिथ्यात्व।

तीसरा दृष्टान्तः—जीव रूपी आम्र वृक्ष, प्रमाण रूप शाखा, समकित रूप फल, मोहरूप हवा चलने से प्रमाण रूप डाल से समकित रूप फल टूट कर पृथ्वी पर गिरा परन्तु मिथ्यात्व रूप पृथ्वी पर फल गिरा नहीं अभी बीचमें ही है इस समय तक (जब तक वो बीच में है) सास्वादान गुणस्थान रहता है और जब पृथ्वी पर गिर पड़ा तब मिथ्यात्व गुणस्थान। गौतम स्वामी हाथ जोडी मान मोडी श्री भगवंत को पूछने लगे " स्वामी नाथ ! इस जीव को कौन से गुणों की प्राप्ति होवे" तब श्री भगवंत ने फरमाया कि यह जीव कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हुवा व इसे अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल ही केवल संसार में परिभ्रमण करना शेप रहा। जैसे किसी जीव को एक लाख करोड रूपे देना हो और उसने उसमें से सब ऋण चुका दिया हो केवल अधेली (आधा रूपया) देनी शेप रही हो इसी प्रकार इस जीव को आधे रूपे कर्ज के समान संसार में परिभ्रमण करना शेप रहा। सास्वादान समकित पांच वार आवें।

तीसरे गुणस्थान का लक्षणः-सम्यक्त्व और मिथ्यात्व इन दो के मिश्र से मिश्र गुणस्थान बनता है

पर श्रीखंड का दृष्टान्त जैसे श्रीखंड कुछ खट्टा और कुछ मिठा होता है वैसे ही मिठे समान समकित और खट्टे समान मिथ्यात्व जो जिन मार्ग को अच्छा समझे तथा अन्य मार्ग को भी अच्छे समझे जैसे किसी नगर के बाहर साधु महा पुरुष पधारे हुवे है। व श्रावक लोग जिन्हे वंदना नमस्कार करने के लिये जा रहे हो उस समय मिश्र दृष्टि मित्र मार्ग में मिला उसने पूछा " मित्र ! तुम कहां जा रहे हो । इस पर श्रावक ने जबाब दिया कि मैं साधु महा-पुरुष को वंदना करने को जा रहा हूँ मिश्र दृष्टि वाले ने पूछा कि वंदना करने से क्या लाभ होता है । श्रावक ने कहा कि महा लाभ होता है इस पर मित्र ने कहा कि मैं भी वंदना करने को आता हूँ ऐसा कह कर उस ने चलने के लिये पैर उठाये इतनें में दूसरा मिथ्यात्वी मित्र मिला । इस ने इन्हें देख कर पूछा कि तुम कहा जा रहे हो । तब मिश्र गुण स्थान वाला बोला कि हम साधु महा पुरुष को वंदना करने के लिये जा रहे हैं यह सुन कर मिथ्यात्वी बोला कि इन की वदना करने से क्या होता है येतो बड़े मेले कुचेले रहते हैं इत्यादि कह कर उसे (मिश्र दृष्टि वाले को) पुनः जाते हुवे को लोटाया। श्रावक साधु मुनिराज को वंदना कर के पूछने लगा कि महाराज मेरे मित्र ने वंदना करने के लिये पैर उठाया इससे उसे किस गुण की प्राप्ति हुई । तब मुनि ने उत्तर दिया, कि जो काले

उड़द के समान था वो दाल के समान हुवा, कृष्ण पक्षी का शुक्ल पक्षी हुवा अनादि काल से उलटा था जिसका सुलटा हुवा, समकित के सन्मुख हुवा परन्तु पैर भरने समर्थ नहीं। इस पर गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड वंदना नमस्कार कर श्री भगवंत को पूछने लगे 'हे स्वामीनाथ' इस जीव को किस गुण की प्राप्ति हुई ! तब भगवान ने फरमाया कि जीव ४ गति २४ दंडक में भटक कर उत्कृष्ट देश न्यून अर्द्ध पुद्गल परावर्तन काल में संसार का पार पायेगा ।

४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टिः—अनन्तानु बंधी क्रोध मान, माया, लोभ, सम्यक्त्व मोहनीय, मिथ्यात्व मोहनीय मिश्र मोहनीय इन सात प्रकृति का क्षयोपशम करे अर्थात् ये सात प्रकृति जब उदय में आवे तब क्षय करे और सत्ता में जो दल है उनको उपशम करे उसे क्षयोपशम सम्यक्त्व कहते है यह सम्यक्त्व असंख्यात बार आता है, ७ प्रकृति के दलों को सर्वथा उपशमावे तथा ढाके उसे उपशम सम्यक्त्व कहते हैं यह सम्यक्त्व पांच बार आवे। सात प्रकृति के दलों को क्षयोपशम करे उसे क्षायक समकित कहते हैं यह समकित केवल एक बार आवे। इस गुणस्थान पर आया हुवा जीव जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने, सर्दहे, परुपे परन्तु फरस सके नहीं। तिवारे गौतम

६ प्रमत्त संयति गुण स्थानः-उक्त ११ प्रकृति व प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ एवं पन्द्रह प्रकृति का क्षयोपशम कर। इन १५ प्रकृतियों का क्षय करे वो क्षायिक समकित और १५ प्रकृति का उपशम करे वो उपशम समकित, और कुछ उपशमावे कुछ क्षय करे वो क्षयोपशम समकित। उस समय गौतम स्वामी हाथ जोड़ मान मोड़ श्री भगवान को पूछने लगे कि इस गुणस्थान वाले को किस गुण की प्राप्ति होवे भगवत ने उत्तर दिया यह जीव द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भावसे जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप जाने श्रद्धे परुपे, फरसे। साधुत्व एक भवमें नवमो वार आवे यह जीव जघन्य तीसरे भवमें उत्कृष्ट १५ भवमें मोक्ष जावे। आराधिक जीव ज. पहेले देवलोक में उ. अनुत्तर विमान में उपजे। १७ भेद से संयम निर्मल पाले, १२ भेदे तपस्या करे, परन्तु योग चपलता, कषाय चपलता, वचन चपलता, व दृष्टि चपलता कुछ शेष रह जाने से यद्यपि उत्तम अप्रमाद से रहे तो भी प्रमाद रह जाता है इस लिये प्रमाद करके, कृष्णादिक द्रव्य लेश्या व अशुभ योग से किसी समय प्रणति बदल जाती है जिससे कषाय प्रकृष्टमत्त बन जाता है इसे प्रमत्त संयति गुणस्थान कहते हैं।

७ अप्रमत्त संयति गुणस्थानः—पांच प्रमाद का त्याग करे तब सातवें गुणस्थान आवे पांच प्रमाद का नाम।

गाथा:—

मद, विषय, कषाया, निंदा, विगहा पचमा, भणिया ।
ए ए पंच पमाया, जीवा पाडंति संसारे ॥

इन पांच प्रमाद का त्याग व उक्त १५ प्रकृति और १ सज्वलन का क्रोध एवं १६ प्रकृति का क्षयोपशम करे इससे किम गुण की प्राप्ति होवे । जीवादि नव पदार्थ द्रव्य से, काल से, भाव से तथा नोकारसी आदि छ मासी तप ध्यान युक्ति पूर्वक जाने, श्रद्धे, परूपे, फरसे वह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भवमें मोक्ष जावे । गति प्रायः कल्पातीत की पावे, ध्यान में, अनुष्ठान में अप्रमत्त पूर्वक प्रवर्ते, व शुभ लेश्या के योग सहित अध्यवसाय प्रवर्तता हुवा जिसके प्रमत्त कषाय नहीं वो अप्रमत्त सयति गुणस्थान कहलाता है ।

८ निवर्ती (नियट्टि) बादर गुणस्थान:—उक्त १६ प्रकृति व सज्वलन का मान एवं १७ प्रकृति का क्षयोपशम करे तब आठवें गुणस्थान आवे (तब गोतम स्वामी हाथ जोड़ पूछने लगे आदि उपरोक्त समान) इस गुणस्थान वाले को किम गुण की प्राप्ति होवे । जो परिणाम धारा व अपूर्व करण जीव को किसी समय व किसी दिन उत्पन्न नहीं हुवा हो ऐसी परिणाम-धारा व करण की श्रेणी जीव को उपजे । जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से, क्षेत्र से,

से भाव से नोकारसी आदि छमासी तप जाने सर्दहे परूपे फरसे। यह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष जावे। यहां से दो श्रेणी होती है। १उपशम श्रेणी २ क्षपक श्रेणी। उपशम श्रेणी वाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृति के दलों को उपशम करता हुआ इग्यारहवें गुणस्थान तक चला आता है। पडिवाइ भी हो जाता है व हायमान परिणाम भी परिणमता है। क्षपक श्रेणी वाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृति के दलों को क्षय करता हुवा शुद्ध परिणाम से निर्जरा करता हुवा नववें दशवें गुणस्थान पर होता हुवा ग्यारहवें को छोड़ बारहवें गुणस्थान पर चला जाता है यह अपडिवाइ होता है व वर्द्धमान परिणाम में परिणमता है। जो निवर्ता है बादर कषाय से, बादर संपराय क्रिया से, श्रेणी करे अभ्यन्तर परिणाम पूर्वक अध्यवसाय स्थिर करे व बादर चपलता से निवर्ता है उसे नियट्टि बादर गुणस्थान कहते हैं (दूसरा नाम अपूर्व करण गुणस्थान भी है) किसी समय पूर्व में पहिले जीव ने यह श्रेणी कभी की नहीं और इस गुणस्थान पर पहेला ही करण पंडित वीर्य का आवरण। क्षय करण रूप करण परिणाम धारा, वर्द्धन रूप श्रेणी करे उसे अपूर्व करण गुणस्थान कहते हैं।

९ अनियट्टि बादर गुणस्थान

उपरोक्त १७ प्रकृति और संज्वलन की माया, स्त्री

वेद नपुसक वेद एव २१ प्रकृति का क्षयोपशम करे । तब जीव नवमें गुणस्थान आवे । इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे ? उत्तर- यह जीव जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से निर्विकार अमायी विषय निरवंछा पूर्वक जाने सर्दहे परूपे, फरसे। यह जीव जघन्य उसी भव में उत्कृष्ट तीसरे भव में मोक्ष जावे। सर्वथा प्रकार से निवर्तो नहीं केवल अंश मात्र अभी सपराय क्रिया शेष रही उसे अनियट्टि बादर गुणठाणा कहते है । आठवा नवमा गुण ठाणा [गुणस्थान] के शब्दार्थ बहुत ही गम्भीर है अतः इन्हे पंचसग्रहादिक ग्रथ तथा सिद्धान्त में से जानना ।

१० सूक्ष्म सपराय गुणस्थानः—उपरोक्त २१ प्रकृति और १ हास्य २ रति ३ अरति ४ भय ५ शोक ६ दुगछा एव २७ प्रकृति का क्षयोपशम करे इस जीव को किस गुण की प्राप्ति होवे । उत्तर—यह जीव द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से जीवादिक नव पदार्थ तथा नोकारसी आदि छमासी तप, निरभिलाप, निर्वंछक, निर्वेदकतापूर्वक, निराशी, अव्यामोह अविभ्रमतापूर्वक जाने सर्दहे परूपे फरसे। यह जीव ज. उसी भव में उ. तीसरे भव में मोक्ष जावे। सूक्ष्म अर्थात थोडीसी—पतलीसी—संपराय क्रिया शेष रही अतः इसे सूक्ष्म सपराय गुणस्थान कहते है ।

११ उपशान्त मोहनीय गुणस्थानः—उपरोक्त २७ प्रकृति और सज्वलन का लोभ एव २८ प्रकृति।७

सर्वथा ढांके [छिपावे], भस्म [राख] से दबी हुई अग्निवत इस जीव को किस गुण की उत्पति होवे [उत्तर] यह जीव जीवादिक नव पदार्थ द्रव्य से क्षेत्र से, काल से, भाव से, नोकारसी आदि छमासी तप वीतराग भाव से, यथाख्यात चारित्र पूर्वक जाने, सर्दहे, परुपे, फरसे, इतने में यदि काल करे तो अनुत्तर विमान में जावे फिर मनुष्य होकर मोक्ष जावे और यदि [काल नहीं करे और] सूक्ष्म लोभ का उदय होवे तो कषाय रुप अग्नि प्रकट हो कर दशवें गुणस्थान परसे गिरता हुवा यावत् पहेले गुणस्थान तक चला आवे [इग्यारहवें गुणस्थान से आगे चढ़े नहीं] सर्वथा प्रकारे मोह का उपशम करना [जल से बुझाई हुई अग्नि वत् नहीं परन्तु] भस्म से दबी हुई अग्नि वत्। उसे उपशान्त मोहनीय गुणस्थान कहते हैं।

१२ क्षीण मोहनीय गुणस्थानः-उपरोक्त २८ प्रकृतियों को सर्वथा प्रकारे खपावे क्षपक श्रेणी, क्षायक भाव, क्षायक समकित, क्षायक यथाख्यात चारित्र, करण सत्य, योग सत्य, भाव सत्य, अमायी, अकषायी, वीतरागी, भाव निर्ग्रंथ, सपूर्ण संवुड (संवृते) सपूर्ण भावितात्मा, महा तपस्वी महासुशील, अमोही, अविकारी, महाज्ञानी महा ध्यानी, वर्द्धमान परिणामी, अपडिवाइ होकर अन्तर्मुहूर्त रहे। इस गुणस्थान पर काल करते नहीं व पुनर्भव होता नहीं। अन्त समय में पाच ज्ञानावरणीय, नव दर्शनावर-

णिय, पांच प्रकारे अन्तराय कर्म क्षय करणोद्यम करके तेरहवें गुणस्थान पर पहले समय में क्षय करे तब केवल ज्योति प्रकट होवे। क्षीण अर्थात् क्षय किया है सर्वथा प्रकारे मोहनीय कर्म जिस गुणस्थान पर सउ क्षीण मोहनीय गुणस्थान कहते हैं।

१३ सयोगी केवली गुणस्थानः-दश बोल सहित तेरहवें गुणस्थान पर विचरे। सयोगी, सशरीरी सलेशी, शुक्ल लेशी, यथाख्यात चारित्र, क्षायक समकित पंडित वीर्य, शुक्ल ध्यान, केवल ज्ञान, केवल दर्शन एव दश बोल जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट देश न्यून करोड पूर्व तक विचरे। अनेक जीवों को तार कर, प्रतिबोध देकर, निहाल करके, दूसरे तीसरे शुक्ल ध्यान के पाये को ध्याय कर चौदहवें गुणस्थान पर जावे। सयोगी याने शुभ मन, वचन, काया के योग सहित बाहाज्य चलोपकरण है गमनागमना दिक चेष्टा शुभ योग सहित है केवल ज्ञान केवल दर्शन उपयोग समयातर अविछिन्न रूप से शुद्ध प्रणमें इसलिये इसे सयोगी केवली गुणस्थान कहते हैं।

१४ अयोगी केवली गुण स्थानः-शुक्ल ध्यान का चौथा पाया समुछिन्नक्रिय, अनन्तर अप्रतिपाती, अनिवृति ध्याता मन योग रूंध कर, वचन योग रूंध कर, काय योग रूंध कर, आनप्राण निरोध कर रूपातीत परम शुक्ल ध्यान ध्याता हुवा ७ बोल सहित विचरे। उक्त १

क्रिया छोड़ कर। दूसरे चौथे गुण० २३ क्रिया पावे इरिया वहिया, और मिथ्यात्व की ये दो छोड़ कर। पांचवें गुण० २२ क्रिया पावे मिथ्यात्व, अविरति इरिया वहिया क्रिया छोड़ कर। छट्ठे गुण० २क्रिया पावे १ आरंभिया २ माया-वत्तिया। सातवें गुण० से दशवें गुण० तक १ माया वतिया क्रिया पावे। इग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें गुण० १ इरिया वहिया क्रिया पावे। चौदहवें गुण० क्रिया नहीं पावे।

५ सत्ता द्वार

पहले गुणस्थान से इग्यारहवें गुण० तक आठ कर्म की सत्ता। बारहवें गुण० ७ कर्म की सत्ता मोहनीय कर्म छोड कर। तेरहवें चौदहवें गुण० ४ कर्म की सत्ता वेदनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र एवं चार कर्म।

६ बंध द्वार

पहिले गुणस्थान से सातवें गुण० तक (तीसरा गुण० छोड कर) ८ कर्म बंधे या सात कर्म बंधे (आयुष्य कर्म छोड कर) तीसरे, आठवें, नवें गुण० ७ कर्म बंधे (आयुष्य छोड कर) दशवें गुण० ६ कर्म बंधे (आयुष्य मोहनीय कर्म छोड कर) इग्यारहवें, बारहवें तेरहवें गुण० १ शाता वेदनीय कर्म बंधे। चौदहवें गुण० कर्म नहीं बंधे।

७ वेद द्वार और ८ उदय द्वार

पहिले गुण० से दशवें गुण० तक ८ कर्म वेदे और ८ कर्म का उदय। इग्यारहवें बारहवें ७ कर्म (मोहनीय छोड

कर) वेदे और ७ कर्म का उदय । तेरहवें चौदहवें गुण० ४ कर्म वेदे और ४ कर्म का उदय—वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र ।

९ उदीरणा द्वार

पहेले गुण० से सातवें गुण० तक ८ कर्म की उदीरणा तथा सात की (आयुष्य कर्म छोड कर) आठवें, नववें गुण० ७ कर्म की उदीरणा (आयुष्य छोड कर) तथा ६ कर्म की (आयुष्य मोहनीय छोड कर) दशवें गुण० ६ की करे ऊपर समान तथा ५ की करे (आयुष्य मोहनीय वेदनीय छोड कर) इग्यारहवें बारहवें गुण० ५ कर्म की (ऊपर समान) तथा २ कर्म की करे— नाम और गोत्र कर्म की । तेरहवें गुण० २ कर्म की उदीरणा—नाम, गोत्र चौदहवे गुण० उदीरणा नहीं करे ।

१० निर्जरा द्वार

पहेले से इग्यारहवें गुण० तक ८ कर्म की निर्जरा बारहवें ७ कर्म की निर्जरा (मोहनीय कर्म छोड कर) तेरहवें चौदहवें गुण० ४ कर्म की निर्जरा—वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र ।

११ भाव द्वार

१ उदय भाव २ उपशम भाव ३ क्षायक भाव ४ क्षयोपशम भाव ५ परिणामिक भाव ६ सन्निवाइ भाव ।

पहेले तीसरे गुण० ३ भाव—उदय, क्षयोपशम, "

भाव ६—

१ उदय भाव २ उप शम भाव ३ क्षायक भाव ४ क्षयोपशम भाव ५ परिणामिक भाव ६ सन्निवाइ भाव ।

१ उदय भाव के दो भेदः—१ जीव उदय निष्पन्न २ अजीव उदय निष्पन्न जीव उदय निष्पन्न में ३३ बोल पावेः—४ गति, ६ काय, ६ लेश्या, ४ कषाय, ३ वेद एवं २३ और १ मिथ्यात्व २ अज्ञान ३ अविरति ४ असंज्ञीत्व ५ आहारिक पना ६ छद्मस्थ पना ७ सयोगी पना ८ ससार परियट्टणा ९ असिद्ध १० अ० केवली एवं सर्व ३३ बोल। अजीव उदय निष्पन्न में ३० बोल पावेः-५वर्ण २ गन्ध ५ रस ८ स्पर्श ५ शरीर और ५ शरीरके व्यापार एवं ३० दोनों मिलाकर (३३+३०) ६३ बोल उदय भाव के हुवे।

उपशम भाव में ११ बोल पावे। चार कषाय का उपशम ४, ५ रागका उपशम ६ द्वेष का उपशम ७ दर्शन मोहनीय का उपशम ८ चारित्र मोहनीय का उपशम एवं ८ मोहनीय की प्रकृति, और ९ उवसमिया दंशण लद्धि (समकित) १० उवसमिया चरित्त लद्धि ११ उवसामिया अकषाय छउमथ वीतराग लद्धि एवं ११।

क्षायक भाव में ३७ बोल—५ज्ञानावरणिय ९ दर्शना वरणिय, २ [illegible] १ [illegible] ४ कषाय,

१ दर्शन मोहनीय, १ चारित्र मोहनीय, ४ आयुष्य, २ नाम, २ गोत्र, ५ अन्तराय एवं ३७ प्रकृति का क्षय करे उसे क्षायक भाव कहते हैं ये ९ बोल पावे।

१ क्षायक समकित २ क्षायक यथाख्यात चारित्र ३ केवल ज्ञान ४ केवल दर्शन और क्षायक दानादि पाच लब्धि एवं ९ बोल।

क्षयोपशम भाव में ३० बोलः–(प्रथम) ४ ज्ञान, ३अज्ञान, ३ दर्शन, ३दृष्टि, ४ चारित्र १ (प्रथम) चरित्ता चरित्त (श्रावक पना पावे) १ आचार्यगणि की पदवी, १ चौदह पूर्व ज्ञान की प्राप्ति, ५ इन्द्रिय लब्धि, ५ दानादि लब्धि एव सर्व ३० बोल।

परिणामिक भाव के दो भेदः—१ सादि परिणामिक २ अनादि परिणामिक। सादि नष्ट होवे अनादि नहीं। सादि परिणामिक के अनेक भेद है–पुरानी सुरा, (मदिरा) पुराना गुड़, तदुल आदि ७३ बोल होवे हैं शाख भगवती सूत्र की। अनादि परिणामिक के १०भेदः–१धर्मास्ति काय २ अधर्मास्ति काय ३ आकाशास्ति काय ४ पुद्गलास्ति काय ५ जीवास्ति काय ६ काल ७ लोक ८ अलोक ९ भव्य १० अभव्य एवं १०।

सन्नि वाइ भाव के २६ भागे। १० द्विक सयोगी के १० त्रिक सयोगी के, ५ चोक सयोगी के, १ पच सयो-

गी का एवं २६ भागे विस्तार श्री अनुयोग द्वार सिद्धान्त से जानना । देखो पृष्ठ १६०, १६१, १६२ ।

१४ गुणस्थान पर १० क्षेपक द्वार

१ हेतु द्वारः-२५ कषाय, १५ योग एवं ४० और ६ काय, ५ इन्द्रिय, १ मन एवं १२ अव्रत (४०+१२=५२), ५मिथ्यात्व एवं सर्व ५७ हेतु। पहेले गुणस्थाने ५५ हेतु (आहारिक के २ छोडकर) दूसरे गुणस्थाने ५० हेतु (५५ में से ५ मिथ्यात्व के छोडना) तीसरे गुण० ४३ हेतु (५७ में से-अनन्तानुबधी के चार, औदारिक का मिश्र १ वैक्रिय का मिश्र १, आहारिक के २, कार्मण का १, मिथ्यात्व ५, एवं १४ छोड़ना) चोथे गुण० ४६ हेतु (४३ तो ऊपर के और औदारिक का मिश्र १, वैक्रिय का मिश्र १, कार्मण काययोग एवं (४३+३=४६) पाचवें गुण० ४० हेतु (४६ के ऊपर के उसमें से अप्रत्याख्यानी की चोकड़ी, त्रस काय का अव्रत और कार्मण काय योग ये ६ घटाना शेष (४६-६=४० हेतु) छट्ठ गुण० २७ हेतु (४० में से प्रत्याख्यानी की चोकड़ी पाच स्थावर का अव्रत, पांच इन्द्रिय का अव्रत और १ मन का अव्रत एवं १५ घटाना शेष २५ रहे और २ आहारिक के एवं २७ हेतु) सातवें गुण० २४ हेतु (२७ में से-औदारिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र, आहारिक मिश्र ये तीन घटाना शेष २४ हेतु) आठवें गुण० २२ हेतु (२४ में से वैक्रिय

और आहारिक के २ घटाना) नववें गुण० १६ हेतु (२२ में से-हास्य, रति, अरति, भय शोक,दुर्गछा ये ६ घटाना) दशवें गुण० १० हेतु ६ योग और १ संज्वलन का लोभ एव १० हेतु। इग्यारहवें,बारहवें गुण० ६ हेतु (६ योग के) तेरहवें गुण०७ हेतु (सात योग के)चौदहवें गुण० हेतु नहीं।

२ दण्डक द्वारः-पहेले गुण० २४ दण्डक, दूसरे गुण० १६ दण्डक,(५ स्थावर के छोडकर)तीसरे, चोथे, गुण० १६ दण्डक (१६ में से ३ विकलेन्द्रिय के घटाना) पाचवे गुण० २ दण्डक-संज्ञी मनुष्य और संज्ञी तिर्यंच, छठे से चौदहवें गुण० तक १ मनुष्य का दण्डक।

३ जीवा योनि द्वारः-पहेले गुण० ८४ लाख जीवा योनि, दूसरे गुण० ३२ लाख, (एकेन्द्रिय की ५२ लाख छोड़कर) तीसरे चौथे गुण० २६ लाख जीवा योनि द्वार पाचवें गुण०१८ लाख जीवा योनि, छठे से चौदहवें गुण० १४ लाख जीवा योनि।

४ अन्तर द्वारः-पहेले गुण०जघन्य अन्तर्मुहूर्त उ० ६६ सागरोपम जाजेरी अथवा १३२ सागर जाजेरी, ये ६६ सागर चौथ गुण० रहे, अन्तर्मुहूर्त तीसरे गुण० रह कर पुनः चौथे गुण० ६६ सागर रह कर मिथ्यात्व गुण० आवे दूसरे गुण०से इग्यारहवें गुण०तक जघन्य अन्तर्मुहूर्त अथवा पल्य के असंख्यातवें-भाग (इतने काल के बिना उपशम

श्रेणी करके गिरे नहीं) उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल में देश न्यून, बारहवें, तेरहवें और चौदहवें गुण० अन्तर नहीं पड़े ।

५ ध्यान द्वारः—पहेले, दूसरे, तीसरे, गुण० २ ध्यान (पहेला) चोथे, पांचवे गुण० ३ ध्यान, छठे गुण० २ ध्यान १ आर्त्त ध्यान २ धर्म ध्यान। सातवें गुण० १ धर्म ध्यान आठवें से चौदहवें गुण० तक १ शुक्ल ध्यान ।

६ फरसना द्वारः—पहेले गुण० १४ राज लोक फरसे, (स्पर्शे) दूसरे गुण० नीचले पंडग वन से छट्ठी नरक तक फरशे तथा ऊँचा अधोगाम की विजय से नवग्रीयवेक तक फरसे, तीसरे गुण० लोक के असंख्यातवें भाग फरसे। चौथा गुण० अधोगाम की विजय से बारहवें देव लोक तक फरसे अथवा पडग वन से छठे नरक तक फरसे, पाचवाँ गुण० इसी प्रकार अधोगाम की विजय से बारहवें देवलोक तक फरसे। छठे से इग्यारहवें गुण० तक अधोगाम की विजय से ५ अनुत्तर विमान तक फरसे । बारहवा गुण० लोक का असख्यातवा भाग फरसे । तेरहवा गुण० सर्व लोक फरसे। चौदहवा गुण० लोक का असंख्यातवा भाग फरसे।

७ तिर्थंकर गोत्र ४ गुण० बान्धेः—चोथे, पांचवें, छट्ठे और सातवें एव ४ गुण० बाधे शेष गुण० नहीं बाधे, तिर्थंकर देव ६ गुण० फरसे—४, ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३, १४, एव नव फरसे ।

८ वां शाश्वता शावत द्वारः—१४ गुण० में १,

४, ५, ६, १३, एवं ५ शाश्वता शेष ९ गुण० अशाश्वता।

नववां सघयण द्वारः-१४ गुण० में १, २, ३, ४, ५, ६, ७, एवं सात गुण० ६ संघयण (सहनन) आठवें से चौदहवें गुण० तक एक वज्र, ऋषभ, नाराच, सघयण (सहनन)।

दशवां साहारण द्वारः-आर्याजी, अवेदी, परिहार-विशुद्ध चारित्र वंत, पुलाक लब्धिवन्त, अप्रमादी साधु, चौदह पूर्व धारी साधु और आहारिक शरीर एवं सात का देवता साहारण नहीं कर सके।

॥ क्षेपक द्वार समाप्त ॥



इति गुणस्थानक द्वार सम्पूर्ण



तेतीश बोल

एक प्रकार का संयमः-सर्व आश्रव से निवर्तन होना। दो प्रकार का बंधः-१ राग बंध २ द्वेष बंध। तीन प्रकार का दण्डः-१ मन दण्ड २ वचन दण्ड ३ काय दण्ड। तीन प्रकार की गुप्तिः-१ मन गुप्ति २ वचन गुप्ति ३ काय गुप्ति। तीन प्रकार का शल्यः-१ माया शल्य २ निदान शल्य ३ मिथ्या दर्शन शल्य। तीन प्रकार का गर्वः-१ ऋद्धि गर्व २ रस गर्व ३ शाता गर्व। तीन प्रकार की विराधनाः-१ ज्ञान विराधना २ दर्शन विराधना ३ चारित्र विराधना।

४ चार प्रकार की कषायः-१ क्रोध कषाय २ मान कषाय ३ माया कषाय ४ लोभ कषाय। चार प्रकार की संज्ञाः-१ आहार संज्ञा २ भय संज्ञा ३ मैथुन संज्ञा ४ परिग्रह संज्ञा। चार प्रकार की कथाः-१ स्त्री कथा २ भक्त कथा ३ देश कथा ४ राज कथा। चार प्रकार का ध्यानः-१ आर्त ध्यान २ रौद्र ध्यान ३ धर्म ध्यान ४ शुक्ल ध्यान।

पांच प्रकार की क्रियाः-१ कायिका क्रिया २ आधिकरणिका क्रिया ३ प्रद्वेषिका क्रिया ४ पारितापनिका क्रिया ५ प्राणाति पातिका क्रिया। पांच प्रकार का काम-गुण १ शब्द २ रुप ३ गन्ध ४ रस ५ स्पर्श। पांच प्रकार

का महाव्रतः-१ सर्व प्राणातिपात वेरमण २ सर्व मृषावाद वरमण ३ सर्व अदत्तादान वरमण ४ सर्व मैथुन वेरमण ५ सर्व परिग्रह वरमण। पांच प्रकार का समिति १ इरिया समिति २ भाषा समिति ३ एषणा समिति ४ आदान भंड मात्र निक्षेपन समिति ५ उच्चार प्रश्रवण (पासवण) खेल, जल, श्लेष्म आदि परिठावणिया समिति। पांच प्रकार का प्रमाद-१ मद २ विषय ३ कषाय ४ नि । ५ विकथा।

छः प्रकार का जीवनिकायः-१ पृथ्वी काय २ अपकाय ३ तेजस् काय ४ वायुकाय ५ वनस्पति काय ६ त्रस काय। छ प्रकार की लश्या १ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तजोलेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

सात प्रकार का भयः-१ आलोक भय (मनुष्य से मनुष्य को भय होवे) २ देव, तिर्यंच से जो भय हावे वो परलोक भय ३ धन से उत्पन्न होने वाला आदान भय ४ छ यादि देख कर जो भय उत्पन्न होवे वो अकस्मात भय, ५ ाजीविक भय ६ मृत्यु (मरन का) भय ७ अपयश-अपकीर्ति भय।

आठ प्रकार का मदः-१ जाति मद २ कुल मद ३ बल मद ४ रूप मद ५ तप मद ६ श्रुत मद ७ लाभ मद ८ ऐश्वर्य मद।

नव प्रकारकी ब्रह्मचर्य गुप्ति (१)स्त्री पशु पंडक रहित आलय (स्थानक) में रहना (इस पर) चूहे बिल्ली का दृष्टान्त(२)मन को आनन्द देने वाली तथा काम-राग की वृद्धि करने वाली स्त्री के साथ कथा-वार्ता नहीं करना, नींबू के रस का दृष्टान्त (३) स्त्री के आसन पर बैठना नहीं तथा स्त्री के साथ सहवास करना नहीं। घृत के घट को अग्नि का दृष्टांत (४) स्त्री का अङ्ग अवयव, उस की आकृति, उसकी बोल चाल व उसका निरक्षण आदि का राग दृष्टि से देखना नहीं-(सूर्य को दुखती आखो से देखने का दृष्टान्त (५) स्त्री सम्बन्धी कूजित, रुदन, गीत, हास्य, आक्रन्द आदि सुनाई देवे एसी दीवार के समीप निवास नहीं करना, मयूर को गर्जारव का दृष्टांत (६) पूर्वगत स्त्री सम्बन्धी क्रीडा,हास्य, रति, दर्प, स्नान, साथ में भोजन करना आदि स्मरण नहीं करना। सर्प के जहर (विष) का दृष्टान्त (७) स्वादिष्ट तथा पौष्टिक आहार नित्यप्रति करना नहीं। त्रिदोषी को घृत का दृष्टान्त (८) मर्यादित काल में धर्म यात्रा के निमित्त चाहिये उससे अधिक आहार करना नहीं। कागज की कोथली में रुपों का दृष्टान्त(९)शरीर सुन्दर व विभूषित करने के लिये श्रृङ्गार व शोभा करना नहीं। रंक के हाथ रत्न का दृष्टान्त।

दश प्रकार का श्रमण-(यति) धर्म-१ क्षमा (सहन करना) २ मुक्ति (निर्लोभिता रखना) ३ आर्जव (निर्मल स्वच्छ हृदय रखना) ४ मार्दव (कोमल-विनय

शुद्धि रखना व अहङ्कार–मद नहीं करना) ५ लाघव–(अल्प उपकरण–साधन रखना) ६ सत्य (सत्यता–प्रमाणिकता से वर्तना) ७ संयम (शरीर–इन्द्रिय आदि को नियमित रखना) ८ तप (शरीर दुर्बल होवे इससे उपवासादि तप करना) ९ चैत्य–(दूसरों को उपकार बुद्धि से ज्ञानादि देना) १० ब्रह्मचर्य (शुद्ध आचार–निर्मल पवित्र वृत्ति में रहना) दश प्रकारकी सामा-चारी–१ आवश्य–स्थानक से बाहर जाना हो तो गुरु आदि को कहना कि अवश्य करके मुझे जाना है २ निषेधिक–स्थानक में आना हो तो कहना कि निश्चय कार्य कर के मैं आया हूँ ३ आपृच्छना–अपने को कार्य होवे तब गुरु को पूछना, ४ प्रति पूछना दूसरे साधुओं का कार्य होवे तब वारंवार गुरु को जतलाने के लिये पूछना ५ छदना–गुरु अथवा बड़ों को अपने पास की वस्तु आमंत्रण करना ६ इच्छाकार–गुरु तथा बड़ों को कहना " हे पूज्य ! सूत्रार्थ ज्ञान देने के लिये आपकी इच्छा है ? " ७ मिथ्याकार–पाप लगा हो तो गुरु के समीप मिथ्या कहकर क्षमा याचना करना (अर्थात् प्रायश्चित लेना) ८ तथ्यकार–गुरु कथन प्रति कहे कि आप कहो वैसा ही करूंगा। ९ अभ्युत्थान–गुरु तथा बड़ों के आने पर सात आठ–पाव सामने जाना वैसे ही जाने पर सात आठ पाव पहुँचाने को जाना १० उपसंपद–

गुरु आदि के समीप सूत्रार्थ रूप लक्ष्मी प्राप्त करने को हमेशा रहना ।

ग्यारह प्रकार की श्रावक प्रतिमा—१ एक मासकी इस में शुद्ध सत्य धर्म की रुचि होवे परन्तु नाना व्रत उपवासादि अवश्य करने के लिये श्रावक को नियम न होवे । उसे दर्शन श्रावक प्रतिमा कहते है २ दूसरी प्रतिमा दो माह की--इसमें सत्य धर्म की रुचि के साथ २ नाना शील व्रत—गुणव्रत प्रत्याख्यान पौपधोपवासादि करे परन्तु सामायिक दिशा वकाशिक व्रत करने का नियम न होवे तो उपासक प्रतिमा ३ तीसरी प्रतिमा तीन माह की -इसमें ऊपर कहा उसके उपरान्त सामायिकादि करे, परन्तु अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णमासी आदि पर्व में पौपधोपवास करने का नियम न होवे ४ चोथी प्रतिमा चार माह की--इसमें ऊपर कहा उसके उपरान्त प्रति पूर्ण पौपधोपवास अष्टम्यादि सर्व पर्व में करे । ५ पाचवी प्रतिमा पाच माह की--इसमें पूर्वोक्त सर्व आचरे, विशेष एक रात्रि में कायोत्सर्ग करे और पांच बोल आचरे, १ स्नान न करे २ रात्रि भोजन न करे ३ लाग न लगावे ४ दिन में ब्रह्मचर्य पाले ५ रात्रि में परिमाण करे । ६ छठी प्रतिमा छः माह की—इसमें पूर्वोक्त उपरान्त सर्व समय ब्रह्मचर्य पाले ७ सातवी प्रतिमा जघन्य एक दिन उत्कृष्ट सात माह की इसमें सचित्त आहार नहीं

करे परन्तु खुद के लिये आरम्भ त्याग करने का नियम न होवे। ८ आठवीं प्रतिमा जघन्य एक दिन की उत्कृष्ट आठ माह की इसमें आरम्भ नहीं करे ९ नववीं प्रतिमा- उसी प्रकार उत्कृष्ट नव माह की इसमें आरम्भ करने का भी नियम करे १० दशवीं प्रतिमा-उत्कृष्ट दश माह की। इसमें पूर्वोक्त सर्व नियम करे व उपरान्त क्षुर मुंडन करावे अथवा शिखा राखे कोई यह एक वार पूछने पर तथा वार-वार पूछने पर दो भाषा बोलना कल्पे। जाने तो हा कहना कल्पे और न जाने तो नहीं कहना कल्पे ११ इग्यारहवीं प्रतिमा उत्कृष्ट ११ माहकी इसमें क्षुर मुंडन करावे अथवा केश लोच करावे, साधु श्रमण समान उपकरण पात्र रजो-हरण आदि धारण करे, स्वज्ञाति में गोचरी अर्थ भ्रमण करे और कहे कि मैं प्रतिमा धारी हू, श्रावक हू, भिक्षा देवो? साधु समान उपदेश देवे। एव सर्व मिला कर ११ प्रतिमा में ५ वर्ष ६ माह काल लागे।

बारह भिक्षु की प्रतिमाः-(अभिग्रह रूप)-१ पहेली प्रतिमा एक माह की, इसमें शरीर ऊपर ममता-स्नेह भाव नहीं रखे, शरीर की शुश्रुषा नहीं करे कोई मनुष्य देव तिर्यंच आदि का परिषह उत्पन्न होवे उसे सम परिणाम से सहन करे।

२ एक दाति आहार की, एक दाति जल की लेना कल्पे। यह आहार शुद्ध निर्दोष, कोई श्रमण, ब्राह्मण,

अतिथि, कृपण, रंक प्रमुख द्विपद तथा चतुष्पद को अन्त-राय नहीं लगे, इस तरह से लेवे। तथा एक मनुष्य जिमता (भोजन करता) होवे व एक के निमित्त भोजन तैयार किया होवे वो आहार लेवे। दो के भोजन करने में से देवे तो नहीं लेवे, तीन, चार, पाच आदि भोजन करने को बैठे हुवे उसमें से देवे तो न लेवे; गर्भवन्ती निमित्त उत्पन्न किया होवे वो न लेवे तथा नव प्रसूती का आहार नहीं लेवे, बालक को दूध पिलाते होवे उसके हाथ से नहीं लेवे, तथा एक पाव डेवढ़ी के बाहर और एक पाव डेवढ़ी के अन्दर रख कर वहेरावे तो लेवे, नहीं तो नहीं लेवे।

३ प्रतिमा धारी साधु को तीन काल गौचरी के कहे हैं-आदिम, मध्यम, चरम (अन्त का) चरम अर्थात् एक दिन के तीन भाग करे पहले भाग में गौचरी जावे तो दूसरे दो भाग में नहीं जावे इसी प्रकार तीनों में जानना।

४ प्रतिमा धारी साधु को छः प्रकार की गौचरी करना कही है १ सन्दूक के आकार समाने (चौखुनी) २ अर्ध सन्दूक के आकार (दो पंक्ति) ३ बलद के मूत्र आकार ४ पतङ्ग टीड उड़े उस समान अन्तर २ से करे ५ शङ्ख के आवर्त्तन के समाने गौचरी करे ६ जावता तथा आवता गौचरी करे।

५ प्रतिमा धारी साधु जिस गांव में जावे वहां यदि यह जानते होवे कि यह प्रतिमा धारी साधु है तो एक रात्रि

रहे और न जानते होवे तो दो रात्रि रहे इस के उपरान्त रहे तो छेद तथा परिहार तप जितनी रात्रि तक रहे उतने दिन का प्रायश्चित करे।

६ प्रतिमा धारी चार प्रकार से बोले १ याचना करने के समय २ पथ प्रमुख पूछने के समय ३ आज्ञा मागने के समय ४ प्रश्नादिक का उत्तर देते समय।

७ प्रतिमा धारी साधु को तीन प्रकार के स्थानक पर ठहरना अथवा प्रति लेखन करना कल्पे-१ बगीचे का बगला २ श्मशान की छतरी ३ वृक्ष के नीचे।

८ प्रतिमा धारी साधु तीन स्थान पर याचना करे।

९ इन तीन प्रकार के स्थानक के अन्दर वास करे।

१० प्रतिमा धारी साधु को तीन प्रकार की शय्या कल्पे १ पृथ्वी (शिला) रूप २ काष्ट रूप ३ तण रूप।

११ इन तीन प्रकार की शय्या की याचना करना कल्पे।

१२ इन तीन प्रकार की शय्या का भोग करना कल्पे।

१३ प्रतिमा धारी साधु जिस स्थानक में रहते होवे उस में यदि कोई स्त्री प्रमुख आवे तो स्त्री के भय से बाहर निकले नहीं, यदि कोई दूसरा बाहर निकाले तो स्वयं इर्या समिति शोध कर निकले।

१४ प्रतिमा धारी साधु जिस घर में रहते होवे वहां यदि कोई अग्नि लगावे तो भय से बाहर निकले नहीं, यदि

कोई दुसरा निकालने का प्रयास करे तो स्वयं इर्या समिति शोध कर निकले।

१५ प्रतिमा धारी साधु के पांव में यदि कंटक प्रमुख लगा होवे तो उन्हें निकालना नहीं कल्पे ।

१६ प्रतिमा धारी साधु के आख में छोटे जीव तथा नाना बीज व रज प्रमुख गिरे तो उन्हें निकालना नहीं कल्पे, इर्या समिति से चलना कल्पे ।

१७ प्रतिमा धारी साधु को सूर्यास्त होने के बाद एक पाव भी आगे चलना नहीं कल्पे अर्थात् प्रति लेखन करने के समय तक विहार करे ।

१८ प्रतिमा धारी साधु को सचित्त पृथ्वी पर सोना बैठना व थोड़ी निद्रा भी निकालना नहीं कल्पे, और पहिले देखे हुवे स्थानक पर उच्चार प्रमुख परिठवना कल्पे ।

१९ सचित्त रज से यदि पाव प्रमुख भरे हुव हों तो ऐसे शरीर से गृहस्थ के घर पर गौचरी जाना नहीं कल्पे।

२० प्रतिमा धारी साधु को प्राशुक शीतल तथा उष्ण जल से हाथ, पाव, कान, नाक, आख प्रमुख एक वार धोना वारंवार धोना नहीं कल्पे, केवल अशुचि से भरे हुवे तथा भोजन से भरे हुवे शरीर के अङ्ग धोना कल्पे अधिक नहीं ।

२१ प्रतिमा धारी साधु घोड़ा, वृषभ, हाथी, पाडा, वराह (सूअर), श्वान, वाघ इत्यादिक दुष्ट जीव सामने

आते हो तो डर कर एक पाव भी पीछे धरे नहीं परन्तु सुचाला (सीधा) भद्र जीव सामने आता है तो दया के कारण यत्नों के निमित्त पाव पीछे फिरे।

२२ प्रतिमा धारी साधु धूप से छाया में नहीं जावे और छाया से धूप में नहीं जावे, शीत और ताप सम परिणाम पूर्वक सहन करे।

दूसरी प्रतिमा एक मास की। इस में दो दाति आहार की और दो दाति जलकी लेवे।

तीसरी प्रतिमा एक माह की। इस में तीन दाति आहार की और तीन दाति जलकी लेना कल्पे।

चौथी प्रतिमा एक माह की। इस में चार दाति आहार की और चार दाति जल की लेना कल्पे।

पांचवी प्रतिमा एक माह की। इस में पाच दाति आहार की और पाच दाति जल की लेना कल्पे।

छट्ठी प्रतिमा एक माह की। इस में ६ दाति आहार की और ६ दाति जल की लेना कल्पे।

सातवीं प्रतिमा एक माह की। इस में सात दाति आहार की और सात दाति जल की लेना कल्पे।

आठवीं प्रतिमा सात अहोरात्रि की। इस में जल बिना एकान्तर उपवास करे। ग्राम, नगर, राजधानी आदि के बाहर स्थानक करे, तीन आसन से बैठे, चित्ता सोवे, करवट से सोवे, पलाठी मार कर सोवे। परन्तु किसी भी परिषह से डरे नहीं।

नववी प्रतिमा-सात अहो रात्रि की। ऊपर समान, विशेष तीन में से एक आसन करे, दण्ड आसन, लगड आसन और उत्कट आसन।

दसवीं प्रतिमा सात अहोरात्रि की। ऊपर समान, विशेष तीन में से एक आसन करे, गोदूह आसन, वीरासन और अम्बुज आसन।

इग्यारहवीं प्रतिमा एक अहोरात्रि की। जल विना छट्ठ भक्त करे, ग्राम बाहर दो पाव संकोच कर हाथ लम्बे कर कायोत्सर्ग करे।

बारहवीं प्रतिमा एक रात्रि की। जल विना अठम भक्त करे। ग्राम नगर बाहर शरीर तज कर व आंखों की पलक नहीं मारते हुवे एक पुद्गल उपर स्थिर दृष्टि करके, तमाम इन्द्रियें गोप करके, दोनो पांव एकत्र करके और दोनों हाथ लम्बे करके दृढासन मे रहे। इस समय देव, मनुष्य व तिर्यंच द्वारा कोई उपसर्ग होवे तो सहन करे। सम्यक् प्रकार से आराधन होवे तो अवधि ज्ञान मनः पर्यव ज्ञान तथा केवल ज्ञान प्राप्त होवे यदि चलित होवे तो उन्माद पावे, दीर्घ कालिक रोग होवे और केवली प्रणित धर्म से भ्रष्ट होवे। एव इन सब प्रतिमा में आठ माह लगते हैं।

तेरह प्रकार का क्रिया स्थानक

(१) अर्थ दण्ड-अपने लिये हिंसा करे।

(२) अनर्थ दण्ड-दूसरों के लिये हिंसा करे।

(३) हिंसा दण्ड–यह मुझे मारता है, मारा था व मारेगा ऐसा सङ्कल्प करके मारे।

(४) अकस्मात् दण्ड–एक को मारने जाते समय अचानक दूसरे की घात होवे।

(५) दृष्टि विपर्यास दण्ड–शत्रु समझ कर मित्र को मारे।

(६) मृषावाद दण्ड–असत्य बोल कर दण्ड पावे।

(७) अदत्ता दान दण्ड–चोरी करके दण्ड पावे।

(८) अध्यात्म दण्ड–मन में दुष्ट, अनिष्ट कल्पना करे।

(९) मान दण्ड–अभिमान करे।

(१०) मित्र दोष दण्ड–माता, पिता तथा मित्र वर्ग को अल्प अपराध के लिये भारी दण्ड करे।

(११) माया दण्ड कपट करे।

(१२) लोभ दण्ड लालच तृष्णा करे

(१३) इर्यापथिक दण्ड मार्ग में चलने से होने वाली हिंसा।

चौदह प्रकार के जीवः–(१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त (२) सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त (३) बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त (४) बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त (५) बे इन्द्रिय अपर्याप्त (६) बे इन्द्रिय पर्याप्त (७) त्रि इन्द्रिय अपर्याप्त (८) त्रि इन्द्रिय पर्याप्त (९) चौरिन्द्रिय अप-

र्याप्त (१०) चौरिन्द्रिय पर्याप्त (११) असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त (१२) असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त (१३) संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त (१४) संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त।

पन्द्रह प्रकार के परमाधामी देव-(१) आम्र २ आम्र रस ३ शाम ४ सवल ५ रुद्र ६ वैरुद्र ७ काल ८ महा काल। ९ असिपत्र १० धनुष्य ११ कुंभ १२ वालु (क) १३ वैतरणी १४ खरस्वर १५ महा घोष।

सोलवें सूत्र कृत का प्रथम श्रुतस्कन्ध के सोलह अध्ययनः-१ स्वसमय परसमय २ वैदारिक ३ उपसर्ग प्रज्ञा ४ स्त्री प्रज्ञा ५ नरक विभक्ति ६ वीर स्तुति ७ कुशील परिभाषा ८ वीर्या ध्ययन ९ धर्म ध्यान १० समाधि ११ मोक्ष मार्ग १२ समव सरण १३ अथातथ्य १४ ग्रंथी १५ यमतिथि १६ गाथा।

सत्तरह प्रकार का संयमः-१ पृथ्वी काय संयम २ अप्काय सयम ३ तेजस् काय संयम ४ वायु काय संयम ५ वनस्पति काय संयम ६ बे इन्द्रिय काय संयम ७ त्रि इन्द्रिय काय सयम ८ चौरिन्द्रिय काय संयम ९ पंचेन्द्रिय काय संयम १० अजीव काय सयम ११ प्रेक्षा सयम १२ उत्प्रेक्षा संयम १३ अपहृत्य संयम १४ प्रमार्जना सयम १५ मन सयम १६ वचन सयम १७ काय सयम।

अट्ठारह प्रकार का ब्रह्मचर्य—औदारिक शरीर सबन्धी भोग १ मन से, २ वचन से, ३ काया से सेवे

नहीं, ३, सेवावे नहीं, ६. सेवता प्रति अनुमोदन करे नहीं, ६ इसी प्रकार वैक्रिय शरीर सम्बन्धी ६ प्रकार का छोड़ना।

उन्नीश प्रकार का ज्ञाता सूत्र के अध्ययनः— १ उत्क्षिप्त-मेघ कुमार का २ धन्य सार्थवाह और विजय चोर का ३ मयूर ईंडा का ४ कर्म (काचवा) का ५ शैलक राजर्षि का ६ तुम्बे का ७ धन्य सार्थ वाह और चार बहुओं का ८ मल्ली भगवती का ६ जिनपाल जिन रक्षित का १० चंद्र की कला का ११ दावानल का १२ जित शत्रु राजा और सुबुद्धि प्रधान का १३ नंद मणि-कारका १४ तेतलि पुत्र प्रधान और पोटीला—सोनार पुत्री का १५ नंदिफल का १६ अवरकंका का १७ समुद्र अश्व का १८ सुसीमा दारिका का १६ पुंडरीक कंडरीक का।

बीश प्रकार के असमाधिक स्थानः—१ उतावला उतावला चाले २ पूंज्या बिना चाले ३ दुष्ट रीति से पूंजे ४ पाट, पाटला, शय्या आदि अधिक रक्खे ५ रत्नाधिक के (बड़ों के) सामने बोले ६ स्थविर, वृद्ध गुरु आचार्यजी का उपघात [नाश] करे ७ एकेन्द्रियादि जीव को शाता, रस, विभूषा निमित्त मारे ८ चण चण प्रति क्रोध करे ६ क्रोध में हमेशा प्रदीप्त रहे १० पृष्ट मांस खावे अर्थात् दूसरों की पीछे से निन्दा बोले ११ निश्चय वाली भाषा बोले १२ नया क्लेश [झगड़ा] उत्पन्न करे १३ जो झगड़ा बन्द हो गया हो उसे पुनः जागृत

करे १४ अकाले स्वाध्याय करे १५ सचित्त पृथ्वी से हाथ पॉव भरे हुवे होने पर भी आहारादि लेने जावे १६ शान्ति के समय तथा प्रहर रात्रि बीत जाने पर जोर २ से आवाज करे १७ गच्छ में भेद उत्पन्न करे १८ गच्छ में क्लेश उत्पन्न करके परस्पर दुख उत्पन्न करे १९ सूर्योदय से लगाकर सूर्यास्त तक अशनादि भोजन लेता ही रहे २० अनेषणिक अप्राशुक आहार लेवे ।

इक्कवीश प्रकार के शबल कर्मः-१ हस्त कर्म २ मैथुन सेवे ३ रात्रि भोजन करे ४ आधा कर्मी भोगवे ५ राज पिंड जिमे ६ पांच बोल सेवे-१ खरीद कर देवे तथा लेवे २ उधार देने तथा लेवे ३ बलात्कार से देवे तथा लेवे ४ स्वामी की आज्ञा बिना देवे तथा लेवे ५ स्थानक में सामा जाकर देवे तथा लेवे ७ वारंवार प्रत्याख्यान करके भोगवे ८ महिने के अन्दर तीन उदक लेप करे (नदी उतरे) ९ छः माह से पहले एक गण से दूसरे गण में जावे १० एक माह के अन्दर तीन माया का स्थान भोगवे ११ शय्यातर का आहार करे १२ इरादा पूर्वक हिंसा करे १३ इरादा पूर्वक असत्य बोले १४ इरादा पूर्वक चोरी करे १५ इरादा पूर्वक सचित्त पृथ्वी पर स्थानक, शय्या व बैठक करे १६ इरादा पूर्वक सचित्त मिश्र पृथ्वी पर शय्यादिक करे १७ सचित्त शिला, पत्थर, सूक्ष्म जीव जन्तु रहे ऐसा काष्ट तथा अंड प्राणी बीज, हरित आदि जीव वाले

स्थानक पर आश्रय, बैठक, शय्या करे १८ इरादा पूर्वक मूल, कन्द, स्कंध, त्वचा, शाखा, प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल, बीज इन १० सचित्त का आहार करे १९ एक वर्ष के अन्दर दश उदक लेप करे (नदी उतरे) २० एक वर्ष के अन्दर दश माया का स्थानक सेवे २१ जल से गीले हाथ पात्र, भाजन आदि करके अशनादि देवे तथा लेकर इरादा पूर्वक भोगवे।

बावीश प्रकार का परिषहः-१ क्षुधा २ तृषा ३ शीत ४ ताप ५ डास-मत्सर ६ अचेल (वस्त्र रहित) ७ अरति ८ स्त्री ९ चलन १० एक आसन पर बैठना ११ उपाश्रय १२ आक्रोश १३ वध १४ याचना १५ अलाभ १६ रोग १७ तृण स्पर्श १८ जल (मेल) १९ सत्कार, पुरस्कार २० प्रज्ञा २१ अज्ञान २२ दर्शन।

तेवीश प्रकार के सूत्र कृत सूत्र के अध्ययन'— 'सोलहवें बोल में कहे हुवे सोलह अध्ययन और सात नीचे लिखे हुवे—१ पुंडरीक कमल २ क्रिया स्थानक ३ आहार प्रतिज्ञा ४ प्रत्याख्यान क्रिया ५ अणगार सुत ६ आर्द्र कुमार ७ उदक (पेढाल सुत)।

चोवीश प्रकार के देवः-१ दश भवन पति २ आठ वाण व्यन्तर ३ पाच ज्योतिषी ४ एक वैमानिक।

पच्चीश प्रकारे पाच महाव्रत की भावनाः—

पहेले महाव्रत की पाच भावना—१ इर्या समिति

भावना २ मन समिति भावना ३ वचन समिति भावना ४ एषणा समिति भावना ५ आदान-भंड-मात्र निक्षेपन समिति भावना ।

दूसरे महाव्रत की पांच भावना'-१विचारे विना बोलना नहीं २ क्रोध से बोलना नहीं ३ लोभ से बोलना नहीं ४ भय से बोलना नहीं ५ हास्य से बोलना नहीं ।

तीसरे महाव्रत की पांच भावनाः-१निर्दोष स्थानक याच कर लेना तृण प्रमुख याच कर लेना ३ स्थानक आदि सुधारना नहीं ४ स्वधर्मी का अदत्त लेना नहीं ५ स्वधर्मी की वैयावच्च करना ।

चोथे महाव्रत की पांच भावनाः-१स्त्री, पशु पंडक वाला स्थानक सेवना नहीं २ स्त्री के साथ विषय संबन्धी कथा वार्ता करनी नहीं ३ राग दृष्टि से विषय उत्पन्न करने वाले स्त्री के अंग, अवयवं देखना नहीं ४ पूर्व गत सुख क्रीड़ा का स्मरण करना नहीं ५ स्वादिष्ट व पौष्टिक आहार नित्य करना नहीं ।

पांचवें महाव्रत की पांचभावनाः- १मधुर शब्दों पर राग और कठोर शब्दों पर द्वेष करना नहीं २ सुन्दर रूप पर राग और खराब रूप पर द्वेष करना नहीं ३ सुगन्ध पर राग और दुर्गन्ध पर द्वेष करना नहीं ४ स्वादीष्ट रस पर राग और खराब (कड़वा आदि) रस पर

द्वेष करना नहीं ५ कोमल (सुंवाला) स्पर्श पर राग और कठोर स्पर्श पर द्वेष करना नहीं।

छवीश प्रकार के दशाश्रुत स्कंध, बृहत् कल्प और व्यवहार के अध्ययनः-(१) दश दशाश्रुत स्कंध के (२) ६ बृहत् कल्प के और (३) दश व्यवहार के स्कंध।

सत्तावीश प्रकार के अणगार (साधु) के गुणः-

१ सर्व प्राणाति पात वेरमण २ सर्व मृषावाद वेरमणं ३ सर्व अदत्तादान वेरमण ४ सर्व मैथुन वेरमण ५ सर्व परिग्रह वेरमणं ६ श्रोत्रेन्द्रिय निग्रह ७ चक्षु इन्द्रिय निग्रह ८ घ्राणेन्द्रिय निग्रह ९ रसेन्द्रिय निग्रह १० स्पर्शेन्द्रिय निग्रह ११ क्रोध विजय १२ मान विजय १३ माया विजय १४ लोभ विजय १५ भाव सत्य १६ कर्ण सत्य १७ योग सत्य १८ क्षमा १९ वैराग्य २० मन समा धारणा २१ वचन समा धारणता २२ काय समा धारणता २३ ज्ञान २४ दर्शन २५ चारित्र २६ वेदना सहिष्णुता २७ मरण सहिष्णुता।

अठावीस प्रकार का आचार कल्पः-१ माह (मासीक) प्रायश्चित २ माह और पाच दिन ३ माह और दश दिन ४ माह और पन्द्रह दिन ५ माह और वीश दिन ६ माह और पचिश दिन ७ दो माह ८ दो माह और पाच दिन ९ दो माह और दश दिन १० दो माह और पन्द्रह दिन ११ दो माह और वीस दिन १२ दो माह और पचि-

श दिन १३ तीन माह १४ तीन माह और पाच दिन १५ तीन माह दश और दिन १६ तीन माह और पन्द्रह दिन १७ तीन माह और वीश दिन १८ तीन माह और पच्चिश दिन १९ चार माह २० चार माह और पाच दिन २१ चार माह और दश दिन २२ चार माह और पन्द्रह दिन २३ चार माह और वीश दिन २४ चार माह और पच्चिश दिन २५ पाच माह ये पच्चिश उपघातिक है २६ अनुघाति का रत्न २७ कृत्स्न (सम्पूर्ण) २८ अकृत्स्न (असम्पूर्ण)।

उन्नतीश प्रकार का पाप सूत्रः-१ भूमि कंप शास्त्र २ उत्पात शास्त्र ३ स्वप्न शास्त्र ४ अंतरीक्ष शास्त्र ५ अंग स्फुरन शास्त्र ६ स्वर शास्त्र ७ व्यंजन शास्त्र (मसा तिल सम्बन्धी) ८ लक्षण शास्त्र ये आठ सूत्र से, आठ वृत्ति से और आठ वार्तिक से एव २४, २५ विकथा अनुयोग २६ विद्या अनुयोग २७ मंत्र अनुयोग २८ योग अनुयोग २९ अन्य तीर्थिक प्रवृत अनुयोग।

तीश प्रकार के मोहनीय का स्थानकः-१ स्त्री पुरुष नपुंसक को अथवा किसी त्रस प्राणी को जल में बैठा कर जल रूप शस्त्र से मारे तो महा मोहनीय कर्म बाधे।

२ हाथ से प्राणी का मुख प्रमुख बांध कर व श्वास रुंधकर जीव को मारे तो महा मोहनीय।

३ अग्नि प्रज्वलित कर, वाडादिक में प्राणी रोक कर धूंवे से आकुल व्याकुल कर मारे तो महा मोहनीय।

४ उत्तमाग-मस्तक को खड्ग आदि से भेदे-छेदे काड़े-काटे तो महा मोहनीय।

५ चमड़े प्रमुख में मस्तकादि शरीर को तान कर बांधे और वारंवार अशुभ परिणाम से कदर्थना करे तो महा मोहनीय।

६ विश्वासकारी वेष बनाकर मार्ग प्रमुख के अन्दर जीव को मारे, व लोक में आनन्द माने तो महा मोहनीय।

७ कपट पूर्वक अपने आचार को गोपवे तथा अपनी माया द्वारा अन्य को पाश (जाल) में फसावे तथा शुद्ध सूत्रार्थ गोपवे तो महा मोहनीय।

८ खुद ने अनेक चोर कर्म बाल घात (अन्याय) प्रमुख कर्म किये हुवे हों तो उनके दोष अन्य निर्दोषी पुरुष पर डाले तथा यशस्वी का यश घटावे व अछता (झूठा) आल (कलङ्क) लगावे तो महा मोहनीय।

९ दूसरों को खुश करने के लिये, द्रव्य भाव से झगड़ा (क्लेश) बढ़ाने के लिये, जानता हुवा भी सभा में सत्य मृषा (मिश्र) भाषा बोले तो महा मोहनीय।

१० राजा का भन्डारी प्रमुख, राजा, प्रधान, तथा समर्थ किसी पुरुष की लक्ष्मी प्रमुख लेना चाहे तथा उस पुरुष की स्त्री का सतीत्व नष्ट करना चाहे तथा उसके र.

पुरुषों का [हितैषी-मित्र आदि] दिल फेरे तथा राजा को राज्य कर्तव्य में च्युत करे तो महा मोहनीय।

११ स्त्री आदि गृद्ध होकर, विवाहित होने पर भी [मैं कुंवारा हूं] कुमारपने का विरुद धरावे तो महा मोहनीय।

१२ गायों [गौवें] के अन्दर गर्दभ समान स्त्री के विषय में गृद्ध हो कर आत्मा का अहित करने वाला माया मृपा बोले अब्रह्मचारी होने पर भी ब्रह्मचारी का विरुद [रूप] धरावे तो महा मोहनीय [कारण लोक में धर्म पर अविश्वास होवे, धर्मी पर प्रतीत न रहे]

१३ जिसके आश्रय से आजीविका करे उसी आश्रय दाता की लक्ष्मी में लुब्ध होकर उसकी लक्ष्मी लूटे तथा अन्य से लुटावे तो महा मोहनीय।

१४ जिसकी दरिद्रता दूर करके ऊंच पद पर जिस को किया वो पुरुष ऊंच पद पाकर पश्चात् ईर्ष्या द्वेष से व कलुषित चित्त से उपकारी पुरुष पर विपत्ति डाले तथा धन प्रमुख की आमद में अन्तराय डाले तो महा मोहनीय।

१५ अपना पालन पोषण करने वाले राजा, प्रधान प्रमुख तथा ज्ञानादि देने वाले गुरु आदि को मारे तो महा मोहनीय।

१६ देश का राजा, व्यापारी वृन्द का प्रवर्त्तक

[व्यवहारिया] तथा नगर शेठ ये तीनों अत्यन्त यशस्वी हैं अतः इनकी घात करे तो महा मोहनीय।

१७ अनेक पुरुषों के आश्रय दाता--आधार भूत [समुद्र में द्वीप समान] को मारे तो महा मोहनीय।

१८ संयम लेने वाले को तथा जिसने संयम ले लिया हो उसे धर्म से भ्रष्ट करे तो महा मोहनीय।

१९ अनन्त ज्ञानी व अनन्त दर्शी ऐसे तीर्थंकर देव का अवर्णवाद [निन्दा] बोले तो महा मोहनीय।

२० तीर्थंकर देव के प्ररूपित न्याय मार्ग का द्वेषी बन कर अवर्णवाद बोले, निन्दा करे और शुद्ध मार्ग से लोगों का मन फेरे तो महा मोहनीय।

२१ आचार्य उपाध्याय जो सूत्र प्रमुख विनय सीखते हैं--व सिखाते हैं उनकी हिलना निन्दा करे तो महामोहनीय।

२२ आचार्य उपाध्याय को सच्चे मन से नहीं आराधे, तथा अहंकार से भक्ति सेवा नहीं करे तो महा मोहनीय।

२३ अल्प सूत्री हो कर भी शास्त्रार्थ करके अपनी श्लाघा करे स्वाध्याय का वाद करे तो महा मोहनीय।

२४ अतपस्वी होकर भी तपस्वी होने का ढोंग रचे (लोगों को ठगने के लिये) तो महा मोहनीय।

२५ उपकारार्थ गुरु आदि का तथा स्थविर, ग्लान प्रमुख का शक्ति होने पर भी विनय वैयावच्च नहीं करे (कहे के इन्होंने मेरी सेवा पहेली नहीं की इस प्रकार --

धूर्त्त मायावी मलिन चित्त वाला अपना बोध बीज का नाश करने वाला अनुकम्पा रहित होता है) तो महा मोहनीय।

२६ चार तीर्थ के अन्दर फूट पड़े ऐसी कथा वार्ता प्रमुख (क्लेश रूप शस्त्रादिक) का प्रयोग करे तो महा मोहनीय।

२७ अपनी श्लाघा करवाने तथा मित्रता करने के लिये अधर्म योग वशीकरण निमित्त मन्त्र प्रमुख का प्रयोग करे तो महा मोहनीय।

२८ मनुष्य सम्बन्धी भोग तथा देव सम्बन्धी भोग का अतृप्त पने गाढ परिणाम से आसक्त होकर आस्वादन करे तो महा मोहनीय।

२६ महर्द्धिक महाज्योतिवान् महायशस्वी देवों के बल वीर्य प्रमुख का अवर्ण वाद बोले तो महा मोहनीय।

३० अज्ञानी होकर लोक में पूजा—श्लाघा निमित्त व्यन्तर प्रमुख देव को नहीं देखता हुवा भी कहे कि 'मैं देखता हूं' ऐसा कहे तो महा मोहनीय।

इकत्तीश प्रकार के सिद्ध के आदि गुणः—आठ कर्म की ३१ प्रकृति का विजय से ३१ गुण।

३१ प्रकृति नीचे लिखे अनुसार—

१ ज्ञानावरणीय कर्म की पांच प्रकृति—१ मति ज्ञाना-

वरणीय २ श्रुत ज्ञाना वरणाय ३ अवधि ज्ञाना वरणीय ४ मन पयव ज्ञाना वरणीय ५ कवल ज्ञाना वरणीय।

२ दर्शना वरणीय कर्म की नव प्रकृति-१ निद्रा २ निद्रा निद्रा ३ प्रचला ४ प्रचला प्रचला ५ थीणाद्धि (स्त्यनार्द्धि) (६) चक्षु दर्शना वरणीय (७) अचक्षु दर्शना वरणीय (८) अवधि दर्शना वरणीय (९) केवल दर्शना वरणीय।

(३, वेदनीय कर्म की दो प्रकृति-१ शाता वेदनीय २ अशाता वेदनीय।

(४) मोहनीय कर्म की दो प्रकृति-१ दर्शन मोहनीय २ चरित्र मोहनीय।

(५)आयुष्य कर्म की चार प्रकृति-१ नरक आयुष्य २ तिर्यंच आयुष्य ३ मनुष्य आयुष्य ४ देव आयुष्य।

(६) नाम कर्म की दो प्रकृति-१ शुभ नाम २ अशुभ नाम।

'(७) गोत्र कर्म की दो प्रकृति-१ ऊंच गोत्र २ नीच गोत्र।

(८) अन्तराय कर्म की पाच प्रकृति-१ दानान्तराय २ लाभान्तराय ३भोगान्तराय ४ उप भोगान्तराय ५वीर्यान्तराय

बत्तीश प्रकार का योग संग्रहः-१ जो कोई पाप लगा होवे उसका प्रायाश्चित लेने का सग्रह करना २ जो कोई प्रायाश्चित ले उसको दूसरे प्रति नहीं कहने का

करना ३ विपत्ति आने पर धर्म के अन्दर दृढ रहने का संग्रह करना ४ निश्रा रहित तप करने का संग्रह करना ५ सूत्रार्थ ग्रहण करने का संग्रह करना ६ शुश्रूषा टालने का संग्रह करना ७ अज्ञात कुल की गोचरी करने का संग्रह करना ८ निर्लोभी होने का संग्रह करना ६ बावीस परिषह सहन करने का संग्रह करना १० सरल निर्मल (पवित्र) स्वभाव रखने का संग्रह करना ११ सत्य संयम रखने का संग्रह करना १२ समकित निर्मल रखने का संग्रह करना १३ समाधि से रहने का संग्रह करना १४ पांच आचार पालने का संग्रह करना १५ विनय करने का संग्रह करना १८ शरीर को स्थिर रखने का संग्रह करना १६ सुविधि—अच्छे अनुष्ठान का संग्रह करना २० आश्रव रोकने का संग्रह करना २१ आत्मा के दोष टालने का संग्रह करना २२ सर्व विषयों से विमुख रहने का संग्रह करना २३ प्रत्याख्यान करने का संग्रह करना २४ द्रव्य से उपाधि त्याग, भाव से गर्वादिक का त्याग करने का संग्रह करना २५ अप्रमादी होने का संग्रह करना २६ समय समय पर क्रिया करने का संग्रह करना २७ धर्म ध्यान का संग्रह करना २८ संवर योग का संग्रह करना २६ मरण आतङ्क (रोग) उत्पन्न होने पर मन में क्षोभ न करने का संग्रह करना ३० स्वजनादि का त्याग करने का संग्रह करना ३१ प्रायश्चित जो लिया हो उसे करने का संग्रह करना ३२ आराधिक

पंडित की मृत्यु होवे इसकी आराधना करने का संग्रह करना।

तेतीश प्रकार की अशातनाः:-१ शिष्य गुरु आदि के आगे अविनय से चले तो अशातना २ शिष्य गुरु आदि के बराबर चले तो अशातना ३ शिष्य गुरु आदि के पीछे अविनय से चले तो अशातना (४)(५)(६) इस प्रकार गुरु आदि के आगे, बराबर पीछे अविनय से खड़ा रहे तो अशातना (७)(८)(९) इस तरह गुरु आदि के आगे, बराबर, पीछे अविनय से बैठे तो अशातना (१०) शिष्य गुरु आदि के साथ बाहिर भूमि जावे और उनके पहल ही शुचि निवृत होकर आगे आवे तो अशा०।(११) गुरु आदि के साथ विहार भूमि जाकर व वहां से आकर इरिया पथिका पहले ही प्रतिक्रमे तो अशा०। १२ किसी पुरुष के साथ कि जिसके साथ गुरु आदि को बोलना योग्य, स्वयं बोले व गुरु आदि बादमें बोले तो-अशा०।१३ रात्रि को गुरु आदि पूछे कि 'अहो आर्य! कौन निद्रा में है और कौन जागृत है' ऐसा सुनकर भी इसका उत्तर नहीं देवे तो अशा०। १४ अशनादि वहेर कर लावे तब प्रथम अन्य शिष्यादि के आगे कहे और गुरु आदि को बादमें कहे तो अशा०। १५ अशनादि लाकर प्रथम अन्य शिष्यादि को बतावे और बादमें गुरु को बतावे तो अशा०। १६ अशनादि लाकर प्रथम अन्य शिष्यादि को निमन्त्रण करे और बाद में गुरु

करे तो अशातना (१७) गुरु आदि के साथ अथवा अन्य साधु के साथ अन्नादि वेहर कर लावे और गुरु व वृद्ध आदि को पूछे बिना जिस पर अपना प्रेम है उसे थोड़ा २ देवे तो अशातना (१८) गुरु आदि के साथ आहार करते समय अच्छे २ पत्र, शाक, रस रहित मनोज्ञ भोजन जल्दी से करे तो अशातना (१६) बड़ों के बोलाने पर सुनते हुवे भी चुप रहे तो अशातना (२०) बड़ों के बोलाने पर अपने आसन पर बैठा हुवा 'हां' कहे परन्तु काम का कहेगें इस भय से बड़ों के पास जावे नही तो अशातना (२१) बड़ों के बुलाने पर आवे और आकर कहे कि 'क्या कहते हो' इस प्रकार बड़ों के साथ अविनय से बोले तो अशातना (२२) बडे कहें कि यह काम करो तुम्हें लाभ होगा तब शिष्य कहे कि आप ही करो, आपको लाभ होगा तो अशातना (२३) शिष्य बड़ों के कठोर, कर्कश भाषा बोले तो अशातना (२४) शिष्य गुरु आदि बड़ों से, जिस प्रकार बड़े बोले वैसे ही शब्दों से, वार्तालाप करे तो अशातना (२५) गुरु आदि धार्मिक व्याख्यान वाचते होवे उस समय सभा में जाकर कहे कि 'आप जो कहते हों वो कहां लिखा है' इस प्रकार कहे तो अशातना (२६) गुरु आदि व्याख्यान देते हों उस समय उन्हें कहे कि आप बिलकुल भूल गये हो तो अशातना (२७)

गुरु आदि व्याख्यान देते हों उस समय शिष्य ठीक २ नहीं समझने पर खुश न रहे तो अशातना (२८) बड़े व्याख्यान देते हों उस समय सभा में गड़बड़ पड़े ऐसी उच्च आवाज से कहे कि समय हो गया है, आहारादि लेने को जाना है आदि तो अशातना (२९) गुरु आदि के व्याख्यान देते समय श्रोताओं के मन को अप्रसन्नता उत्पन्न करे तो अशातना (३०) गुरु आदि का व्याख्यान बन्ध न हुवा तो भी स्वयं व्याख्यान शुरू करे तो अशातना (३१) गुरु आदि की शय्या पाव से सरकावे तथा हाथ से ऊंची नीची करे तो अशातना (३२) गुरु आदि की शय्या, पथारी पर खडा रहे, बैठे, सोवे तो अशातना (३३) बड़ों से ऊंच आसन पर तथा बराबर बैठे, खडा रहे, सोवे आदि तो अशातना।

❀ इति तेतीश बोल सम्पूर्ण ❀



नंदी सूत्र में पांच ज्ञान का विवेचन

१ ज्ञेय २ ज्ञान ३ ज्ञानी का अर्थ।

१ ज्ञेय–जानने योग्य पदार्थ २ ज्ञान–जीव का उपयोग, जीव का लक्षण, जीव के गुण का जान पना वो ज्ञान ३ ज्ञानी—जो जाने–जानने वाला जीव–असंख्यात प्रदेशी आत्मा वो ज्ञानी।

१ ज्ञान का विशेष अर्थ

१ जिससे वस्तु का जानपना होवे।
२ जिसके द्वारा वस्तु की जान कारी होवे।
३ जिसकी सहायता से वस्तु की जानकारी होवे।
४ जानना सो ज्ञान।

ज्ञान के भेद

ज्ञान के पाच भेद १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ३ अवधि ज्ञान ४ मनः पर्यव ज्ञान ५ केवल ज्ञान।

मति ज्ञान के दो भेद

१ सामान्य २ विशेष–१ सामान्य प्रकार का ज्ञान सो मति २ विशेष प्रकार का ज्ञान सो मति ज्ञान और विशेष प्रकार का अज्ञान सो मति अज्ञान। सम्यक् दृष्टि की मति वो मति ज्ञान और मिथ्या दृष्टि की मति सो मति अज्ञान।

२ श्रुत ज्ञान के दो भेद

१ सामान्य २ विशेषः--१ सामान्य प्रकार का श्रुत सो श्रुत कहलाता है और २ विशेष प्रकार का श्रुत सो श्रुत ज्ञान या श्रुत अज्ञानः-सम्यक् दृष्टि का श्रुत-सो श्रुत ज्ञान और मिथ्या दृष्टि का श्रुत सो श्रुत अज्ञान १ मति ज्ञान २ श्रुत ज्ञान ये दोनों ज्ञान अन्योअन्य परस्पर एक दूसरे में क्षीर नीर समान मिले रहते हैं। जीव और अभ्यन्तर शरीर के समान दोनों ज्ञान जब साथ होते हैं तबभी पहेले मति ज्ञान और फिर श्रुत ज्ञान होता है। जीव मति के द्वारा जाने सो मति ज्ञान और श्रुत के द्वारे जाने सो श्रुत ज्ञानः--

मति ज्ञान का वर्णनः-

मति ज्ञान के दो भेदः--

श्रुत निश्रीत-सुने हुवे वचनों के अनुसार मति फैलावे।

२ अश्रुत निश्रीत जो नहीं सुना व नहीं देखा हो तो भी उसमें अपनी मति (बुद्धि) फैलावे।

अश्रुत निश्रीत के चार भेद-

१ औत्पातिका २ वैनायिका ३ कार्मिका ४ पारिणामिका।

औत्पातिका बुद्धिः जो पहिले नहीं देखा हो व न सुना हो उसमें एक दम विशुद्ध अर्थग्राही बुद्धि उत्पन्न हो-

वे व जो बुद्धि फल को उत्पन्न करे उसे औत्पातिका बुद्धि कहते हैं।

२ वैनयिका बुद्धिः-गुरु आदि की विनय भक्ति से जो बुद्धि उत्पन्न होवे व शास्त्र का अर्थ रहस्य समझे वो वैनयिका बुद्धि।

३ कार्मिका (कामीया) बुद्धिः-देखते, लिखते, चितरते, पढते सुनते, सीखते आदि अनेक शिल्प कला आदि का अभ्यास करते २ इन में कुशलता प्राप्त करे वो कार्मिका बुद्धि।

पारिणामिका बुद्धिः-जैसे जैसे वय (उम्र) की वृद्धि होती जाती है वैसे वैसे बुद्धि बढती जाती है, तथा बहु सूत्री स्थविर प्रत्येक वृद्धादि प्रमुख का आलोचन करता बुद्धि की वृद्धि होवे, जाति स्मरणादि ज्ञान उत्पन्न होवे वो पारिणामिका बुद्धि।

श्रुत निश्रीत मति ज्ञान के चार भेद

१ अवग्रह २ इहा ३ अवाय ४ धारणा।

१ अवग्रह के दो भेद

१ अर्थावग्रह २ व्यंजनावग्रह। व्यंजनावग्रह के चार भेदः-१ श्रोत्रेन्द्रिय व्यंजनावग्रह २ घ्राणेन्द्रिय व्यंजनावग्रह ३ रसेन्द्रिय व्यंजनावग्रह ४ स्पर्शेन्द्रिय व्यंजनावग्रह

व्यंजनावग्रह-जो पुद्गल इन्द्रियों के सामने होवें उन्हें

वे इन्द्रियें ग्रहण करें–सरावले के दृष्टान्त समान वो व्यजनावग्रह कहलाता है।

चक्षु इन्द्रिय और मन ये दो रूपादि पुद्गल के सामने लाकर उन्हें ग्रहण करें इसलिये चक्षुइन्द्रिय और मन इन दो के व्यजनावग्रह नहीं होते हैं, शेष चार इन्द्रियों का व्यजनावग्रह होता है।

श्रोत्रेन्द्रिय व्यजनावग्रह–जो कान के द्वारा शब्द के पुद्गल ग्रहण करे।

घ्राणेन्द्रिय व्यंजनावग्रह–जो नासिका से गन्ध के पुद्गल ग्रहण करे।

रसेन्द्रिय व्यंजनावग्रह जो जिह्वा के द्वारा रस के पुद्गल ग्रहण करे।

स्पर्शेन्द्रिय व्यजनाग्रह–जो शरीर के द्वारा स्पर्श के पुद्गल ग्रहण करे।

व्यजनावग्रह को समझाने के लिये दो दृष्टान्त—

१ पडिबोहग दिठतेण २ मल्लग दिठतेणं

१ पडिबोहग दिठतेणं:–प्रति बोधक (जगाने का) दृष्टान्त जैसे किसी सोते हुवे पुरुष को कोई अन्य पुरुष बुलाकर आवाज देवे 'हे देवदत्त' यह सुनकर वो जाग उठता है और जाग कर 'हू' जवाब देता है। तब शिष्य-शका उत्पन्न होने पर पूछता है 'हे स्वामिन्! उस पुरुष ने ... तो क्या उसने एक ...

दो समय के, तीन समय के, चार समय के यावत् संख्यात समय के या असख्यात समय के प्रवेश किये हुवे शब्द पुद्गल ग्रहण किये हैं ? गुरु ने जबाब दिया-एक समय के नहीं, दो समय के नहीं तीन-चार यावत् संख्यात समय के नहीं परन्तु असंख्यात समय के प्रवेश किये हुवे शब्द पुद्गल ग्रहण किये है इस प्रकार गुरु के कहने पर भी शिष्य की समझ में नहीं आया इस पर मल्लक (सरावला) का दूसरा दृष्टान्त कहते हैं—कुम्हार के नींभाड़े में से अभी का निकाला हुवा कोरा सरावला हो और उसमें एक जल बिन्दु डाले परन्तु वो जल बिन्दु दिखाई नहीं देवे इस प्रकार दो तीन चार यावत् अनेक जल बिन्दु डालने पर जब तक वो भीजें नहीं वहा तक वो जल बिन्दु दिखाई नहीं देवे परन्तु भीजने के बाद वो जल बिन्दु सरावले में ठहर जाता है ऐसा करते २ वो सरावला प्रथम पाव, आधा करते २ पूर्ण भरजाता है व पश्चात् जल बिन्दु के गिरने से सरावले में से पानी निकलने लग जाता है वैसे ही कान में एक समय का प्रवेश किया हुवा पुद्गल ग्रहण नहीं हो सके, जैसे एक जल बिन्दु सरावले में दिखाई नहीं देवे वैसे ही दो, तीन, चार संख्यात समय के पुद्गल ग्रहण नहीं हो सके, अर्थ को पकड़ सके, समझ सके इसमें असंख्यात समय चाहिये और वो असंख्यात समय के प्रवेश किये हुवे पुद्गल जब

कान में जावे और (सरावले में जल के समान) उभराने (बाहर निकलने) लगे तब "हूँ" इस प्रकार बोल सके परन्तु समझ नहीं सके, इसे व्यंजनावग्रह कहते हैं ।

अर्थावग्रह के ६ भेद

१ श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह २ चक्षुइन्द्रिय अर्थावग्रह ३ घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह ४ रसेन्द्रिय अर्थावग्रह ५ स्पर्शेन्द्रिय अर्थावग्रह ६ नोइन्द्रिय (मन) अर्थावग्रह ।

श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो कान के द्वारा शब्द का अर्थ ग्रहण करे ।

चक्षुन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो चक्षु के द्वारा रूप का अर्थ ग्रहण करे ।

घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो नासिका के द्वारा गंध का अर्थ ग्रहण करे ।

रसेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो जिह्वा के द्वारा रस का अर्थ ग्रहण करे ।

स्पर्शेन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो शरीर के द्वारा स्पर्श का अर्थ ग्रहण करे ।

नोइन्द्रिय अर्थावग्रहः—जो मन द्वारा हरेक पदार्थ का अर्थ ग्रहण करे ।

व्यंजनावग्रह के चार भेद-और अर्थावग्रह के ६ भेद एव दोनों मिल कर अवग्रह के दश भेद हुवे । अवग्रह के द्वारा सामान्य रीति से अर्थ का ग्रहण होवे परन्तु

नहीं कि यह किस का शब्द व गन्ध प्रमुख है बादमें वहाँ से इहा मतिज्ञान में प्रवेश करे। इहा जो विचारे कि यह अमुक का शब्द व गन्ध प्रमुख है परन्तु निश्चय नहीं होवे पश्चात् अवाय मति ज्ञान में प्रवेश करे। अवाय जिससे यह निश्चय हो कि यह अमुक का ही शब्द व गन्ध है पश्चात् धारणा मति ज्ञान में प्रवेश करे। धारणा जो धार राखे कि अमुक शब्द व गन्ध इस प्रकार का था।

एवं इहा के ६ भेद–श्रोत्रेन्द्रिय इहा, यावत् नो इन्द्रिय इहा। एवं अवाय के ६ भेद श्रोत्रेन्द्रिय, यावत् नोइन्द्रिय अवाय। एव धारणा के ६ भेद श्रोतेन्द्रिय धारणा यावत् नो इन्द्रिय धारणा।

इनका काल कहते हैः–अवग्रह का काल एक समय से असंख्यात समय तक प्रवेश किये हुवे पुद्गलों को अन्त समय जाने कि मुझे कोई बुला रहा है।

इहा का काल, अन्तर्मुहूर्त, विचार हुवा करे कि जो मुझे बुला रहा है वो यह है अथवा वह।

अवाय का कालः–अन्तर्मुहूर्त–निश्चय करने का कि मुझे अमुक पुरुष ही बुला रहा है। शब्द के ऊपर से निश्चय करे।

धारणे का काल संख्यात वर्ष अथवा असंख्यात वर्ष तक धार राखे कि अमुक समय मैंने जो शब्द सुना वो इस प्रकार है। अवग्रह के दश भेद, इहा के ६ भेद, अवाय

के ६ भेद, धारणा के ६ भेद एव सर्व मिलकर श्रुत निश्रीत मति ज्ञान के २८ भेद हुवे।

मति ज्ञान समुच्चय चार प्रकार का–१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से १ द्रव्य से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश द्वारा सर्व द्रव्य जाने परन्तु देखे नहीं। २ क्षेत्र से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व क्षेत्र की बात जाने परन्तु देखे नहीं। ३ काल से मति ज्ञानी सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व काल की बात जाने परन्तु देखे नहीं। ४ भाव से–सामान्य से उपदेश के द्वारा सर्व भाव की बात जाने परन्तु देखे नहीं नहीं देखने का कारण यह है कि मति ज्ञान को दर्शन नहीं है। भगवती सूत्र में पासइ पाठ है वो भी श्रद्धा के विषय में है परन्तु देखे ऐसा नहीं।

श्रुत (सूत्र) ज्ञान का वर्णन।

श्रुत ज्ञान के १४ भेदः–१अक्षर श्रुत २ अनक्षर श्रुत ३ सज्ञी श्रुत ४ असंज्ञी श्रुत ५ सम्यक् श्रुत ६ मिथ्या श्रुत ७ सादिक श्रुत ८ अनादिक श्रुत ९ सपर्यवसित श्रुत १० अपर्यवसित श्रुत ११ गमिक श्रुत १२ अगमिक श्रुत १३ अगप्रविष्ट श्रुत १४ अनंग प्रविष्ट श्रुत।

१ अक्षर श्रुतः–इसके तीन भेद–१ सज्ञा अक्षर २ व्यजन अक्षर ३ लब्धि अक्षर।

१ संज्ञा अक्षर श्रुतः–अक्षर के आकार के ॥

को कहते हैं । जैसे क, ख, ग प्रमुख सर्व अक्षर की संज्ञा का ज्ञान, क अक्षर के आकार को देख कर कहे कि यह ख नहीं, ग नहीं इस तरह से सर्व अक्षरों का ना कह कर कहे कि यह तो क ही है । एवं संस्कृत, प्राकृत, गोडी, फारसी, द्राविडी, हिन्दी आदि अनेक प्रकार की लिपियों में अनेक प्रकार के अक्षरों का आकार है इनका जो ज्ञान होवे उसे संज्ञा अक्षर श्रुत ज्ञान कहते हैं ।

२ व्यंजन अक्षर श्रुतः—ह्रस्व, दीर्घ, काना, मात्रा, अनुस्वार प्रमुख की सयोजना करके बोलना व्यजनाक्षर श्रुत ।

३ लब्धि अक्षर श्रुतः—इन्द्रियार्थ के जानपने की लब्धि से अक्षर का जो ज्ञान होता है वो लब्धि अक्षर श्रुत इसके ६ भेद—

१ श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत —कान से भेरी प्रमुख का शब्द सुनकर कहे कि यह भेरी प्रमुख का शब्द है अतः भेरी प्रमुख अक्षर का ज्ञान श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे श्रोत्रेन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते हैं ।

२ चक्षुइन्द्रिय अक्षर श्रुतः—आँख से आम प्रमुख का रूप देख कर कहे कि यह आवा प्रमुख का रूप है अतः आम प्रमुख अक्षर का ज्ञान चक्षु इन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे चक्षु इन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते हैं ।

३ घ्राणेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः—नासिका से

केतकी प्रमुख की सुगन्ध सूंघ कर कहे कि यह केतकी प्रमुख की सुगन्ध है अतः केतकी प्रमुख अक्षर का ज्ञान घ्राणेन्द्रिय लब्धि से हुवा इस लिये इसे घ्राणेन्द्रिय लब्धि श्रुत कहते है।

४ रसेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-जिह्वा से शक्कर प्रमुख का स्वाद जान कर कहे कि यह शक्कर प्रमुख का स्वाद है अतः इस अक्षर का ज्ञान रसेन्द्रिय से हुवा इसलिये इसे रसेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते है।

५ स्पर्शेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-शीत, उष्ण आदि का स्पर्श होने मे जाने कि यह शीत व उष्ण है अतः इस अक्षर का ज्ञान स्पर्शेन्द्रिय से हुवा इस लिये इसे स्पर्शेन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते हैं।

६ नोइन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुतः-मन में चिन्ता व विचार करते हुवे स्मरण हुवा कि मैंने अमुक सोचा व विचारा अतः इस स्मरण के अक्षर का ज्ञान मन से-नो इन्द्रिय से हुवा इस लिये इसे नोइन्द्रिय लब्धि अक्षर श्रुत कहते हैं।

२ अनक्षर श्रुतः-इसके अनेक भेद है, अक्षर का उच्चारण किये बिना शब्द, छींक, उधरस, उच्छ्वास, निःश्वास, बगासी, नाक निपीक तथा नगारे प्रमुख का शब्द अनक्षरीवाणी द्वारा जान लेना इसे अनक्षर श्रुत कहते हैं।

३ सज्ञी श्रुत -इसके तीन भेद-१ सज्ञी कालिकोपदेश २ सज्ञी हेतूपदेश ३ सज्ञी दृष्टिवादोपदेश।

१ संज्ञी कालिकोपदेशः–श्रुत सुनकर १ विचारना २ निश्चय करना ३ समुच्चय अर्थ की गवेषणा करना ४ विशेष अर्थ की गवेषणा करना ५ सोचना (चिन्ता करना) ६ निश्चय करके पुनः विचार करना ये ६ बोल संज्ञी जीव के होते हैं। इस लिये इसे संज्ञी कालिकोपदेश श्रुत कहते हैं।

२ संज्ञी हेतूपदेशः–जो संज्ञी धारकर रक्खे।

३ संज्ञी दृष्टि वादोपदेश–जो चयोपशम भाव से सुने। अर्थात् शास्त्र को हेतु सहित, द्रव्य अर्थ सहित, कारण युक्ति सहित, उपयोग सहित पूर्वापर विचार सहित जो पढे, पढावे, सुने उसे संज्ञी श्रुत कहते है।

असंज्ञी श्रुत के तीन भेदः–१ असंज्ञी कालिकोपदेश २ असंज्ञी हेतूपदेश ३ असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश।

(१) असंज्ञी कालिकोपदेश श्रुत–जो सुने परन्तु विचारे नहीं। संज्ञी के जो ६ बोल होते है वो असंज्ञी के नहीं।

असंज्ञी हेतूपदेश श्रुत–जो सुन कर धारण नहीं करे।

(३) असंज्ञी दृष्टिवादोपदेश–चयोपशम भाव से जो नहीं सुने। एवं ये तीन बोल असंज्ञी आश्री कहे, अर्थात् असंज्ञी श्रुत–जो भावार्थ रहित, विचार तथा उपयोग शून्य, पूर्वक आलोच रहित, निर्णय रहित ओघ संज्ञा से पढे तथा पढावे वा सुने उसे असंज्ञी श्रुत कहते है।

(५) **सम्यक् श्रुत**–अरिहन्त, तीर्थंकर, केवल ज्ञानी केवल दर्शनी, द्वादश गुण सहित, अठारह दोष रहित, चोंतीश अतिशय प्रमुख अनन्त गुण के धारक, इन से प्ररूपित बाहर अंग अर्थ रूप * गम तथा गणधर पुरुषों से गुंथित श्रुत रूप (मूल रूप) बारह आगम तथा चौदह पूर्व धारी, तेरह पूर्व धारी बारह पूर्व धारी व दश पूर्व धारी जो श्रुत तथा अर्थ रूप वाणी का प्रकाश किया है वो सम्यक् श्रुत, दश पूर्व से न्यून ज्ञान धारी द्वारा प्रकाशित किये हुवे आगम सम्यक्श्रुत व मिथ्या श्रुत होते है।

(६) मिथ्या श्रुतः–पूर्वोक्त गुण रहित, रागद्वेष सहित पुरुषों के द्वारा स्वमति अनुसार कल्पना करके मिथ्यात्व दृष्टि से रचे हुवे ग्रंथ-जैसे भारत, रामायण, वैद्यक, ज्योतिष तथा २९ जाति के पाप शास्त्र प्रमुख–मिथ्या श्रुत कहलाते हैं। ये मिथ्याश्रुत मिथ्या दृष्टि को मिथ्या श्रुत पने परिणमे (सत्य मान कर पढे इस लिये) परन्तु जो सम्यक् श्रुत का सपर्क होने से झूठे जान कर छोड़ देवे तो सम्यक् श्रुत पने परिणमे इस मिथ्याश्रुत सम्यक्त्ववान पुरुष को सम्यक् बुद्धि से वाचते हुवे सम्यक्त्व रस से परिणमे तो बुद्धि का प्रभाव जान कर आचारागादिक सम्यक् शास्त्र भी सम्यक् वान पुरुष को सम्यक हो कर परिणमते हैं और मिथ्या दृष्टि पुरुष को वे ही शास्त्र मिथ्यात्व पने परिणमते हैं।

दिक गुणों के साथ अणगार को जो उत्पन्न होता है वो चायोपशमिक।

अवधिज्ञान के (संक्षेप में) छः भेद--१ अनुगामिक २ अनानुगामिक ३ वर्धमानक ४ हायमानक ५ प्रति पाति ६ अप्रतिपाति १

१ अनुगामिक-जहां जावे वहां साथ आवे (रहे) यह दो प्रकार का--१ अन्तःगत २ मध्यगत।

(१) अन्त गत अवधिज्ञान के ३ भेदः (१) पुरतः अन्त गत- (पुरओ अन्तगत) शरीर के आगे के भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

(२) मार्गतः अन्तः गत (मग्गओ अन्तगत) शरीर के पृष्ट भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

(३) पार्श्वतः अन्तःगत -शरीर के दो पार्श्व भाग के क्षेत्र में जाने व देखे।

अन्तःगत अवधिज्ञान पर दृष्टान्तः -जैसे कोई पुरुष दीप प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख हाथमें लेकर आगे करता हुवा चले तो आगे देखे, पीछे रख कर चले तो पीछे देखे व दोनों तरफ रख कर चले तो दोनों तरफ देखे व जिस तरफ रक्खे उधर देखे दूसरी तरफ नहीं। ऐसा अवधिज्ञान का जानना। जिस तरफ देखे जाने उस तरफ संख्याता, असंख्याता योजन तक जाने देखे।

(२) मध्य गत--यह सर्व दिशा व विदिशाओं में

(चारों तरफ) सख्याता योजन तक जाने देखे। पूर्वोक्त दीप प्रमुख भाजन मस्तक पर रख कर चलने से जैसे चारों ओर दिखाई दे उसी प्रकार इस ज्ञान से भी चारों ओर देखे जाने।

२ अनानुगामिक अवधि ज्ञानः-जिस स्थान पर अवधि ज्ञान उत्पन्न हुवा हो उसी स्थान पर रह कर जाने देखे अन्यत्र यदि वो पुरुष चला जावे तो नहीं देखे जाने। यह चारों दिशाओं में सख्यात असंख्यात योजन संलग्न तथा असंलग्न रह कर जाने देखे, जैसे किसी पुरुष ने दीप प्रमुख अग्नि का भाजन व मणि प्रमुख किसी स्थान पर रक्खा होवे तो केवल उसी स्थान प्रति चारों तरफ देखे परन्तु अन्यत्र न देखे उसी प्रकार अनानुगामिक अवधि ज्ञान जानना।

३ वर्द्धमानक अवधि ज्ञानः-प्रशस्त लेश्या के अध्यवसाय के कारण व विशुद्ध चारित्र के परिणाम द्वारा सर्व प्रकारे अवधि ज्ञान की वृद्धि होवे उसे-वर्द्धमानक अवधि ज्ञान कहते हैं, जघन्य से सूक्ष्म निगोदिया जीव तीन समय उत्पन्न होने में शरीर की जो अवगाहना बाधी होवे उतना ही क्षेत्र जाने उत्कृष्ट सर्व अग्नि का जीव, सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त एवं चार जाति के जीव, इनमें वे भी जिस समय में उत्कृष्ट होवे उन अग्नि के जीवों को एकेक आकाश प्रदेश में अन्तर रहित रखने से जितने अलोक में

लोक के बराबर असख्यात खण्ड (भाग विकल्प) भराय उतना क्षेत्र सर्व दिशा व विदिशाओं (चारों ओर) से देखे । अवधि ज्ञान रूपी पदार्थ देखे । मध्यम अनेक भेद हैं-

वृद्धि चार प्रकार से होवे—

१ द्रव्य से २ क्षेत्र से ३ काल से ४ भाव से ।

१ काल से ज्ञान की वृद्धि होवे तब तीन बोल का ज्ञान बढ़े ।

२ क्षेत्र से ज्ञान बढ़े तब काल की भजना व द्रव्य भाव का ज्ञान बढ़े ।

३ द्रव्य से ज्ञान बढ़े तब काल की तथा क्षेत्र की भजना व भाव-की वृद्धि ।

४ भाव से ज्ञान बढे तो शेष तीन बोल की भजना इसका विस्तार पूर्वक वर्णनः सर्व वस्तुओं में काल का ज्ञान सूक्ष्म है जैसे चोथे-आरे में जन्मा हुवा निरोगी बलिष्ट शरीर व वज्रऋषभ नाराच सहनन वाला पुरुष तीक्ष्ण सूई लेकर ४६ पान की बीडी बींधे, विंधते समय एक पान से दूसरे पान में सुई को जाने में असंख्याता समय लग जाता है । काल ऐसा सूक्ष्म होता है । इससे क्षेत्र असंख्यात गुण सूक्ष्म है । जैसे एक आङ्गुल जितने क्षेत्र में असख्यात श्रेणियें हैं । एक एक श्रेणी में असंख्यात आकाश प्रदेश हैं, एक एक समय में एक एक आकाश प्रदेश का यदि अपहरण होवे तो इतने में असंख्यात कालचक्र बीत

जाते हैं तो भी एक श्रेणी पूरी (पूर्ण) न होवे। इस प्रकार क्षेत्र सूक्ष्म है। इससे द्रव्य अनन्त गुणा सूक्ष्म है। एक अगुल प्रमाण क्षेत्र में असख्यात श्रेणियें हैं अगुल प्रमाण लम्बी व एक प्रदेश प्रमाण जाडी में असख्यात आकाश प्रदेश हैं। एक एक आकाश प्रदेश ऊपर अनन्त परमाणु तथा द्विप्रदेशी, त्रिप्रदेशी, अनन्त प्रदेशी यावत् स्कन्ध प्रमुख द्रव्य हैं। इन द्रव्यों में से समय समय एक एक द्रव्य का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र लग जाते हैं तो भी द्रव्य खतम नहीं होवे द्रव्य से भाव अनन्त गुणा सूक्ष्म है। पूर्वोक्त श्रेणी में जो द्रव्य कहे हैं उनमें से एक एक द्रव्य में अनन्त पर्यव (भाव) हैं एक परमाणु में एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस, दो स्पर्श हैं। जिनमें एक वर्ण में अनन्त पर्यव हैं। यह एक गुण काला, द्विगुण काला, त्रिगुण काला यावत् अनन्त गुण काला है इस प्रकार पाचों बोल में अनन्त पर्यव हैं एव पाच वर्ण में, दो गन्ध, पाच रस, व आठ स्पर्श में अनन्त पर्याय हैं। द्विप्रदेशी स्कन्ध में २ वर्ण, २ गन्ध, २ रस, ४ स्पर्श हैं इन दश भेदों में भी पूर्वोक्त रीति से अनन्त पर्यव हैं, इस प्रकार सर्व द्रव्य में पर्यव की भावना करना, एवं सर्व द्रव्य के पर्यव इकट्ठे करके समय समय एकेक पर्यव का अपहरण करने में अनन्त काल चक्र (उत्सर्पिणी अवसर्पिणी) बीत जाने पर परमाणु द्रव्य के पर्यव पूरे होवे हैं एव द्वि-

अवधि ज्ञान का विषय (देखनें की शक्ति)

नक्शा नं० १

	१	२	३	४	५	६	७
विषय	रत्न प्रभा	शर्कर प्रभा	वालु प्रभा	पंक प्रभा	धूम प्रभा	तमः प्रभा	तमतमः प्रभा
ज. क्षेत्र	३॥ गाउ	३ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ	०॥ गाउ
उ. क्षेत्र	४ गाउ	३॥ गाउ	३ गाउ	२॥ गाउ	२ गाउ	१॥ गाउ	१ गाउ

नक्शा नं० २

विषय	असुरकुमार	९ निकाय व्यन्तर-	तिर्यंच पंचे-न्द्रिय संज्ञी	संज्ञी मनुष्य	ज्योतिषी	देव लोक १-२	देव लोक ३-४
ज. देखे	२५ योजन	२५ योजन	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	सख्याता द्वीप समुद्र	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अं. भाग
उ. देखे	असंख्यात द्वीप समुद्र	संख्यात द्वीप समुद्र	असंख्यात द्वीप समुद्र	अलोक में अ. खण्ड,	,,	रत्न प्रभा के नीचे का तला	शर्कर प्र. के नीचे

नक्षा नं० ३

विषय	देव लोक ५-६	देव लोक ७-८	देव लोक ९,१०,११,१२	पहेली से छठी ग्रीयवेक	ग्रीयवेक ७,८,९	५ अनुत्तर विमान
जघन्य देखे	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	आङ्गुल के अ. भाग	चौदह राज से कुछ न्यून
उत्कृष्ट देखे	ती. न. के नी. का च.	चोथी न. के नी. का चर.	पां. न. के नीचे का चरमान्त	छठी न. के नीचे का चरमान्त	सातवी न. के नीचे का चर.	”

वैमानिक ऊंचा अपने २ विमान की ध्वजा तक देखे। तिर्छे लोक में असंख्यात द्वीप समुद्र देखे। यन्त्र में अधो लोक आश्री कहा है।

॥ इति विषय द्वार सम्पूर्ण ॥

१ अवधिज्ञान	आभ्यन्तर	बाह्य	२ अवधि ज्ञान	देश से	सर्व से
नारकी देवता को होता है		०	नारकी देवता,	होता है	०
तिर्यंच में	०	होता है	तिर्यंच	होता है	०
मनुष्य में	होता है	होता है	मनुष्य	होता है	होता है

१ अवधि ज्ञान आभ्यन्तर बाह्य यन्त्र से जानना। २ अवधि ज्ञान देश थकी सर्व थकी यन्त्र से जानना॥

अवधि ज्ञान देखने का संस्थान, आकारः-१ नेरियों का अवधि ज्ञान त्रापा (त्रिपाई) के आकार २ भवन पति का पाला के आकार ३ तिर्यच का तथा मनुष्य का अनेक प्रकार का है ४ व्यन्तर की पटह वाजिन्त्र के आकार ५ ज्योतिषी का भालर के आकार ६ बारह देवलोक का ऊर्ध्व मृदग आकार ७ नव ग्रीयवेक का फूलों की चंगेरी के आकार ८ पांच अनुत्तर विमान का अवधि ज्ञान कंचुकी के आकार होता है।

नारकी देव का अवधि ज्ञान-१ अनुगामिक २ अप्रतिपाति ३ अवस्थित एवं तीन प्रकार का।

मनुष्य और तिर्यच का-१ अनुगामिक २ अनानुगामिक ३ वर्धमानक ४ हाय मानक ५ प्रतिपाति ६ अप्रति पाति ७ अवस्थित ८ अनवस्थित होता है। यह विषय-द्वार प्रमुख प्रज्ञापना सूत्र के ३३ वें पद से लिखा है। नदि सूत्र में संक्षेप में लिखा हुवा है।

मनः पर्यव ज्ञान का विस्तार

मन पर्यव ज्ञान के चार भेदः—

१ लब्धि मनः-यह अनुत्तर वासी देवों को होता है।

२ संज्ञा मनः-यह संज्ञी मनुष्य व सज्ञी तिर्यच को होता है।

३ वर्गणा मनः—यह नारकी व अनुत्तर विमान वासी देवों के सिवाय दूसरे देवों को होता है।

४ पर्याय मनः—यह मनः पर्यव ज्ञानी को होता है

मन पर्यव ज्ञान किस को उत्पन्न होता है ?

१ मनुष्य को उत्पन्न होवे, अमनुष्य को नहीं।

२ संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे असंज्ञी मनुष्य को नहीं।

३ कर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को उत्पन्न होवे अकर्म भूमि संज्ञी मनुष्य को नहीं।

४ कर्म भूमि में सख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न होवे परन्तु असख्याता वर्ष का आयुष्य वाला को उत्पन्न नहीं होवे।

५ सख्याता वर्ष का आयुष्य में पर्याप्त को उत्पन्न होवे अपर्याप्त का नहीं।

६ पर्याप्त में भी समदृष्टि को उत्पन्न होवे मिथ्या-दृष्टि व मिश्र दृष्टि को नहीं होवे।

७ सम दृष्टि में भी संयति को उत्पन्न होवे परन्तु अव्रती समदृष्टि व देश व्रती वाले को नहीं उत्पन्न होवे।

८ संयति में भी अप्रमत संयति को उत्पन्न होवे प्रमत्त संयति को नहीं होवे।

९ अप्रमत संयति में भी लब्धिवान को उत्पन्न होवे अलब्धिवान को नहीं।

के अन्दर नाव रूप हो जाता है ४ दण्ड रत्न-वैताट्य पर्वत के दोनों गुफाओं के द्वार खोलता है ५ खड्ग रत्न-शत्रु को मारता है ६ मणि रत्न-हरित रत्न के मस्तक पर रखने से प्रकाश करता है ७ काकण्य (कांगनी) रत्न-गुफाओं में एक२ योजन के अन्तर पर मनुष्य के गोलाकार घिसने से सूर्य समान प्रकाश करता हैं।

सात पंचेन्द्रिय रत्न

१ सेनापति रत्न-देशों को विजय करते हैं २ गाथापति रत्न-चौवीश प्रकार का धान्य उत्पन्न करते है ३ वार्धिक (वढई) रत्न-४२ भूमि महल सड़क पुल आदि निर्माण करते है ४ पुरोहित रत्न-लगे हुवे घावों को ठीक करते विघ्न को दूर करते, शांति पाठ पढ़ते व कथा सुनाते हैं ५ स्त्री रत्न-विषय के उपभोग में काम आती ६-७ गज रत्न व अश्व रत्न-ये दोनों सवारी में काम आते।

चौदह रत्नों का उत्पति स्थान

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत ४ खड्ग रत्न ये चार रत्न चक्रवर्ती की आयुध शाला में उत्पन्न होते हैं।

१ चर्म रत्न २ मणि रत्न ३ काकण्य (कागनी) ये तीन रत्न लक्ष्मी के भण्डार में उत्पन्न होते हैं।

१ सेनापति रत २ गाथापति रत ३ वार्धिक रत ४ पुरोहित रत ये चार रत्न चक्रवर्ती के नगर में उत्पन्न होते हैं।

१ स्त्री रत्न विद्याधरों की श्रेणी में उत्पन्न होती है।

१ गज रत्न २ अश्व रत्न ये दोनों रत्न वैताढ्य पर्वत के मूल में उत्पन्न होते हैं।

चौदह रत्नों की अवगाहना

१ चक्र रत्न २ छत्र रत्न ३ दण्ड रत्न ये तीन रत्न की अवगाहना एक धनुष्य प्रमाण, चर्म रत्न की दो हाथ की, खड्ग रत्न पचास अङ्गुल लम्बा १६ अगुल चौड़ा और आधा अगुल जाड़ा होता है और चार अगुल की मुष्टि होती है। मणि रत्न चार अंगुल लम्बा और दो अंगुल चौडा व तीन कोने वाला होता है। काकण्य रत्न चार अगुल लम्बा चार अगुल चौड़ा चार अगुल ऊचा होता है इसके छः तले,आठ कोण,बारह हासे वाला आठ सोनैया जितना वजन में व सोनार के एरण समान आकार में होता है।

सात पचेन्द्रिय रत्न की अवगाहना

१ सेना पति २ गाथा पति ३ वाधिक ४ पुरोहित इन चार रत्नों की अवगाहना चक्रवर्ती समान। स्त्री रत्न चक्रवर्ती से चार आङ्गुल छोटी होती है।

गज रत्न चक्रवर्ती से दुगना होता है। अश्व रत्न पूछ से मुख तक १०८ आङ्गुल लम्बा। खुर से कान तक ८० आङ्गुल ऊचा, सोलह आङ्गुल की जघा, वीश आङ्गुल की भुजा, चार आङ्गुल का घुटना चार आङ्गुल के खुर

और ३२ आङ्गुल का मुख होता है। और ९६ आङ्गुल की परिधि (घेराव) है।

एवं २३ पदवी का नाम तथा चक्रवर्ती के चौदह रत्नों का विवेचन कहा।

नरकादिक चार गति में से निकले हुवे जीव २३ पदवियों में की कोन २ सी पदवी पावे-इस पर पन्द्रह बोल।

१ पहेली नरक से निकले हुवे जीव १६ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़ कर।

२ दूसरी नरक से निकले हुवे जीव २३ पदवी में से १५ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न और एक चक्रवर्ती एवं आठ नहीं पावे।

३ तीसरी नरक से निकले हुवे जीव १३ पदवी पावे-सात एकेन्द्रिय रत्न, चक्रवर्ती, वासुदेव एवं दश पदवी नहीं पावे।

४ चोथी नरक से निकले हुवे जीव १२ पदवी पावे-दश तो ऊपर की और एक तीर्थंकर एव ११ नहीं पावे।

५ पाचवी नरक से निकले हुवे जीव ११ पदवी पावे-११ तो ऊपर की और बारहवी केवली की नहीं पावे।

६ छट्ठी नरक से निकले हुवे जीव दश पदवी पावें, ऊपर की बारह और एक साधु की एव तेरह नहीं।

७ सातवीं नरक से निकले हुवे जीव तीन पदवी

पावे-१ गज २ अश्व ३ समकिती (सम कित पावे तो तिर्यच में, मनुष्य नहीं हो सकते)

८ भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी से निकले हुवे जीव २१ पदवी पावे-तीर्थंकर, वासुदेव ये दो नहीं पावे-

९ पहेला दूसरा देव लोक से निकले हुवे जीव २३ पदवी पावे ।

१० तीसरे से आठवें देवलोक तक से निकले हुवे जीव १६ पदवी पावे । सात एकेन्द्रिय रत्न नहीं ।

११ नववें देवलोक से नववीं ग्रीयवेक तक से निकले हुवे जीव चौदह पदवी पावें। सात एकेन्द्रिय रत्न,गज और अश्व ये नव नहीं ।

१२ पाच अनुत्तर विमान से निकले हुवे जीव आठ पदवी पावें। सात एकेद्रिय रत्न, सात पंचेन्द्रिय रत्न और एक वासुदेव ये पन्द्रह नहीं पावे ।

१३ पृथ्वी, अप, वनस्पति, मनुष्य, तिर्यंच-पचेन्द्रिय से निकले हुवे जीव १९ पदवी पावे । तीर्थंकर, चक्रवर्ती वासुदेव, बलदेव ये चार नहीं पावे ।

१४ तेजस् वायु से निकले हुवे जीव नव पदवी पावे। सात एकेन्द्रिय रत्न, गज और अश्व ये नव पावे ।

१५ तीन विकलेन्द्रिय से निकले हुवे जीव १८ पदवी पावे । तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, केवली ये पाच नहीं पावे ।

कोन २ सी पद्वी वाले किस किस गति में जावे ।

१ पहेली दूसरी, तीसरी, चोथी इन चार नरक में ११ पद्वी वाला जावे ७ पंचेन्द्रिय रत्न, ८ चक्रवर्ती ९ वासुदेव १० समकित दृष्टि ११ माडालिक राजा एवं ११

२ पाचवी छठी नरक में नव पदवी का जावे गज और अश्व ये छोड़ कर शेप पाच पंचेन्द्रिय रत्न ६ चक्रवर्ती ७ वासु देव ८ सम्यक्त्वी ९ माडलिक राजा एव नव पदवी ।

३ सातवीं नरक में सात पद्वी का जावे गज, अश्व और स्त्री छोड़ शेप चार ५ चक्रवर्ती ६ वासु देव ७ माडलिक राजा एवं सात ।

४ भवन पति, वाण व्यन्तर, ज्योतिपी और पहेले से आठवें देवलोक तक दश पद्वी का जावे–सात पंचेन्द्रिय रत्न में से स्त्री रत्न छोड़ शेप ६ रत्न ७ साधु ८ श्रावक ९ सम्यक्त्वी १० माडलिक राजा एव दश ।

५ नववें से बारहवें देव लोक तक आठ पदवी का जावे स्त्री, गज, अश्व छोड़ शेप चार पचेन्द्रिय रत्न ५ साधु ६ श्रावक ७ सम्यक्त्वी ८ माडालिक राजा एवं आठ

६ नव ग्रीयवेक में सात पद्वी का जावे ऊपर की आठ पद्वी में से श्रावक को छोड़ शेप सात पद्वी ।

७ पांच अनुत्तर विमान में दो पद्वी का जावे साधु और सम्यक्त्वी ।

२ वैक्रिय में-(भव प्रत्ययिक में) देव में सम चतु-रस्र् संस्थान व नेरियों में हुंड संस्थान (लब्धि प्रत्ययिक में) मनुष्य में व तिर्यंच में सम चतुरस्र् सस्थान व अनेक प्रकार का-वायु में हुड सस्थान।

३ आहारिक शरीर में-सम चतुरस्र् संस्थान।

४-५ तैजस व कार्मण में ६ सस्थान।

४ स्वामी द्वार।

१ औदारिक शरीर का स्वामी-मनुष्य व तिर्यंच।
२ वैक्रिय शरीर का स्वामी चार ही गति के जीव।
३ आहारिक शरीर का स्वामी चौदह पूर्व धारी मुनि
४-५ तैजस कार्मण शरीर के स्वामी-सर्व समारी

अवगाहना द्वार।

१ औदारिक ीर की जघन्य आङुल

आदि विविध रूप विविध क्रिया से बनावे उसे वैक्रिय शरीर कहते है इसके दो भेद ।

१ भव प्रत्यायिक—जो देवता व नेरियों के स्वभाविक ही होता है ।

२ लब्धि प्रत्यायिक—जो मनुष्य तिर्यंच को प्रयत्न से प्राप्त होवे ।

३ आहारिक शरीर—जो चौदह पूर्वधारी महात्माओं को तपश्चर्यादिक योग द्वारा जब लब्धि उत्पन्न होवे तो तीर्थंकर देवाधिदेव की ऋद्धि देखने को व मन की शङ्का निवारण करने को, उत्तम पुद्गलों का आहार लेकर, जघन्य पोन हाथ का व उत्कृष्ट एक हाथ का, स्फटिक समान सफेद व कोई न देख सके ऐसा शरीर बनाते है । जिससे इसे आहारिक शरीर कहते है ।

४ तैजस् शरीर—जो तेज के पुद्गलों से अदृश्य व सुक्ष्म (खाये हुव) आहार को पचावे तथा लब्धिवंत तेजो लेश्या छोडे उसे तैजस् शरीर कहते है ।

५ कार्मण कर्म के पुद्गल से उत्पन्न होने वाला व जिसके उदय से जीव पुद्गल ग्रहण करके कर्मादि रूप में परिणमावे तथा आहार को खेंचे उसे कार्मण शरीर कहते हैं ।

३ संस्थान द्वार

औदारिक शरीर में संस्थान ६—१समचतुरस्र स-स्थान २ न्यग्रोध परिमंडल सस्थान ३ सादिक संस्थान ४ वामन संस्थान ५ कुब्ज संस्थान ६ हुंड संस्थान ।

२ वैक्रिय में-(भव प्रत्ययिक में) देव में सम चतुरस्र् सस्थान व नेरियों में हुंड संस्थान (लब्धि प्रत्ययिक में) मनुष्य में व तिर्यंच में सम चतुरस्र् सस्थान व अनेक प्रकार का-वायु में हुड सस्थान ।

३ आहारिक शरीर में-सम चतुरस्र् संस्थान।

४-५ तैजस् व कार्मण में ६ सस्थान ।

४ स्वामी द्वार।

१ औदारिक शरीर का स्वामी-मनुष्य व तिर्यंच।

२ वैक्रिय शरीर का स्वामी चार ही गति के जीव।

३ आहारिक शरीर का स्वामी चौदह पूर्व धारी मुनि

४-५ तैजस कार्मण शरीर के स्वामी -सर्व समारी जीव ।

अवगाहना द्वार ।

१ औदारिक शरीर की अवगाहना जघन्य आगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन की ।

२ वैक्रिय शरीर की अवगाहना जघन्य आगुल के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट ५०० धनुष्य उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य आगुल के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट लच योजन जाजेरी (अधिक)।

३ आहारिक शरीर की अवगाहना जघन्य एक हाथ न्यून उत्कृष्ट एक हाथ की ।

४-५ तेजस्, कार्मण शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट चौदह राज लोक प्रमाण ।

पुद्गल चयन द्वार ।

(आहार कितनी दिशाओं का लेवे).

औदारिक, तेजस्, कार्मण शरीर वाला तीन चार पाच यावत् छे दिशाओं का आहार लेवे ।

वैक्रिय और आहारिक शरीर वाला छः दिशाओं का लेवे ।

७ संयोजन द्वार ।

१ औदारिक शरीर में आहारिक वैक्रिय की भजना (होवे और नहीं भी होवे), तेजस् कार्मण की नियमा (जरूर होवे) ।

२ वैक्रिय शरीर में औदारिक की भजना, आहारिक नहीं होवे व तेजस् कार्मण की नियमा ।

३ आहारिक शरीर में वैक्रिय नहीं होवे, औदारिक, तैजस, कार्मण होवे ।

४ तेजस् शरीर में औदारिक, वैक्रिय आहारिक की भजना तैजस् की नियमा ।

५ कार्मण शरीर में औदारिक, वैक्रिय आहारिक की भजना तैजस् की नियमा ।

८ द्रव्यार्थिक द्वार ।

१ सर्व मे थोडा आहारिक का द्रव्य जघन्य १ २ ३

उत्कृष्ट पृथक हजार। इससे वैक्रिय के द्रव्य असख्यात गुणा इससे औदारिक के द्रव्य असख्यात गुणा इससे तैजस् कार्मण के द्रव्य-ये दोनों परस्पर बराबर व औदारिक से अनत गुणा अधिक।

९ प्रदेशार्थक द्वार।

१ सर्व से थोड़ा आहारिक का प्रदेश इससे वैक्रिय का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से औदारिक का असंख्यात गुणा इस से तैजस् का अनंत गुणा व इस से कार्मण का अनंत गुणा अधिक।

१० द्रव्यार्थक प्रदेशार्थक द्वार।

सर्व से थोड़ा आहारिक का द्रव्यार्थ इस से वैक्रिय का द्रव्यार्थ असख्यात गुणा उससे औदारिक का द्रव्यार्थ असख्यात गुणा इस से आहारिक का प्रदेश असंख्यात गुणा इस से वैक्रिय का प्रदश असंख्यात गुणा इस से औदारिक का प्रदेश असख्यात गुणा इस से तैजस्, कार्मण इन दोनों का द्रव्यार्थ परस्पर समान व औदारिक से अनन्त गुणा अधिक इस से तैजस् का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक इस से कार्मण का प्रदेश अनन्त गुणा अधिक।

११ सूक्ष्म द्वार।

जघन्य न्यून

आहारिक शरीर के पुद्गल सूक्ष्म इस से तैजस् शरीर के पुद्गल सूक्ष्म व इस से कार्मण शरीर के पुद्गल सूक्ष्म ।

१२ अवगाहना का अल्प बहुत्व द्वार।

सब से जघन्य औदारिक शरीर की जघन्य अवगाहना इस से तैजस् कार्मण की जघन्य अवगाहना परस्पर बराबर व औदारिक से विशेष वैक्रिय की जघन्य अवगाहना ,असंख्यात गुणी इस से आहारिक की जघन्य अवगाहना असंख्यात गुणी इस से आहारिक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेष इससे औदारिक की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात गुणी इस स वैक्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात गुणी इस से तैजस् कार्मण उत्कृष्ट अवगाहना परस्पर बराबर व वैक्रिय से असंख्यात गुणी अधिक ।

१३ प्रयोजन द्वार ।

१ औदारिक शरीर का प्रयोजन मोक्ष प्राप्ति में सहायी भूत होना २ वैक्रिय शरीर का प्रयोजन विविध रूप बनाना ३ आहारिक शरीर का प्रयोजन सशय निवारण करना ४ तैजस शरीर का प्रयोजन पुद्गलों का पाचन करना ५ कार्मण शरीर का प्रयोजन आहार तथा कर्मों को आकर्पण (खेंचना) करना ।

१४ विषय (शक्ति) द्वार ।

औदारिक शरीर का विषय पन्द्रहवा रुचक नामक

द्वीप तक जानेका (गमन करने का) २ वैक्रिय शरीर का विषय असंख्य द्वीप समुद्र तक जानेका ३ आहारिक शरीर का विषय अढाई द्वीप समुद्र तक जाने का ४ तैजस कार्मण का विषय सर्व लोक में जाने का।

५ स्थिति द्वार।

औदारिक शरीर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम की २ वैक्रिय शरीर की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की ३ आहारिक शरीर की अन्तर्मुहूर्त की ४ तैजस कार्मण शरीर की स्थिति दो प्रकार की -अभव्य आश्री आदि अन्त रहित २ मोक्ष गामी आश्री अनादि सान्त (आदि नहीं परन्तु अन्त है)।

१६ अन्तर द्वार।

औदारिक शरीर छोड कर फिर औदारिक शरीर प्राप्त करने में अन्तर पडे तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त व उत्कृष्ट ३३ सागरोपम २ वैक्रिय शरीर छोड कर फिर वैक्रिय शरीर पाने में अन्तर पडे तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनन्त काल ३ आहारिक शरीर में अन्तर पडे तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अर्ध पुद्गल परावर्तन काल से कुछ न्यून ४ ५ तैजस, कार्मण शरीर में अन्तर नहीं पडे अन्तर द्वार का दूसरा अर्थ- आहारिक शरीर को छोड

कर्कश भारी, लघु (हलका) मृदु स्पर्श का एक साथ अल्प बहुत्व--सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय का कर्कश भारी स्पर्श इससे श्रोत्रेन्द्रिय का कर्कश भारी स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का अनन्त गुणा इससे स्पर्शेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे रसेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे घ्राणेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा इससे श्रोत्रेन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा व इससे चक्षु इन्द्रिय का हलका मृदु स्पर्श अनन्त गुणा।

७ पृष्ट द्वार

जो पुद्गल इन्द्रियों को आकर स्पर्श करते हैं उन पुद्गलों को इन्द्रियें ग्रहण करती है पांच इन्द्रियों में से चक्षु इन्द्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रियों को पुद्गल आकर स्पर्श करते हैं। चक्षु इन्द्रिय को आकर नहीं स्पर्श करते हैं।

८ प्रविष्ट द्वार

जिन इन्द्रियों के अन्दर अभिमुख (सामा) पुद्गल आकर प्रवेश करते हैं उसे प्रविष्ट कहते हैं। पाच' इन्द्रियों में से चक्षु इद्रिय को छोड़ शेष चार इन्द्रिय प्रविष्ट हैं व चक्षु इन्द्रिय अप्रविष्ट है।

६ विषय द्वार (शक्ति द्वार)

प्रत्येक जाति की प्रत्येक इन्द्रिय का विषय जघन्य

आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट नीचे अनुसार।

जाति पांच	श्रोत्रेन्द्रिय	चक्षुइन्द्रिय	घ्राणेन्द्रिय	रसेन्द्रिय	स्पर्शे
एकेन्द्रिय	०	०	०	०	४०० ध०
बे इन्द्रिय	०	०	०	६४ ध०	८०० ध०
त्रि इन्द्रिय	०	०	१०० ध०	१२८ ध०	१६०० ध
चौइन्द्रिय	०	२९५४ यो	२०० ध०	२५६ ध	३२०० ध
असज्ञी प.	१ योजन	५९०८ यो	४०० ध०	५१२ ध	६४०० ध
सज्ञी प०	१२ योजन	१ ला यो जा	९ यो	९ यो०	९ योजन

१० अनाकार द्वार (उपयोग)

जघन्य उपयोग काल का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम चक्षु इन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल इस से श्रोत्रेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इससे रसेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल विशेष।

उत्कृष्ट उपयोग काल का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम चक्षुइन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल इस से श्रोत्रेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से घ्राणेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इससे रसेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष इस से स्पर्शेन्द्रिय का उत्कृष्ट उपयोग काल विशेष।

उपयोग जघन्य उत्कृष्ट दोनों का एक साथ अल्प बहुत्व।

सर्व से कम चक्षुइन्द्रिय का जघन्य उपयोग काल

* बड़ा बांसठीया *

गाथा

जीव गई इंदिय काय जोग वेदय कसाय लेस्सा,
सम्मत नाणा दंसण संजय उवओग आहारे १-
भासग परित पज्जत्त सुहुम सन्नी भवत्थिय,
चरिम सेरि पयाण, बासठीय होई नायव्वा २
एवं २१ द्वार की दो गाथा इसका विस्तारः-

१ समुच्चय जीव द्वार का एक भेद

२ गति द्वार के आठ भेद

१ नरक की गति २ तिर्यंच की गति ३ तिर्यंचनी की गति ४ मनुष्य की गति ५ मनुष्यानी की गति ६ देव की गति ७ देवाङ्गना की गति ८ सिद्ध की गति।

३ इन्द्रिय द्वार के सात भेद

१ सइन्द्रिय २ एकेन्द्रिय ३ बेइन्द्रिय ४ त्रिइंद्रिय ५ चौरिंद्रिय ६ पंचेंद्रिय ७ अनिंद्रिय।

४ काय द्वार के आठ बोल

१ सकाय २ पृथ्वी काय ३ अपकाय ४ तेउकाय ५ वायु काय ६ वनस्पति [illegible] त्रस काय ८ अ[illegible]

५ योग [illegible] बोल

१ सयोग २ म[illegible] ४ [illegible] ५ अयोग।

६ वेद द्वार के पांच बोल

१ सवेद २ स्त्री वेद ३ पुरुष वेद ४ नपुसक वेद ५ अवेद।

७ कषाय द्वार के छुः बोल

१ सकषाय २ क्रोध कषाय ३ मान कषाय ४ माया कषाय ५ लोभ कषाय ६ अकषाय।

८ लेश्या द्वार के आठ बोल

१ सलेश्या २ कृष्ण लेश्या ३ नील लेश्या ४ कापोत लेश्या ५ तेजो लेश्या ६ पद्म लेश्या ७ शुक्ल लेश्या ८ अलेश्या।

९ समकित द्वार के तीन बोल

१ समकित २ मिथ्यात्व ३ समिथ्यात्व (मिश्र)

१० ज्ञान द्वार के दश बोल

१ समुचय ज्ञान २ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान ४ अवधि ज्ञान ५ मनः पर्यव ज्ञान ६ केवल ज्ञान ७ समुचय अज्ञान ८ मति अज्ञान ९ श्रुत अज्ञान १० विभग ज्ञान।

११ दर्शन द्वार के चार बोल

१ चक्षु दर्शन २ अचक्षु दर्शन ३ अवधि दर्शन ४ केवल दर्शन।

१२ संयति द्वार के नव बोल

१ समुच्चय संयति २ सामायिक चारित्र ३ छेदोपस्थानिक चारित्र ४ परिहार विशुद्ध चारित्र ५ सूक्ष्म सं .

चारित्र ६ यथाख्यात चारित्र ७ संयता संयति ८ असंयति ६ नो संयति-नो असंयति नो संयता संयति।

१३ उपयोग द्वार के दो बोल

१ साकार उपयोग (साकार ज्ञानोपयोग) २ अनाकार उपयोग (अनाकार दर्शनोपयोग)।

१४ आहार द्वार के दो बोल

१ आहारिक २ अनाहारिक।

१५ भाषक द्वार के दो बोल

१ भाषक २ अभाषक।

१६ परित द्वार के तीन बोल

१ परित २ अपरित ३ नोपरित नोअपरित।

१७ पर्याप्त द्वार के तीन बोल

१ पर्याप्त २ अपर्याप्त ३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त।

१८ सूक्ष्म द्वार के तीन बोल

१ सूक्ष्म २ बादर ३ नोसूक्ष्म नो बादर।

१९ संज्ञी द्वार के तीन बोल

१ संज्ञी २ असंज्ञी ३ नो संज्ञी नो असंज्ञी।

२० भव्य द्वार के तीन बोल

१ भव्य २ अभव्य ३ नो भव्य नो अभव्य।

२१ चरिम द्वार के दो बोल

१ चरम २ अचरम।

एव २१ द्वार के बोल पर बासठ बोल उतारे हैं।

बासठ बोल की विगतः—जीव के १४ भेद, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६, एव सर्व मिल कर ६१ बोल और एक अल्प बहुत्व का एव ६२ बोल।

१ समुच्चय जीव का द्वार

१ समुच्चय जीव में—जीव के १४ भेद, गुणस्थानक १४ योग १५ उपयोग १२, लेश्या ६ ।

२ गति द्वार

१ नारक गति में—जीव के भेद तीन—सज्ञी का अपर्याप्त और पर्याप्त व असंज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्त। गुण स्थानक ४ प्रथम के, योग ग्यारा ४ मन के ४ वचन के, १ वैक्रिय १ वैक्रियमिश्र, १ कार्मण काय एव ११, उपयोग ६—३ ज्ञान, ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ३ प्रथम।

२ तिर्यच गति में—जीव के भेद १४, गुणस्थानक ५ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर) उपयोग ६—३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

३ तिर्यचनी में—जीव के भेद २—सज्ञी का । गुणस्थानक ५ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर। उपयोग ६—३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन, लेश्या ६।

४ मनुष्य गति में—जीव के भेद ३— सज्ञी के दो

और १ असंज्ञी पचेंद्रिय का अपर्याप्त एव ३, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

५ मनुष्यनी में-जीव के भेद २-संज्ञी का। गुणस्थानक १४, योग १३ आहारिक के दो छोड कर, उपयोग १२, लेश्या ६।

६ देव गति में-जीव के भेद ३-दो संज्ञी के और १ असंज्ञी पंचेंद्रिय का अपर्याप्त एवं ३ गुणस्थानक ४ प्रथम, योग ११-४ मनके, ४ वचन के, २ वैक्रिय के और १ कार्मण काय एवं ११, उपयोग ६-३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन एवं ६, लेश्या ६।

७ देवाङ्गना में-जीव के भेद २-संज्ञी का, गुणस्थानक ४ प्रथम, योग ११-४ मन का, ४ वचन का, २ वैक्रिय का १ कार्मण काय, उपयोग ६-३ अज्ञान, ३ ज्ञान, ३ दर्शन एवं ६, लेश्या ४ प्रथम।

सिद्ध गति में-जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २-केवल ज्ञान और केवल दर्शन, लेश्या नहीं।

नरक गति प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का -अल्प बहुत्व।

सर्व से कम मनुष्यनी उससे मनुष्य असंख्यात गुणा (संमूर्छिम के मिलने से) उससे नेरिये असंख्यात गुणा उससे तिर्यचानी असख्यात गुणी उससे देव असं-

ख्यात गुणा उमसे देवाङ्गना सख्यात गुणी व उससे सिद्ध अनन्त गुणा व उनसे तिर्यच अनन्त गुणा।'

२ इन्द्रिय द्वार

१ सइन्द्रिय मे- जीव के भेद १४, गुणस्थानक १२ प्रथम, योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड कर। लेश्या ६।

२ एकेन्द्रिय में—जीव के भेद ४ प्रथम। गुणस्थानक १ प्रथम योग ५ -२औदारिक का, २ वैक्रिय का १ कार्मण काय। उपयोग ३ -२ अज्ञान का और १ अचक्षु दर्शन लेश्या ४ प्रथम।

बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय- इनमें जीव के भेद दो दो, अपर्याप्त और पर्याप्त। गुणस्थानक २ प्रथम। योग ४--२ औदारिक का १ कार्मण काय १ व्यवहार वचन उपयोग बेइन्द्रिय में पाच उपयोग- २ ज्ञान अज्ञान -२ दर्शन चक्षु दर्शन और अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ प्रथम।

पंचेन्द्रिय मे—जीव के भेद ४–सज्ञी पंचेंद्रिय और असंज्ञी पचेंद्रिय इन दो का अपर्याप्त और पर्याप्त। गुण स्थानक १२ प्रथम योग १५ उपयोग १०—केवल के दो छोड कर। लेश्या ६।

अनिन्द्रिय मे-जीव का भेद १--सज्ञी का पर्याप्त। गुणस्थानक २- (१३ वां और १४-वा), योग ७-१ सत्य मन २ व्यवहार मन ३ सत्य वचन ४ व्यवहार वचन

५ औदारिक मिश्र ७ कार्मण काय । उपयोग २-केवल दर्शन । लेश्या १--शुक्ल ।

सइन्द्रिय प्रमुख सात बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व

१ सर्व में कम पचेन्द्रिय २ इससे चोरिन्द्रिय विशेषधिक ३ इससे त्रिइन्द्रिय विशेषाधिक ४ इससे बेइन्द्रिय विशेषाधिक ५ इससे अनिन्द्रिय अनन्त गुणे(सिद्ध आश्री) ६ इससे एकेन्द्रिय अनंत गुणे (वनस्पति आश्री) ७ इससे सइन्द्रिय विशेषाधिक।

४ काय द्वार

१ सकाय में-जीव के भेद १४ गुण स्थानक १४ योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६

२-३-४ पृथ्वी काय, अप्काय वनस्पति काय:-इन तीनों में जीव के भेद ४ सूक्ष्म एकेन्द्रिय व बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्त और पर्याप्त एवं ४ गुण स्थानक १ प्रथम योग ३ दो औदारिक का और १ कार्मण काय उपयोग ३-२ अज्ञान और १ अचक्षु दर्शन लेश्या ४ प्रथम।

५-६ तैजस् काय, वायु काय:-में जीव के भेद ४ पृथ्वी वत्, गुण स्थानक १ प्रथम, योग तैजस् में ३ पृथ्वी वत् वायु में ५-दो औदारिक का और दो वैक्रिय का, एक कार्मण उपयोग ३ पृथ्वी वत् लेश्या ३ प्रथम।

७ त्रस काय में-जीव के भेद १०-एकेंद्रिय के चार छोड कर। गुण स्थानक १४, योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६।

८ अकाय में-जीव के भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २-केवल के, लेश्या नहीं।

सकाय प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम त्रस काय २ इससे तेजस् काय असंख्यात गुणा ३ इससे पृथ्वी काय विशेषाधिक ४ इससे अप् काय विशेषाधिक ५ इससे वायु काय विशेषाधिक ६ इससे अकाय अनन्त गुणा ७ इससे वनस्पति काय अनंत गुणा ८ इससे सकाय विशेषाधिक।

५ योग द्वार

सयोग में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम योग १५ उपयोग १२, लेश्या ६।

२ मन योग में-जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक १३, योग १४, कार्मण का छोड़ कर, उपयोग १२ लेश्या ६।

३ वचन योग में जीव के भेद ५ बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पचेन्द्रिय, सज्ञी पचेन्द्रिय एव ५ का पर्याप्त गुण स्थानक १३, योग १४ कार्मण छोड़ कर उपयोग १२ लेश्या ६।

४ काय योग में: जीव के भेद १४ गुणस्थान
१३ योग १५ उपयोग १२ लेश्या ६।

५ अयोग में:-जीव का भेद १ सज्ञी का पर्या
गुण स्थानक १-चौदहवां योग नहीं, उपयोग २-केवल
लेश्या नहीं।

सयोग प्रमुख पाच गोल में रहे हुवे जीवों का अल्प
बहुत्व।

१ सर्व से कम मन योगी २ इस से वचन योगी
असख्यात गुणे ३ इस से अयोगी अनन्त गुणे ४ इस
काय योगी अनन्त गुणे ५ इस से सयोगी विशेषाधिक

६ वेद द्वार-

१ सवेद में जीव के भेद १४, गुण स्थानक ६ प्रथम
योग १५, उपयोग १०- केवल के दो छोड कर लेश्या

२ स्त्री वेद में-जीव के भेद २- सज्ञी का गुण
स्थानक ६ प्रथम, योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर
उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर लेश्या ६।

३ पुरुष वेद में: जीव के भेद २ संज्ञी के गुण स्था
नक ६ प्रथम योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़
कर लेश्या ६।

४ नपुंसक वेद में:-जीव के भेद १४, गुण स्था-
नक ६ प्रथम, योग १५, उपयोग १०-केवल के दो छोड़
कर, लेश्या ६।

अवेद में-जीव का भेद १ सज्ञी का पर्यास, गुण-स्थानक ६ नववें से चौदहवें तक, योग ११-४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के, १ कार्मण; उपयोग ६-पांच ज्ञान का और ४ दर्शन का लेश्या १ शुक्ल ।

सवेद प्रमुख पाच बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

१ सर्व से कम पुरुष वेदी २ इस से स्त्री वेदी संख्यात गुणा ३ इस से अवेदी अनन्त गुणा इस से नपुंसक वेदी अनन्त गुणा ५ इस से सवेदी विशेषाधिक ।

७ कषाय द्वार

१ सकषाय में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक १० प्रथम योग १५, उपयोग १० केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६ ।

२-३ ४ क्रोध, मान, और माया कषाय में-जीव के भेद १४, गुण स्थानक ६ प्रथम, योग १५ उपयोग १० लेश्या ६ ।

५ लोभ कषाय में-जीव के भेद १४,गुण स्थानक १० योग १५, उपयोग १०, लेश्या ६ ।

६ अकषाय में-जीव का भेद १ सज्ञी का पर्यास, गुण स्थानक ४ प्रथम ऊपर के, योग ११,४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के १ कार्मण का । उपयोग ६ पाच ज्ञान का और ४ दर्शन का, लेश्या १ शुक्ल ।

सकषाय प्रमुख ६ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम अकषायी २ इससे मान कषायी अनंत गुणा ३ इससे क्रोध कषायी विशेषाधिक ४ [illegible] ५ लोभ कषायी विशेषाधिक ६ सकषायी विशेषाधिक।

८ लेश्या द्वार

१ सलेश्या में–जीव के भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२-३-४ कृष्ण, नील, कापोत लेश्या में जीव के भेद १४ गुण स्थानक ६ प्रथम योग १५ उपयोग १० केवल के दो छोड़कर लेश्या १ अपनी २।

५ तेजो लेश्या में–जीव का भेद ३–दो संज्ञी के और एक बादर एकेंद्रिय का अपर्याप्त; गुण स्थानक ७ प्रथम योग १५, उपयोग १०, लेश्या १ अपने खुद की।

६ पद्म लेश्या में–जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक ७ प्रथम, योग १५ उपयोग १० लेश्या १ अपनी

७ शुक्ल लेश्या में जीव के भेद २ संज्ञी के, गुण स्थानक १३ प्रथम, योग १५ उपयोग १२, लेश्या १ अपनी।

८ अलेश्या में जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक १ चौदहवां, योग नहीं, उपयोग २ केवल के. लेश्या नहीं

सलेश्या प्रमुख आठ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम शुक्ल लेश्यी २ इस से पद्मलेश्यी सख्यात गुणा ३ इस से तेजो लेश्यी सख्यात गुणा ४ इस मे अलेश्यी अनन्त गुणा ५ इस से कपोत लेश्यी अनन्त गुणा ६ इस से नील लेश्यी विशेषाधिक ७ इस से कृष्ण लेश्यी विशेष धिक ८ इन से सलेश्यी विशेषाधिक।

६ समकित द्वार।

१ सम्यक् दृष्टि में जीव का भेद ६-बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असंज्ञी पचेन्द्रिय एव चार का अपर्याप्त और सज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त एव ६, गुण स्थानक,१२ पहेला और तीसरा छोड़कर, योग १५ उपयोग ९ पाच ज्ञान और चार दर्शन लेश्या ६।

२ मिथ्या दृष्टि में जीव का भेद १४ गुण स्थानक १, योग १३ आहारिक के दो छोड़कर, उपयोग ६-३ अज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६।

सम्यक् दृष्टि प्रमुख बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम मिश्र दृष्टि २ इस से सम्यक् दृष्टि अनन्त गुणा ३ इस से मिथ्या दृष्टि अनन्त गुणा।

१० ज्ञान द्वार।

१ समुच्चय ज्ञान में जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १२, योग १५, उपयोग ९, लेश्या ६ सम्यक् दृष्टि वत्।

सकषाय प्रमुख ६ बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम अकषायी २ इससे मान कषायी अनंत गुणा ३ इससे क्रोध कषायी विशेषाधिक ५ लोभ कषायी विशेषाधिक ६ सकषायी विशेषाधिक।

८ लेश्या द्वार

१ सलेश्या में—जीव के भेद १४, गुण स्थानक १३ प्रथम योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२-३-४ कृष्ण, नील, कापोत लेश्या में जीव के भेद १४ गुण स्थानक ६ प्रथम योग १५ उपयोग १० केवल के दो छोड़कर लेश्या १ अपनी २।

५ तेजो लेश्या में—जीव का भेद ३-दो संज्ञी के और एक बादर एकेंद्रिय का अपर्याप्त, गुण स्थानक ७ प्रथम योग १५, उपयोग १०, लेश्या १ अपने खुद की।

६ पद्म लेश्या में—जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक ७ प्रथम, योग १५ उपयोग १० लेश्या १ अपनी

७ शुक्ल लेश्या में-जीव के भेद २ संज्ञी के, स्थानक १३ प्रथम, योग १५ उपयोग १२, १ अपनी।

८ अलेश्या में जीव का भेद नहीं, गु चौदहवा, योग नहीं, उपयोग २ केवल

सलेश्या प्रमुख आठ बोल में अल्प बहुत्व।

१ सर्व मे कम शुक्ल लेश्यी २ इस से पद्मलेश्यी सख्यात गुणा ३ इस से तेजो लेश्यी सख्यात गुणा ४ इस मे अलेश्यी अनन्त गुणा ५ इस से कपोत लेश्यी अनन्त गुणा ६ इस से नील लेश्यी विशेषाधिक ७ इस से कृष्ण लेश्यी विशेष धिक ८ इन से सलेश्यी विशेषाधिक।

९ समकित द्वार ।

१ सम्यक् दृष्टि में जीव का भेद ६–बेइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय, असज्ञी पचेन्द्रिय एव चार का अपर्याप्त और सज्ञी पचेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त एव ६, गुण स्थानक १२ पहेला और तीसरा छोड़कर, योग १५ उपयोग ९ पाच ज्ञान और चार दर्शन लेश्या ६ ।

२ मिथ्या दृष्टि में जीव का भेद १४ गुण स्थानक १, योग १३ आहारिक के दो छोड़कर, उपयोग ६–३ अज्ञान और ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

सम्यक् दृष्टि प्रमुख बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व ।

१ सर्व से कम मिश्र दृष्टि २ इस से सम्यक् दृष्टि अनन्त गुणा ३ इस से मिथ्या दृष्टि अनन्त गुणा ।

१० ज्ञान द्वार ।

१ समुच्चय ज्ञान में जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १२, योग १५, लेश्या ६ सम्यक् दृष्टि वत् ।

चक्षु दर्शनी असंख्यात गुणा ३ इससे केवल दर्शनी अनन्त गुणा ४ इससे अचक्षु दर्शनी अनन्त गुणा।

१२ संयत द्वार

१ संयत (समुच्चय संयम) में जीव का भेद १ सन्नी का पर्याप्त, गुण स्थानक ९—छट्ठे मे चौदहवें तक योग १५ उपयोग ९—तीन अज्ञान के छोड़कर, लेश्या ६।

२-३ सामायिक व छेदोपस्थानिक में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ४—छट्ठ से नववें तक, योग १४ कार्मण का छोड़कर, उपयोग ७—चार ज्ञान प्रथम व तीन दर्शन, लेश्या ६।

४ परिहार विशुद्ध में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक २-छट्ठा व सातवाँ, योग ९—४ मन के ४ वचन के १ औदारिक का, उपयोग ७—४ ज्ञान का ३ दर्शन का, लेश्या ३ (ऊपर की)।

५ सूक्ष्म सम्पराय में—जीव का भेद १ सन्नी का पर्याप्त, गुण स्थानक १-दशवाँ, योग ९, उपयोग ७ लेश्या १—शुक्ल।

६ यथाख्यात में—जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त गुण स्थानक ४—ऊपर के, योग ११—४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के व १ कार्मण का, उपयोग ९-तीन अज्ञान के छोड़कर, लेश्या १ शुक्ल।

७ संयता संयत में-जीव का भेद १ संज्ञी का

पर्याप्त गुण स्थानक १ पाचवाँ, योग १२-२ आहारिक का व एक कार्मण का एव तीन छोड़कर, उपयोग ६-तीन ज्ञान व तीन दर्शन लेश्या ६।

८ असयत में-जीव का भेद १४, गुण स्थानक ४ प्रथम के, योग १३ आहारिक का २ छोड़कर, उपयोग ९ ३ ज्ञान के, ३ अज्ञान के, ३ दर्शन के, लेश्या।

नोसयत नो असंयत नो सयता संयत मे-जीव का भेद नहीं गुण स्थानक नहीं योग नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं।

सयत प्रमुख नव गोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम सूक्ष्म संपराय चारित्री २ इसमे परिहार विशुद्धिक चारित्री संख्यात गुणा ३ इससे यथाख्यात चारित्री संख्यात गुणा ४ इससे छेदोपस्थापनिक चारित्री सख्यात गुणा ५ इससे सामायिक चारित्री सख्यात गुणा ६ इससे सयति विशेषाधिक ७ इससे सयता सयती असंख्यात गुणा ८ इससे नोसयति नोअसयता सयति अनन्त गुणा ९ इससे असंयति अनन्त गुणा।

१३ उपयोग द्वार

१ साकार उपयोग मे-जीव का भेद १४, गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अनाकार उपयोग में-जीव का भेद १४, गुण-

२ अपर्याप्त मे-जीव का भेद ७, गुण स्थानक ३-१ २, ४, योग ५ २ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का, उपयोग ९-३ ज्ञान ३ अज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६ ।

३ नो पर्याप्त नो अपर्या में-जीव का भेद नहीं, गुणस्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं पर्याप्त प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो पर्याप्त नो अपर्याप्त २ इसमे अपर्याप्त अनन्त गुणा ३ इससे पर्याप्त सख्यात गुणा।

१८ सूक्ष्म द्वार

१ सूक्ष्म में-जीव का भेद २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त, गुण स्थानक १ पहला, योग ३ २ औदारिक तथा १ कार्मण उपयोग ३-२ अज्ञान व १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ पहेली।

२ बादर में-जीवका भेद १२-सूक्ष्म का २ छोड़ कर, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

३ नो सूक्ष्म नो बादर में-जीव का भेद नहीं गुणस्थानक नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं.। सूक्ष्म प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो सूक्ष्म नो [illegible] ने बादर गुणा ३ इससे सूक्ष्म [illegible]

१ संज्ञी [illegible] क १

योग १५, उपयोग १०—केवल का दो छोड कर, लेश्या ६।

२ असज्ञी में-जीव का भेद १२ सज्ञी का दो छोड कर, गुणस्थानक २ पहेला, योग ६—२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का १ व्यवहार वचन, उपयोग ६ २ ज्ञान का २ अज्ञान का २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम की।

नो सज्ञी नो असज्ञी मे-जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक २, १३ वा, १४ वा, योग ७ केवल ज्ञान वत्, उपयोग २ केवल का, लेश्या १ शुक्ल।

सज्ञी प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सब से कम संज्ञी २ इससे नो सज्ञी नो असज्ञी अनन्त गुणा। ३ इससे असंज्ञी अनन्त गुणा।

२० भव्य द्वार।

१ भव्य मे जीव का भेद १४ गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अभव्य में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १ पहेला योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर, उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

३ नो भव्य-नो अभव्य में जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ लेश्या नहीं।

भव्य प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

२ अपर्याप्त में-जीव का भेद ७, गुण स्थानक ३-१ २, ४, योग ५ २ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का, उपयोग ९-३ ज्ञान ३ अज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में--जीव का भेद नहीं, गुणस्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं पर्याप्त प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो पर्याप्त नो अपर्याप्त २ इमसे अपर्याप्त अनन्त गुणा ३ इससे पर्याप्त सख्यात गुणा।

१८ सूक्ष्म द्वार

१ सूक्ष्म में-जीव का भेद २ सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्त व पर्याप्त, गुण स्थानक १ पहला, योग ३-२ औदारिक तथा १ कार्मण उपयोग ३-२ अज्ञान-व १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ पहेली।

२ बादर में-जीवका भेद १२-सूक्ष्म का २ छोड़ कर, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

३ नो सूक्ष्म नो बादर मे-जीव का भेद नहीं गुणस्थानक नहीं, उपयोग २ केवल का, लेश्या नहीं। सूक्ष्म प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम नो सूक्ष्म नो बादर २ इससे बादर अनन्त गुणा ३ इससे सूक्ष्म असंख्यात गुणा।

१९ संज्ञी द्वार

१ सज्ञी में-जीव का भेद २, गुणस्थानक १२ पहेला,

योग १५, उपयोग १०—केवल का दो छोड कर, लेश्या ६।

२ असञ्ज्ञी में—जीव का भेद १२—सञ्ज्ञी का दो छोड कर, गुणस्थानक २ पहेला, योग ६—२ औदारिक का, २ वैक्रिय का, १ कार्मण का १ व्यवहार वचन, उपयोग ६-२ ज्ञान का २ अज्ञान का २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम की।

नो सञ्ज्ञी नो असञ्ज्ञी मे जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक २, १३ वा, १४ वा, योग ७ केवल ज्ञान वत्, उपयोग २ केवल का, लेश्या १ शुक्ल।

सञ्ज्ञी प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सब से कम संज्ञी २ इससे नो संज्ञी नो असञ्ज्ञी अनन्त गुणा। ३ इससे असंज्ञी अनन्त गुणा।

२० भव्य द्वार।

१ भव्य में जीव का भेद १४ गुण स्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अभव्य में जीव का भेद १४, गुण स्थानक १ पहेला योग १३ आहारिक के दो छोड़ कर, उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

३ नो भव्य नो अभव्य मे जीव का भेद नहीं, गुण स्थानक नहीं, योग नहीं, उपयोग २ लेश्या नहीं।

भव्य प्रमुख तीन बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम अभव्य २ इस से नो भव्य नो अभव्य अनन्त गुणा ३ इस से भव्य अनन्त गुणा।

२१ चरम द्वार।

१ चरम मे जीव का भेद १४, गुण स्थानक १४ योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

२ अचरम मे जीव का भेद १४, गुण स्थानक १ पहेला, योग १३ आहारिक का दो छोड़ कर, उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

चरम प्रमुख दो बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम अचरम २ इस से चरम अनन्त गुणा।

एव दो गाथा के २१ बोल द्वार पर ६२ बोल कहे, तदुपरान्त अन्य वीतराग प्रमुख पांच बोल चौदह गुण स्थानक व पांच शरीर पर ६२ बोल—

१ वीतराग में जीव का भेद १ सज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक ४ ऊपर का, योग ११–२ आहारिक तथा २ वैक्रिय का छोड़कर, उपयोग ९-५ ज्ञान ४ दर्शन, लेश्या १ शुक्ल।

२ समुच्चय केवली में जीव का भेद २ संज्ञी का, गुण स्थानक ११ ऊपर का, योग १५, उपयोग ९,५ ज्ञान ४ दर्शन, लेश्या ६।

३ युगल (युगलियो) में जीव का भेद २ संज्ञी

का गुण स्थानक २, १ ला व ४ था, योग ११, ४ मन के ४ वचन के २ औदारिक के १ कार्मण का, उपयोग ६ २ ज्ञान का, २ अज्ञान का व २ दर्शन का, लेश्या ४ प्रथम।

४ असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में-जीव का भेद २, ११ वाँ व १२ वाँ, गुण स्थानक २ (१-२), योग ४ २ औदारिक का १ व्यवहार वचन व १ कार्मण का, उपयोग ६-२ ज्ञान २ अज्ञान २ दर्शन लेश्या ३ प्रथम।

५ असंज्ञी मनुष्य में-जीव का भेद १-११ वाँ, गुण स्थानक १ पहेला, योग ३,२ औदारिक का, १ कार्मण का, उपयोग ३,२ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन, लेश्या ३ प्रथम।

वीतराग प्रमुख पाच बोल में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम युगल २ इससे असंज्ञी मनुष्य असख्यात गुणा ३ इससे असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय असख्यात गुणा ४ इससे वीतरागी अनन्त गुणा ५ इससे समुच्चय केवली विशेषाधिक।

गुण स्थानक

१ मिथ्यात्व में-जीव का भेद १४, गुणस्थानक १ पहेला, योग १३ आहारिक दो छोड़कर, उपयोग ६-३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६।

२ सास्वादान सम्यक्दृष्टि में-जीव का भेद ६ सम्यक् दृष्टि वत्, गुण स्थानक १ दूसरा, योग १३ आहारिक का दो छोड़कर, उपयोग ६ ३ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६ ।

३ मिश्र दृष्टि में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुण स्थानक १ तीसरा, योग १०-४ मन के, ४ वचन के १ औदारिक का १ वैक्रिय का, उपयोग ६ ३ अज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

४ अव्रती सम्यक् दृष्टि में-जीव का भेद २ संज्ञी का गुण स्थानक १ चोथा, योग १३ सास्वादन सम्यक् दृष्टि वत् उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

५ देश व्रती (सयता संयति) में-जीव का भेद १ १४ वाँ, गुण स्थानक १ पाचवाँ, योग १२ २ आहारिक का व १ कार्मण का छोड़कर उपयोग ६-३ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या ६ ।

६ प्रमत्त संयति में-जीव का भेद १ गुण स्थानक १ छठा योग १४ कार्मण का छोड़कर, उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ६ ।

७ अप्रमत्त संयति में-जीव का भेद १ गुणस्थानक ८ योग ११- ४ मन के ४ वचन के १ औदारिक १ वैक्रिय १ आहारिक, उपयोग ७-४ ज्ञान ३ दर्शन, लेश्या ३ ऊपर की ।

८ नी० बा० ९ अनी० बा० १० सूक्ष्म स० ११ उप० मो० १२ क्षीण मो०- में जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त, गुणस्थानक अपना २ योग ९ ४ मनके ४ वचनके १ औदारिक उपयोग ७ ४ ज्ञान ३ दर्शन लेश्या १ शुक्ल।

१३ सयोगी केवली में- जीव का भेद १, गुणस्थानक १ तेरहवा, योग ७–२ मनके २ वचन के, २ औदारिक के १ कार्मण उपयोग२--केवल का। लेश्या१शुक्ल।

१४ अयोगी केवली में जीव का भेद १, गुणस्थानक १, योग नहीं, उपयोग २ केवल के, लेश्या नहीं।

चौदह गुणस्थानक में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम उपशम मोहनीय वाला २ इससे क्षीण मोहनीय वाला संख्यात गुणा ३ इससे आठवें, नववें दशवें गुणस्थानक वाले परस्पर तुल्य व संख्यात गुणे, ४ इससे सयोगी केवली संख्यात गुणा ५ इससे अप्रमत्त संयत गुणस्थानक वाला संख्यात गुणा ६, इससे प्रमत्त संयत गुणस्थानक वाला संख्यात गुणा ७ इससे देश व्रती असंख्यात गुणा ८ इससे सास्वादन सम्यक् दृष्टि असंख्यात गुणा ९ इससे मिश्र दृष्टि असंख्यात गुणा १० इससे अव्रती समदृष्टि असंख्यात गुणा ११ इससे अयोगी केवली (सिद्ध सहित) अनन्त गुणा १२ इससे मिथ्यादृष्टि अनन्त गुणा।

शरीर द्वार

१ औदारिक मे-जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

वैक्रिय में-जीव का भेद ४-दो संज्ञी का, एक असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्त व बादर एकेन्द्रिय का का पर्याप्त गुणस्थानक ७ प्रथम, योग १२-दो आहारिक का, १ कार्मण छोड़ कर; उपयोग १०-केवल के दो छोड़ कर, लेश्या ६।

आहारिक में-जीव का भेद १ संज्ञी का पर्याप्त। गुणस्थानक २-६ व ७ योग १२--दो वैक्रिय व १ कार्मण छोड़ कर, उपयोग ७-४ ज्ञान व दर्शन, लेश्या ६।

४ तैजस् कार्मण में जीव का भेद १४, गुणस्थानक १४, योग १५, उपयोग १२, लेश्या ६।

औदारिक प्रमुख पाच शरीर में रहे हुवे जीवों का अल्प बहुत्व १ सर्व से कम आहारिक शरीर २ इससे वैक्रिय शरीर असंख्यात गुणा ३ इससे औदारिक शरीर असख्यात गुणा ४ इससे तैजस् व कार्मण शरीरी परस्पर तुल्य व अनन्त गुणे।

॥ इति बडा बासठीया सम्पूर्ण ॥

बावन बोल

पहेला द्वार–समुच्चय जीव का।

१ समुच्चय जीव में–भाव ५, उदय, उपशम, क्षायक, क्षयोपशम, परिणामिक आत्मा ८ लब्धि ५ वीर्य ३ दृष्टि ३ भव्य-२ दण्डक २४ पक्ष २।

१ गति द्वार के ८ भेद

१ नारकी में–भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १ नारकी का, पक्ष २।

१ तिर्यच में भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १-बाल वीर्य व बाल पंडित वीर्य दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक ६–पांच स्थावर, तीन विकल-इन्द्रिय, एक तिर्यच पंचेन्द्रिय, पक्ष २।

तिर्यचनी में–भाव ५, आत्मा ७ ऊपरवत्, लब्धि ५, वीर्य दो दृष्टि ३ भव्य अभव्य २ दण्डक १ पक्ष दो।

४ मनुष्य में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५ वीर्य ३ दृष्टि ३ भव्य अभव्य २, दण्डक, १ मनुष्य का, पक्ष २।

मनुष्यनी में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १ पक्ष २।

६ देवता में–भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड़ कर)

लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १३ देवता का, पक्ष २।

७ देवाङ्गना में-भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक १३ देवता के, पक्ष २।

सिद्ध गति में भाव २ क्षायक, परिणामिक आत्मा ४, द्रव्य, ज्ञान, दर्शन व उपयोग, लब्धि नहीं वीर्य नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य अभव्य नहीं दण्डक नहीं, पक्ष नहीं।

३ इन्द्रिय द्वार के ७ भेद

१ सइन्द्रिय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

२ एकेन्द्रिय में भाव ३ उदय, क्षयोपशम परिणामिक, आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोडकर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक ५, पक्ष २

३ बेइन्द्रिय में-भाव ३ ऊपर अनुसार आत्मा ७ (चारित्र छोडकर) लब्धि ५, वीर्य १ ऊपर प्रमाणे, दृष्टि २ समकित दृष्टि व मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक १ अपना २ पक्ष २

४ त्रिइन्द्रिय में-भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५,

वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ तिइन्द्रिय का, पक्ष २

५ चौरिन्द्रिय में-भाव ३, आत्मा ७, लब्धि ५ वीर्य १, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक १ चोरिन्द्रिय का, पक्ष २

६ पचेन्द्रिय में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ -१३ देवता का, १ नारकी का, १ मनुष्य का एक तिर्यंच का एवं १६ पक्ष २।

७ अनिन्द्रिय में- भाव ३ उदय, क्षायक, परिणामिक आत्मा ७ (कषाय छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य पंडित वीर्य, दृष्टि १ सम्यक् दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

४ सकाय के ८ भेद

१ सकाय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२ पृथ्वी काय, ३ अपकाय, ४ तेजस् काय

५ वायु काय, तथा वनस्पति काय में -भाव ३ - क्षयोपशम, परिणामिक, आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभ दण्डक २ अपना २, पक्ष २।

७ त्रस काय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच एकेन्द्रिय का छोड़कर), पक्ष २।

८ अकाय मे भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो भवी, नो अभवी, दण्डक नहीं पक्ष नहीं।

५ सयोगी द्वार के ५ भेद।

१ सयोगी मे भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२ मन योगी मे भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष २।

३ वचन योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पाच स्थावर छोड़कर), पक्ष २।

४ काय योगी में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

५ अयोगी में भाव ३ उदय, क्षायक, पारिणामिक, आत्मा ६ (कषाय, योग छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

६ सवेद के ५ भेद।

१ सवेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३,

दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक २४, पक्ष २।

२ स्त्री वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पक्ष २।

३ पुरुष वेद भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक १५ पक्ष २।

४ नपुंसक वेद में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ११ (देवता का १३ छोड़कर), पक्ष २।

५ अवेद में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

७ कषाय के ६ भेद

१ सकषाय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २४, पक्ष २

२ क्रोध कषाय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

३ मान कषाय में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

४ माया कषाय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

५ लोभ कषाय मे—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

६ अकषाय में—भाव ५, आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य

१, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

८ सलेशी के ८ भेद

१ सलेशी में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

२ कृष्ण लेश्या में--भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २२ (ज्योतिषी वैमानिक छोड़ कर) पक्ष २।

१ नील लेश्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५ वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २ दण्डक २२ ऊपर प्रमाणे पक्ष २।

कपोत लेश्या में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २२ ऊपर प्रमाणे, पक्ष २।

तेजो लेश्या में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, पक्ष २, दण्डक १८ (१३ देवता का १ मनुष्य का, १ तिर्यंच पंचेन्द्रिय का, पृथ्वी, अप, वनस्पति एवं १८)

६ पद्म लेश्या में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक ३, वैमानिक, मनुष्य व तिर्यंच एवं ३ का, पक्ष २।

७ शुक्ल लेश्या में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५,

वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दडक ३ ऊपर प्रमाणे, पक्ष २,।

८ अलेशी में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, पंडित वीर्य, दृष्टि १, समकित, भव्य १ दडक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

९ समकित के ७ भेद।

१ समदृष्टि में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १९ (पाच एकेन्द्रिय का दडक छोडकर) पक्ष १ शुक्ल।

२ सास्वादान समदृष्टि में भाव ३, (उदय, क्षयोपशम, परिणामिक), आत्मा ७, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य दृष्टि १ समकित, भव्य १, दडक १९ (पाच स्थावर छोडकर), पक्ष १ शुक्ल।

३ उपशम समदृष्टि में भाव ४ (क्षायक छोडकर), आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दडक १६ (पाच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय छोडकर), पक्ष १ शुक्ल।

४ वेदक समदृष्टि में भाव ३, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, समकित, भव्य १, दडक १९ ऊपर प्रमाणे, पक्ष १ शुक्ल।

५ क्षायक समदृष्टि में भाव ४ (उपशम छोडकर) आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दडक १६ पक्ष १ शुक्ल।

६ मिथ्यात्व दृष्टि में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

७ मिश्र दृष्टि में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १, बाल वीर्य, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

१० समुच्चय ज्ञान द्वार के १० भेद।

१ समुच्चय ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दंडक १६, पक्ष १ शुक्ल।

२ मति ज्ञान ३ श्रुत ज्ञान में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ भव्य १ दण्डक १६, पक्ष १ शुक्ल।

४ अवधि ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १ भव्य १, दण्डक १६, पक्ष १ शुक्ल।

५ मन पर्यव ज्ञान में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १, मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

६ केवल ज्ञान में भाव ३, (उदय क्षायक, परिणामिक) आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १; भव्य १, दण्डक १, पक्ष १;।

७ समुच्चय अज्ञान ८ मति अज्ञान ९ श्रुत अज्ञान में-भाव तीन; आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १, मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

१० विभङ्ग ज्ञान म भाव ३ (उदय, क्षयोपशम परिणामिक), आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय छोड़ कर) पक्ष २।

११ दर्शन द्वार के ४ भेद

१ चक्षु दर्शन में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १७, पक्ष २।

२ अचक्षु दर्शन में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

अवधि दर्शन में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६, पक्ष २।

केवल दर्शन में- भाव ३, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित, भव्य दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

१२ समुच्चय संयति का ६ भेद

१ संयति में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १, शुक्ल।

२ सामायिक चारित्र व छेदोपस्थानिक चारित्र में:-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित दृष्टि

१ समकित, भव्य-१, दण्डक-१, पक्ष-१ शुक्ल।

४ परिहार-विशुद्ध-चारित्र में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित, दृष्टि, १ समकित, भव्य-१, दण्डक १ पक्ष-१ शुक्ल।

५ सूक्ष्म संपराय चारित्र में--ऊपर प्रमाणे।

६ यथा ख्यात चारित्र मे--भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड कर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य १, दण्डक १, पक्ष १।

७ असयति मे--भाव ५, आत्मा ७ (चारित्र छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

८ संयता संयति में-भाव ५, आत्मा ७ ऊपर अनुसार, लब्धि ५, वीर्य १ बाल पण्डित, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक २, पक्ष १ शुक्ल।

९ नो सयति नो असंयति नो संयता संयति में भाव २, क्षायक, परिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित, नो भव्य नो अभव्य, दण्डक नहीं, पक्ष नहीं।

१३ उपयोग द्वार के २ भेद

साकार उपयोग में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

२ अनाकार उपयोग में-भाव ५, आत्मा ८,

लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

१४ आहारिक के २ भेद

१ आहारिक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, भव्य अभव्य २, दण्डक २४, पक्ष २।

अनाहारिक में- भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य दो बाल व पण्डित, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दण्डक २४ पक्ष २।

१५ भाषक द्वार के २ भेद

१ भाषक में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६, पक्ष २।

२ अभाषक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४ पक्ष २।

१६ परित द्वार के ३ भेद।

१ परित में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य १. दंडक २४, पक्ष २ शुक्ल।

२ अपरित में भाव ३, आत्मा ६, (ज्ञान चारित्र छोडकर), लब्धि ५, वीर्य १, दृष्टि १, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष १ कृष्ण।

३ नो परित नो अपरित में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित, नो भवी नो अभवी, दंडक नहीं, पक्ष नहीं।

१७ पर्याप्त द्वार के ३ भेद।

१ पर्याप्त में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

२ अपर्याप्त में भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि २, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

३ नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में भाव २ क्षायक व परिणामिक, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १ समकित दृष्टि, नो भव्य नो अभव्य, दंडक नहीं, पक्ष नहीं।

१८ सूक्ष्म द्वार के ३ भेद।

१ सूक्ष्म में भाव ३, आत्मा ६, लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व, भव्य अभव्य २, दंडक ५ (पांच स्थावर का), पक्ष २।

२ बादर में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २।

३ नो सूक्ष्म नो बादर में भाव २, आत्मा ४, लब्धि नहीं, वीर्य नहीं, दृष्टि १, नो भव्य नो अभव्य दंडक नहीं, पक्ष नहीं।

१९ सज्ञी द्वार के ३ भेद।

१ संज्ञी में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३ दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दण्डक १६ (पाच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय छोड कर), पक्ष २।

वीर्य, दृष्टि २-समकित दृष्टि व मिथ्यात्त्व दृष्टि, अभव्य १ दण्डक, २४ पक्ष १ कृष्ण ।

शरीर द्वार के ५ भेद

१ औदारिक में—भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य, अभव्य २, दंडक २०, पक्ष २।

२ वैक्रिय में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २७ (१३ देवता का, १ नारकी का १, मनुष्य का, १ तिर्यंच का व १ वायु का एव १७), पक्ष २ ।

३ आहारिक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १, पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दडक १, पक्ष १ शुक्ल ।

४ तैजस व ५ कार्मण मे भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य ३, दृष्टि ३, भव्य अभव्य २, दंडक २४, पक्ष २ ।

गुण स्थानक द्वार ।

१ मिथ्यात्व गुण स्थानक मे भाव ३ (उदय, क्षयोपशम, परिमाणिक), आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड कर) लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिथ्यात्व दृष्टि, भव्य अभव्य दो, दंडक २४, पक्ष दो ।

२ सास्वादान समदृष्टि गुण स्थानक में भाव ३ ऊपर अनुसार, आत्मा ७ (चारित्र छोड कर), लब्धि ५,

वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दंडक १६ (पाच एकेन्द्रिय छोड़कर), पक्ष १ शुक्ल।

३ मिश्र गुण स्थानक में भाव ३ ऊपर अनुसार आत्मा ६ (ज्ञान चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य, दृष्टि १ मिश्र दृष्टि, भव्य १, दंडक १६, (५ एकेन्द्रिय तीन विकलेन्द्रिय छोड़कर) पक्ष १ शुक्ल।

४ अव्रती सम्यक्त्व दृष्टि में भाव ५, आत्मा ७, (चारित्र छोड़कर), लब्धि ५, वीर्य १ बाल वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १ दंडक १६ ऊपर अनुसार, पक्ष १ शुक्ल।

५ देश व्रती गुण स्थानक में भाव ५, आत्मा ७ (देश से चारित्र है सर्व से नहीं), लब्धि ५, वीर्य १, बाल पंडित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि; भव्य १ दंडक दो (मनुष्य व तिर्यंच के) पक्ष १ शुक्ल।

६ प्रमत्त संयति गुण स्थानक में भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पंडित वीर्य; दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दंडक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

७ अप्रमत्त संयति गुण में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

नियट्टी बादर गुण० में-भाव ५, आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल।

९ अनियट्टी बादर गुण० में-भाव ५, आत्मा ८ लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष० १ शुक्ल ।

१० सूक्ष्म संपराय गुण० में-भाव ५ आत्मा ८, लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

११ उपशान्त मोहनीय गुण०मे-भाव ५, आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर) लब्धि ५,वीर्य १ पण्डित वीर्य,दृष्टि १ समकित,भव्य १,दण्डक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

१२ क्षीण मोहनीय गुण० में-भाव चार (उपशम छोड़ कर), आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का पक्ष १ शुक्ल ।

१३ सयोगी केवली गुण० मे भाव ३ (उदय, क्षायक, परिणामिक), आत्मा ७ (कषाय छोड़ कर), लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित दृष्टि भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

अयोगी केवली गुण० में-भाव तीन ऊपर समान, आत्मा ६, (कषाय व योग छोड़ कर) लब्धि ५, वीर्य १ पण्डित वीर्य, दृष्टि १ समकित, भव्य १, दण्डक १ मनुष्य का, पक्ष १ शुक्ल ।

॥ इति बावन बोल सम्पूर्ण ॥



श्रोता अधिकार

श्रोता अधिकार श्री नंदि सूत्र में है सो नीचे अनुसार

गाथा

सेल' घण, कुडग', चालणी', परिपुणग', हंस', महिस', मेसे', य, मसग', जलूग', बिराली', जाहग', गो'',भेरि'',आभेरी'' सा ।१।

चौदह प्रकार के श्रोता होते हैं जिनमें से प्रथम सेल घण जैसे पत्थर पर मेघ गिरे परन्तु पत्थर मेघ (पानी) से भींजे नहीं वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादिक सुने परन्तु सम्यक् ज्ञान पावे नहीं, शुद्ध होवे नहीं।

दृष्टान्तः-कुशिष्य रूपी पत्थर, सद् गुरु रूपी मेघ तथा बोध रूपी पानी मुग शेलिआ तथा पुष्करावर्त मेघ का दृष्टान्तः- जैसे पुष्करावर्त मेघ से मुग शेलीआ पिघले नहीं वैसे ही एकेक कुशिष्य महान् संवेगादिक गुण युक्त आचार्य के प्रतिबोधने पर भी समझे नहीं, वैराग्य रंग चढे नहीं, अतः ऐसे श्रोता छोडने योग्य हैं एवं अविनीत का दृष्टान्त जानना—

काली भूमि के अन्दर जैसे मेघ बरसे तो वो भूमि अत्यन्त भींज जावे व पानी भी रक्खे तथा गोधूमादिक (गेहूं प्रमुख) की अत्यन्त निष्पत्ति करे वैसे ही विनीत सुशिष्य भी गुरु की उपदेश रूप वाणी सुनकर हृदय में धार रक्खे, वैराग्य से भींज जावे व अनेक अन्य भव्य

जीवों को विनय धर्म के अन्दर प्रवर्तावे, अतः ये श्रोता आदरवा योग्य है।

२ कुडगः कुंभ का दृष्टान्त। कुंभ के आठ भेद हैं जिनमें प्रथम घडा सम्पूर्ण घड के गुणों द्वारा व्याप्त है। घडे के तीन गुणः—१घडे के अन्दर पानी भरने से किंचित् बाहर जावे नहीं २ स्वय शीतल है अतः अन्य की भी तृपा शान्त करे–शीतल करे। ३ अन्य का मलिनता भी पानी से दूर करे।

ऐसे ही एकेक श्रोता विनयादिक गुणों से सम्पूर्ण भरे हुवे हैं (तीन गुण सहित) १ गुर्वादिक को उपदेश सर्व धार कर रक्खे- किंचित भूले नहीं २ स्वयं ज्ञान पाकर शीतल दशा को प्राप्त हुवे हैं व अन्य भव्य जीव को त्रिविध ताप उपसमा कर शीतल करते हैं ३ भव्य जीव की सन्देह रूपी मलिनता को दूर करे। ऐसे श्रोता आदरने योग्य है।

२ एक घडे के पार्श्व भाग में काना (छेद युक्त) है इस में पानी भरे तो आधा पानी रहे व आधा पानी बाहर निकल जावे वैसे ही एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुने तो आधा धार रक्खे व आधा भूल जावे।

३ एक घडा नीचे से काना है इसमें पानी भरने से सर्व पानी बह कर निकल जावे किंचित् भी उसमें रहे

नहीं वैसे एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुने तो सब भूल जावे परन्तु धारे नहीं।

४ एक घड़ा नया है, इसमें पानी भरे तो थोडार जम कर बह जावे व सारा घड़ा खाली हो जावे वैसे एकेक श्रोता ज्ञानादि अभ्यास करे परन्तु थोड़ा थोड़ा करके भूल जावे।

५ एक घड़ा दुर्गन्ध वासित है इसमें पानी भरे तो वो पानी के गुण को बिगाड़े वैसे एकेक श्रोता मिथ्यात्वादिक दुर्गन्ध से वासित हैं। सूत्रादिक पढ़ने से यह ज्ञान के गुण को बिगाडते हैं (नष्ट करते हैं)।

६ एक घडा सुगन्ध से वासित है इसमें यदि पानी भरे तो जो पानी के गुण को बढावे वैसे एकेक श्रोता समकितादिक सुगन्ध से वासित हैं व सूत्रादिक पढाने से यह ज्ञान के गुण को दिपाते हैं।

७ एक घडा कच्चा है इसमें पानी भरे तो वो पानी से भींज कर नष्ट हो जावे, वैसे एकेक श्रोता (अल्प बुद्धि वाले) को सूत्रादिक का ज्ञान देने से—नय प्रमुख नहीं जानने से वो ज्ञान से व मार्ग से भ्रष्ट होवे।

८ एक घड़ा खाली है। इसके ऊपर ढकन ढांक कर वर्षा समय नेवा के नीचे इसे पानी झेलने के लिये रक्खे अन्दर पानी आवे नहीं परन्तु पेंदे के नीचे अधिक पानी हो जाने से ऊपर तिरने (तैरने) लगे व पवनादि से भींत

प्रमुख से टकरा कर फूट जावे वैसे एकेक श्रोता सद्गुरु की सभा में व्याख्यान सुनने को बैठे परन्तु ऊंघ प्रमुख के योग से ज्ञान रूप पानी हृदय में आवे नहीं तथा अत्यन्त ऊंघ के प्रभाव से खराब डाल रूप वायु से अथड़ावे (टक्कर खावे) जिससे सभा में अपमान प्रमुख पावे तथा ऊंघ में पड़ने से अपने शरीर को नुकसान पहुँचावे।

इति आठ घड़े के दृष्टान्त रूप दूसरे प्रकार का श्रोता का स्वरूप।

२ चालणी-एकेक श्रोता चालणी के समान हैं। इस के दो प्रकार, एक प्रकार ऐसा है कि चालनी जब पानी में रक्खे तो पानी से सम्पूर्ण भरी हुई दीखे परन्तु उठा कर देखे तो खाली दीखे वैसा एकेक श्रोता व्याख्यानादि सभा में सुनने को बैठे तो वैराग्यादि भावना से भरे हुवे दीखें परन्तु सभा से उठ कर बाहर जावें तो वैराग्य रूप पानी किंचित् भी दीखे नहीं। ऐसे श्रोता छाड़ने योग्य हैं।

दूसरा प्रकार-चालनी गेहूँ प्रमुख का आटा चालने से आटा तो निकल जाता है परन्तु कङ्कर प्रमुख कचरा बच रह जाता है वैसे एकेक श्रोता व्याख्यानादि सुनते समय उपदेशक तथा सूत्र के गुण तो निकाल देवे परन्तु स्खलना प्रमुख अवगुण रूप कचरे को ग्रहण कर रक्खें। ऐसे श्रोता छाड़ने योग्य है।

४ परिपुणग- सुघरी पत्ती के माला का दृष्टान्त। सुघरी पत्ती के माला से घी गालते समय घी घी निकल जावे परन्तु चींटी प्रमुख कचरा रह जाता है वैसे एकेक श्रोता आचार्य प्रमुख का गुण त्याग करके अवगुण को ग्रहण कर लेता है ऐसे श्रोता छाडवा योग्य हैं।

५ हंस-दूध पानी मिला कर पीने के लिये देने पर जैसे हंस अपनी चोंच से (खटाश के गुण के कारण) दूध दूध पीवे और पानी नहीं पीवे वैसे विनीत श्रोता गुर्वादिक के गुण ग्रहण करे व अवगुण न लेवे ऐसे श्रोता आदरनीय है।

६ माहिष -भैंसा जैसे पानी पीने के लिये जलाशय में जावे। पानी पीने के लिये जल में प्रथम प्रवेश करे पश्चात् मस्तक प्रमुख के द्वारा पानी ढोलने व मल मूत्र करने के बाद स्वयं पानी पीवे परन्तु शुद्ध जल स्वयं नहीं पीवे अन्य यूथ को भी पीने नहीं देवे वैसे कुशिष्य श्रोता व्याख्यानादिक में क्लेश रूप प्रश्नादिक करके व्याख्यान डोहले, स्वयं शान्ति युक्त सुने नहीं व अन्य सभा जनों को शान्ति से सुनाने देवे नहीं। ऐसे श्रोता छाडने योग्य हैं।

७ मेष—बकरा जैसे पानी पीने को जलाशय प्रमुख में जावे तो किनारे पर ही पांव नीचे नमा कर के पानी पीवे, डोहले नहीं व अन्य यूथ को भी निर्मल जल पीने देवे।

वैसे विनीत शिष्य व श्रोता व्याख्यानादिक नम्रता तथा शान्त रस से सुने, अन्य सभाजनों को सुनने देवे। ऐसे श्रोता आदरनीय हैं।

८ मसग-इस के दो भेद प्रथम मसग अर्थात् चमड़े की कोथली में जब हवा भरी हुई होती है तब अत्यन्त फूली हुई दिखती है परन्तु तृपा शमाये नहीं हवा निकल जाने पर खाली हो जाती है वैसे एकेक श्रोता अभिमान रूप वायु के कारण ज्ञानी वत् तड़ाक मारे परन्तु अपनी तथा अन्य की आत्मा को शान्ति पहुँचावे नहीं ऐसे श्रोता छोडने योग्य है।

९ दूसरा प्रकार-मसग (मच्छर नामक जन्तु) अन्य को चटका मार कर परिताप उपजावे परन्तु गुण नहीं करे वरन् नुकसान उत्पन्न करे वैसे एकेक कुश्रोता गुर्वादिक को-ज्ञान अभ्यास कराने के समय अत्यन्त परिश्रम देवें तथा कुवचन रूप चटका मारे। परतु वैय्यावृत्य प्रमुख कुछ भी न करे और मनमें असमाधि पैदा करे, यह छोडने योग्य है।

६ जोंक इसके भेद २ हैं। पहिला जोंक जन्तु गाय वगैरह के स्तन में लग जावे तब खून को पिये दूध को को नहीं पिये। इसी तरह से कोई अविनयी कुशिष्य श्रोता आचार्यदिक के पास रहता हुआ उनके दोषों को देखे परंतु क्षमादिक गुणों को ग्रहण नहीं करे यह भी त्यागने योग्य है।

दूसरे प्रकार का–जोंक नामक जन्तु फोडा के ऊपर रखने पर उसमें चोट मारकर दुःख पैदा करता और बिगडे हुए खून को पीता है बाद में शाति पैदा करता है। इसी तरह से कोई विनीत शिष्य श्रोता आचार्यादिक के साथ रहता हुआ पहिले तो वचन रूप चोट को मारे, समय असमय बहुत अभ्यास करता हुआ मेहनत करावे पीछे संदेह रूपी मैल को निकाल कर गुरुओं को शाति उपजावे–परदेशी राजा के समान यह ग्रहण करने योग्य है।

१० बिटाल–जैसे बिल्ली दूध के बर्तन को सींके से जमीन पर पटक कर उसमें मिली हुई धूल के साथ २ दूध को पीती है उसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से सूत्रादिक का अभ्यास करते हुए बहुत अविनय करे, और दूसरे के पास जाकर प्रश्न पूछ कर सूत्रार्थ को धारण करे परतु विनय के साथ धारण नहीं करे इसलिए ऐसा श्रोता त्यागने योग्य है।

११ जाहग–सहलो यह एक तिर्यंच की जाति विशेष्य का जीव है यह पहले तो अपनी माता का दूध थोडा थोडा पीता है और फिर वह पचजाने पर और थोड़ा इस तरह थोड़े थोड़े दूध से अपना शरीर पुष्ट करता है पीछे बड़े भारी सर्प का मान भजन करता है। इसी तरह कोई श्रोता आचार्यादिक के पास से अपनी बुद्धि माफिक समय समय पर थोड़ा थोड़ा सूत्र अभ्यास करे

अभ्यास करते हुए गुरुओं को अत्यंत संतोष पैदा करे क्योंकि अपना पाठ बराबर याद करता रहे और उसे याद करने पर फिर दूसरी वार और तीसरी वार इस तरह थोडा थोडा लेकर पश्चात् बहुश्रुत हो कर मिथ्यात्वी लोगों का मान मर्दन करे । यह आदरने योग्य है ।

१२ गाय—इसके दो प्रकार । प्रथम प्रकार—जैसे दूधवती गाय को एक शेठ किसी अपने पड़ोसी को सोंप कर अन्य गाव जावे पड़ोसी घास पानी प्रमुख बराबर गाय को नहीं देवे जिससे गाय भूख तृषा से पीडित होकर दूध में सूखने लग जाती है व दुःखी हो जाती है वैसे ही एकेक श्रोता (अविनीत) आहार पानी प्रमुख वैयावच्च नहीं करने से गुर्वादिक की देह ग्लानि पावे व जिससे सूत्रादिक में घाटा पड़ने लगजाता है तथा अपयश के भागी होते है ।

दूसरा प्रकार—एक सेठ पडोसी को दूधवती गाय सोंप कर गाव गया पडोसी के घास, पानी प्रमुख अच्छी तरह देने से दूध में वृद्धि होने लगी व वो कीर्ति का भागी हुवा वैसे एकेक विनीत श्रोता (शिष्य) गुर्वादिक की अहार पानी प्रमुख वैय्यावच्च विधि पूर्वक, करके गुर्वादिक को साता उपजावे जिससे ज्ञान में वृद्धि होवे व साथ २ उसको भी यश मिले यह श्रोता आदरवा योग्य है ।

१३ भेरी—इसके दो प्रकार— प्रथम प्रकार—भेरी

को बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी बजावे तो राजा खुशी होकर उसे पुष्कल द्रव्य देवे वैसे ही विनीत शिष्य-श्रोता-तीर्थंकर तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार सूत्रादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान प्रमुख अंगीकार करे तो कर्म रूप रोग दूर होवे और सिद्ध गति में अनन्त लक्ष्मी प्राप्त करे यह आदरने योग्य है।

दूसरा प्रकार-भेरी बजाने वाला पुरुष यदि राजा की आज्ञानुसार भेरी नहीं बजावे तो राजा कोपायमान होकर द्रव्य देवे नहीं वैसे ही अविनीत शिष्य (श्रोता) तीर्थंकर की तथा गुर्वादिक की आज्ञानुसार सूत्रादिक की स्वाध्याय तथा ध्यान करे नहीं तो उनका कर्म रूप रोग दूर होवे नहीं व सिद्ध गति का सुख प्राप्त करे नहीं यह छोडने योग्य है।

१४ आभीरी- प्रथम प्रकार-आभीर स्त्री पुरुष एक ग्राम से पास के शहर म गडवे में घी भर कर बेचने को गये। वहां बाजार में उतारते समय घी का भाजन-बर्तन फूट गया व जिससे घी ढुल गया। पुरुष स्त्री को कुवचन कह कर उपालम्भ देने लगा, स्त्री भी पुनः भर्ता के सामने कुवचन कहने लगी। इस बीच में सब घी निकल कर जमीन पर बहने लगा व स्त्री पुरुष दोनों शोक करने लगे। जमीन पर गिरे हुवे घी को पुनः पूछ कर ले लिया व बाजार में बेंच कर पैसे सीधे किये। पैसे

ले कर सायङ्काल को गॉव जाते समय चोरों ने उन्हे लूट लिया। अत्यन्त निराश हुवे, लोगों के पूछने पर सर्व वृत्तान्त कहा जिसे सुन कर लोगों ने उन्हें बहुत ही ठपका दिया। वैसे ही गुरु के द्वारा व्याख्यान में दिये हुवे उपदेश (सार घी) को लडाई झगडा करके ढोल दिया व अन्त में क्लेश करके दुर्गति को प्राप्त करे यह श्रोता छोडने योग्य है।

दूसरा प्रकार-घी भर कर शहर में जाते समय बर्तन उतारने पर फूट गया, फूटत ही दोनों स्त्री पुरुषों ने मिल कर पुनः भाजन में घी भर लिया। बहुत नुकसान नहीं होने दिया। घी को बेंचकर पैसे सीधे किये व अच्छा सग करके गाव मे सुख पूर्वक अन्य सुज्ञ पुरुषों के समान पहोंच गये, वैसे ही विनीत शिष्य (श्रोता) गुरु के पास से वाणी सुनकर व शुद्ध मान पूर्वक तथा अर्थ सूत्र को धार कर रक्खे; साचवे। अस्खलित को, विस्मृति होवे तो गुरु के पास से पुनः२ क्षमा मांग कर धारे, पूछे परन्तु क्लेश झगडा करे नहीं। गुरु उन पर प्रसन्न होवे, संयम ज्ञान की वृद्धि होवे, व अन्त में सद् गति पावे यह श्रोता आदरणीय है।

॥ इति श्रोता अधिकार सम्पूर्ण ॥



६८ बोल का अल्प बहुत्व

सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तीसरा।

६८ बोल का अल्प बहुत्व।

अनुक्रम	महा दण्डक	जीव १४	गुणस्थान १४	योग १५	उपयोग १२	लेश्या ६
१	गर्भज मनुष्य सर्व से कम	२,	१४,	१५,	१२,	६,
२	मनुष्याणी सख्यातगु.	२,	१४,	१३,	१२,	६,
३	बादर तैजस काय पर्याप्त असख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
४	पांच अनुत्तर विमान का देव असख्यात गु.	२,	१,	११,	६,	१,
५	ऊपर की त्रीक का देव सख्यात गुणा–	२,	२ ३,	११,	९,	१,
६	मध्य त्रीक का देव संख्यात गुणा–	२,	२ ३,	११,	९,	१,
७	नीचे की त्रीक का देव सख्यात गुणा–	२,	२-३,	११,	९,	१,
८	बारहवा देवलोक का देव सख्यात गुणा–	२,	४,	११,	९,	[illegible]

९ ११ वां-देवलोक का. देव संख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१० दशवा देवलोक का देव संख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
११ नववां देवलोक का देव संख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१२ सातवीं नरक का नेरिया असंख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१३ छट्ठी नरक का नेरिया असंख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१४ आठवां देवलोक का देव असंख्यात गुणा–	२,	४,	११,	६,	१,
१५ सातवा देवलोक कादेव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
१६ पाचवी नरकका नेरिया असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	२,
१७ छट्ठा देवलोक का देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
१८ चोथी नरक का नेरिया असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,
१९ पाचवां देवलोकका देव असंख्यात गुणा—	२,	४,	११,	६,	१,

२० तीसरी नरकका नेरिया
असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, २,

२१ चोथा देवलोक का देव
असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२२ तीसरा देवलोकका देव
असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२३ दूसरी नरक का नेरिया
असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२४ संमूर्छिम मनुष्य अशा-
श्वत असंख्यात गुणा- १, १, ३, ४, ३,

२५ दूसरे देवलोक का देव
असंख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२६ दूसरे देवलोक की दे-
वियें सख्यात गुणी— २, ४, ११, ६, १,

२७ पहेले देव,लोक का देव
संख्यात गुणा— २, ४, ११, ६, १,

२८ पहेले देवलोक की दे-
विए सख्यात गुणी— २, ४, ११, ६, १,

२९ भवनपति का देव अ-
सख्यात गुणा— ३, ४, ११, ६, ४,

३० भवन पति की देवी
सख्यात गुणा २, ४, ११, ६,

३१ पहेली नरक का नेरिया असख्यात गुणा ३, ४, " " १,

३२ खेचर पुरुष तिर्यंच योनि असंख्यात गुणा २, ५, १३, " ६,

३३ खेचर की स्त्री संख्यात गुणी २, ५, " " "

३४ स्थलचर पुरुष संख्यात गुणा २, ५, " " "

३५ स्थलचर की स्त्री सख्यात गुणी " " " " "

३६ जलचर पुरुष सख्यात गुणा " " " " "

३७ जलचर की स्त्री संख्यात गुणी " " " " "

३८ वाण व्यन्तर का देव संख्यात गुणा ३, ४, ११, " ४,

३९ वाण व्यन्तर की देवी सख्यात गुणी २, " " " "

४० ज्योतिष का देव संख्यात गुणा " " " " १

४१ ज्योतिष की देवी संख्यात गुणी " " " " "

४२ खेचर नपुसक तिर्यंच
योनि संख्यात गु. २ ४,५, १३, ६, ६,
४३ स्थल चर नपुंसक
संख्यात गुणा २-४ " " " "
४४ जलचर नपुसक
संख्यात गुणा " " " " " "
४५ चौरिन्द्रिय पर्याप्त
सख्यात गुणा १, १, २, ४, ३,
४६ पचेन्द्रिय पर्याप्त
विशेपाधिक ७, १२, १४, १०, "
४७ बेइन्द्रिय पर्याप्त
विशेपाधिक १, १, २, ३, "
४८ त्रिइन्द्रिय पर्याप्त
विशेपाधिक " " " " "
४९ पंचेन्द्रिय अप.
असंख्यात गुणा २ ३ ५ ८-६, ६,
५० चौरिन्द्रिय अप.
विशेपाधिक १, २, ३, ५, ३,
५१ त्रिइन्द्रिय अप.
विशेपाधिक " " " " "
५२ बेइन्द्रिय अप.
विशेपाधिक " " " ६, "

५३ प्रत्येक शरीरी बा. वन. प. असं. गु. "	१,	१,		३,	"
५४ बादर निगोद प. का श.असं.गु. "	"	"		"	"
५५ बादर पृथ्वी काय पर्याप्त अस. गु. "	"	"		"	"
५६ बादर अप काय पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
५७ बादर वायु काय पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	४,	३,	३,
५८ बादर तैजस काय अ-पर्याप्त असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	३,
५९ प्रत्येक शरीरीबादर वन-स्पति काय अ. अ.गुणा	१,	१,	३,	३,	४,
६० बादर निगोद अपर्याप्त का.शरीर असं. गुणा	१,	१,	३,	३,	३,
६१ बादर पृथ्वी काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	४,
६२ बादर अप काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	४,
६३ बादर वायु काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	३,

६४ सूक्ष्म तेजस्काय अप. असंख्यात गुणा	१,	१,	३,	३,	३,
६५ सूक्ष्म पृथ्वी काय अप. विशेपाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
६६ सूक्ष्म अप काय अप. विशेपाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
६७ सूक्ष्म वायु काय अप. विशेपाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
६८ सूक्ष्म तेजस्काय पर्याप्त संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
६९ सूक्ष्म पृथ्वी काय पर्याप्त विशेपाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
७० सूक्ष्म अप काय पर्याप्त विशेपाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
७१ सूक्ष्म वायु काय पर्याप्त विशेपाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
७२ सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का शरीर असं. गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
७३ सूक्ष्म निगोद पर्याप्तका शरीर संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
७४ अभव्य जीव अनन्त गुणा	१४,	१,	१३,		

७५ सम्यक दृष्टि प्रति पाति अनन्त गुणा	१४,	१४,	१५,	२२,	६;
७६ सिद्ध अनन्त गुणा	०;	०;	०;	२;	०;
७७ बादर वनस्पति काय पर्याप्त अनन्त गुणा	१;	१;	१;	३,	३;
७८ बादर जीव पर्याप्त विशेषाधिक	६,	१४,	१४;	१२;	६;
७९ बादर वनस्पति काय अप असंख्यात गुणा	१;	१;	३,	३,	४,
८० बादर जीव अपर्याप्त विशेषाधिक	६,	३,	५,	८।६,	६,
८१ समुच्चय बादर जीव विशेषाधिक	१२,	१४,	१५,	१२,	६,
८२ सूक्ष्म वनस्पति काय अपर्याप्त असंख्यात गु.	१,	१,	३,	३,	३,
८३ सूक्ष्म जीव अपर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	३,	३,	३,
८४ सूक्ष्म वनस्पति काय पर्याप्त संख्यात गुणा	१,	१,	१,	३,	३,
८५ सूक्ष्म जीव पर्याप्त विशेषाधिक	१,	१,	१,	३,	३,
८६ समुच्चय सूक्ष्म जीव विशेषाधिक	२,	१,	३,	३,	३,

८७ भव्य सिद्धि जीव विशेषाधिक	१४,	१४,	१५,	१२,	६,
८८ निगोद के जीव विशेषा.	४,	१,	३,	३,	३,
८९ समुच्चय वनस्पति काय के जीव विशेषाधिक	४,	१,	३,	३,	४,
९० एकेन्द्रिय जीव विशेषा.	४,	१,	५,	३,	४,
९१ तिर्यंच योनी का जीव विशेषाधिक	१४,	५,	१३,	९,	६,
९२ मिथ्यात्व दृष्टि जीव विशेषाधिक	१४,	१,	१३,	९,	६,
९३ अव्रति जीव विशेषा.	१४,	४,	१३,	९,	६,
९४ सकषायी जीव विशेषा.	१४,	१०,	१५,	१०,	६,
९५ छद्मस्थ जीव विशेषा.	१४,	१२,	१५,	१०,	६,
९६ सयोगी जीव विशेषा.	१४,	१३,	१५,	१२,	६,
९७ समारस्थ जीव विशे.	१४,	१४,	१५,	१२,	६,
९८ सर्व जीव विशेषाधिक	१४,	१४,	१५,	१२,	६,

❀ इति ९८ बोल का अल्प बहुत्व सम्पूर्ण



पुद्गल परावर्त

भगवती सूत्र के १२ वें शतक के चोथे उद्देशे में पुद्गल परावर्त्त का विचार है सो नीचे अनुसार।

गाथा

नाम¹, गुण², त्ति सरूवं³, त्ति ठाणं⁴, काल⁵, कालोवमच⁶
काल अप्प बहु⁷; पुग्गल मफ पुग्गल⁸ पुग्गल करण अप्पबहु⁹।

पुद्गल परावर्त्त समझाने के लिये नव द्वार कहते हैं।

१ नाम द्वार–१ औदारिक पुद्गल परावर्त २ वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त ३ तैजस पुद्गल परावर्त्त ४ कार्मण पुद्गल परावर्त्त ५ मन पुद्गल परावर्त्त ६ वचन पुद्गल परावर्त्त ७ श्वासोश्वास पुद्गल परावर्त्त।

२ गुण द्वार–पुद्गल परावर्त्त किसे कहते हैं ? इसके कितने प्रकार होते हैं ? इसे किस तरह समझना ? आदि सहज प्रश्न शिष्य के द्वारा पूछे जाते हैं तब गुरु उत्तर देते हैं:–इस संसार के अन्दर जितने पुद्गल हैं उन सर्वो को जीव ने ले ले कर छोड़े हैं। छोड कर पुनः पुनः फिर ग्रहण किये है पुद्गल परावर्त्त शब्द का यह अर्थ है कि पुद्गल सूक्ष्म रजकण से लग कर स्थूल से स्थूल जो पुद्गल हैं उन सर्वो के अन्दर जीव परावर्त्त=समग्र प्रकार से फिर चुका है, सर्व में भ्रमण कर चुका है।

औदारिक पने (औदारिक शरीर रह कर औदारिक योग्य जो पुद्गल ग्रहण करते हैं) वैक्रिय पने (वैक्रिय शरीर में रह कर वैक्रिय योग्य पुद्गल ग्रहण करे) तैजस् आदि ऊपर कहे हुवे सात प्रकार से पुद्गल जीव ने ग्रहण किये हैं व छोडे है, ये भी सूक्ष्म पने और बादर पने लिये हैं और छोड़े हैं, द्रव्य से, क्षेत्र से काल से व भाव से एवं चार तरह से जीव ने पुद्गल परावर्त्त किये हैं।

इसका विवरण (खुलासा) नीचे अनुसारः—

पुद्गल परावर्त्त के दो भेदः–१ बादर २ सूक्ष्म ये द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से,

१ द्रव्य से बादर पुद्गल परावर्तः—लोक के समस्त पुद्गल पूरे किये परन्तु, अनुक्रम से नहीं याने औदारिक पने पुद्गल पूरे किये बिना पहेले वैक्रिय पने लेवे । व तैजस पने लेवे, कोई भी पुद्गल परावर्त पने बीच मे लेकर पुनः औदारिक पने के लिये हुवे पुद्गल पूरे करे एवं सात ही प्रकार से बिना अनुक्रम के समस्त लोक के सर्व पुद्गलों को पूरे करे इसे बादर पुद्गल परावर्त्त कहते हैं ।

२ द्रव्य से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त–लोक के सर्व पुद्गलों को औदारिक पने पूर्ण करे, फिर वैक्रिय पने फिर तैजस पने एव एक के बाद एक अनुक्रम पूर्वक सात ही पुद्गल परावर्त्त पने पूर्ण करे उसे सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त कहते है ।

३ क्षेत्र से बादर पुद्गल परावर्त्त—चौदह राजलोक के जितने आकाश प्रदेश हैं उन सर्व आकाश प्रदेश को प्रत्येक प्रदेश में मर मर कर अनुक्रम विना तथा किसी भी प्रकार से पूर्ण करे।

४ क्षेत्र से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—चौदह राज लोक के आकाश प्रदेश को अनुक्रम से एक के बाद एक १-२ ३-४-५-६ ७-८ ९-१० एवं प्रत्येक प्रदेश में मर कर पूर्ण करे उन में पहले प्रदेश में मर कर तीसरे प्रदेश में मरे अथवा पाचवें आठवें किसी भी प्रदेश में मरे तो पुद्गल परावर्त्त करना नहीं गिना जाता है, अनुक्रम से प्रत्येक प्रदेश में मर कर समस्त लोक पूर्ण करे।

५ काल से बादर पुद्गल परावर्त्त—एक काल चक्र (जिसमें उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी सम्मिलित हैं) के प्रथम समय में मरे पश्चात् दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे अथवा तीसरे समय में मरे एवं तीसरे काल चक्र के किसी भी समय में मरे अर्थात् एक काल चक्र के जितने समय होते उतने काल चक्र के एक २ समय मर कर एक काल चक्र पूर्ण करे।

६ काल से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—काल चक्र के प्रथम समय में मरे, अथवा दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे, तीसरे काल चक्र के तीसरे समय में मरे,

चोथे काल चक्र के चोथे समय में मरे, बीचमें नियम के बिना किसी भी समय में मरे (यह हिसाब में नहीं गिना जाता) एव एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के अनुक्रम से नियमित समय में मरे।

७ भाव से बादर पुद्गल परावर्त्त—जीव के असंख्यात परिणाम होते है जिनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् ३ २ ५ ४ ७ ६ एवं अनुक्रम के बिना प्रत्येक परिणाम पर मरे व मर कर असख्यात परिणाम पूर्ण करे।

८ भाव से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—जीव के असंख्यात परिणाम होते है उनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् बीच में कितना ही समय जाने बाद दूसरे परिणाम पर, व अनुक्रम से तीसरे परिणामें चोथे परिणामें एव असख्य परिणाम पर मर कर पूर्ण करे।

❀ इति गुण द्वार ❀

३ त्रिसंख्या द्वार

१ पुद्गल परावर्त्त—सर्व जीवों ने कितने किये २ एक वचन से एक जीव ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त्त किये ३ बहु वचन से सर्व जीवों ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त्त किये।

१ सर्व जीवो ने—औदारिक पुद्गल परावर्त्त, वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त; तैजस् पुद्गल परावर्त्त, आदि ये सातों पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त वार किये ७।

३ क्षेत्र से बादर पुद्गल परावर्त्त-चौदह राजलोक के जितने आकाश प्रदेश है उन सर्व आकाश प्रदेश को प्रत्येक प्रदेश में मर मर कर अनुक्रम बिना तथा किसी भी प्रकार से पूर्ण करे।

४ क्षेत्र से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्तः-चौदह राज लोक के आकाश प्रदेश को अनुक्रम से एक के बाद एक १-२ ३-४-५-६ ७-८ ९-१० एवं प्रत्येक प्रदेश में मर कर पूर्ण करे उन में पहले प्रदेश में मर कर तीसरे प्रदेश में मरे अथवा पाचवें आठवें किसी भी प्रदेश में मरे तो पुद्गल परावर्त्त करना नहीं गिना जाता है, अनुक्रम से प्रत्येक प्रदेश में मर कर समस्त लोक पूर्ण करे।

५ काल से बादर पुद्गल परावर्त्त—एक काल चक्र (जिसमें उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी सम्मिलित हैं) के प्रथम समय में मरे पश्चात् दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे अथवा तीसरे समय में मरे एवं तीसरे काल चक्र के किसी भी समय में मरे अर्थात् एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के एक २ समय मर कर एक काल चक्र पूर्ण करे।

६ काल से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—काल चक्र के प्रथम समय में मरे, अथवा दूसरे काल चक्र के दूसरे समय में मरे, तीसरे काल चक्र के तीसरे समय में मरे,

चोथे काल चक्र के चोथे समय में मरे, बीचमें नियम ... बिना किसी भी समय में मरे (यह हिसाब में नहीं गिना जाता) एव एक काल चक्र के जितने समय होवे उतने काल चक्र के अनुक्रम से नियमित समय में मरे ।

७ भाव से बादर पुद्गल परावर्त्त—जीव के असंख्यात परिणाम होते हैं जिनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् ३ २ ५ ४ ७ ६ एवं अनुक्रम के बिना प्रत्येक परिणाम पर मरे व मर कर असंख्यात परिणाम पूर्ण करे।

८ भाव से सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्त—जीव के असंख्यात परिणाम होते हैं उनमें से प्रथम परिणाम पर मरे पश्चात् बीच में कितना ही समय जाने बाद दूसरे परिणाम पर, व अनुक्रम से तीसरे परिणामें चोथे परिणामें एव असंख्य परिणाम पर मर कर पूर्ण करे ।

/ ❀ इति गुण द्वार ❀

३ त्रिसंख्या द्वार

१ पुद्गल परावर्त—सर्व जीवों ने कितने किये ?
...क वचन से एक जीव ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त किये २ बहु वचन से सर्व जीवों ने २४ दंडक में कितने पुद्गल परावर्त किये ।
... १ सर्व जीवों ने—औदारिक पुद्गल परावर्त, वैक्रिय पुद्गल परावर्त, आदि के ... पुद्गल परावर्त अनन्त अनन्त बार किये हैं ।

पने, जो जो घटे वे वे (पुद्गल परावर्त्त) किये व करेंगे एवं २४ दण्डक में बहुत से जीवों ने पुद्गल परावर्त्त सात सात किये पूर्व अनुसार इसके भी ४०३२ प्रश्न होते हैं।

३ किस किस दण्डक में पुद्गल परावर्त्त किये-- सर्व जीवों ने पाच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय व मनुष्य इन दश दण्डक में औदारिक पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त वार किये १ नेरिये १० भवनपति १२ वायु काय, १३ संज्ञी तिर्यंच पचेन्द्रिय पर्याप्त, १४ सज्ञी मनुष्य पर्याप्त, १५ वाण व्यन्तर, १६ ज्योतिषी १७ वैमानिक। इन १७ दण्डक में सर्व जीवों ने वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त अनन्त वार किये। २४ दण्डक में तैजस् पुद्गल परावर्त्त, कार्मण पुद्गल परावर्त्त सर्व जीवों ने अनन्त अनन्त वार किये १४ नेरिया व देवता का दण्डक, १५ संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, १६ संज्ञी मनुष्य। एव १६ दण्डक में सर्व जीवों ने मन पुद्गल परावर्त्त अनन्त अनन्त वार किये।

पाच एकेन्द्रिय को छोड़कर १९ दण्डक म सर्व जीवों ने वचन पुद्गल परावर्त्त अनन्त किये एव १३४ प्रश्न होते हैं तीनों ही स्थानक में ८१९८ प्रश्न होते हैं।

॥ इति त्रिस्थानक द्वार ॥

५ काल द्वार--अनन्त उत्सर्पिणी अनन्त अवसर्पिणी व्यतीत होवे तब जाकर कहीं एक औदारिक पुद्गल परावर्त होता है इसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परावर्त्त इतना ही समय

जाने बाद होता है। सात पुद्गल परावर्त्त में अनन्त अनन्त काल चक्र व्यतीत हो जाते हैं।

॥ इति काल द्वार ॥

६ काल की ओपमाः—काल समझाने के लिये एक दृष्टान्त दिया जाता है। परमाणु यह सूक्ष्म से सूक्ष्म रज कण, यह अतीन्द्रिय (इन्द्रिय से अगम्य) होता है कि जिसका भाग व हिस्सा किसी भी शस्त्र से किंवा किसी भी प्रकार से हो सक्ता नहीं अत्यन्त बारीक सूक्ष्म से सूक्ष्म रज कण को परमाणु कहते है। इस प्रकार के अनन्त सूक्ष्म परमाणु से एक व्यवहार परमाणु होता है। २ अनन्त व्यवहार परमाणु से एक उष्ण स्निग्ध परमाणु होता है। ३ अनन्त उष्ण स्निग्ध परमाणु से एक शीत स्निग्ध परमाणु होता है। ४ आठ शीत स्निग्ध परमाणु से एक ऊर्ध्व रेणु होता है। ५ आठ ऊर्ध्व रेणु से एक त्रस रेणु। ६ आठ त्रस रेणु से एक रथरेणु। ७ आठ रथ रेणु से देव-उत्तर कुरु क मनुष्यों का एक बालाग्र। हरि-रम्यक वर्ष के मनुष्यों का एक बालाग्र ९ इन आठ बालाग्र से हेमवय हिरण्य वय मनुष्यों का एक बालाग्र १० इन आठ बालाग्र से पूर्व विदेह व पश्चिम विदेह मनुष्यों का एक बालाग्र ११ इन बालाग्र से भरत ऐरावत के मनुष्यों का एक बालाग्र १२ इन आठ बालाग्र से एक लीख १३ आठ लीख की एव जूँ, १४ आठ जूँ का एक

अर्ध जव १५ आठ अर्ध जव का एक उत्सेध अङ्गुल १६ छः उत्सेध अङ्गुलों का एक पैर का पहोल पना (चौड़ाई) १७ दो पैर के पहोल पने का एक वेंत १८ दो वेंत एक हाथ दो हाथ एक कुक्षि १९ दो कुक्षि एक धनुष्य २० दो हजार धनुष्य का एक गाउ (कोस) २१ चार गाउ का एक योजन। कल्पना करो कि ऐसा एक योजन का लम्बा, चोड़ा, व गहरा कुवा हो। उसमें देव-उत्तर कुरु मनुष्यों के बाल--एक २ बाल के असंख्य खण्ड करे -बाल के इन असंख्य खण्डों से तल से लगाकर ऊपर तक ठूस २ कर वो कुवा भरा जावे कि जिसके ऊपर से चक्रवर्ती का लश्कर चला जावे परन्तु एक बाल नमे नहीं, नदी का प्रवाह (गङ्गा और सिन्ध नदी का) उस पर बह कर चला जावे परन्तु अन्दर पानी भिदा सके नहीं, अग्नि भी यदि लग जावे तो वो अन्दर प्रवेश कर सके नहीं। ऐसे कुवे के अन्दर से, सो सो वर्ष × के बाद एक बाल- खण्ड निकाले, एव सो सो वर्ष के बाद एक २ खण्ड निकालने से जब कुवा खाली हो जावे उतने समय को शास्त्र कार एक पल्योपम कहते हैं। ऐसे दश क्रोडा

× असंख्य समय की एक आवालिका, सख्यात आवालिका का एक श्वास, सख्यात समय का एक निश्वास दो मिलकर एक प्राण सात प्राण का एक स्तोक (अल्प समय), सात स्तोक का एक लव (दो काष्टा का माप) ७७ लव का एक मुहूर्त, तीश मुहूर्त एक अहोरात्रि १५ अहो रात्रि एक पक्ष, दो पक्ष एक माह, बारह माह एक वर्ष।

क्रोड़ पल्य का एक सागर होता है । २० क्रोड़ा क्रोड़ सागरों का एक काल चक्र होता है ।

॥ इति कालोपमा द्वार ॥

७ काल अल्प बहुत्व द्वारः—१ अनन्त काल चक्र जावे तब एक कार्मण पुद्गल परावर्त्त होवे । २ अनन्त कार्मण पुद्गल परावर्त्त जावे तब तैजस पुद्गल परावर्त्त होवे । ३ अनन्त तैजस् पुद्गल परावर्त्त जावे तब एक औदारिक पुद्गल परावर्त्त हवे । ४ अनन्त औ० पु० परा० जावे तब एक श्वासो श्वास पुद्गल परावर्त्त होवे ५ अनन्त श्वा० पु० परा० जावे तब एक मन पुद्गल परा० होवे । ६ अनन्त मन पु० परा० जावे तब एक वचन पु० परा० होवे । ७ अनन्त वचन पु० परा० जावे तब एक वैक्रिय पु० परा० होवे ।

॥ इति अल्प बहुत्व द्वार ॥

८ पुद्गल मध्य पुद्गल परावर्त्त द्वारः—१ एक कार्मण पुद्गल परावर्त्त में अनन्त काल चक्र जावे । २ एक तैजस् पुद्गल परा० में अनन्त कार्मण पु० परा० जावे ३ एक औदारिक पु० परा० में अनन्त तैजस् पु० परा० जावे ४ एक श्वासो श्वास पु० परा० में अनन्त औदारिक पु० परा० जावे ५ एक मन पु० परा० में अनन्त श्वासो पु० परा० जावे ६ एक वचन पु० परा० में अनन्त मन पु० परा० जावे

अर्ध जव १५ आठ अर्ध जव का एक उत्सेध अङ्गुल १६ छ उत्सेध अङ्गुलों का एक पैर का पहोल पना (चौड़ाई) १७ दो पैर के पहोल पने का एक वेंत १८ दो वेंत एक हाथ दो हाथ एक कुक्षि १६ दो कुक्षि एक धनुष्य २० दो हजार धनुष्य का एक गाउ (कोस) २१ चार गाउ का एक योजन । कल्पना करो कि ऐसा एक योजन का लम्बा, चोड़ा, व गहरा कुआ हो। उसमें देव-उत्तर कुरु मनुष्यों के बाल--एक २ बाल के असंख्य खण्ड करे -बाल के इन असंख्य खण्डों से तल से लगाकर ऊपर तक ठूस २ कर वो कुवा भरा जावे कि जिसके ऊपर से चक्र-वर्ती का लश्कर चला जावे परन्तु एक बाल नमे नहीं, नदी का प्रवाह (गङ्गा और सिन्ध नदी का) उस पर बह कर चला जावे परन्तु अन्दर पानी भिदा सके नहीं, अग्नि भी यदि लग जावे तो वो अन्दर प्रवेश कर सके नहीं । ऐसे कुवे के अन्दर से, सो सो वर्ष × के बाद एक बाल- खण्ड निकाले, एव सो सो वर्ष के बाद एक २ खण्ड निकालने से जब कुवा खाली हो जावे उतने समय को शास्त्र कार एक पल्योपम कहते है ऐसे दश क्रोडा

× असंख्य समय की एक आवलिका, संख्यात आवलिका का एक श्वास, संख्यात समय का एक निश्वास दो मिलकर एक प्राण सात प्राण का एक स्तोक (अल्प समय), सात स्तोक का एक लव (दो काष्टा का माप) ७७ लव का एक मुहूर्त, तीश मुहूर्त एक अहोरात्रि १५ अहो रात्रि एक पक्ष, दो पक्ष एक माह, बारह माह एक वर्ष ।

क्रोड़ पल्य का एक सागर होता है । २० क्रोड़ा क्रोड़ सागरों का एक काल चक्र होता है ।

॥ इति कालोपमा द्वार ॥

७ काल अल्प बहुत्व द्वारः—१ अनन्त काल चक्र जावे तब एक कार्मण पुद्गल परावर्त्त होवे । २ अनन्त कार्मण पुद्गल परावर्त्त जावे तब तैजस पुद्गल परावर्त्त होवे । ३ अनन्त तैजस् पुद्गल परावर्त्त जावे तब एक औदारिक पुद्गल परावर्त्त होवे । ४ अनन्त औ० पु० परा० जावे तब एक श्वासो श्वास पुद्गल परावर्त्त होवे ५ अनन्त श्वा० पु० परा० जावे तब एक मन पुद्गल परा० होवे । ६ अनन्त मन पु० परा० जावे तब एक वचन पु० परा० होवे । ७ अनन्त वचन पु० परा० जावे तब एक वैक्रिय पु० परा० होवे ।

॥ इति अल्प बहुत्व द्वार ॥

८ पुद्गल मध्य पुद्गल परावर्त्त द्वारः—१ एक कार्मण पुद्गल परावर्त्त में अनन्त काल चक्र जावे । २ एक तैजस् पुद्गल परा० में अनन्त कार्मण पु० परा० जावे ३ एक औदारिक पु० परा० में अनन्त तैजस् पु० परा० जावे ४ एक श्वासो श्वास पु० परा० में अनन्त औदारिक पु० परा० जावे ५ एक मन पु० परा० में अनन्त श्वासो पु० परा० जावे ६ एक वचन पु० परा० में अनन्त मन पु० परा० जावे

९० मनुष्य सम्यग् दृष्टि में	०	०	९०	०
९१ अधो लोक में घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३	५०
९२ उर्ध्व लोक त्रस मिथ्यात्वी में	०	२६	०	६६
९३ अधो लोक त्रस में	१४	२६	३	५०
९४ देवता मिथ्यात्वी पर्याप्त में	०	०	०	९४
९५ नो गर्भज अभापक सम्यग् दृष्टि में	६	८	०	८१
९६ उर्ध्व लोक पचेन्द्रिय में	०	२०	०	७६
९७ अधो लोक कृष्ण लेशी वादर में	६	३८	३	५०
९८ घातकी खण्ड में प्रत्येक श.में	०	४४	५४	०
९९ वचन योगी देवताओं में	०	०	०	९९
१०० उर्ध्व लोक प्रत्येक शरीर वादर मिथ्यात्वी	०	३४	०	६६
१०१ वचन योगी मनुष्यों में	०	०	१०१	०
१०२ उर्ध्व लोक त्रस में	०	२६	०	७६
१०३ अधो लोक नो गर्भज में	१४	१८	३	५०
१०४ एकान्त मिथ्यात्व शाश्वत में	०	३०	५६	१८
१०५ अधो लोक वादर में	१४	३८	३	५०
१०६ मन योगी गर्भज में	०	५	१०१	०
१०७ अधो लोक कृष्ण लेशी में	६	४८	३	५०

१०८ औदारिक शरीर सम्यग् दृष्टि में	०	१८	६०	०
१०६ कृष्ण लेशी वैक्रिय शरीर नो गर्भज में	६	१	०	१०२
११० उर्ध्व लोक बादर प्रत्येक शरीर में	०	३४	०	७६
१११ अधो लोक प्रत्येक शरीरमें	१४	४४	३	५०
११२ उर्ध्व लोक मिथ्यात्वी	०	४६	०	६६
११३ वचन योगी घ्राणेन्द्रिय औदारिक में	०	१२	१०१	०
११४ औदारिक वचन योगी में	०	१३	१०१	०
११५ अधो लोक में	१४	४८	३	५०
११६ मनुष्य अपर्याप्त मरने वालों में	०	०	११६	०
११७ क्रिया वादी समोशरण अमर में	६	०	३०	८१
११८ उर्ध्व लोक प्रत्येक शरीर में	०	४२	०	७६
११६ घ्राणेन्द्रिय मिश्र योग शाश्वत में	७	१२	१५	८५
१२० एकान्त असंज्ञी अपर्याप्त में	०	१६	१०१	०
१२१ विभग ज्ञान वालों में	७	५	१५	६४

१२२ कृष्ण लेशी वैक्रिय शरीर स्त्री वेद में	०	५	१५	१०२
१२३ तीन औदारिक शाश्वत में	०	३७	८६	०
१२४ लवण समुद्र में घ्राणेन्द्रिय शाश्वत में	०	१२	११२	०
१२५ लवण समुद्र में तेजो लेशी में	०	१३	११२	०
१२६ मरने वाले गर्भज जीवों में	०	१०	११६	०
१२७ वैक्रिय शरीर मरने वालों में	७	६	१५	९९
१२८ देवियों में	०	०	०	१२८
१२९ एकान्त असंज्ञी बादर में	०	२८	१०१	०
१३० लवण समुद्र त्रस मिश्र योगी में	०	१८	११२	०
१३१ मनुष्य नपुंसक वेदमें	०	०	१३१	०
१३२ शाश्वत मिश्र योगी में	७	२५	१५	८५
१३३ मन योगी सम्यग् दृष्टि असंख्यात भववालों में	७	५	४५	७६
१३४ बादर औदारिक शाश्वत में	०	३३	१०१	०
१३५ प्रत्येक शरीरी एकान्त असंज्ञी में	०	३४	१०१	०
१३६ तीन लेश्या औदारिक शरीरमें	०	३५	१०१	०
१३७ क्रिया वादी अशाश्वत में	६	५	४५	८१
१३८ मन योगी सम्यग् दृष्टि में	७	५	४५	८१

१३६ औदारिक शरीर नो गर्भज में	०	३८	१०१	०
१४० कृष्ण लेशी अमर में	३	०	८६	५१
१४१ अवधि दर्शन मरने वालों में	७	५	३०	६६
१४२ पचेन्द्रिय अपर्याप्त सम्यग् दृष्टि मरने वालों में	६	१०	४५	८१
१४३ एकात नपुंसक बादर में	१४	२८	१०१	०
१४४ नो गर्भज शाश्वत में	७	३८	०	६६
१४५ अपर्याप्त सम्यग् दृष्टि में	६	१३	४५	८१
१४६ त्रस नो गर्भज एकात मि. में	१	८	१०१	३६
१४७ लवण समुद्र के अभापक में	—	३५	११२	—
१४८ स्त्री वेद वैक्रिय शरीर में	—	५	१५	१२८
१४९ संज्ञी एकात मिथ्यात्वी में	१	—	११२	३६
१५० तिर्यक् लोक में वचन योगी में	—	१३	१०१	३६
१५१ तिर्यक् लोक पंचेंद्रिय नपु. में	—	२०	१३१	—
१५२ तिर्यक्लोक पचेंद्रिय शाश्वत में	—	१५	१०१	३६
१५३ एकात नपुंसक वेद में	~~१४~~	~~३८~~	~~१०१~~	~~—~~
१५४ तेजो लेशी वचन योगी	+	16	101	35
सम्यक् दृष्टि में				
१५५ तिर्यक् लोक में प्रत्येक शरीरी बादर पर्याप्त में	—	१८	१०१	३६
१५६ तिर्यक् लोक बादर पर्याप्त में	—	१६	१०१	३६

१५७ मनुष्य एकांत मिथ्यात्वी अपर्याप्त में	–	–	१५७	–
१५८ नो गर्भज एकांत मिथ्या दृष्टि बादर में	–	२०	१०१	३६
१५९ तिर्यक् लोक प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	–	२२	१०१	३६
१६० तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी सम्यग् दृष्टि में	–	१८	९०	५२
१६१ तिर्यक् लोक पर्याप्त में	–	२४	१०१	३६
१६२ देवता सम्यग् दृष्टि में	–	–	–	१६२
१६३ स्त्री वेद अवधि दर्शन में	–	५	३०	१२८
१६४ प्रत्येक शरीरी नो गर्भज एकान्त मिथ्या दृष्टि में	१	२६	१०१	३६
१६५ पंचेन्द्रिय नपुंसक वेद में	१४	२०	१३१	–
१६६ अमापक मरने वालों में	–	३५	१३१	–
१६७ कृष्ण लेशी घ्राणेन्द्रिय वचन योगी में	३	१२	१०१	५१
१६८ कृष्ण लेशी वचन योगी में	३	१३	१०१	५१
१६९ तिर्यक् लोक नो गर्भज कृष्ण लेशी त्रस में	–	१६	१०१	५२
१७० तेजो लेशी वचन योगी में	–	५	१०१	६४

१७१ नो गर्भज कृष्ण लेशी त्रस मरने वालों में	३	१६	१०१	५१
१७२ कृष्ण लेशी स्त्री वेद सम्यक् दृष्टि में	—	१०	६०	७२
१७३ तेजो लेशी अभापक में	—	८	१०१	६४
१७४ नो गर्भज कृष्ण लेशी अपर्याप्त में	३	१६	१०१	५१
१७५ औदारिक शरीर चार लेशीमें	—	३	१७२	—
१७६ लवण समुद्र त्रस एकांत मिथ्यात्वी में	—	८	१६८	—
१७७ तिर्यक् लोक पंचेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	—	१५	६०	७२
१७८ तिर्यक् लोक चक्षु इन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	—	१६	६०	७२
१७९ तिर्यक् लोक समुच्चय नपुसक वेद में	—	४८	१३१	—
१८० तिर्यक् लोक सम्यग् दृष्टि में	—	१८	६०	७२
१८१ नो गर्भज चक्षु इन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	१३	६	—	१६२
१८२ नो गर्भज घ्राणेन्द्रिय सम्यग् दृष्टि में	१३	७	—	१६२
१८३ नो गर्भज सम्यग् दृष्टि में	१३	८	—	१६२

१८४ मिश्र योगी देवता वैक्रिय शरीर में	—	—	—	१८४
१८५ कृष्ण लेशी सम्यग् दृष्टि में	५	१८	६०	७२
१८६ नील लेशी सम्यग् दृष्टिमें	६	१८	६०	७२
१८७ अपर्याप्तक मनुष्य एक संस्थानी में	—	—	१८७	—
१८८ विभंग ज्ञानी देवताओं में	—	—	—	१८८
१८९ तिर्यक् लोक नो गर्भज त्रसमें	—	१६	१०१	७२
१९० लवण समुद्र चक्षु इन्द्रिय में	—	२२	१६८	—
१९१ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी नो गर्भज में	—	३८	१०१	५२
१९२ लवण समुद्र घ्राणेन्द्रिय में	—	२४	१६८	—
१९३ समुच्चय नपुंसक वेद में	१४	४८	१३१	५२
१९४ लवण समुद्र त्रस जीवों में	—	२६	१६८	—
१९५ सम्यग् दृष्टि वैक्रिय शरीरमें	१३	५	१५	१६२
१९६ तेजो लेशी सम्यग् दृष्टि में	—	१०	६०	६६
१९७ एक वेदी चक्षु इन्द्रिय में	१४	१२	१०१	७०
१९८ एकान्त मिथ्यात्वी अपर्याप्तमें	१	२२	१५७	१८
१९९ नो गर्भज वैक्रिय मिश्र योगी में	१४	१	—	१८४
२०० वचन योगी तीन शरीर में	७	८	८६	९९
२०१ एक वेदी त्रस में	१४	१६	१०१	७०

२०२ नो गर्भज विभंग ज्ञानी में	१४	—	—	१८८
२०३ नो गर्भज वैक्रिय शरीरी मिथ्यात्वी में	१४	१	—	१८८
२०४ एकांत मिथ्यात्व दृष्टि तीन शरीरी में	—	२९	१५७	१८
२०५ एकांत मिथ्यात्व दृष्टि मरने वालों में	—	३०	१५७	१८
२०६ लवण समुद्र बादर में	—	३८	१६८	—
२०७ मनयोगी मिथ्यात्वी में	७	५	१०१	९४
२०८ अनेक भववाले अवधि ज्ञान में	१३	५	३०	१६०
२०९ समुच्चये संख्यात काल के त्रस मरने वालों में	१	२६	१३१	५१
२१० एकान्त संज्ञी मिश्र योगी में	१३	५	४५	१४७
२११ तिर्यक् लोक नोगर्भज में	—	३८	१०१	७२
२१२ मनयोगी जीवों में	७	५	१०१	९९
२१३ एकान्त मिथ्यात्वी मनुष्य में	—	—	२१३	—
२१४ मिथ्यात्वी वैक्रिय मिश्र योगी में	१४	६	१५	१७९
२१५ औदारिक तेजो लेशी में	—	१३	२०२	—
२१६ लवण समुद्र में	—	४८	१६८	—
२१७ वचन योगी पचेन्द्रिय में	७	१०	१०१	९९
२१८ त्रस वैक्रिय मिश्र में	१४	५	१५	१८४

२१९ वैक्रिय मिश्र में	१४	६	१५	१८४
२२० वचन योगी में	७	१३	१०१	९९
२२१ अचक्षु बादर पर्याप्त में	७	[illegible]	१०१	[illegible]
२२२ पचेन्द्रिय शाश्वत में	[illegible]	१५	१०१	९९
२२३ वैक्रिय मिथ्यात्वी में	१४	६	१५	१८८
२२४ चक्षु इन्द्रिय शाश्वत में	७	१७	१०१	९९
२२५ प्रत्येक शरीर बादर पर्याप्त में	७	१८	१०१	९९
२२६ औदारिक शरीरी अपर्याप्त में	—	२४	२०२	—
२२७ नोगर्भज बादर अभापक में	७	२०	१०१	९९
२२८ त्रस शाश्वत में	७	२१	१०१	९९
२२९ प्रत्येक शरीरी पर्याप्त में	७	२२	१०१	९९
२३० त्रस औदारिक शरीरी अभापक में	—	१३	२१७	—
२३१ पर्याप्त जीवों में	७	२४	१०१	९९
२३२ पचेन्द्रिय औदारिक मिश्र योगी में	—	१५	२१७	—
२३३ वैक्रिय शरीर में	१४	६	१५	१९८
२३४ औदारिक मिश्र योगी घ्राणेन्द्रिय में	—	१७	२१७	—
२३५ औदारिक मिश्र योगी त्रस में	—	१८	२१७	—
२३६ मनुष्य की आगति नो गर्भज में	६	३०	१०१	९९
२३७ औदारिक शरीरी पंचेन्द्रिय मरने वालों में	—	२०	२१७	—

२३८ प्रत्येक शरीरी वादर शास्वत में	७	३१	१०१	६६
२३६ समदृष्टि मिश्र योगी में	१३	१८	६०	१४८
२४० शाश्वत वादर में	७	३३	१०१	६६
२४१ प्रत्येक शरीरी नोगर्भज मरने वालों में	७	३४	१०१	६६
२४२ वादर औदारिक मिश्र योगी में	—	२५	२१७	—
२४३ औदारिक एकान्त मिथ्यात्वी में	—	३०	२१२	—
२४४ तीन शरीर नो गर्भज मरने वालों में	७	३७	१०१	६६
२४५ संमूर्छिम असज्ञी त्रस में	१	२१	१७२	५१
२४६ प्रत्येक शरीरी शास्वत में	७	३६	१०१	६६
२४७ अवधि दर्शन में	१४	५	३०	१६८
२४८ तिर्यक् पंचेन्द्रिय अपर्याप्त में	—	१०	२०२	३६
२४६ तिर्यक् चक्षुइन्द्रिय अपर्याप्त में	—	११	२०२	३६
२५० भव्य सिद्धि शास्वत में	७	४३	१०१	६६
२५१ तिर्यक् त्रस अपर्याप्त में	—	१३	२०२	३६
२५२ औदारिक अभापक में	—	३५	२१७	—
२५३ मिश्र योगी मरने वालों में	७	३०	१३१	८५
२५४ स्त्री वेद मिश्र योगी में	—	१०	११६	१२८

२५५ पंचेन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	५	२१३	३६
२५६ चक्षु इन्द्रिय एकान्त मिथ्यात्वी में	१	६	२१३	३६
२५७ घ्राणेन्द्रिय एकान्त मिथ्यावी	१	७	२१३	३६
२५८ त्रस एकान्त मिथ्यात्वी में	१	८	२१३	३६
२५९ धर्म देव की आगति के घ्राणेन्द्रिय में	५	२४	१३१	९९
२६० पचेन्द्रिय तीन शरीरी सम्यक् दृष्टि में	१३	१०	७५	१६२
२६१ कृष्ण लेशी अशाश्वत में	३	५	२०२	५१
२६२ पुरुष वेदी सम्यक् दृष्टि में	—	१०	९०	१६२
२६३ प्रत्येक शरीरी समुचय असंज्ञी में	१	३९	१७२	५१
२६४ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी स्त्री वेद में	—	१०	२०२	५२
२६५ औदारिक शरीर मरने वालों में	—	४८	२१७	—
२६६ पंचेन्द्रिय कृष्ण लेशी अनहारी में	३	१०	२०२	५१
२६७ चक्षु इन्द्रिय कृष्ण लेशी अनाहारी में	३	११	२०२	५१

२६८ एक दृष्टि त्रस काय में	१	=	२१३	४६
२६६ तिर्यक् कृष्ण लेशी त्रस मरने वालों में	—	२६	२१७	२६
२७० बादर एकान्त मिथ्यात्वी में	१	२०	२१३	३६
२७१ मनुष्य की आगति के मिथ्यात्वी में	६	४०	१३१	६४०
२७२ मनुष्य की आगति के प्रत्येक शरीरी में	६	३६	१३१	६६
२७३ नील लेशी एकात मिथ्यात्वीमें	०	३०	२१३	३०
२७४ कृष्ण लेशी मिथ्यात्वी म	१	३०	२१३	३०
२७५ क्रिया वादी समोसरण में	१३	१०	६०	१६२
२७६ मनुष्य की आगति में	६	४०	१३१	६६
२७७ चार लेश्या वालों में	०	३	१७२	१०२
२७८ तिर्यक् लोक बादर अभापक में	०	२५	२१७	३७
२७६ चक्षु इन्द्रिय सम्यक् अनेक भव वालों में	१३	१६	६०	१६०
२८० पंचेन्द्रिय सम्यक् दृष्टि में	१३	१५	६०	१६२
२८१ चक्षु इन्द्रिय दृष्टि में	१३	१६	६०	१६२
२८२ घ्राणेन्द्रिय दृष्टि में	१३	१७	६०	१६२
२८३ त्रस काय दृष्टि में	१३	१८	६०	१६२
२८४ तिर्यक् लोक के पुरुष वेदमें	०	१०	२०२	७२
२८५ चक्षु इन्द्रिय एक संस्थान औदारिक में	०	१२	२७३	०

२८६ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थान औदारिक में　१　[illegible]　[illegible]　[illegible]

२८७ तिर्यक् तेजो लेशी में　०　१३　२०२　७२

२८८ तीन शरीरी मनुष्य में　०　०　२८८　०

२८९ त्रस एक संस्थान औदारिक में　०　१६　२७३　०

२९० एक दृष्टि वाले जीवों में　१　३०　२१३　४६

२९१ तिर्यक् लोक कृष्ण लेशी मरने वालों में　०　४८　२१७　२६

२९२ जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट सागर १ सठाण मरने वालों में　२　३८　१८७　६५

२९३ चक्षु इंद्रिय कृष्ण लेशी मरने वालों में　३　२२　२१७　५१

२९४ नो गर्भज की आगति के कृष्ण लेशी त्रस में　०　२६　२१७　५१

२९५ घ्राणेन्द्रिय कृष्ण लेशी मरने वालों में　३　२४　२१७　५१

२९६ एकांत संज्ञी में　१३　५　१३१　१४७

२९७ त्रस कृष्ण लेशी मरने वालों में　३　२६　२१७　५१

२९८ पंचेन्द्रिय पर्याप्त एक संस्थानी में　७　५　१८७　९९

२९९ चक्षु इंद्रिय पर्याप्त एक संस्था. में　७　६　१८७　९९

३०० स्त्री वेद एक संस्थानी में　०　०　१७२　१२८

३०१ एक संस्थानी औदारिक बादर में　--　२८　२७३　--

३०२ घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी अचरम मरने वालों में	७	१४	१८७	६४
३०३ मनुष्य में	—	--	३०३	-
३०४ नो गर्भज पचेन्द्रिय मिश्र योगी में	१४	५	१०१	१८४
३०५ सम्यक्० आगति कृष्ण लेशी बादर में	३	३४	२१७	५१
३०६ तियक् घ्राणेन्द्रिय मिश्र योगी में०		१७	२१७	७२
३०७ तियक् त्रस मिश्र योगी में	--	१८	२१७	७२
३०८ अशाश्वत मिथ्यात्वी में	७	५	२०२	६४
३०९ सम्यक् आगति एक संस्थानी त्रस में	७	१६	१८७	६६
३१० औदारिक तीन शरीरी एक संस्थानी में	-	३७	२७३	--
३११ औदारिक एक संस्थानी में	—	३८	२७३	--
३१२ नोगर्भज की आगति कृष्ण तीन शरीरी		[illegible]	२१७	[illegible]
३१३ अशाश्वत में	७	५	२०२	६६
३१४ कृष्ण लेशी स्त्री वेद में	--	१०	२०२	१०२
३१५ प्र० तीन शरीरी कृष्ण मरने वालों में	३	४४	२१७	५१
३१६ त्रस अनाहारी अचरम में	७	१३	२०२	

३५४ मिथ्या० एकान्त सख्या० स्थिति में			२१७	९४
३५५ तिर्यक् लोक पचेन्द्रिय एक संस्थानी	—	१०	२७३	७२
३५६ बादर मिथ्या० मरने वालों में	७	३८	२१७	९४
३५७ सम्य० आगति के बादर में	७	३४	२१७	९९
३५८ अभापक जीवों में	७	३५	२१७	९९
३५९ तिर्यक् घ्राणेन्द्रिय एक संस्थानी में		१४	२७३	७२
३६० त्रस	०	१०	२०२	१४८
३६१ ऊर्ध्व, तिर्यक, पुरुष वेद में	०	१६	२७३	७२
३६२ प्र. शरीरी मिथ्या. मरने वालों में	७	४४	२१७	९४
३६३ सम्य. आगति में	७	४०	२१७	९९
३६४ नो गर्भज की गति के बादर तीन शरीर में	२	३२	२२८	१०२
३६५ ज. अं. उ. २९ सागर की स्थिति के मरने वालों में	७	४८	२१७	९३
३६६ मिथ्या. मरने वालों में	७	४८	२१७	९४
३६७ प्र. शरीरी मरने वालों में	७	४४	२१९	९९
३६८ पुरुष एक संस्था. अनेक भववालों में	—	—	१७२	१९६

३६६ अधो.तिर्य.चक्षु.मिश्र योगीमें१४ १६ २१७ १२२

३७० कृष्ण लेशी सख्या, स्थिति
वालों में ३ ४८ २१७ १०२

३७१ समुच्चय मरने वालों में ७ ४८ २१७ ६६

३७२ तिर्य. कृष्ण. तीन शरीरी
बादर में - ३२ २८८ ५२

३७३ तिर्य. बादर एक सस्थानी में- २८ २७३ ७२

३७४ अ. ति. बादर कृष्ण
एकान्त भव धारणी देह ३ ३२ २८८ ५१

३७५ तिर्य पचेन्द्रिय कृष्णलेशी में- २० ३०३ ५२

३७६ एक संस्थानी मिश्र योगी
पंचेन्द्रिय अनेरियों में - ५ १८७ १८४

३७७ तिर्य. चक्षु. कृष्ण लेशी में - २२ ३०३ ५२

३७८ ~~मुसाफर की गति के पूर्व तीन शरीरी~~ १४ [illegible] २५ २१७ १२२

३७९ तिर्य. घ्राणेन्द्रिय कृष्ण लेशी - २४ ३०३ ५२

३८० पुरुष तीन शरीरी अचरम में - ५ १८७ १८८

३८१ तिपक्, त्रस कृष्ण लेशी में - २६ ३०३ ५२

३८२ " तीन शरीरी कृष्ण लेशी में- ४२ २८८ ५२

३८३ तिर्य. एक संस्थानी में - ३८ २७३ ७२

३८४ सज्ञी " १४ - १७२ १८८

३८५ नोगर्भज की गति के बादर में २ ३८ २४३ १०२

३८६ उर्ध्व. तिर्य. एकान्त भव धारणी देह पांच अचरम में	–	२०	२८८	७८
३८७ उर्ध्व. तिर्य. त्रस मिथ्या एकान्त भव धारणी देह में	–	२१	२८८	७८
३८८ अधो तिर्य. एकान्त भव धारणी देह बादर में	७	३२	२८८	६१
३८९ सज्ञी अभव्य तीन शरीरी अतिर्यंच में	१४	–	१८७	१८८
३९० पुरुष वेद तीन शरीरी में	–	५	१८७	१९८
३९१ पचेन्द्रिय कृष्ण. एक संस्थानी में	६	१०	२७३	१०२
३९२ तिर्य. बादर तीन शरीरी में	–	३२	२८८	७२
३९३ तिर्यंच बादर कृष्ण लेशी में	–	३८	३०३	५२
३९४ सज्ञी अभव्य तीन शरीरी	१४	५	१८७	१८८
३९५ तिर्यंच पंचेन्द्रिय में	–	२०	३ ३	७२
३९६ उर्ध्व. ति. एकान्त भव धारणी देह पंचेन्द्रिय में	–	२०	२८८	८८
३९७ तिर्य. चक्षु इन्द्रिय में	–	२२	३०३	७२
३९८ " घ्राण " "	–	२४	३०३	७२
३९९ अधो. ति. एकान्त भव धारणी देह में	७	४२	२८८	६१
४०० अभव्य पुरुष वेद में	–	१०	२०२	१८८

४०१ तिर्य. त्रस जीवों मे - २६ ३०३ ७२

४०२ ,, तीन शरीरी में - ४२ २८८ ७२

४०३ ,, कृष्ण लेशी में -- ४८ ३०३ ५२

४०४ सूक्ष्म. संज्ञी ~~असन् भवकाल~~
~~अनिर्वच में~~ १४ ५ ~~२७४~~ ~~२२८~~
१८७ १८८

४०५ ऊपर की गति के चक्षु,
मिश्र योगी में १० १६ २१७ १६२

४०६ ,, ,, ,, घ्राण ,, ,, १० १७ २१७ १६२

४०७ बादर प्र. कृष्ण एक
सस्थानी में ६ २६ २७३ १०२

४०८ ~~बादर कृष्ण~~ [illegible]

४०९ ~~तिर्यंच एकान्त छद्मस्थ में~~ [illegible]

४१० पुरुष वेद में - १० २०२ १६८

४११ तिर्यंच प्र. शरीरी बादर में - २६ ३०३ ७२

४१२ स्त्री गति के भङ्गी मिथ्या में १२ १० २०२ १८८

४१३ ~~संज्ञी मिथ्यात्वी में~~ [illegible] २०२ [illegible]

४१४ ~~प्रशस्त लेश्या में~~ [illegible] २०२ [illegible]

४१५ प्र. शरीरी कृष्ण.एक सस्थानी ६ ३४ २७३ १०२

४१६ अप्रशस्त लेशी तीन
शरीरी बा. एक सस्था. १४ २७ २७३ १०२

४१७ ~~प्र. बादर एक सस्था.~~ [illegible]

- एकान्त भव धारणी देह ७ २५ २७३ ११३

४१८ कृष्ण लशी एक सस्थानी में	६	३=	२७३	१०२
४१९ स्त्री गति कृष्ण. एक सस्थानी	४	३८	२७३	१०२
४२० मिश्र योगी बादर एकान्त असयम में	१४	२०	२०२	१८४
४२१ स्त्री गति अप्रशस्त लेशी प्र. शरीर एक संस्था.	१२	३४	२७३	१०२
४२२ स्त्री गति के संज्ञी में	१२	१०	२०२	१९८
४२३ समुच्चय संज्ञी में	१४	१०	२०२	१९८
४२४ प्र. शरीरी मिश्र योगी एकान्त असंयम में	१४	२३	२०२	१८४
४२५ मिश्र योगी एकान्त अपच्चकखाणी में	१४	२५	२०२	१८४
४२६ कृष्ण लेशी बा. प्र. तीन शरीरी में	६	३०	२८८	१०२
४२७ अप्रशस्त लेशी एक संस्थानी	१४	३८	२७३	१०२
४२८ कृष्ण लेशी बादर तीन शरीरी	६	३२	२८८	१०२
४२९ ,, ,, ,, एकान्त असंयम में	६	३३	२८८	१०२
४३० स्त्री गति के त्रस मिश्र जोगी अनेक भव वाले में	१२	१८	२१७	१८३
४३१ ,, ,, ,, मिथ्या.	१२	१८	२१७	१८४
४३२ त्रस मिश्र योगी संख्या भव वाले	१४	१८	२१७	१८३

४३३ „ „	१४	१८	२१७	१८४
४३४ कृ.. प्र तीन शरीरी में	६	३८	२८८	१०२
४३५ मिश्र योगी बा. मिथ्या.	१४	२५	२१७	१७६
४३६ श. तीन शरीरी अप्रशस्त लेशी	१४	३२	२८८	१०२
४३७ बा. एकान्त अपच अप्र-शस्त लेशी	१४	३३	२८८	१०२
४३८ कृष्ण. तीन शरीरी	६	४२	२८८	१०२
४३९ „ एकान्त अपच्च	६	४३	२८८	१०२
४४० मिश्र योगी बादर	१४	२५	२१७	१८४
४४१ अधो. ति. के चक्षु. तीन शरीरी में	१४	१७	२८८	१२२
४४२ प्र. तीन श.अप्रशस्त लेशी	१४	३८	२८८	१०२
४४३ प्र. मिश्र योगी	१४	२८	२१७	१८४
४४४ प्र. एकान्त मत्र धा. देह अनेक भववाले	७	३८	२८८	१११
४४५ अधोलोकतिर्यक्तीन शरीरी त्रस मिश्रयोगी में	१४	२१	२८८	१२२
४४६ अप्र. लेश्या तीन शरीरी	१४	४२	२८८	१०२
४४७ एकान्त असंयम अप्र-शस्त लेशी	१४	४३	२८८	१०२
४४८ „ मत धा.देह अनेक भववाले	७	४२	२८८	१११

४४९ स्त्रीगति के एकान्त भव देह	६	४२	२८८	११३
४५० भव सिद्धि एकांत भव, देह	७	४२	२८८	११३
४५१ ऊर्ध्वरी लेशी की गति कृष्ण प्रत्येक लेश शरीरी में	२	४४	३०३	१०२
४५२ शुक्ल पर गति अधो० ति० प्र० तीन शरीर	४	३८	२८८	१२२
४५३ स्त्री० गति कृ० प्र० शरीरी	४	४४	३०३	१०२
४५४ उर्ध्व ति० एकांत छद्० प० अनेक भव में	०	२०	२८८	१४६
४५५ कृष्ण० प्र० शरीरी	६	४४	३०३	१०२
४५६ अधो. ति. तीन शरीरी बादर	१४	३२	२८८	१२२
४५७ अप्रशस्त लेशी बादर	१४	३८	३०३	१०२
४५८ उर्ध्व. ति. के एक सस्थानीमें	०	३८	२७३	१४८
४५९ " " एकांत छद्मस्थ चक्षु.	०	२२	२८८	१४८
४६० " " " " घ्राण.	०	२४	२८८	१४८
४६१ अधो. " के चक्षु	१४	२२	३०३	१२२
४६३ " " घ्राण०	१४	२४	३०३	१२२
४६२ " " बादर एकांत छ० में	१४	३८	२८८	१२१
४६४ " " त्रस	१४	२६	३०३	१२२
४६५ स्त्री गति के अधो० ति० तीन शरीरी	१२	४२	२८८	१२२
४६६ अधो ति० तीन शरीरी	१४	४२	२८८	१२२

४६७ अप्रशस्त लेश्या में	१४	४८	३०३	१०२
४६८ उर्ध्व० ति. तीन शरीरी बादर	०	३२	२८८	१४८
४६९ " "एकांत असंयम "	०	३३	२८८	१४८
४७० अधो० " छद्म.स्त्री गति में	१२	४८	२८८	१२२
४७१ उर्ध्व० " पचेन्द्रिय में	०	२०	३०३	१४८
४७२ अधो०ति० एकांत छद्मस्थ	१४	४८	२८८	१२२
४७३ उर्ध्व०ति० के चक्षु इंद्रिय में	०	२२	३०३	१४८
४७४ " " घ्राण "	०	२४	३०३	१४८
४७५ " "एकांत छद्मस्थ बादर	०	३८	२८८	१४८
४७६ " "तीन श. अ. भव वाले	०	४२	२८८	१४६
४७७ " " नग में	०	२६	३०३	१४८
४७८ " " तीन शरीरी	०	४२	२८८	१४८
४७९ " " एकांत असंयम	०	४३	२८८	१४८
४८० " " एकान्त छद्म. प्र. शरीरी	—	४४	२८८	१४८
४८१ स्त्री गति के अधो. तिर्य.	१२	४४	303	१२२
४८२ उर्ध्व ति एकांत छद्म. पृथक् शरीरी में " " " अनेक भव वालों में	—	४८	२८८	१४६
४८३ अधो. तिर्य. प्र. शरीरी में	१४	४४	३०३	१२२
४८४ उर्ध्व तिर्य० एकान्त छद्मस्थ में " " " "	—	४८	२८८	१४८
प्र. शरीरी में	~~१२~~	~~४४~~	~~३०३~~	~~१२२~~
४८५ स्त्री गति का अ. " "	१२	४८	३०३	१२२

४८६ भुज पर गति के तीन शरीरी बादर मे	४	३२	२८८	१६२
४८७ अधो. तिर्य. लोक में	१४	४८	३०३	१२२
४८८ खेचर की गत ३ शरीरी बादर मे	६	३२	२८८	१६२
४८९ उर्ध्व. तिर्य बादर में	—	३८	३०३	१४८
४९० स्थल चर की गत का ३ शरीरी बादर मे	८	३२	२८८	१६२
४९१ खेचर गति पचेन्द्रिय में	६	२०	३०३	१६२
४९२ उरपर की गत का ३ शरीरी बादर मे	१०	३२	२८८	१६२
४९३ उर्ध्व. तिरि. प्रत्येक शरीरी अनेक भव वालों में	—	४४	३०३	१४६
४९४ खेचर की गत का प्रत्येक शरीरी ३ शरीरी मे	६	३८	२८८	१६२
४९५ उर्ध्व. तिरिछ. प्रत्येक शरीरी मे	—	४४	३०३	१४८
४९६ भुज पर गति के तीन शरीरीमें	४	४२	२८८	१६२
४९७ खेचर ,, त्रस में	६	२६	३०३	१६२
४९८ ,, ,, तीन शरीरी में	६	४२	२८८	१६२
४९९ ,, ,, में	—	४८	३०३	१४८
५०० स्थल चर के गत का ३ शरीरी मे	८	४२	२८८	१६२
५०१ त्रस एक संस्थानी में	१४	१६	२७३	१९८
५०२ उर पर गति तीन शरीरी में	१०	४२	२८८	१६२
५०३ तिर्यन्च की गत का घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३०३	१६२
५०४ खेचर ,, एकान्त छद्मस्थ में	६	४८	२८८	१६२
५०५ तिर्य. ,, त्रस में	१४	२६	३०३	१६२

५०६ सञ्ज्ञी ति. ,, तीन शरीरी में	१४	४२	२८८	१६२
५०७ अन्तर्द्वीप के पर्याप्त के अलब्धिया में	१४	४८	२४७	१६८
५०८ ऊपर ,, एकान्त सकषाय में	१०	४८	२८८	१६२
५०९ स्थल चर ,, प्र. शरीरी बादर में प्रत्येक शरीरी मे	८	३६	३०३	१६२
५१० तिर्यंचणी गति के एकान्त संयोगी में	१२	४८	२८८	१६२
५११ एक संस्थान प्र. शरीरी बादर में	१४	२६	२७३	१६८
५१२ तिर्यंच ,, ,,	१४	४८	२८८	१६२
५१३ एक संस्थान मिथ्यात्वी में	१४	३८	२७३	१८८
५१४ मध्य जीवों का स्पर्श करने वाले एकान्त छद्म चक्षु	१४	२७	२८८	१६८
५१५ तिर्यंचणी गति के बादर में	१२	३८	३०३	१६२
५१६ ,, ,, ,, घ्राण० छद्मस्थ घ्राणेन्द्रिय मे	१४	२४	२८८	१६०
५१७ ,, ,, स्त्री गति प्रत्येक शरीरी में	१२	३४	२७३	१६८
५१८ पचेन्द्रिय में एकान्त छद्म० अनेक भववाले	१४	२०	२८८	१६६
५१९ एक संस्थानी में प्रत्येक शरीरी मे	१४	३४	२७३	१९

५२० पंचे० एकान्त सकषायीमें	१४	२०	२८८	१९८
५२१ चौपदा की गतमें चक्षु असंयम में	~~१४~~ १८	~~१७~~ ४८	~~२८८~~ ३०३	~~१९८~~ १९२
५२२ एकान्त सकषायी चक्षु	१४	२२	२८८	१९८
५२३ एक सदा एणी मे ~~अभव्य भव वालों में~~	१४	३८	२७३	१९८
५२४ एकान्त सकसायी घ्राणेन्द्रिय मे घ्राण	१४	२४	२८८	१९८
५२५ पचेन्द्रिय मिथ्यात्वी में	१४	२०	३०३	१८८
५२६ " " त्रस में	१४	२६	२८८	१९८
५२७ तिर्यंच गति में	१४	४८	३०३	१६२
५२८ एकान्त छद्मस्थात्‌मिथ्यात्वी	१४	३८	२८८	१८८
५२९ स्त्री गति के त्रस मिथ्यात्वी	१२	२६	३०३	१८८
५३० उत्कृष्टा जीव का भेद स्पर्शनेवाला				
बादर प्र० शरीर एकात छद्म०	१४	३६	२८८	१९२
५३१ स्त्री गत का पंचे० संज्ञा० भव०	१२	२०	३०३	१९६
५३२ तीन शरीरी बादर में	१४	३२	२८८	१९८
५३३ एकान्त असंयम बादर में	१४	३३	२८८	१९८
५३४ " छद्म० अभव्य० प्र० शरीरी	१४	४४	२८८	१९८
५३५ पचेन्द्रिय जीवों में	१४	२०	३०३	१९८
५३६ स्त्री गति के बादर एकान्त सकषायी में	१२	३८	२८८	१९८
५३७ चक्षु इन्द्रिय में ~~घ्राणेन्द्रिय में~~	१४	२२	३०३	१९८
५४० स्त्रीकी गतका तीन शरीरी में	१२	४२	२८८	१९८

५३९ घ्राणेन्द्रिय में	१४	२४	३०३	१९८
५४० एकान्त छद्म० बादर में	१४	३८	२८८	१९८
५४१ त्रस जीवों में	१४	२६	३०३	१९८
५४२ तीन शरीरी एकान्त छद्म.	१४	४२	२८८	१९८
५४३ एकान्त असंयम में	१४	४३	२८८	१९८
५४४ प्र. श. एकान्त छद्म	१४	४४	२८८	१९८
५४५ ~~सम्य. मि. अलाद्धिया में~~	१४	३८	३०३	१९८
५४६ एकान्त छद्म. अनेक भववालों में	१४	४८	२८८	१९६
५४७ स्त्री गति प्र. श. मिथ्या.	१२	४४	३०३	१८८
५४८ एकान्त छद्मस्थ में	१४	४८	२८८	१९८
५४९ मिथ्या. प्र. शरीरी में	१४	४४	३०३	१८८
५५० सम्य. नरक के अलाद्धिया	१	४८	३०३	१९८
५५१ स्त्री गति मिथ्या.	१२	४८	३०३	१८८
५५२ एकेन्द्रिय पर्याप्त का अलद्धिया	१४	३७	३०३	१९८
५५३ मिथ्यात्वी	१४	४८	३०३	१८८
५५४ नव ग्रिय वेक पर्याप्त के अलद्धिया	१४	४८	३०३	१८९
५५५ जीवों के मध्य भेद स्पर्शन वाले	१४	४८	३०३	१९८
५५६ नरक पर्याप्ता के अलाद्धिया	७	४८	३०३	१९

५५७ स्त्री गति के प्र. शरीरी में	१२	४४	३०३	१६८
५५८ तिर्य. प.वैक्रियके अलद्धिया	१४	४३	३०८	१६८
५५६ प्रत्येक शरीरी में	१४	४४	३०३	१६८
५६० तेजोलेशी एकेन्द्रिय के अलद्धिया में	१४	४५	३०३	१६८
५६१ अनेक भववाले जीवों में	१४	४८	३०३	१६६
५६२ एकेन्द्रिय वैक्रिय श. अलद्धिया में	१४	४७	३०३	१६८
५६३ सर्व संसारी जीवों में	१४	४८	३०३	१६८

॥ इति जीवों की मार्गणा के ५६३ भेद सम्पूर्ण ॥





❀ चार कषाय ❀

सूत्र श्री पन्नवणाजी के पद चौदहवें में चार कपाय का थोकड़ा चला है उसमें श्री गौतम स्वामी वीर भगवान से पूछते हैं कि "हे भगवन्! कपाय कितने प्रकार की होती है?" भगवान कहते हैं कि 'हे गौतम! कपाय १६ प्रकार की होती है' १ अपने लिय २ दूसरे के निमित्त ३ तदुभया अर्थात् दोनों के लिये ४ खेत अर्थात् खुली हुई जमीन के लिये ५ वथ्थु कहता ढकी हुई जमीन के लिये ६ शरीर के निमित्त ७ उपाधि के लिये – निरर्थक ६ जानता १० अजानता ११ उपशान्त पूर्वक १२ अनुपशान्त पूर्वक १३ अनन्तानुबन्धी क्रोध १४ अप्रत्याख्यानी क्रोध १५ प्रत्याख्यानी क्रोध १६ संज्वलन का क्रोध एव १६ वें समुच्चय जीव आश्री और ऐसेही चौवीश दण्डक आश्री दोनों का इस प्रकार गुणा करने से(१६×२५) ४०० हुवे अब कपाय के दलिया कहते हैं, चणीया, उपचणीया, बान्ध्या, वेद्या, उदीरिया, निर्जर्या एव ६ ये भूत काल वर्तमान काल और भविष्य काल आश्री एव ६ अ ३ का गुणाकार करने से (६×३) १८ हुवे ये १८ जीव आश्री और १८ बहु जीव आश्री ३६ हुए ये समुच्चय जीव आश्री और चौवीश दण्डक आश्री (३६×२५) ६०० हुए ४०० ऊपर के और ६०

एवं १३०० क्रोध के, १२०० मान के, १२०० माया के, और १२०० लोभ के एवं ४२०० होते हैं।

॥ इति चार कषाय सम्पूर्ण ॥





प्रतिपदा (११) प्रातः काल (१२) संध्या काल (१३) मध्याह्न काल (१४) मध्य रात्रि (१५) अग्नि प्रकट होवे वह समय, और (१६) आकाश में धूल चढ़े वह समय अर्थात् धूल से सूर्य का प्रकाश मंद होजावे तब अस्वाध्याय होती है।

॥ इति अस्वाध्याय सम्पूर्ण ॥



३२ सूत्रों के नाम

११ अङ्गों के नाम–१ आचाराङ्ग २ सूत्रकृताङ्ग ३ स्थानाङ्ग ४ समवायाङ्ग ५ भगवती (विवाह प्रज्ञप्ति) ६ ज्ञाता (धर्म कथा) ७ उपासक दशाङ्ग ८ अन्तकृताङ्ग (अन्तगढ़) ९ अनुत्तरोपपातिक १० प्रश्न व्याकरण दशाङ्ग ११ विपाक।

१२ उपाङ्ग के नाम–१ उपपातिक (उववाई) २ राजप्रश्नीय ३ जीवाभिगम ४ प्रज्ञापना ५ जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति ६ चन्द्र प्रज्ञप्ति ७ सूर्य प्रज्ञप्ति ८ निरया वलिका ९ कल्प वतंसिका १० पुष्पिका ११ पुष्पचूलिका १२ वृष्णि दशा।

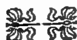
चार मूल सूत्र–१ दश वैकालिक २ उत्तरा ध्यान ३ नंदि ४ अनुयोग द्वार।

चार छेद सूत्र–१ वृहत् कल्प २ व्यवहार ३ निशीथ ४ दशाश्रुत स्कन्ध।

बत्तीशवा सूत्र आवश्यक सूत्र।

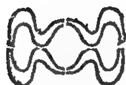
॥ इति ३२ सूत्रों के नाम सम्पूर्ण ॥





प्रतिपदा (११) प्रातः काल (१२) संध्या काल (१३) मध्याह्न काल (१४) मध्य रात्रि (१५) अग्नि प्रकट होवे वह समय, और (१६) आकाश में धूल चढ़े वह समय अर्थात् धूल से सूर्य का प्रकाश मंद होजावे तब अस्वाध्याय होती है।

॥ इति अस्वाध्याय सम्पूर्ण ॥



३२ सूत्रों के नाम

११ अङ्गों के नाम-१ आचाराङ्ग २ सूत्रकृताङ्ग ३ स्थानाङ्ग ४ समवायाङ्ग ५ भगवती (विवाह प्रज्ञप्ति) ६ ज्ञाता (धर्म कथा) ७ उपासक दशाङ्ग ८ अन्तकृताङ्ग (अन्तगड) ९ अनुत्तरोपपातिक १० प्रश्न व्याकरण दशाङ्ग ११ विपाक।

१२ उपाङ्ग के नाम-१ उपपातिक (उववाई) २ राजप्रश्नीय ३ जीवाभिगम ४ प्रज्ञापना ५ जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति ६ चन्द्र प्रज्ञप्ति ७ सूर्य प्रज्ञप्ति ८ निरया वलिका ९ कल्प वतंसिका १० पुष्पिका ११ पुष्पचूलिका १२ वृष्णि दशा।

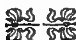
चार मूल सूत्र-१ दश वैकालिक २ उत्तरा ध्यान ३ नंदि ४ अनुयोग द्वार।

चार छेद सूत्र-१ वृहत् कल्प २ व्यवहार ३ निशीथ ४ दशाश्रुत स्कन्ध।

बत्तीसवा सूत्र आवश्यक सूत्र।

॥ इति ३२ सूत्रों के नाम सम्पूर्ण ॥





अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता द्वार

शिष्य (विनय पूर्वक नमस्कार करके पूछता है) हे गुरु ! जीव तत्व का बोध देते समय आपने कहा कि जीव उत्पन्न होते समय अपर्याप्ता तथा पर्याप्ता कहलाता है । सो यह कैसे ? कृपा करके मुझे यह समझाइये ।

गुरु–हे शिष्य ! जीव यह राजा है । आहार शरीर, इन्द्रिय, श्वासो श्वास, भाषा और मन ये ६ प्रजा हैं और ये चारों गति के जीवों को लागू रहने से ५६३ भेद माने जाते हैं । इनमें पहली आहार पर्याप्ति लागू होती है । यह इस प्रकार से है कि जब जीव का आयुष्य पूर्ण होवे तब वह शरीर छोड़ कर नई गति की योनि में उत्पन्न होने को जाता है । इसमें अविग्रह गति अर्थात् सीधी व सरल बान्ध कर आया हुवा होवे वो जीव जिस समय आया हुवा होवे उसी समय में आकर उत्पन्न होता है उस जीव को आहार का अन्तर पड़ता नहीं इस प्रकार का बन्धन वाला जीव " सीए आहारिए " अर्थात् सदा आहारिक कहलाता है । ऐसा भगवती सूत्र का न्याय है ।

अब दूसरा प्रकार विग्रह गति का बन्ध बान्ध कर आने वाले जीवों का कहा जाता है । इसके तीन प्रकार कितनेक जीव शरीर छोड़ने के बाद एक समय के अन्तर

से, कितनेक दो समय के अन्तर से, और कितनेक तीन समय के अन्तर से, अर्थात् चौथे समय में उत्पन्न हो सकते हैं। एव चार ही प्रकार से संसारी जीव उत्पन्न हो सकते हैं। यह दूसरी विग्रह अर्थात् विषम गति करके उत्पन्न होने वाले जीवों को एक दो, तीन समय उत्पन्न होते अन्तर पड़े, इसका कारण ग्रंथ कार आकाश प्रदेश की श्रेणी का विभागों की तरफ आकर्षित हो जाना बतलाते हैं। गुप्त भेद गीतार्थ गुरु गम्य है। ऐसे जीव जितने समय तक मार्ग में रोके जाते हैं उतने समय तक अनाहारिक (आहार के बिना) कहलाते हैं। ये जीव बान्धी हुई योनि के स्थान में प्रवेश करके उत्पन्न होवें (वास करे) उसी समय वो योनि स्थान-कि जो पुद्गल के यन्त्रारण से बन्धा हुवा होता है-उसी पुद्गल का आहार-कढाई में डाले हुए बड़े (भुजिये) के समान आहार करते हैं। उसका नाम—ओझ आहार किया हुआ कहलाता है। और सारे जीवन में एक ही बार किया जाता है। इस आहार को खेंच कर पचाने में एक अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है। यह पहली आहार प्राप्ति कहलाती है। (१) इस प्रकार इस आहार के रस का ऐसा गुण है कि उसके रज कण एकत्रित होने से सात धातु रूप स्थूल शरीर की आकृति बनती है। और ये मूल धातु जीवन पर्यन्त स्थूल शरीर को टिका रखते हैं। ऐसे शरीर

रूप फूल में सुगन्ध की तरह जीव रह सकते हैं। यह दूसरी शरीर पर्याप्ति कहलाती है इस आकृति को बान्धने में एक अन्तर्मुहूर्त लगता है (२) इस शरीर के दृढ बन जाने पर उसमें इन्द्रियों के अवयव प्रगट होते हैं । ऐसा होने में अन्तर्मुहूर्त का समय लगता है यह तीसरी इन्द्रिय पर्याप्ति कहलाती है । ३) उक्त शरीर तथा इन्द्रिय दृढ होने पर सूक्ष्म रूप से एक अन्तर्मुहूर्त में पवन का भ्रमण शुरू होता है यहीं से उस जीव के आयुष्य की गणना की जाती है यह चौथी श्वासोश्वास पर्याप्ति कहलाता है (४) पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त में नाद पैदा होता है। यह पाँचवीं भाषा पर्याप्ति कहलाती है (५) उपरोक्त पांच पर्याप्ति के समय पर्यन्त मन चक्र की मजबूती होती है । उनमें से मन स्फुरण हो कर सुगन्ध की तरह बाहर आता है उसमें से शरीर की स्थिति के प्रमाण में सूक्ष्म रीति से अमुक पदार्थों के रज कण आकर्षित करने योग्य शक्ति प्राप्त होती है। यह छठ्ठी मन पर्याप्ति कहलाती है (६) उक्त रीति से ६ अन्तर्मुहूर्त में ६ पर्याप्ति का बन्ध होता है यह सुन कर शिष्य को शङ्का होती है कि शास्त्रकार ६ पर्याप्ति का बन्ध होने में एक अन्तर्मुहूर्त बतलाते हैं यह कैसे ?

गुरु—हे वत्स ! सारा मुहूर्त दो घड़ी का होता है । इसका एक ही भेद है। परन्तु अन्तर्मुहूर्त के जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट एवं तीन भेद होते हैं दो समय से लगा कर

नव समय पर्यन्त की जघन्य अन्त मुहूर्त कह लाती है (१) तदन्तर अन्तर्मुहूर्त दस समय की इग्यारह समय की, एव एकेक समय गिनते हुवे अन्तर्मुहूर्त के असख्यात भेद होते हैं (२) और दो घडी (पहर) में एक समय शेष रहे तब वो उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है (३) छः पर्याप्ति का बन्ध होने में छः अन्तर्मुहूर्त लगते हैं। इससे जघन्य और मध्यम अन्तर्मुहूर्त समझना। और अन्त में छ पर्याप्ति मे जो एक अन्तर्मुहूर्त लगता है उसे उत्कृष्ट समझना। उक्त छ पर्याप्ति में से एकेन्द्रिय के चार (प्रथम) होती है। द्वि-इन्द्रिय, त्रि-इन्द्रिय, चोरिन्द्रिय व असज्ञी मनुष्य तथा तिर्यच पचेन्द्रिय के पाच। और संज्ञी पचेन्द्रिय के ६ पर्याप्ति होती है।

अपर्याप्ता का अर्थ

अपर्याप्ता के दो भेद-१ करण अपर्याप्ता २ लब्धि अपर्याप्ता। १ करण अपर्याप्ता के दो भेद-त्रि-इन्द्रिय वाले पर्या बान्ध कर ना रहे वहा तक करण अप-र्याप्ता और बान्ध कर रहे तब करण पर्याप्ता कहलाती है लब्धि अपर्याप्ता के दो भेद एकेन्द्रिय से लगा कर पंचे-न्द्रिय पर्यन्त, जिसके जितनी पर्याय होती है, उसके उतनी में से एकेक की अधूरी रहे, वहा तक लब्धि अपर्याप्ता कहलाती है। और अपनी जाति की हद तक पूरी

कहे गुणवाला निकलता है । दिन का संयोग शास्त्र द्वारा निषेध है । इतने पर भी अगर होवे (सन्तान) तो वो कुटुम्ब की तथा व्यावहारिक सुख व धर्म की हानि करने वाला निकलता है ।

गर्भ में पुत्र या पुत्री होने का कारणः-वीर्य के रज कण अधिक और रुधिर के थोड़े होवें तो पुत्र रूप फल की प्राप्ति होती है । रुधिर अधिक और वीर्य कम होवे तो पुत्री उत्पन्न होती है । दोनों समान परिमाण में होवे तो नपुंसक होता है । (अब इनका स्थान कहते हैं) माता के दाहिनी तरफ पुत्र, बायीं कुक्षि में पुत्री और दोनों कुक्षि के मध्य में नपुंसक के रहने का स्थान है । गर्भ की स्थिति मनुष्य गर्भ में उत्कृष्ट बारह वर्ष तक जीवित रह सक्ता है । बाद में मर जाता है । परन्तु शरीर रहता है, जो चौवीश वर्ष तक रह सक्ता है । इस सूखे शरीर के अन्दर चौवीशवें वर्ष नया जीव उत्पन्न होवे तो उसका जन्म अत्यन्त कठिनाई से होता है यदि नहीं जन्मे तो माता की मृत्यु होती है । संज्ञी तिर्यंच आठ वर्ष तक गर्भ में जीवित रहता है । अब आहार की रीति कहते हैं योनि कमल में उत्पन्न होने वाला जीव प्रथम माता पिता के मिले हुवे मिश्र पुद्गलों का आहार करके उत्पन्न होता है इसका अर्थ प्रजा द्वार से जानना विशेष इतना है कि यह आहार माता पिता का पुद्गल कहलाता है । इस आहार

से सात धातु उत्पन्न होती हैं । इनमें—१ रसी (राध) २ लोही ३ मास ४ हड्डी ५ हड्डी की मज्जा ६ चर्म ७ वीर्य और नसा जाल एवं सात मिल कर दूसरी शरीर पर्यां अर्थात् सूक्ष्म पुतला कहलाता है। छः पर्यां बधने के बाद वह बीजक (वीर्य) सात दिवस में चावल के धोवन समान तोलदार हो जाता है। चौदहवें दिन जल के परपोटे समान आकार में आता है। इकवीश दिन में नाक के श्लेश्म के समान और अठावीश दिन में अड़ताlीश मासे वजन में हो जाता है। एक महिने में बेर की गुठली समान अथवा छोटे आम की गुठली समान हो जाता है। इसका वजन एक करखण कम एक पल का होता है पल का परिमाण—सोलह मासे का एक करखण और चार करखण का एक पल होता है। दूसरे महिने कच्ची केरी समान, तीसरे महिने पकी केरी (आम) समान हो जाता है। इस समय से गर्भ प्रमाणे माता को डहोला (दोहद—भाव) उत्पन्न होने लगता है। और यह कर्म फलानुसार फलता है। इस के द्वारा गर्भ अच्छा है या बुरा इसकी परीक्षा होती है। चोथे महिने कणक के पिण्डे के समान हो जाता है इस से माता के शरीर की पुष्टि होने लगती है। पाचवें महिने में पांच अङ्कुर फूटते हैं जिनमें से दो हाथ, दो पाव, पाचवा मस्तक, छट्ठे महीने रुधिर, रोम नख और केश की वृद्धि होने लगती है। कुल ३।

आदि नव द्वार अपवित्र और सदा काल बहते रहते हैं। और स्त्री के दो थन (स्तन) और एक गर्भ द्वार ये तीन मिल कर कुल बारह द्वार सदाकाल बहते रहते हैं।

शरीर के अन्दर अठारह पृष्ट दण्डक नामकी पांसलियें हैं। जो गर्भवास की करोड़ के साथ जुड़ी हुई है। इनके सिवाय दो बासे की बारह कंडक पांसलियें हैं कि जिनके ऊपर सात पुड़ चमड़े के चढ़े हुवे होते हैं। छाती के पड़दे में दो (कलेजे) हैं जिनमें से एक पड़दे के साथ जुड़ा हुवा है और दूसरा कुछ लटकता हुवा है। पेट के पड़दे में दो अंतस (नल) हैं जिनमें से स्थूल नल मल-स्थान है और दूसरा सूक्ष्म लघु नीत का स्थान है। दो प्रणव स्थान अर्थात् भोजन पान पर गमाने (पचाने) की जगह है। दक्षिण पर गमे तो दुःख उपजे व बांये पर गमें तो सुख। सोलह आँतरा है, चार आगुल की ग्रीवा है। चार पल की जीभ है, दो पल की आखे हैं, चार पल का मस्तक है। नव आगुल की जीभ है, अन्य मान्यतानुसार सात आगुल की है। आठ पल का हृदय है पचीश पल का कलेजा है। अब सात धातु का प्रमाण व माप कहते हैं शरीर के अन्दर एक आढ़ा (टेढ़ा) रुधिर का और आधा आढ़ा मास का होता है। एक पाथा मस्तक का भेजा, एक आढ़ा लघुनीत, एक पाथा बड़ी नीत का है। कफ, पित्त, और श्लेष्म इन तीनों का एकेक कलव और

आधा कलव वीर्य का होता है । इन सबों को मूल धातु कहते हैं कि जिन पर शरीर का टिकाव है । ये सातों धातु जब तक अपने वजन प्रमाण रहते हैं तब तक शरीर निरोगी और प्रकाश मय रहता है। उनमें कमी बमी होने से शरीर तुरन्त रोग के आधीन हो जाता है।

नाड़ी का विवेचन—शरीर के अन्दर योग शास्त्र के अनुसार ७२००० नाडियें हैं। जिनमें से नवसो नाडियें बडी है, नव नाडी धवण के मम न बड़ी हैं जिनके धड़कन से रोग की तथा सचेत शरीर की परीक्षा होती है। दोनों पाव की घुटी के नीचे दो नाड़ी, एक नाभी की, एक हृदय की, एक तालवे की दो लवण की और दो हाथ की एव नव। इन सर्व नाड़ियों का मूल सम्बन्ध नाभि से है। नाभि से १६० नाड़ी पेट तथा हृदय ऊपर फैलकर ठेठ ऊंचे मस्तक तक गई हुई हैं। इनके बन्धन से मस्तक स्थिर रहता है। ये नाडिये मस्तक को नियम पूर्वक रस पहुंचाती हैं जिससे मस्तक सतेज आरोग्य और तर रहता है। जब नाड़ियों में नुकसान होता है तब आख, नाक कान और जीभ ये सब कमजोर रोगिष्ट बन जाते है व शूल, गुमड़े आदि व्याधियों का प्रकोप होने लगता है।

दूसरी १६० नाडी नाभी के नीचे चली हुई है जो जाकर पाव के तलीये तक पहुचीं हुई हैं। इनके आकर्षण से गमनागमन करने, खड़े होने व बैठने आदि में सहा-

यता मिलती है। ये नाडियें वहा तक रस पहुँचा कर शरीर आदि को आरोग्य रखती हैं। नाडी में नुकसान होने से संधिवा, पक्षा घात (लकवा) पैर आदि का कूटना, कलतर, तोड काट, मस्तक का दुखना व आधा-शीशी आदि रोगों का प्रकोप हो जाना है।

तीसरी १६० नाडी नामी से तिर्छी गई हुई है। ये दोनों हाथों की आंगुलियें तक चली गई हैं। इतना भाग इन नाडियों से मजबूत रहता है। नुकसान होने से पासा शूल, पेट के दर्द, मुह के व दांतो के दर्द आदि रोग उत्पन्न होने लगते हैं।

चौथी १६० नाडी नामी से नीचे मर्म स्थान पर फैली हुई हैं। जो अपान द्वार तक गई हुई है। इनकी शक्ति द्वारा शरीर का बन्धेज रहा हुवा है। इनके अन्दर नुकसान होने पर लघु नीत बडी नीत आदि की कबजि-यत (रुकावट) अथवा अनियमित छूट होने लग जाती है। इसी प्रकार वायु कृमि प्रकोप, उदर विकार, अर्श वादी प्रमेह पवनरोध पाडु रोग, जलोदर, कठोदर, भगदर, संग्र-हणी आदि का प्रकोप होने लग जाता है।

नामी से पच्चीश नाडी ऊपर की ओर श्लेष्म द्वार तक गई हुई हैं। जो श्लेष्म की धातु को पुष्ट करती हैं। इनमें नुकसान होने पर श्लेष्म, पीनस का रोग हो जाता है। अन्य पच्चीश नाडी इसी तरफ आकर पित्त

धातु को पुष्ट करती है । जिनमें नुकसान होने पर पित्त का प्रकोप तथा ज्वरादिक रोग की उत्पत्ति होने लग जाती है । तीसरी दश नाडिऐं वीर्य धारण करने वाली हैं जो वीर्य को पुष्ट करती हैं । इनके अन्दर नुकसान होने पर स्वप्न दोष सुर्ख-लाल पूर्णित पेशाब आदि विकारों से निर्बलता आदि में वृद्धि होती है ।

एव सर्व मिलाकर ७०० नाडी रस खेंच कर पुष्टि प्रदान करती हैं व शरीर को टिकाती हैं । नियमित रूप से चलने पर निरोग और नियम भङ्ग होने पर रोगी (शरीर) हो जाता है ।

इसके सिवाय दोसौ नाडी और गुप्त तथा प्रगट रूप से शरीर का पोषण करती हैं । एव सर्व नव सौ नाडियें हुईं ।

उक्त प्रकार से नव मास के अन्दर सर्व अवयव सहित शरीर मजबूत बन जाता है । गर्भाधान के समय से जो स्त्री ब्रह्मचारिणी रहती है उस का गर्भ अत्यन्त भाग्यशाली, मजबूत बन्धेज का, बलवान तथा स्वरूप वान होता है न्याय नीति वाला और धर्मात्मा निकलता है । उभय कुलों का उद्धार करके माता पिता को यश देने वाला होता है और उसकी पाचों ही इन्द्रियें अच्छी होती हैं । गर्भाधान से लगा कर सन्तति होने तक जो स्त्री निर्दुष्ट

बुद्धि रख कर कुशील (मैथुन) का सेवन करती है तो यदि गर्भ में पुत्री होवे तो उनके माता पिता दुष्ट में दुष्ट, पापी में पापी और रौरौ नरक के अधिकारी बनते हैं। गर्भ भी अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहता यदि जिन्दा रहे भी तो वो काना, कुबड़ा, दुर्बल, शक्ति हीन तथा खराब डीलडोल का होता है। क्रोधी, क्लेशी, प्रपंची और खराब चाल चलन वाला निकलता है। ऐसा समझ कर प्रजा (सन्तति) की हितइच्छने वाली जो माताएं गर्भ-काल में शील वन्ती रहती हैं। वे धन्य हैं।

विशेष में उपरोक्त गर्भावास के स्थानक में महा कष्ट तथा पीड़ा उठानी पड़ती है। इस पर एक दृष्टान्त दिया जाता है—जिस मनुष्य का शरीर कोढ तथा पित्त के रोग से गलता होवे ऐसे मनुष्य के शरीर में साड़ातीन क्रोड़ सूईयें अग्नि में गरम करके साडे तीन रोमों के अन्दर पिरोवे। पुनः शरीर पर निमक तथा चूने का जल छींटकर शरीर को गीले चमड़े से मढ़े व मढ कर धूप के अन्दर रखे सूखने (शरीर का चमड़ा) पर जो अत्यन्त कष्ट उसे होता है उस (दुख) को सिवाय भोगने वाले के और सर्वज्ञ के अन्य कोई नहीं जान सकता। इस प्रकार वेदना पहिले महीने गर्भ को होती है दूसरे महीने दुगनी एवं उत्तरोत्तर नववें महीने नव गुणी वेदना होती है। गर्भ वास की जगह छोटी है और गर्भ का शरीर (स्थूल) बड़ा है

अतः सुकड़ फार के आम के समान अधो मुख करके रहना पड़ता है। इस समय मस्तक छाती पर लगा हुवा और दोनों हाथों की मुट्ठियें आँखों के आड़े दी हुई होती है। कर्म योग से दूसरा व तीसरा गर्भ यदि एक साथ होवे तो उस समय की सकड़ाई व पीड़ा वर्णनातीत है। माता की विष्टा (मल) गर्भ के नाक पर से होकर गिरती है। खराब से खराब गन्दगी में पड़ाहुवा होता है। बैठी हुई माता खड़ी होवे तो उस समय गर्भ को ऐसा मालूम होता है कि मैं आसमान में फेंका जा रहा हूँ नीचे बैठते समय ऐसा मालूम होता है कि मैं पाताल में गिराया जा रहा हू चलती समय ऐसा जान पड़ता है कि मसक में भरे हुवे दहीके समान डोलाया जा रहा हू रसोई करने के समय गर्भ को ऐसा मालूम होता है कि मै ईंट की भट्ठी में गल रहा हू। चक्की के पास पीसने के लिये बैठने पर गर्भ जाने कि मै कुम्हार के चाक पर चढाया जा रहा हूँ। माता चित्ती सोवे तब गर्भ को मालूम होवे कि मेरी छाती पर सवा मन की शिला पड़ी हुई है। मैथुन करने के समय गर्भ को ऊखल मूसल का न्याय है। इस प्रकार माता पिता के द्वारा पहुचाये हुवे तथा गर्भ स्थान के एव दो प्रकार के दुखों से पीडित, कुटाये हुवे खण्डाये हुवे और अशुचि से तर बने हुवे इस गर्भ की दया शीलवान माता पिता बिना कौन देख सके? अर्थात् पापी स्त्री पुरुष (विधि गर्भ से अज्ञात)

नक्षत्र और विदेश गमन

शिष्य नमस्कार करके पूछता है कि हे गुरु! नक्षत्र कितने? तारे कितने? इनका आकार कैसा? वे नक्षत्र ज्ञान शक्ति बढ़ाने में क्या मददगार है? उन नक्षत्र के समय विदेश गमन करने पर किस पदार्थ का उपभोग करके चलना चाहिये व उस से किस फल की प्राप्ति होती है?

गुरु–(एक साथ छः ही सवालों का जवाब देते हैं)

हे शिष्य! नक्षत्र अठावीश है, जिन सबों के आकार अलग अलग है। ये आकार इन नक्षत्रों के ताराओं की संख्या के ऊपर से समझे जा सक्ते हैं। इन के आधार से स्वाध्याय, ध्यान करने वाले मुनि रात्रि की पेरसियों का माप अनुमान कर आत्मस्मरण में प्रवृत्त हो सक्ते हैं। इन में से दश नक्षत्र ज्ञान शक्ति में वृद्धि करने वाले हैं। ज्ञान शक्ति वाले महात्मा अपने संयम की वृद्धि निमित्त तथा भव्य जीवों पर उपकार करने के लिए विदेश में विचरते हैं जिससे अनेक लाभ होने की संभावना है। अतः इन नक्षत्रों का विचार करके गमन करने पर धर्म वृद्धि का कारण होता है। यही नक्षत्रों का फल है। चलने के समय भिन्न भिन्न पदार्थों का उपभोग करने में आता है। उन पदार्थों के साथ मनोभावनाओं का रस मिल कर मिश्रित

रस बनता है। तदनन्तर वे उपभोग में लिए जाते हैं। इसे–शकुन बाधा–कहते हैं। इनका मतलब ज्ञानी ही जानते हैं उन के सिवाय अज्ञानी प्राणी इस सर्वोत्तम तत्त्व को मिथ्याभिमान की परिणति तरफ प्रवृत्त कर के उपजीविका के साधन रूप उनका गैर उपयोग करते हैं। यह अज्ञानता का लक्षण है।

अठावीश नक्षत्रों में पहला नक्षत्र अभीच है इस के तारे तीन हैं जिन का गाय के मस्तक तथा मुख समान आकार होता है। उत्तम जाति के स्वादिष्ट व सौरभ दार (सुगन्धित) वृक्ष के कुसुमों का उपभोग करके अर्थात् गुलकन्द खाकर गमन करने से अनेक लाभ होते है। (१) अन्य मत से अश्विनी नक्षत्र प्रथम गिना जाता है। यह बहुसूत्री गम्य है।(२)दूसरे श्रवण नक्षत्र के तीन तारे हैं। आकार काम धेनु (कावड) समान है। इसके योग में खीर खाण्ड खाकर पश्चिम सिवाय अन्य तीन दिशाओं में जाने से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। (३) तीसरे धनिष्टा नक्षत्र के पाच तारे है। इसका आकार तोते के पिंजरे समान है। इसके संयोग से मक्खण आदि खा कर, दक्षिण सिवाय अन्य दिशाओं में गमन करने से कार्य सफल होता है। (४) शतभीखा नक्षत्र के सौ तारे हैं। इसका आकार बिखरे हुवे फूल के समान है इस के योग पर सारे (आखे) तुवर का भोजन

खाकर दक्षिण सिवाय दिशाओं में जाने से भय की सभा-वना रहती है। (५) पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के दो तारे हैं। इसका आकार अर्ध वाव्य के भाग समान है। इस योग पर करेलेकी शाक खाकर चलने पर लड़ाई होवे परन्तु इससे ज्ञानवृद्धि की संभावना भी है। (६) उत्तरा भाद्र-पद नक्षत्र के दो तारे हैं। इसका आकार भी पूर्वा भाद्र पद समान होता है। इस में दामकपूर (वंशलोचन) खाकर पिछले पहर चलने से सुख होता है। यह नक्षत्र दीक्षा के योग्य है। (७) रेवती नक्षत्र के बत्तीश तारे हैं। इसका आकार नाव समान है। इस के समय स्वच्छ जल का पान करके चलने से विजय मिलती है। (८) अश्वनी नक्षत्र के तीन तारे हैं। घोड़े के स्कन्ध जैसा आकार है। मटर (वटले) की फली का शाक खाकर चलने से सुख शान्ति प्राप्त होती है। (९) भरणी नक्षत्र के तीन तारे हैं। और इसका आकार स्त्री के मर्मस्थान वत् है। तेल, चावल खा कर चलने पर सफलता मिलती है (१०) कृतिका नक्षत्र के छः तारे होते हैं। जिसका नाई की पेटी समान आकार होता है। गाय का दूध पीकर चलने पर सौभाग्य की वृद्धि होती है तथा सत्कार मिलता है। (११) रोहिणी नक्षत्र के पाच तारे होते हैं। व गाडे के ऊंट समान इसका आकार होता है। इस समय हरे मूग खा कर चलने पर मार्ग में यात्रा के योग्य सर्व सामग्री अल्प परिश्रम से प्राप्त हो जाती

है-यह नक्षत्र दीक्षा देने योग्य है। (१२) मृग शीर्ष नक्षत्र के तीन तारे होते हैं। इसका आकार हिरण के सिर समान होता है। इलायची खाकर चलने पर अत्यन्त लाभ होता है। यह नक्षत्र नये विद्यार्थी की तथा नये शास्त्रों का अभ्यास करने वालों की ज्ञानवृद्धि करने वाला है। (१३) आर्द्रा नक्षत्र का एक ही तारा है। इसका रुधिर के बिन्दु समान आकार है। इस समय नवनीत (मारवन) खाकर चलने से मरण, शोक, संताप तथा भय एवं चार फल की प्राप्ति होती है। परन्तु ज्ञान अभ्यासियों को सत्वर उत्तम फल देने वाला निकलता है व वर्षा ऋतु के मेघ-बादल की अस्वाध्याय दूर करता है। (१४) पुनर्वसु नक्षत्र के पाच तारे हैं। इसका आकार तराजू के समान है। घृत शकर खाकर चलने पर इच्छित फल मिलते हैं (१५) पुष्य नक्षत्र के तीन तारे हैं। जिसका आकार वधमान (दो जुड़े हुवे रामपात्र) समान होता है। खीर खाण्ड खाकर चलने से अनिममित लाभ की प्राप्ति होती है। व इस नक्षत्र में किये हुवे नये शास्त्र का अभ्यास भी बढ़ता है। (१६) अश्लेषा नक्षत्र के छः तारे हैं। इसका आकार ध्वजा समान है। इस समय सीताफल खाकर चले तो प्राणान्त भय की सम्भावना होती है परन्तु यदि कोई ज्ञान अभ्यास, हुन्नर, कला, शिल्प शास्त्र, आदि के अभ्यास में प्रवेश करे तो जल तथा तेल के बिन्दु

उस के ज्ञान का विस्तार होता है । (१७) मघा नक्षत्र के सात तारे होते हैं जिनका आकार गिरे हुवे किले की दीवार समान है केसर खाकर चलने पर बुरी तरह से आकस्मिक मरण होता है । (१८) पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के दो तारे होते हैं । इनका आकार आधे पलङ्ग जैसा होता है इस समय कोठिंवड़े (फल) की शाक खाकर चलने से विरुद्ध फल की प्राप्ति होती है परन्तु शास्त्र अभ्यासी के लिए श्रेष्ठ है । (१६) उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के भी दो तारे होते हैं और आकार भी आधे पलङ्ग जैसा होता है इस समय कच्चा नामक वनस्पति की फली की शाक खाकर चलने पर सहज ही क्लेश मिलता है । यह नक्षत्र दीक्षा लायक है । (२०) हस्त नक्षत्र के पांच तारे हैं । इसका आकार हाथ के पंजे समान है सिंगोडे खाकर उत्तर दिशा सिवाय अन्य तरफ चलने से अनेक लाभ हैं व नये शास्त्र अभ्यासियों को अत्यन्त शक्ति देने वाला है । (२१) चित्रा नक्षत्र का एक ही तारा है खिले हुवे फूल जैसा उसका आकार है । दो पहर दिन चढने बाद मूंग की दाल खाकर दक्षिण दिशा सिवाय अन्य दिशाओं में जाने पर लाभ होता है व ज्ञान वृद्धि होती है (२२) स्वाति नक्षत्र का एक तारा है इसका आकार नाग फनी समान होता है आम खाकर जाने पर लाभ लेकर कुशल क्षेम पूर्वक जल्दी घर लौट आसके हैं । (२३) विशाखा

नक्षत्र के पाच तारे होते हैं जिसका आकार घोड़े की लगाम (दामणी) जैसा है इस योग पर अलसी फल खाकर जाने से विकट काम सिद्ध हो जाते हैं। (२४) अनुराधा नक्षत्र के चार तारे है। इसका आकार एकावली हार समान होता है। चावल मिश्री खाकर जाने से दूर देश यात्रा करने पर भी कार्य सिद्धि कठिनता से होती है। (२५) जेष्टा नक्षत्र के तीन तारे है इनका आकार हाथी के दात जैसा है इस समय कलथी की शाक अथवा कोल कुट (घोर कुट) खाकर चलने से शीघ्र मरण होता है। (२६) मूल नक्षत्र के इग्यारह तारे है इसका बींछे जैसा आकार है मूला के पत्र की शाक खा कर जाने से कार्य सिद्धि में बहुत समय लगता है। इस नक्षत्र को बींछीड़ा भी कहते है। ज्ञान अभ्यासियों के लिये तो यह अच्छा है। (२७) पूर्वाषाढ नक्षत्र के चार तारे हैं। हाथी के पॉव समान इसका आकार है इस समय खीर ऑवला खाकर जाने से क्लेश कुसम्प व अशान्ति प्राप्त होती है परन्तु शास्त्र अभ्यासियों को अच्छी शक्ति देने वाला होता है (२८) उत्तराषाढ नक्षत्र के चार तारे होवे हैं इसका बैठे हुवे सिंह समान आकार है। इस समय पके हुवे बीली फल खाकर जाने से सर्व साधन सहित कार्य सिद्धि होती है यह नक्षत्र दीक्षित करने योग्य है।

ऊपर बताये हुवे अट्ठावीश नक्षत्रों में से पाचवां, बारहवाँ, , सोलहवां, अठारहवां,

एकवीशवा, छव्वीशवां, और सत्तावीशवां एवं दश नक्षत्रों में से अमुक नक्षत्र चन्द्र के साथ योग जोड़ कर गमन करते होवें व उस दिन गुरुवार होवे तब उस समय मिथ्याभिमान दूर कर के विनय भक्ति पूर्वक गुरुवन्दन करे व आज्ञा प्राप्त करके शास्त्राध्ययन करने में तथा वाचन लेने में प्रवृत होवे ऐसा करने से सत्वर ज्ञान वृद्धि होती है परन्तु याद रखना चाहिये कि छः वार छोड कर गुरुवार लेवे दो अष्टमी, दो चउदश, पूर्णिमा, अमावस्या और दो एकम ये सर्व तिथि छोड़ कर शेष अन्य तिथियों में अच्छा चौघडिया देख कर सूर्य-गमन में प्रारम्भ करे।

विशेष में गणीपद (आचार्य), वाचक पद (उपाध्याय) अथवा बड़ी दीक्षा देने के शुभ प्रसंग में दो चोथ, दो छठ, दो अष्टमी, दो नवमी, दो बारस, दो चउदश, पूर्णिमा, तथा अमावस्या आदि चौदह तिथिया निषेध हैं। इन के सिवाय की अन्य तिथि अथवा वार, नक्षत्र योग्य है। ऐसे काल के लिए गणी विधि प्रकरण ग्रंथ का न्याय है। अष्टमी को प्रारम्भ करने पर पढाने वाला मरे अथवा वियोग पड़े अमावस्या के दिन प्रारम्भ करने पर दोनों मरे और एकम के दिन प्रारम्भ करने से विद्या की नास्ति होवे। ऐसा समझ कर तिथि वार नक्षत्र चौघडिया देख कर गुरु सम्मुख ज्ञान लेना चाहिये। यह श्रेय का कारण है।

❀ इति नक्षत्र और विदेश गमन सम्पूर्ण ❀

❀ पांच देव ❀

(भगवती सूत्र, शतक १२ उद्देश ६)

गाथा

नाम गुण उवाए, ठी वीयु चयण संचीठणा,
अन्तर अप्पा बहुयं च, नव भेए देव दाराए ।१।

१ नाम द्वार, २ गुण द्वार, ३ उववाय द्वार ४ स्थिति द्वार ५ ऋद्धि तथा विकुर्वणा द्वार ६ चवन द्वार ७ सचिठण द्वार ८ अन्तर द्वार ६ अल्प बहुत्व द्वार ।

१ नाम द्वारः–१ भवि द्रव्य देव २ नर देव ३ धर्म देव ४ देवाधि देव ५ भाव देव ।

२ गुण द्वारः–मनुष्य तथा तिर्यंच पचेन्द्रिय में से जो देवता में उत्पन्न होने वाले हैं उन्हें भवि द्रव्य देव कहते हैं २ चक्रवर्ती की ऋद्धि भोगने वालों को नर देव कहते है ।

चक्रवर्ती की रिद्धि का वर्णन—

नव निधान, चौदह रत्न, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख घोड़े, चौरासी लाख रथ, छन्नु क्रोड़ पायदल, बत्तीश हजार मुकुट बन्ध राजे, बत्तीश हजार सामानिक राजे, सोलह हजार देवता सेवक, चौसठ हजार स्त्री, तीन सो साठ रसोइये, वीश हजार सोना के आगर

३ धर्म देव के गुणः—आठ प्रवचन माता का सेवन करने वाले, नववाड़ विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले, दशविध यति धर्म का पालन करने वाले, बारह प्रकार की तपस्या करने वाले, सतरह प्रकार के संयम का आचरण करने वाले, बावीश परिषह को सहन करने वाले, सत्तावीश गुण सहित, तेंतीश अशातना के टालने वाले, छन्नु दोष रहित आहार पानी लेने वाले, को धर्म देव कहते हैं।

४देवाधिदेव के गुणः—चोंतीश अतिशय सहित विराजमान पैंतीश वचन (वाणी) के गुण सहित, चौसठ इन्द्र के द्वारा पूज्यनीक, एक हजार और अष्ट उत्तम लक्षण के धारक अठारह दोष रहित व बारह गुणों सहित होवे हैं उन्हें देवाधि देव कहते हैं। अठारह दोषो के नामः—१ अज्ञान २ क्रोध ३ मद ४ मान ५ माया ६ लोभ ७ रति ८ अरति ९ निद्रा १० शोक ११ असत्य १२ चोरी १३ भय १४ प्राणि वध १५ मत्सर १६ राग १७ क्रीड़ा-प्रसग १८ हास्य। १२ गुणो के नामः—१ जहा २ भगवन्त खडे रहें, बैठें समोसरें वहा २ दश बोलों के साथ भगवन्त से बारह गुणा ऊंचा तत्काल अशोक वृक्ष उत्पन्न हो जाता है और भगवन्त के मस्तक पर छाया करता है। २ भगवन्त जहा २ समोसरें वहा २ पाच वर्ण के अचेत फूलों की वृष्टि होती है जो गिरकर घुटने के बराबर ढेर लगा देते हैं। ३ भगवन्त की योजन पर्यन्त वाणी फैल कर सवों के

मन का सन्देह दूर करती है । ४ भगवन्त के चौवीश जोड चामर ढुलते है ५ स्फटिक रत्न मय पाद पीठ सहित सिंहासन स्वामी के आगे हो जाता है भामण्डल अम्बोडे के स्थान पर तेज मण्डल विराजे व दशोंदिशाओं का अन्धकार दूर करे ७ आकाश में साडाबारह क्रोड देव-दुन्दभि बजे ८ भगवन्त के ऊपर तीन छत्र ऊपरा-उपरी विराजे ६ अनन्त ज्ञान अतिशय १० अनन्त अर्चा अतिशय-परम पूज्यपना ११ अनन्त वचन अतिशय १२ अनन्त अपायापगम अतिशय (सर्व दोष रहित पना) एव बारह गुणों करसहित (५)भाव देव- १भवनपति २ वाण व्यन्तर ३ ज्योतिषी ४ वैमानिक एव चार प्रकार के देव भाव देव कहलाते है ।

२ उववाय द्वार:-१ भवि द्रव्य देव मे मनुष्य तिर्यंच १, युगलिये २, और सर्वार्थ सिद्ध ३ एव तीन स्थान छोड़ कर शेष सर्व स्थानों के आकर उत्पन्न होते हैं २ नर देव मे चार जाति के देव और पहली नरक एव पाच स्थान के आकर उत्पन्न होते है ३ धर्म देव में छट्ठी सातवीं नरक, तेउ, वायु, मनुष्य तिर्यंच व युगलिये एव छ स्थानके छोड़ कर शेष सर्व स्थान के आकर उत्पन्न होते है ४ देवाधिदेव मे पहली दूसरी, तीसरी नरक, और किल्विषी छोड़ कर वैमानिक देव के आकर उपजते हैं ५ भाव देव में तिर्यंच, पचे

आराधिक विराधिक

(श्री भगवतीजी सूत्र, शतक पहेला, उद्देश दूसरा)

१ असंजति भव्य द्रव्यदेव जघन्य भवनपति उत्कृष्ट नव ग्रीयवेक तक जावे ।

२ आराधिक साधु जघन्य पहले देवलोक तक उत्कृष्ट सर्वार्थ सिद्ध विमान तक जावे ।

३ विराधिक साधु ज० भवन पति उत्कृष्ट पहले देवलोक तक जावे ।

४ आराधिक श्रावक जघन्य पहले देवलोक तक उत्कृष्ट बारहवें देवलोक तक जावे ।

५ विराधिक श्रावक जघन्य भवनपति उत्कृष्ट ज्योतिषी तक जावे ।

६ असंजति तिर्यंच ज० भवनपति उत्कृष्ट वाण व्यन्तर तक जावे ।

७ तापस के मतवाले ज० भवनपति उत्कृष्ट ज्योतिषी तक जावे ।

८ कदर्पीया साधु जघन्य भवनपति उत्कृष्ट पहला देवलोक तक जावे ।

९ अंबड़ सन्यासी के मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट पाँचवें देवलोक तक जावे ।

१० जमाली के मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट छट्टे देवलोक तक जावे।

११ सज्ञी तिर्यंच जघन्य भवनपति उत्कृष्ट आठवें देवलोक तक जावे।

१२ गोशाले के मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट बारहवें देवलोक तक जावे।

१३ दर्शन विराधिक स्वलिंगी साधु जघन्य भवनपति उत्कृष्ट नव ग्रीयवेक तक जावे।

१४ आजीविका मतवाले जघन्य भवनपति उत्कृष्ट बारहवें देवलोक तक जावे।

॥ इति आराधिक विराधिक का थोकड़ा सम्पूर्ण ॥





तीन जाग्रिका (जागरण)

श्री वीर भगवन्त को गौतम स्वामी पूछने लगे कि हे भगवन् ! जाग्रिका कितने प्रकार की होती है ?

भगवान्-हे गौतम ! जाग्रिका तीन प्रकार की होती है १ धर्म जागरण २ अधर्म जागरण ३ सुदखु जागरण।

१ धर्म जागरण के चार भेद-१ आचार धर्म २ क्रिया धर्म ३ दया धर्म ४ स्वभाव धर्म।

१ आचार धर्म के पांच भेदः-१ ज्ञानाचार २ दर्शनाचार ३ चारित्राचार ४ तपाचार ५ वीर्याचार इन में से ज्ञानाचार के ८ भेद, दर्शनाचार के ८ भेद, चारित्रा चार के ८ भेद, तपाचार के १२ भेद, वीर्याचार के ३ भेद एवं ३९ भेद हुवे।

१ ज्ञानाचार के ८ भेद-१ ज्ञान सीखने के समय ज्ञान सीखे २ ज्ञान लेने के समय विनय करे ३ ज्ञान का बहु मान करे ४ ज्ञान पढने के समय यथा शक्ति तप करे ५ अर्थ तथा गुरु को गोपे (छिपावे) नहीं, ६ अक्षर शुद्ध ७ अर्थ शुद्ध ८ अक्षर और अर्थ दोनों शुद्ध।

२ दर्शनाचार के ८ भेदः-१ जैन धर्म में शङ्का नहीं करे २ पाखण्ड धर्म की वांछा नहीं करे ३ करणी के फल में संदेह नहीं रक्खे ४ पाखण्डी के आडम्बर देख कर

मोहित नहीं होवे ५ स्वधर्म की प्रशसा करे ६ धर्म से भ्रष्ट होने वाले को मार्ग पर लावे ७ स्वधर्म की भक्ति करे ८ धर्म को अनेक प्रकार से दिपावे कृष्ण, श्रेणिक समान।

३ चारित्राचार के ८ भेदः-१ इर्या समिति २ भाषा समिति ३ एपणा समिति ४ आयाण भण्ड मत निखेवणा समिति ५ उचार पासवण खेल जल संघाण परिठावणिया समिति ६ मन गुप्ति ७ वचन गुप्ति ८ काय गुप्ति ।

४ तपाचार के बारह भेदः-छे बाह्य और छे अभ्यन्तर एव बारह। छे बाह्य तप के नाम-१ अनशन २ उणोदरी ३ वृत्ति संक्षेप ४ रस परित्याग ५ काय क्लेश ६ इन्द्रिय प्रति सलीनता। छे अभ्यन्तर तप के नामः- १ प्रायश्चित २ विनय ३ वैयावच ४ सज्झाय ५ ध्यान ६ कायोत्सर्ग एव सर्व १२ हुवे। इन में से इहलोक पर लोक के सुख की वान्छा रहित तप करे अथवा आजीविका रहित तप करे एव तप के बारह आचार जानना।

५ वीर्याचार के तीन भेदः-१ बल व वीर्य धार्मिक कार्य में छिपावे नहीं २ पूर्वोक्त ३६ बोल में उद्यम करे ३ शक्ति अनुसार काम करे एवं ३६ भेद आचार धर्म के कहे।

२ क्रिया धर्मः-इस के ७० भेदों के नाम-चार प्रकार की पिण्ड विशुद्धि ४, ५ समिति, १२ भ.

साधु की बारह पडिमा, ५ पांच इन्द्रिय निग्रह, २५ प्रकार की पडीलेहना, ३ गुप्ति, ४ अभिग्रह एवं ७० ।

३ दया धर्म के आठ भेदः-१ स्वदया अर्थात् अपनी आत्मा को पाप से बचावे २ पर दया याने अन्य जीवों की रक्षा करे ३ द्रव्य दया याने देखा देखी दया पाले अथवा लज्जा से जीव की रक्षा करे तथा कुल आचार से दया पाले ४ भाव दया अर्थात् ज्ञान के द्वारा जीव को आत्मा जान कर उस पर अनुकम्पा लावे व दया लाकर जीव की रक्षा करे ५ व्यवहार दया श्रावक को जैसी दया पालने के लिए कहा है वो पाले घर के अनेक काम काज करने के समय यतना रक्खे ६ निश्चय दया याने अपनी आत्मा को कर्म बन्ध से छुड़ावे । विवेचन'-पुद्गल पर वस्तु है । इनके ऊपर से ममता हटा कर उसका परिचय छोड़े, अपने आत्मिक गुण में लीन रहे, जीव का कर्म रहित शुद्ध स्वरूप प्रगट करे, यह निश्चय दया है। चौदह गुणस्थानक के अन्त में यह दया पाई जाती है । ७ स्वरूप दया अर्थात् किसी जीव को मारने के लिये उसे (जीव को) पहिले अच्छी तरह से खिलाते हैं व शरीर पुष्ट करते है, सार समाल लेवे हैं । यह दया ऊपर की तथा दीखावा मात्र है । परन्तु पीछे से उस जीव को मारने के परिणाम है । यह उत्तराध्ययन सूत्र के सातवें अध्ययन में बकरे के अधिकार से समझना ।

८ अनुय ध दया वह जीव को त्रास देवे परन्तु अन्तर्हृदय से उसको सुख देने की भावना है। जैसे–माता पुत्र का रोग दूर करने के लिये कडुक औषधि पिलाती है परन्तु हृदय से उसका हित चाहती है। तथा जैसे पिता पुत्र को हित शिक्षा देने के लिये ऊपर से तर्जना करे, मारे परन्तु हृदय से उसको सद्गुणी बनाने के लिये उसका हित चाहता है।

४ स्वभाव धर्म–जीव व अजीव की प्रणति के दो भेद–१ शुद्ध स्वभाव से और २ कर्म के संयोग से अशुद्ध प्रणति। इनसे जीव को विषय कषाय के संयोग स विभावना होती है। जिसे दूर करके जीव अपने ज्ञानादिक गुण में रमन करे उसे स्वभाव धर्म कहते है। और पुद्गल का एक वर्ण एक गन्ध, एकरस, दो फरस (स्पर्श) में रमण होवे तो यह पुद्गल का शुद्ध स्वभाव धम जानना। इसके सिवाय चार द्रव्य में स्वभाव धर्म है परन्तु विभाव धर्म नहीं। चलन गुण, स्थिर गुण, अवकाश गुण, वर्तना गुण आदि ये अपने २ स्वभाव को छोड़ते नहीं अतः ये शुद्ध स्वभाव धर्म है। एव चार प्रकार की धर्म जाग्रिका कही।

२ अधर्म जाग्रिका–ससार में धन कुटुम्ब परिवार आदि का सयोग मिलना व इसके लिये आरम्भादिक करना, उन पर दृष्टि रखना व रक्षा करना आदि को अधर्म जाग्रिका कहते है।

सुदखु जाग्रिका–सु कहेता अच्छी व दखु।

चतुराई की जाग्रिका । यह श्रावक को होती है कारण कि सम्यक् ज्ञान, दर्शन सहित धन कुटुम्बादिक तथा विषय कषाय को खराब जानता है । देश से निवृत्त हुवा है, उदय भाव से उदासीन पने हैं, तीन मनोरथ का चिंतन करता है । इसे सुदखु जाग्रिका कहते हैं ।

॥ इति तीन जाग्रिका सपूर्ण ॥



६ काय के भव

श्री गौतम स्वामी वीर भगवान को वंदना नमस्कार करके पूछने लगे कि हे भगवन् ! छे काय के जीव अन्त-र्मुहूर्त में कितने भव करते है ?

भगवान–हे गौतम ! पृथ्वी, अप, अग्नि, वायु आदि जघन्य एक भव करे उत्कृष्ट बारह हजार आठ सो चोवीश भव एक अन्तर्मुहूर्त में करे और वनस्पति के दो भेद–१ प्रत्येक २ साधारण । प्रत्येक जघन्य एक भव उत्कृष्ट बावीश हजार भव करे व साधारण जघन्य एक भव और उत्कृष्ट पेंसठ हजार पांचसो छत्तीश भव करे । बेइन्द्रिय जघन्य एक भव उत्कृष्ट ८० भव करे । त्रि–इन्द्रिय जघन्य एक उत्कृष्ट साठ भव करे । चौरिन्द्रिय जघन्य एक उत्कृष्ट चालीश भव करे । असंज्ञी तिर्यंच जघन्य एक भव उत्कृष्ट चोवीश भव करे । संज्ञी तिर्यंच व संज्ञी मनुष्य जघन्य तथा उत्कृष्ट एक भव करे ।

॥ इति छकाय के भव सम्पूर्ण ॥



अवधि पद

(सूत्र श्री पन्नवणाजी पद तेंतीशवा)

इसके दश द्वार—१ भेद द्वार २ विषय द्वार ३ संठाण द्वार ४ आभ्यन्तर और बाह्य द्वार ५ देश थकी व सर्व थकी ६ अनुगामी ७ हायमान वर्धमान ८ अवट्ठीया ९ पडवाई १० अपडवाई ।

१ भेद द्वार—नेरिये व देव भव प्रत्ये देखे अर्थात् उत्पन्न होने के समय से ही उन्हें अवधि ज्ञान होता है तिर्यंच व मनुष्य क्षयोपशम भाव से देखे ।

२ विषय द्वारः—पहेली नरक का नेरिया जघन्य साढे तीन गाउ देखे उत्कृष्ट चार गाउ, दूसरी नरक का नेरिया जघन्य तीन गाउ उत्कृष्ट साढे तीन गाउ, तीसरी नरक का नेरिया जघन्य अढाई गाउ उत्कृष्ट तीन गाउ, चौथी नरक का नेरिया जघन्य दो गाउ उत्कृष्ट अढाई गाउ, पाचवी नरक का जघन्य डेढ गाउ उत्कृष्ट दो गाउ, छट्ठी नरक का जघन्य एक गाउ उत्कृष्ट डेढ गाउ, सातवीं नरक का जघन्य आधा गाउ उत्कृष्ट एक गाउ देखे । भवन पति जघन्य पच्चीश योजन तक देखे उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊंचा—पहेले दूसरे देवलोक तक, नीचे—तीसरी नरक के तले तक और तीर्छा—पल के आयुष्य वाले संख्यात द्वीप समुद्र देखे व सागर के आयुष्य वाले असं-

रूयात द्वीप समुद्र देखे। वाण व्यन्तर व नव निकाय के देवता जघन्य पच्चीश योजन उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊंचा—पहेले देव लोक तक नीचे-पाताल कलश तक व तिर्यक सख्यात द्वीप समुद्र देखे। ज्योतिषी जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन प्रकार से देखे ऊंचा—अपने विमान की ध्वजा तक, नीचे-नरक के तले तक और तिर्यक पल के आयुष्य वाले संख्यात द्वीप समुद्र देखे व सागर के आयुष्य वाले असख्यात द्वीप समुद्र देखे। तीसरे देवलोक से सर्वार्थसिद्ध विमान तक के देवता ऊंचा अपने २ विमान की ध्वजा तक' देखे तिर्यक् असख्यात द्वीप समुद्र देखे नीचे-तीसरे चौथे देवलोक वाले दूसरी नरक के तले पर्यन्त, पांचवें छट्टे वाले तीसरी नरक के तले तक, नववें से बारहवें देवलोक तक वाले पांचवीं नरक के तले पर्यन्त, नव ग्रीयवेक वाले छट्ठी नरक के तले तक चार अनुत्तर विमान वाले सातवीं नरक के तले तक और सर्वार्थ सिद्ध के देवता सातवीं नरक के तले तक, तिर्यंच जघन्य आंगुल के असख्यातवें भाग उत्कृष्ट सख्यात द्वीप समुद्र देखे मनुष्य जघन्य आंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट समग्र लोक और अलोक में लोक जितने असख्य त भाग देखे।

२ संठाण द्वारः—नेरिये त्रिपाई के आकार वत् देखे. भवन पति पालने के आकार वत् वाण व्यन्तर झालर के आकार समान, ज्योतिषी पडहे के आकार वत् देखे।

देव लोक के देवता मृदंग के आकार वत् देखे, नवग्रीयवेक के देवता फूलों की चगेरी समान देखे, और अनुत्तर विमान के देवता कुंवारी कन्या की कंचुकी समान देखे।

४ आभ्यन्तर-बाह्य द्वार—नेरिये व देव आभ्यन्तर देखे, तिर्यंच बाह्य देखे मनुष्य आभ्यन्तर और बाह्य दोनों देखे कारण कि तीर्थंकरों को अवधि ज्ञान जन्म से ही होता है।

५ देश और सर्व थकी—नारकी,देवता और तिर्यंच देश थकी और मनुष्य सर्व थकी।

६ अनुगामी और अनानुगामी—नारकी देवता का अवधि ज्ञान अनुगामी (अर्थात् साथ २ रहने वाला) अवधि ज्ञान होता है। तिर्यंच और मनुष्य का अनुगामी तथा अनानुगामी दोनों प्रकार का होता है।

७ हायमान वर्धमान और ८ अवठिया द्वारः— नारकी देवता का अवधि ज्ञान अवठीया होवे (न तो घटे और न वढे, उतना ही रहता है) मनुष्य और तिर्यंच का हायमान, वर्धमान तथा अवठीया एव तीनों प्रकार का अवधि ज्ञान होता है।

९-१० पड़वाई और अपड़वाई द्वारः—नारकी देवता का अवधि ज्ञान अपडवाई होता है और मनुष्य व तिर्यंच का अवधि ज्ञान पडवाई तथा अपड़वाई दोनों प्रकार का होता है।

॥ इति अवधि पद सम्पूर्ण ॥

ॐ धर्म ध्यान ॐ

उववाई सूत्र पाठ।

सेकिंत धम्मे झाणे? चउविहे, चउ पडयारे पन्नते तजहा; आणाविज्जए १ अवाय विज्जए २ विवाग विजए ३ सठाण विजए ४, धम्मस्सण झाणस्स चत्तारि लक्खणा पन्नता तजहा, आणरूइ १ निसग्ग रूई २ सूत्तरूई ३ उवएस रूई ४; धम्मस्सण झाणस्स चत्तारि आलम्बण पन्नत्ता तजहा, वायणा १ पुछणा २ परियट्टणा ३ धम्मकहा ४; धम्मस्सण झाणस्स चत्तारि अणुप्पेहा पन्नता तजहा, एगत्त्वाणुप्पेहा १ अणिच्चाणुप्पेहा २ असरणाणु पेहा ३ ससारणुप्पेहा।

भावार्थ–धर्म ध्यान के चार भेद १ आणा-विज्जए कहेता वीतराग की आज्ञा का विचार चिंतन करे। समकित सहित बारह व्रत, श्रावक की इग्यारह पडिमा, पच महाव्रत, भिक्षु (साधु) की बारह पडिमा, शुभ ध्यान, शुभ योग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप व छकाय की रक्षा एव वीतराग की आज्ञा का आराधन करे। इसमें समय मात्र का प्रमाद नहीं करे। और चतुर्विध तीर्थ के गुणों का कीर्तन करे। इस प्रकार धर्म ध्यान का यह पहला भेद खतम हुवा।

२ अवायविजए-संसार के अन्दर जीव को जिसके द्वारा दुख प्राप्त होता है उनका चिंतवन करे अथवा मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय अशुभ योग तथा अठारह पाप स्थानक, काय की हिंसा एवं इनको दुखों का कारण जानकर आश्रव मार्ग का त्याग करे व संवर मार्ग को आदरे। जिस से जीव को दुख नहीं होवे।

३ विपाग विजए-जीव को किस प्रकार सुख दुख की प्राप्ति होती है अर्थात् वो इन्हें किस प्रकार भोगता है इसपर चिंतन व मनन करे। जीव जितने रस के द्वारा जैसे शुभा शुभ ज्ञानावरणीयादिक कर्मों का उपार्जन किया है वैसे ही शुभा शुभ कर्मों के उदय से जीव सुख दुख का अनुभव करता है। सुख दुख अनुभव करते समय किसी पर राग द्वेष नहीं करना चाहिये किन्तु समता भाव रखना चाहिये। मन वचन काया के शुभ योग सहित जैन धर्म के अन्दर प्रवृत होना चाहिये जिससे जीव को निराबाध परम सुख की प्राप्ति होवे।

४ संठाण विजए: तीनों लोकों के आकार का स्वरूप चिंतवे। लोक का स्वरूप इस प्रकार है-यह लोक सुपइठक के आकार वत् है। जीव-अजीवों से समग्र भरा हुवा है। असंख्यात योजन की क्रोड़ा क्रोड़ प्रमाणे तीर्छा लोक है जिसके अन्दर असंख्यात द्वीप समुद्र है असंख्यात वाणव्यन्तर के नगर है, असंख्यात ज्योतषी के विमान हैं

तथा असंख्यात ज्योतिषी की राजधानीये हैं । इसमें-अढाई द्वीप के अन्दर तीर्थंकर जघन्य २० उत्कृष्ट १७०, केवली जघन्य दो क्रोड़ उत्कृष्ट नव क्रोड़, तथा साधु जघन्य दो हजार क्रोड़ उत्कृष्ट नव हजार क्रोड होते हैं । जिन्हें वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि समाणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेईयं पज्जुवास्सामि। तीर्छे लोक में असंख्याते श्रावक श्राविका हैं उन के गुण ग्राम करना चाहिए तीर्छे लोक से असंख्यात गुणा अधिक ऊर्ध्व लोक है । जिसमें बारह देवलोक नव ग्रीय वेक पांच अनुत्तर विमान एवं सर्व मिला कर चोराशी लाख सत्ताणु हजार तेवीश विमान है । इनके ऊपर सिद्ध शीला है जहां पर सिद्ध भगवान विराज मान हैं । उन्हें वंदामि जाव पज्जुवास्सामि । ऊर्ध्व लोक से नीचे अधोलोक है जिसमें चोराशी लाख नरक वासे है और सातक्रोड़ बहत्तर लाख भवन पति के भवन है । ऐसे तीन लोक के सर्व स्थानक को समकित रहित करणी विना सर्व जीव अनन्ती वार जन्म मरण द्वारा फरस कर छोड चुके हैं । ऐसा जानकर समकित सहित श्रुत और चारित्र धर्म की आराधना करनी चाहिये जिसमे अजरामर पद की प्राप्ति होवे।

धर्म ध्यान के चार लक्षणः-१ आणारूई-वीतराग की आज्ञा अङ्गीकार करने की रुचि उपजे उसे आणा रुई कहते हैं ।

२ निसग्ग रूईः—जीव को स्वभाव से ही तथा

जाति स्मरणादिक ज्ञान से श्रुत सहित चारित्र धर्म करने की रुचि उपजे इसे निसग्ग रुई कहते हैं।

३ सूत्त रुई—इसके दो भेद– १ अंग पविठ २ अंग बाहिर। आचारांगादि १२ अंग अंगपविठ इनमें से ११ अंग कालिक और बारहवां अंग दृष्टिवाद यह उत्कालिक। अंग बाहिर के दो भेद–१ आवश्यक २ आवश्यक व्यतिरिक्त। आवश्यक–सामायकादिक छ अध्ययन उत्कालिक तथा उत्तराध्ययनादिक कालिक सूत्र। उववाई प्रमुख उत्कालिक सूत्र सुनने की तथा पढने की रुचि उत्पन्न होवे उसे सूत्र रुचि कहते हैं।

४ उवएसरुई—अज्ञान द्वारा उपार्जित कर्मों को ज्ञान द्वारा खपावे, ज्ञान से नये कर्म न बान्धे, मिथ्यात्व द्वारा उपार्जित कर्मों को समकित द्वारा खपावे, समकित के द्वारा नवीन कर्म नहीं बान्धे। अव्रत से बन्धे हुवे कर्मों को व्रत द्वारा खपावे व व्रत से नये कर्म न बान्धे। प्रमाद द्वारा उपार्जित कर्मों को अप्रमाद से खपावे और अप्रमाद के द्वारा नये कर्म न बान्धे। कषाय द्वारा बन्धे हुवे कर्मों को अकषाय द्वारा खपावे व अकषाय के द्वारा नये कर्म न बान्धे। अशुभ योग से उपार्जित कर्मों को शुभ योग से खपावे व शुभ योग के द्वारा नये कर्म न बान्धे। पांच इंद्रिय के स्वाद रुप आश्रव से उपार्जित कर्म तप रुप संवर द्वारा खपावे और तप रुप संवर से नवीन कर्म न बांधे,

अतः अज्ञानादिक आश्रव मार्ग का त्याग करके ज्ञानादिक सवर मार्ग का आराधन करें एवं तीर्थंकरों का उपदेश सुनने की रुचि उपजे। इसे उपदेश रुचि (उवएस रुचि) तथा उगाढ रुचि भी कहते है।

धर्म ध्यान के चार अवलम्बन—वायणा, पुछणा, परियट्टणा और धर्म कथा।

१ वायणा—विनय सहित ज्ञान तथा निर्जरा के निमित्त सूत्र के व अर्थ के ज्ञाता गुर्वादिक के समीप सूत्र तथा अर्थ की वाचनी लेवे उसे वायणा कहते है।

२ पूछणा—अपूर्व ज्ञान प्राप्त करने के लिए तथा जैन मत दीपाने के लिए, सदेह दूर करने लिए अथवा अन्य की परीक्षा के लिए यथा योग्य विनय सहित गुर्वादिक से प्रश्न पूछे उसे पूछणा कहते हैं।

३ परियट्टणा—पूर्व पठित जिन भाषित सूत्र व अर्थों को अस्खलित करने के लिए तथा निर्जरा निमित्त शुद्ध उपयोग सहित शुद्ध अर्थ व सूत्र की बारबार स्वाध्याय करे उसे परियट्टणा कहते हैं।

४ धर्म कथा—जैसे भाव वीतराग ने परुपे हैं वैसे ही भाव स्वयं अंगीकार करके विशेष निश्चय पूर्वक शङ्का, कखा, वितिगच्छा रहित अपनी निर्जरा के लिए व पर-उपकार निमित्त सभा के अन्दर वे भाव वैसे ही परुपे, उसे धर्म कथा कहते हैं। इस प्रकार की धर्म कथा कहने प...

सुन कर श्रद्धा रखने वाले दोनों जीव वीतराग की आज्ञा के आराधक होते हैं। इस धर्म कथा–संवर रुप वृक्ष की सेवा करने से मन वान्छित सुख रुप फल की प्राप्ति होती है। संवर रुपी वृक्ष का वर्णन–जिस वृक्ष का समकित रुप मूल है, धैर्य रुप कन्द है, विनय रुप वेदिका है, तीर्थंकर तथा चार तीर्थ के गुण कीर्तन रुप स्कन्ध है, पाच महाव्रत रुप बडी शाखा है, पचीश भावना रुप त्वचा है, शुभ ध्यान व शुभ योग रुप प्रधान पल्लव पत्र है, गुण रुप फूल है, शीयल रुप सुगन्ध है, आनन्द रुप रस है, और मोक्ष रुप प्रधान फल है। मेरु गिरि के शिखर पर जैसे चूलिका विराजमान है वैसे ही समकिती के हृदय में संवर रुपी वृक्ष विराजमान होता है। इस संवर रुपी वृक्ष की शीतल छाया जिसे प्राप्त होती है उस जीव के भवोभव के पाप टल जाते है और वह अतुल सुख प्राप्त करता है।

उक्त चार प्रकार की कथा विस्तार पूर्वक कहे उसे धर्म कथा कहते हैं। अक्षेवणी, विक्षेपणी, संवेगणी और निर्वेगणी आदि ४ कथाओं का विस्तार चोथे ठाणे दूसरे उद्देशे के अन्दर है।

धर्म ध्यान की चार अणुप्पेहा–जीव द्रव्य तथा अजीव द्रव्य का स्वभाव स्वरुप जानने के लिए सूत्र का अर्थ विस्तार पूर्वक चिंतवें उसे अणुप्पेहा कहते है।

१ अणुप्पेहा–एकत्वाणुप्पेहा–मेरी आत्मा निश्चय

नय से असख्यात प्रदेशी अरुपी सदा सउपयोगी व चैतन्य रुप है। सर्व आत्मा निश्चय नय से ऐसी ही हैं। और व्यवहार नय से आत्मा अनादि काल से अचैतन्य जड़ वर्णादि २० रुप सहित पुद्गल के सयोग से त्रस व स्थावर रुप लेकर अनेक नृत्य कार नट के समान अनेक रुप वाली है। वह त्रस का त्रस रुप में प्रवर्ते तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट दो हजार सागर जाजेरा तक रहे और स्थावर का स्थावर रुप में प्रवर्ते तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट (काल से) अनन्ती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी व क्षेत्र से अनता लोक प्रमाणे अलोक के आकाश प्रदेश होवे इतने काल चक्र उत्सर्पिणी अवसर्पिणी समझना। इस के असंख्यात पुद्गल परावर्त्तन होते है। आंगुल के असख्यातवें भाग में जितने आकाश प्रदेश आवे उतने असंख्यात पुद्गल परावर्त्तन होते हैं। स्थावर के अन्दर पुद्गल लेकर खेला। यह व्यवहार नय से जानना। त्रस स्थावर में रह कर स्त्री पुरुष नपुंसक वेद में पुद्गल के सयोग में खेला, प्रवर्त हुवा व अनेक रूप धारण किये जैसे-किसी समय देवी रूप में भवनपत्यादिक से इशान देव लोक तक इन्द्र की इंद्राणी सुरूपनन्ती अप्सरा हुई जघन्य १० हजार वर्ष उत्कृष्ट ५५ पल्योपम देवाङ्गना के रूप में अनन्ती वार जीव खेला। देवता रूप में भवनपत्यादिक से जाव नव ग्रीयवेक तक महर्धिक महा

शक्तिवन्त इन्द्रादिक लोक पाल प्रमुख रूपवान देदीप्यवान् वछित भोग संयोग में प्रवर्ते हुवा जघन्य १० हजार वर्ष उत्कृष्ट ३१ सागरोपम एव अनन्ती वार भोगा । इन्द्र महाराज के रूप में एक भव के अन्दर ७ पल्योपम की देवी, बावीश क्रोड़ा क्रोड़, पिच्चाशी लाख क्रोड़, एकोतर हजार क्रोड़, चार से अठावीश क्रोड़, सत्तावन लाख चौदह हजार दोसो अठ्यासी ऊपर पाच पल्य की ८, इतनी देवियों के साथ भोग करने पर भी तृप्ति न हुई । मनुष्य के अन्दर स्त्री पुरुष रूप में हुवा । देव कुरू उत्तर कुरू के अन्दर युगल युगलानी हुवा जहा महामनोहर रूप मनवाछित सुख भोगे । दश प्रकार के कल्प वृक्षों से सुख भोगे । स्त्री पुरुष का क्षण मात्र के लिये भी वियोग नहीं पड़ा । ३ पल्योपम तक निरन्तर सुख भोगे । हरिवास रम्यक वास में २ पल्योपम, हेमवय हिरण्य वय क्षेत्र के अन्दर १ पल्य तक, छप्पन अन्तरद्वीपा के अन्दर पल्योपम का असख्यातवा भाग, युगल युगलानी रूप में अनती वार स्त्री पुरुष के रुप में खेला परन्तु आत्म तृप्ति नहीं हुई । चक्रवर्ती के घर स्त्री रत्न के रुप में लक्ष्मी समान रुप अनंती वार यह जीव पाकर खेला, परन्तु तृप्त नहीं हुवा । वासुदेव मंडलीक राजा व प्रधान व्यवहारीया के घर स्त्री रुप में मनोज्ञ सुखों में पूर्व क्रोडादिक के आयुष्य पने प्रवर्त हुवा । यही जीव मनुष्य के अन्दर कुरुपवान, दुर्भागी

नीच कुल, दरिद्री भर्तार की स्त्री रुप में, अलक्ष रुद दुर्भागिणी पने और नट पने प्रवर्त हुवा । तोभी मनुष्य पने स्त्री पुरुष के अवतार पूरे नहीं हुवे । तिर्यंच पचन्द्रिय जलचरादि के अन्दर स्त्री वेद से प्रवर्त हुवा । यो जीव सात नरक में, पाच एकेन्द्रिय में, तीन विकलेन्द्रिय तथा असज्ञी तिर्यंच मनुष्य के अन्दर नियमा नपुमक वेद से तथा सज्ञी तिर्यंच मनुष्य के अन्दर भी जीव नपुसक वेद से प्रवर्त हुवा परमार्थ लागठ स्त्री वेद से प्रवर्त हुवा। उत्कृष्ट ११० पल्य और पृथक पूर्व क्रोड तक स्त्री वेद में खेला जघन्य आयुष्य भोगने के आश्री अन्तर्मुहूर्त, पुरुष वेद में उत्कृष्ट पृथक् सो सागर जाजेरा तक खेला। जघन्य आयुष्य भोगन के आश्री अन्तर्मुहूर्त, नपुमक वेद उत्कृष्ट अनन्त काल चक्र असख्यात पुद्गल परावर्तन तक खेला । जहां गया वहा अकेला पुद्गल के सयोग से अनेक रुप परावर्त्तन किये । यह सर्व रुप व्यवहार नय से जानना। इस प्रकार के परिभ्रमण को मिटाने वाले श्री जैन धर्म के अन्दर शुद्ध श्रद्धा सहित शुद्ध उद्यम पराक्रम करे तब ही आत्मा का साधन होवे व इस समय आत्मा के सिद्ध पद की प्राप्ति होती है । इसमें निश्चय नय से एक ही आत्मा जानना चाहिये । जब शुद्ध व्यवहार में प्रवर्त हो कर अशुद्ध व्यवहार को दूर करे तब सिद्ध गति प्राप्त होती है । इस प्रकार की मेरी एक आत्मा है । अपर परिवार स्वार्थ

रुप है। और पलगसा मीससा और वीससा पुद्गल ये पर्यव करके जैसे स्वभाव में हैं वैसे स्वभाव में नहीं रहते है अतः अशाश्वत है। इस लिये अपनी आत्मा को अपने कार्य का साधक व शाश्वत जानकर अपनी आत्मा का साधन करे।

२ अणाच्चाणुप्पेहा-रुपी पुद्गल की अनेक प्रकार से यतन करने पर भी ये अनित्य हैं। नित्य केवल एक श्री जैन धर्म परम सुख दायक है। अपनी आत्मा को नित्य जान कर समकितादिक संवर द्वारा पुष्ट करे। यह दूसरी अणुप्पेहा है।

३ असरणाणुप्पेहा-इस भव के अन्दर व पर लोक में जाते हुवे जीव को एक समकित पूर्वक जैन धर्म विना जन्म जरा मरण के दुःख दूर करने में अन्य कोई शरण समर्थ नहीं ऐसा जान कर श्री जैन धर्म का शरण लेना चाहिये जिससे परम सुख की प्राप्ति होवे यह तीसरी अणुप्पेहा है।

४ संसाराणुप्पेहा-स्वार्थ रुप संसार समुद्र के अन्दर जन्म जरा मरण संयोग वियोग शारीरिक मानसिक दुख, कषाय मिथ्यात्व, तृष्णारुप अनेक जल कल्लोलादिक की लहरों से चार गति चोवीश दण्डक के अन्दर परिभ्रमण करते हुवे जीव को श्री जैन धर्म रुप द्वीप का आधार है और संयम रुप नाव को शुद्ध समकित रुप निर्जामक नाविक (नाव चलाने वाला) है ऐसी नावों के

द्वारा जीव–सिद्धि रुप महा नगर के अन्दर पहुंच जाता है। जहा अनन्त अतुल विमल सिद्ध के सुख प्राप्त करता है। यह धर्म ध्यान की चौथी अणुप्पेहा है। एवं धर्म ध्यान के गुण जान कर सदा धर्म ध्यान ध्यावें जिससे जीव को परम सुख की प्राप्ति होवे।

॥ इति धर्म ध्यान सम्पूर्ण ॥





❀ छः लेश्या ❀

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र, ३४ वां अध्ययन)

छः लेश्या के ११ द्वारः—१ नाम २ वर्ण ३ रस ४ गंध ५ स्पर्श ६ परिणाम ७ लक्षण ८ स्थानक ९ स्थिति १० गति ११ चवन।

१ नाम द्वार—१ कृष्ण लेश्या २ नील लेश्या ३ कापोत लेश्या ४ तेजो लेश्या ५ पद्म लेश्या ६ शुक्ल लेश्या।

२ वर्ण द्वारः—कृष्ण लेश्या का वर्ण जल सहित मेघ समान काला, तथा भैंस के सिंग समान काला, अरींठे के बीज समान, गाड़ी के खंजन (काजली) समान और आँख की कीकी समान काला। इनसे भी अनंत गुणा काला।

नील लेश्याः—अशोक वृक्ष, चास पक्षी की पांख और वैडुर्य रत्न से भी अनंत गुणा नीला इस लेश्या का वर्ण होता है।

कापोत लेश्या—अलशी के फूल, कोयल की पांख, कबूतर की गर्दन कुछ लाल कुछ काली आदि। इनसे भी अनंत गुणा अधिक कापोत लेश्या का वर्ण होता है।

तेजो लेश्या—उगता हुवा सूर्य, तोते की चोंच,

दीपक की शिखा आदि इनसे अनंत गुणा अधिक इस लेश्या का लाल रंग होता है।

पद्म लेश्या—हरताल, हलदर, सण के फूल आदि इनसे भी अनंत गुणा अधिक पीला इसका रंग होता है।

शुक्ल लेश्या—शख, अंक रत्न, मोगरे का फूल गाय का दूध, चांदी का हार आदि इनसे भी अनन्त गुणा इस लेश्या का वर्ण श्वेत होता है।

३ रस द्वारः—कड़वा तुम्बा, नीम्ब का रस, रोहिणी नामक वनस्पति का रस आदि इनसे भी अनंत गुणा अधिक कड़वा रस कृष्ण लेश्या का होता है नील लेश्या का रस—छठ के रस के समान, पीपला मूल आदि के रस से भी अनंत गुणा कड़वा रस इस नील लेश्या का होता है।

कापोत लेश्या का रस—कच्ची केरी, कच्चा कोठा (कबीट) आदि के रस से भी अनन्त गुणा खट्टा होता है।

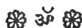
तेजो लेश्या का रस—पक्के आम, व पक्के कोठे के रस से अनन्त गुणा अधिक कुछ खट्टा व कुछ मीठा होता है।

पद्म लेश्या का रस—शराब, सिरका व शहद आदि से भी अनन्त गुणा अधिक मधुर होता है।

शुक्ल लेश्या का रस—खजूर, दाख (द्राक्ष) दूध व शक्कर आदि से भी अनन्त गुणा अधिक मीठा होता

बहुत्वः -सर्व से कम मिश्र योनीया--उमसे अचेत योनीया असंख्यात गुणा और उस से सचित्त योनीया अनन्त गुणा। योनी तीन प्रकार की -संवुडा वियड़ा और संवुडावियड़ा संवुड़ा अर्थात् ढकी हुई वियडा याने खुली (उघाडी) हुई और सवुडा वियड़ा याने कुछ ढंकी हुई और कुछ खुली हुई पाच स्थावर देवता और नारकी की योनी एक संवुडा, तीन विकलेन्द्रिय, समुच्चय तिर्यंच और मनुष्य में तीनों ही योनी पावे । सज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य में योनी एक संवुडावियड़ा । इनका अल्प बहुत्व सर्व से कम सवुड़ा वियडा उनसे वियडा योनीया असंख्यात गुणा। उनसे अयोनीया अनन्त गुणा । उनसे संवुडा योनीया अनन्त गुणा । योनी तीन प्रकार की है-संखा अर्थात् शंख के आकार समान । कच्छा याने कछुवे के आकार समान और वंश पत्ता कहेता वांस के पत्र के समान । चक्रवर्ती की स्त्री रत्न की योनी शंख वत् । ऐसी योनी वाली स्त्री के संतान नहीं होती है ५४ महापुरुष की माता की योनी काचबे (कछुवा) के आकार समान होवे और सर्व मनुष्यों की माता की योनी वांस के पत्र के आकार समान होती है ।

❀ इति श्री योनी पद सम्पूर्ण ❀



आठ आत्मा का विचार



शिष्य पूछता है कि हे भगवन् ! संग्रह नय के मत से आत्मा एक ही स्वरुपी कहने में आया है जब कि अन्य मत से आत्मा के भिन्न २ प्रकार कहे जाते है । क्या आत्मा के अलग २ भेद है ? यदि होवे तो कितने ?

गुरु--हे शिष्य ! भगवतीजी का अभिप्राय देखते आत्मा तो आत्मा ही है, वह आत्मा स्वशक्ति के कारण एक ही रीति से एक ही स्वरुपी है समान प्रदेशी और समान गुणी है अतः निश्चय से एक ही भेद कहने में आता है परन्तु व्यवहार नय के मत से कितने कारणों से आत्मा आठ मानी जाती है । जैसे--१ द्रव्य आत्मा २ कषाय आत्मा ३ योग आत्मा ४ उपयोग आत्मा ५ ज्ञान आत्मा ६ दर्शन आत्मा ७ चारित्र आत्मा ८ वीर्य आत्मा । एव आठ गुणों के कारण से आत्मा आठ कहलाती है और एक दूसरी के साथ मिल जाने से इस के अनेक विकल्प भेद होते है जैसा कि आगे के यन्त्र में बता गया है ।

१	२	३	४	५	६	७	८
द्रव्य आत्मा में	कषाय आ०	योग आ०	उपयोग आ०	ज्ञान आ०	दर्शन आ०	चारित्र आ०	वीर्य आ०
कषाय आत्मा	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०	द्रव्य आ०
की भजना	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा	की नियमा
योग आत्मा	योग आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०	कषाय आ०
की भजना	की नीयमा	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना
उपयोग आत्मा	उपयोग आ०	उपयोग आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०	योग आ०
की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना
ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	उपयोग आ०	उपयोग आ०	उपयोग आ०	उपयोग आ०
की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा
दर्शन आत्मा	दर्शन आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०	ज्ञान आ०
की भजना	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की नीयमा	की भजना	की नीयमा	की भजना
चारित्र आत्मा	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	चारित्र आ०	दर्शन आ०	दर्शन आ०
की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की भजना	की नीयमा	की नीयमा
वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	वीर्य आ०	चारित्र आ०
की भजना	की नीयमा	की नीयमा	की भजना	की भजना	की भजना	की नीयमा	की भजना

भजना अर्थात् होवे अथवा नहीं होवे । नीयमा का अर्थ निश्चय होवे ।

इनका अल्प बहुत्वः-सर्व से कम चारित्र आत्मा उनसे ज्ञान आत्मा अनन्त गुणी। उनसे कषाय आत्मा अनन्त गुणी, उनसे योग आत्मा विशेषाधिक उनसे वीर्य आत्मा विशेषाधिक उनसे द्रव्य आत्मा तथा उपयोग आत्मा तथा दर्शन आत्मा परस्पर तुल्य और (वी आ. से) विशेषाधिक। यह सामान्य विचार हुवा। अब आठ आत्मा का विशेष विचार कहा जाता है:-

शिष्य-कृपालु गुरू! आत्म द्रव्य एक ही शक्ति वाला तथा असंख्यात प्रदेशी सत्, चिद् और आनन्दघन कहने में आता है। इसका निश्चय नय से क्या अभिप्राय है? व्यवहार नय के मत से किस कारण से आत्मा आठ कही जाती है? और वे आत्मा किन २ संयोग के साथ मिल कर गतागति करती है? ये सर्व कृपा करके कहो।

गुरु-हे शिष्य! कारण केवल यही है कि शुद्ध आत्म द्रव्य में पांच ज्ञान, दो दर्शन तथा पांच चारित्र का समावेश होता है। ये सर्व आत्म शुद्धि के कारण अर्थात् साधन है। इनके अन्दर आत्मबल और आत्म वीर्य लगाने से कर्म मुक्त होती हैं जब कि सामने पक्ष में अर्थात् इसके विरुद्ध अशुद्ध आत्म द्रव्य में पच्चीश कषाय, पन्द्रह योग, तीन अज्ञान और दो दर्शन का समावेश होता है। ये सर्व आत्मअशुद्धि के कारण तथा साधन है। इनमें बल या वीर्य लगाने पर चार गतियों में परिभ्रमण करना पड़ता है। ऐसा होने पर प्रत्येक आत्मा भिन्न २ संयोगों के मिलती है। जैसा कि इस यन्त्र में बताया गया है:

आठ आत्माओं का दूसरा यन्त्र	जीव के चौदह भेद में से	चौदह गुण स्थानकमें से	पद्रह योग में से	बारह उपयोग में से	छे लेश्याओं में से
१ द्रव्य आत्मा में	समुचय १४ भेद पावे	समुचय १४ गुण स्थानक पावे	समुचय १५ योग पावे	समुचय १२ उपयोग पावे	समुचय ६ लेश्या
२ कषाय आत्मा में	१४ पावे	प्रथम १० गुण स्थान	१५ पावे	केवल ज्ञान व केवल दर्शनछोड़,शेप १०पावे	६ लेश्या
३ योग आत्मा में	१४ पावे	पहेलेसे तेरह गुण स्थानक तक पावे	१५ पावे	१२ पावे	६ लेश्या
४ उप० आत्मामें	१४ पावे	१४ गुण स्थानक	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या
५ ज्ञान आत्मामें	३ विकलेन्द्रिय असञ्ज्ञी अपर्याप्ता और सञ्ज्ञी के दो एव ६	पहेला और तीसरा छोड़ कर शेप १२ गुण पावे	१५ पावे	तीन अज्ञान छोड़ नव उपयोग पावे	६ लेश्या
६ दर्शन आत्मामें	१४ पावे	१४ पावे	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या
७ चारित्र आत्मामें	१ सञ्ज्ञी का पर्याप्त पावे	प्रथम पाच छोड़ शेप नव पावे	१५ पावे	३ अज्ञान छोड़ शेप नव उपयोग	६ लेश्या
८ वीर्य आत्मामें	१४ पावे	१४ पावे	१५ पावे	१२ उपयोग पावे	६ लेश्या

❀ इति आठ आत्मा का विचार सम्पूर्ण ❀



व्यवहार समकित के ६७ बोल

इस पर बारह द्वारः- (१) सद्दहणा ४ (२) लिङ्ग ३ (३) विनय १० (४) शुद्धता ३ (५) लक्षण ५ (६) भूषण ५ (७) दूषण ५ (८) प्रभावना ८ (९) आगार ६ (१०) जयना ६ (११) स्थानक ६ (१२) भावना ६ ।

(१) सद्दहणा के चार भेदः-१ परतीर्थी से अधिक परिचय न करे (२) अधर्मे पाखण्डियों की प्रशंसा न करे (३) अपने मत के पासत्था उसन्ना व कुलिङ्गी आदि की संगति न करे इन तीनों का परिचय करने से शुद्ध तत्त्व की प्राप्ति नहीं हो सकेगी (४) परमार्थ के ज्ञाता संवेग्न गीतार्थ की उपासना करके शुद्ध श्रद्धान धारण करे।

(२) लिङ्ग के तीन भेदः-(१) जैसे युवा पुरुष रंग राग ऊपर राचे वैसे ही भव्यात्मा श्री जैन शासन पर राचे (२) जैसे क्षुधावान पुरुष खीर खाण्ड के भोजन का प्रेम सहित आदर करे वैसे ही वीतराग की वाणी का आदर करे (३) जैसे व्यवहारिक ज्ञान सिखने की तीव्र इच्छा होवे, और शिक्षक का योग मिलने पर सिख कर इस लोक में सुखी होवे वैसे ही वीतराग कथित सूत्रों का नित्य सूत्रार्थ न्याय वाले ज्ञान को सिख कर इहलोक और परलोक में मनोवाञ्छित सुख की प्राप्ति करे।

(३) विनय के दश भेदः-(१) अरिहंत का

करे (२) सिद्ध का विनय करे (३) आचार्य का विनय करे (४) उपाध्याय का विनय करे (५) स्थविर का विनय करे (६) गण (बहुत आचार्यों का समूह) का विनय करे (७) कुल (बहुत आचार्यों के शिष्यों का समूह) का विनय करे (८) स्वधर्मी का विनय करे (९) संघ का विनय करे (१०) संभोगी का विनय करे एवं दश का बहु मान पूर्वक विनय करे जैन शासन में विनय मूल धर्म कहते हैं। विनय करने से अनेक सद्गुणों की प्राप्ति होती है।

(४) शुद्धता के तीन भेदः-(१) मन शुद्धता मन से अरिहत-देव-कि जो ३४ अतिशय, ३५ वाणी, ८ महा प्रति हार्य सहित, १८ दूषण रहित १२ गुण सहित हैं वे ही अमर देव व सच्चे देव हैं। इनके सिवाय हजारों कष्ट पड़े तो भी सरागी देवों को मनसे स्मरण नहीं करे (२) वचन शुद्धता-वचन से गुण कीर्तन ऐसे अरिहंत देव के करे व इनके सिवाय सरागी देवों का नहीं करे। (३) काया शुद्धता-काया से अरिहंत सिवाय अन्य सरागी देवों को नमस्कार नहीं करे।

५ लक्षण के पांच भेदः-(१) सम, शत्रु मित्र पर समभाव रक्खे (२) संवेग-वैराग्य भाव रक्खे और संसार असार है, विषय व कषाय से अनन्त काल पर्यन्त भव भ्रमण होता है, इस भव में अच्छी सामग्री मिली है अतः धर्म का आराधन करना चाहिये, इत्यादि नित्य चिंतन

करे (३) निर्वेग-शरीर अथवा संसार की अनित्यता पर चिंतन करे, और बने वहां तक इस मोह मय जगत से अलग रहे अथवा जग-तारक जिनराज की दिक्षा लेकर कर्म शत्रुओं को जीत व सिद्ध पद को प्राप्त करने की हमेशा अभिलाषा (भावना) रक्खे, (४) अनुकम्पा-अपनी तथा पर की आत्मा की अनुकम्पा करे अथवा दुखी जीवों पर दया लावे (५) आस्था (ता)-त्रिलोक पूज्यनीक श्रीवीतराग देव के वचनों पर दृढ श्रद्धा रक्खे हिताहित का विचार करे अथवा अस्तित्व भाव में रमण करे ये ही व्यवहार समकित के लक्षण हैं। अंत जिस विषय में अपूर्णता होवे उसे पूरी करे।

(६) भूषण पांचः-(१) जैन शासन में धैर्यवंत हो कर शासन का प्रत्यक कार्य धैर्यता से करे (२) जैन शासन का भक्तिवान् होवे (३) शासन में क्रियावान् होवे (४) शासन में चतुर होवे। शासन के प्रत्येक कार्य को ऐसी चतुराई (बुद्धि) से करे कि जिससे वह कार्य निर्विघ्नता से समाप्त हो जावे (५) शासन में चतुर्विध संघ की भक्ति तथा बहु सत्कार करने वाला होवे। इन पाच भूषणों से शासन की शोभा होती है।

(७) दूषण पांचः-(१) शङ्का जिन वचन में शङ्का करे (२) कंखा-अन्य मतों का आडम्बर देख कर उनकी वाञ्छा करे (३) विति गिच्छा-धर्म की करणी के फल

सन्देह करे इसका फल होवेगा या नहीं ? वर्तमान में तो कुछ फल नजर नहीं आता आदि इस प्रकार का सन्देह करे (४) पर पाखण्डी से नित्य परिचय रक्खे (५) पर-पाखण्डियों की प्रशंसा करे । एवं समकित के पांच दूषणों को अवश्य दूर करना चाहिये ।

(८) प्रभावना = (१) जिस काल में जितने सूत्र होते हैं उन्हें गुरु गम से जाने यह शासन का प्रभावक बनता है (२) बड़े आडम्बर से धर्म कथा व्याख्यान आदि के द्वारा शासन के ज्ञान की प्रभावना करे (३) महान विकट तपश्चर्या करके शासन की प्रभावना करे (४) तीन काल अथवा तीन मत का ज्ञाता होवे (५) तर्क, वितर्क, हेतु, वाद, युक्ति, न्याय तथा विद्यादि बल से वादियों को शास्त्रार्थ में पराजय करके शासन की प्रभावना करे (६) पुरुषार्थी पुरुष दीक्षा लेकर शासन की प्रभावना करे (७) कविता करने की शक्ति होवे तो कविता करके शासन की प्रभावना करे (८) ब्रह्मचर्य आदि कोई बड़ा व्रत लेना होवे तो बहुत से मनुष्यों की सभा में लेवे कारण कि इससे लोकों को शासन पर श्रद्धा अथवा व्रतादि लेने की रुचि बढ़े । अथवा दुर्बल स्वधर्मी भाइयों को सहायता करे । यह भी एक प्रकार की प्रभावना है परन्तु आजकल चौमासे में अभक्ष्य वस्तु की अथवा लड्डु आदि की प्रभावना करते हैं । दीर्घ दृष्टि से विचार करने योग्य है कि इस प्रभावना से क्या

शासन की प्रभावना होती है ? अथवा इससे कितना लाभ ? इसका बुद्धिवान स्वयं विचार कर सकते है। यदि प्रभावना से हमारा सच्चा अनुराग व प्रेम होवे तो छोटी २ तत्व ज्ञान की पुस्तकों को बांट कर प्रभावना करे कि जिससे अपने भाइयों को आत्म ज्ञान की प्राप्ति होवे।

(६) आगार ६-(१) राजा का आगार (२) देवता का आगार (३) जाति का आगार (४) माता पिता व गुरु का आगार (५) बलात्कार (जबर्दस्ती) का आगार (६) दुष्काल में सुख पूर्वक आजीविका नहीं चले तो इसका आगार। इन छे प्रकारों के आगार से कोई अनुचित कार्य करना पड़े तो समकित दूषित नहीं होता।

(१०) जयना के ६ भेदः-(१) आलाप-स्वधर्मी भाइयों के साथ एक वार बोले (२) सलाप-स्वधर्मी भाइयों के साथ वारंवार बोले (३) मुनि को दान देवे अथवा स्वधर्मी भाइयों की वात्सल्यता करे। (४) एव वारवार प्रति दिन करे (५) गुणी जनों का गुण प्रगट करे (६) तथा वंदना नमस्कार बहु मान करे।

(११) स्थानक के ६ प्रकारः-(१) धर्म रुपी नगर तथा समकित रुपी दरवाजा (२) धर्म रुपी वृक्ष तथा समकित रुपी धड़ (३) धर्म रुपी प्रासाद (महल) तथा रुपी नींव (बुनियाद) (४) धर्म रुपी भोजन तथा

कित रुपी थाल (५) धर्म रुपी माल तथा समकित रुपी दुकान (६) धर्म रुपी रत्न तथा समकित रुपी मंजूषा संदूक या तिजोरी।

१२ भावना के ६ भेदः–(१) जीव चैतन्य लक्षण युक्त असंख्यात प्रदेशी निष्कलङ्क अमूर्ति है। (२) अनादि काल से जीव और कर्मों का संयोग है जैसे–दूध में घी, तिल में तेल, धूल में धातु, फूल में सुगन्ध, चन्द्र की कान्ति में अमृत आदि के समान अनादि संयोग है। (३) जीव सुख दुख का कर्त्ता और भोक्ता है, निश्चय नय से कर्म का कर्ता कर्म है परन्तु व्यवहार नय से जीव है। (४) जीव, द्रव्य, गुण पर्याय, प्राण और गुण स्थानक सहित है (५) भव्य जीवों को मोक्ष होता है (६) ज्ञान दर्शन और चारित्र ये मोक्ष के साधन हैं। एवं ६ भेद।

इस थोकडे को मुंह जबानी (कण्ठस्थ) करके सोचो कि इन ६७ बोलो में से (व्यवहार समकित के) मेरे अन्दर कितने बोल हैं। फिर जितने बोल कम हों उन्हें पूरे करने का प्रयत्न करे तथा पुरुषार्थ द्वारा उन्हें प्राप्त करे।

॥ इति व्यवहार समकित के ६७ बोल सम्पूर्ण ॥

※ काय-स्थिति ※

समजन (स्पष्टी करण):-स्थिति दो प्रकार की १ भव स्थिति, २ काय स्थिति, एक भव में जितने समय तक रहे वो भव स्थिति जैसे—पृथ्वी काय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट २२ हजार वर्ष की।

काय स्थिति-पृथ्वी काय आदि एकही काय के जीव उसी काया में बारंबार जन्म मरण करते रहें और अन्य काय, अप, तेउ, वायु आदि में नहीं उपजे वहा तक की स्थिति-वो काय स्थिति।

पुढवी काल=द्रव्य से असं० उत्स० अवस० काल, क्षेत्र से असं० लोक, काल से असंख्यात काल, भाव से अगुल के असं० भाग के आकाश प्रदेश जितने लोक।

असंख्यात काल=द्रव्य, क्षेत्र, काल से ऊपर वत् भाव से आवलिका के असंख्यातवें भाग के समय जितने लोक।

अर्ध पुद्गल परावर्त्तन काल:=द्रव्य से अनन्त उत्स० अवस० क्षेत्र से अनन्ता लोक, काल से अनन्त काल और भाव से अर्ध पुद्गल परावर्त्तन।

वनस्पति काल=द्रव्य से अनन्त उत्स० अवस०, क्षेत्र से अनन्त लोक, काल से अनन्त काल और भाव से असं० पुद्गल परावर्त्तन।

अ० सा०=अनादि सान्त, सा० सा०=सादि सान्त।

गाथा

जीव गइन्दिय काए जोए वेद कसाय लेसाय।
सम्मत्त णाण दंसण संयम उवओग आहारे ॥१॥
भासगयं परित्त पज्जत्त सुहुम सन्नी भवंऽत्थि।
चरिमेय एतेसित पदाणं कायठिई होइ णायव्वा॥२॥

क्रम	मार्गणा	जघन्य कायस्थिति	उत्कृष्ट कायस्थिति
१	समुच्चय जीवकी	शाश्वता	शाश्वता
२	नारकी की	१० हजार वर्ष	३३ सागरोपम
३	देवता की	"	"
४	देवी की	"	५५ पलकी
५	तिर्यंच की	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त काल (वन)
६	तिर्यंचणी की	"	३पल्य और प्र० क्रोड़ पूर्व
७	मनुष्य की	"	"
८	मनुष्यनी की	"	"
९	सिद्ध भगवान् की	शाश्वता	शाश्वता
१०	अपर्याप्ता नारकी की	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
११	" देवता की	"	"
१२	" देवी की	"	"
१३	" तिर्यंच की	"	"
१४	" तिर्यंचनी की	"	"

१५ " मनुष्य की	"	"	
१६ " मनुष्यनी की	",	"	
१७ पर्याप्त नारकी	१० हजार वर्ष में अंतर्मुहूर्त न्यून	३३ सागर में अन्तर्मुहूर्त न्यून	
१८ " देवता	"	भव स्थिति में	"
१९ " देवी	"	५५ पल्य में	"
२० " तिर्यंच	अन्तर्मुहूर्त	३ पल्य में	"
२१ " तिर्यंचनी	"	"	"
२२ " मनुष्य	"	"	"
२३ " मनुष्यनी	"	"	"
२४ सइन्द्रिय	०	अनादि अनंत अना सां	
२५ एकेन्द्रिय	अंत मुहूर्त	अनंत काल (वन)	
२६ बेइन्द्रिय	"	संख्यात वर्ष	
२७ तेइन्द्रिय	"	"	
२८ चउरिन्द्रिय	"	"	
२९ पंचेन्द्रिय	"	२००० सागर साधिक	
३० अनिन्द्रिय	०	सादि अनंत	
३१ सकायी	०	अ० अन०, अ० सांत	
३२ पृथ्वी काय	अन्त मुहूर्त	असंख्यात काल	
३३ अप "	"	"	
३४ तेउ "	"	"	

३५ वाउ काय	अन्तर्मुहूर्त	असंख्यात काल
३६ वनस्पति काय	,,	अनन्त काल (वन०)
३७ त्रस काय	,,	२००० सागर और सं० वर्ष
३८ अकाय	सादि अनन्त	सादि अनन्त
३९ से ४५,३१ से ३७ का अपर्याप्ता	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
४६ से ५० ३२ से ३६ का पर्याप्ता	,,	संख्यात वर्ष
५१ सकाय ,,	,,	प्रत्येक सौ सागर
५२ त्रस काय पर्याप्ता	,,	,, ,,
५३ समुच्चय बादर	,,	असं० काल असं० जितने लोकाकाश प्रदेश
५४ बादर वनस्पति	,,	,,
५५ समुच्चय निगोद	,,	अनन्त काल
५६ बादर त्रस काय	,,	२००० सागर जाजेरी
५७ से ६२ बादर पृ० अ०,ते०,वा०,प्र.व०,चा. निगोद.	,,	७० क्रोड़ा क्रोड़ सागर
६३ से ६९ समुच्चय सूक्ष्म पृ०,अ०, ते०, वा०, वन०, निगोद	,,	असंख्यात काल

७० से ८६ न. ५३ से ६६ के अपर्याप्ता	अतर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
८७ से ९३ समुच्चय सूक्ष्म पृ०,अ०,ते,०वा०,व०, निगोद का पर्याप्ता	,,	,,
९४ से ९७ वादर पृ०, अ०, वा०, और प्र. वा. वन. का पर्याप्ता	,,	सं हजार वर्ष
९८ वादर तेउ का पर्याप्ता	,,	भ. अहोरात्रि
९९ समुच्चय वादर ,,	,,	प्र. सो सागर साधिक अत मु
१०० समुच्च निगोद ,	,,	अन्तर्मुहूर्त
१०१ वादर ,,	,,	,, ,,
१०२ संयोगी	०	अ अन, अ. सात
१०३ मन योगी	१ समय	अन्तर्मुहूर्त
१०४ वचन योगी	,,	,,
१०५ काय ,,	अन्तर्मुहूर्त	अनन्त
१०६ अयोगी	०	सादि
१०७ सवेदी	०	अ.अ
१०८ स्त्री वेद	१ समय	११० पूर्व
१०९ पुरुष वेद	अन्तर्मुहूर्त	

११० नपुंसक वेद १ समय अनन्त काल (वन०)
१११ अवेदी सादि अनन्त सा. सा., ज. १ स उ. अ. मु.
११२ सकषायी सादि अ. अ., अ. सात सा. सादि सान देश न्यून अर्ध पुद्गल
११३ क्रोध कषायी अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त
११४ मान ,, ,, ,,
११५ माया ,, ,, ,,
११६ लोभ ,, १ समय ,,
११७ अकषायी सा. अ., सा. सा, ज. १ समय, उ अं. मु
११८ सलेशी ,, अ. अ. अ. सा.
११९ कृष्ण लेशी अन्तर्मुहूर्त ३३ सागर अ. मु. अ०
१२० नील ,, , १० ,, पल्य असं भाग अधिक
१२१ कपोत ,, ,, ३ ,, ,,
१२२ तेजो ,, ,, २ ,, ,,
१२३ पद्म ,, ,, १० ,, अं. मु. अधिक
१२४ शुक्ल ,, ,, ३३ ,, ,,
१२५ अलेशी ,, सादि अनन्त
१२६ समकित दृष्टि ,, सा. अं., सा. स' ६६ सा. सा
१२७ मिथ्या ,, अ. अ., अ. सा, अनन्त काल

१२८ मिथ्या दृष्टि अ. मु. सा सा, (अध पु.)
सादि सात
१२९ मिश्र दृष्टि ,, अ. मु.
१३० क्षायक समकित ० सादि अनन्त
१३१ क्षयोपशम ,, अ.मु. ६६ सागर अधिक
१३२ सास्वादान ,, १ समय ६ आवलिका
१३३ उपशम ,, ,, अन्तर्मुहूर्त
१३४ वेदक ,, ,, ,,
१३५ सनाणी अन्तर्मुहूर्त सा. अ., सा. सा०
६६ सागर
१३६ मति ज्ञानी ,, ६६ सागर अधिक
१३७ श्रुत ,, ,, ,,
१३८ अवधि ,, १ समय ,,
१३९ मनःपर्यव ,, ,, देश न्यून क्रोड पूर्व
१४० केवल ,, ० सादि अनन्त
१४१ अज्ञानी } अ०अ०,अ०सा, { सा० सात
१४२ मति अ. } सा०सा०की { मु० उ० अर्ध पु०
१४३ श्रुत ,, } ज० अ०
१४४ विभग ज्ञानी १ समय ३३ सागर अधिक
१४५ चक्षु दर्शनी अन्तर्मुहूर्त प्रत्येक हजार सागर
१४६ अचक्षु ,, ० अ० अ, अ० सा०
१४७ अवधि ,, १ समय १३२ सागर

योगों का अल्प बहुत्व

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उद्देश १ ला में)

जीव के आत्म प्रदेशों में अध्यवसाय उत्पन्न होते है। अध्यवसाय से जीव शुभाशुभ कर्म (पुद्गल) के ग्रहण करता है यह परिणाम हैं और यह सूक्ष्म हैं। परिणामों की प्रेरणा से लेश्या होती है। और लेश्या की प्रेरणा से मन, वचन, काय का योग होता है।

योग दो प्रकार का १ जघन्य योगः=१४ जीवों के भेद में सामान्य योग सचार २ उत्कृष्ट योग, (तारतम्यता) अनुसार उनका अल्प बहुत्व नीचे अनुसार—

(१) सर्व से कम सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का जघन्य योग उन से

(२) बादर एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता का ज० योग असं० गुणा,,

(३) बे इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,

(४) ते इन्द्रिय ,, ,, ,, ,,

(५) चौरिन्द्रिय ,, ,, ,, ,,

(६) असंज्ञी पंचेन्द्रिय का ,, ,, ,, ,,

(७) संज्ञी ,, ,, ,, ,, ,,

(८) सूक्ष्म एकेन्द्रिय का पर्याप्ता का ,, ,, ,,

(९) बादर ,, ,, ,, ,, ,,

(१०) सूक्ष्म ,, अपर्याप्ता का उ० योग ,, ,,

(११) बादर „ „ „ „ „
(१२) सूक्ष्म „ पर्याप्ता का „ „ „
(१३) बादर „ „ „ „ „
(१४) बे इन्द्रिय का „ ज० उ० योग „ „
(१५) ते इन्द्रिय „ „ „ „
(१६) चौरिन्द्रिय का „ „ „ „
(१७) असंज्ञी पचेन्द्रिय का „ „ „ „
(१८) संज्ञी „ „ „ „ „
(१९) बेइन्द्रिय का अपर्याप्ता का उ० उ० योग „ „
(२०) ते इन्द्रिय „ „ „ „
(२१) चौरिन्द्रिय का „ „ „ „
(२२) असंज्ञी पचेन्द्रिय का „ „ „ „
(२३) संज्ञी „ „ „ „ „
(२४) बे इन्द्रिय का पर्याप्ता का „ „ „
(२५) ते इन्द्रिय „ „ „ „
(२६) चौरिन्द्रिय का „ „ „ „
(७) असंज्ञी पचेन्द्रिय का „ „ „ „
(२८) संज्ञी „ „ „ „ „

॥ इति योगों का अल्प बहुत्व ॥

(१) सर्व से कम अनंत गुणा काला का द्रव्य उनसे
(२) अनता गुणा काला प्रदेश अनंत गुणा ,,
(३) एक गुण काला द्रव्य और प्रदेश अनत गुणा ,,
(४) संख्यात प्रदेश काला पुद्गल द्रव्य संख्यात ,, ,,
(५) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,, ,,
(६) असं० ,, ,, ,, द्रव्य अस० ,, ,,
(७) ,, ,, ,, ,, प्रदेश ,, ,,

एव ५ वर्ण; २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श, (शीत; उष्ण, स्निग्ध; रूक्ष) आदि १६ बोलों का विस्तार काले वर्ण अनुसार तीन तीन अल्प बहुत्व करना ।

कर्कश स्पर्श का अल्प बहुत्व ।

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य उनसे
(२) स० गुण कर्कश का द्रव्य स० गुणा ,,
(३) असं० गु० ,, ,, अस० ,, ,,
(४) अनंत गु० ,, ,, अनत ,,

कर्कश स्पर्श प्रदेशापेक्षाअल्प बहुत्व ।

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का प्रदेश उनसे
(२) स० गुणा कर्कश का प्रदेश असख्यात गुणा ,,
(३) असं० ,, ,, ,, ,, ,, ,,
(४) अनंत ,, ,, ,, अनंत ,,

कर्कश द्रव्य प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व

(१) सर्व से कम एक गुण कर्कश का द्रव्य प्रदेश उनसे

(२) संख्यात गुण	कर्कश	का	पुद्गल	"संख्यातगुणा"			
(३) "	"	"	"	प्रदेश असं०	"	"	
(४) असं०	"	"	"	द्रव्य	"	"	"
(५) "	"	"	"	प्रदेश	"	"	"
(६) अनंत	"	"	"	द्रव्य अनंत	"	"	
(७) "	"	"	"	प्रदेश	"	"	

इसी प्रकार मृदु, गुरु, व लघु समझना कुल ६६ अल्प बहुत्व हुए—३ द्रव्य के, ३ क्षेत्र के, ३ काल के, व ६० भाव के एवं कुल ६६ अल्प बहुत्व ।

❀ इति पुद्गलों का अल्प बहुत्व सम्पूर्ण ❀



आकाश श्रेणी

(श्री भगवती सूत्र शतक २५ उ० ३)

आकाश प्रदेश की पंक्ति को श्रेणी कहते है समुच्चय आकाश प्रदेश की द्रव्यापेक्षा श्रेणी अनन्ती है। पूर्वादि ६ दिशाओं की और अलोकाकाश की भी अनन्ती है।

द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की तथा ६ दिशाओं की श्रेणी असंख्याती प्रदेशापेक्षा समुच्चय आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी अनन्ती है।

प्रदेशापेक्षा लोकाकाश आकाश प्रदेश तथा ६ दिशा की श्रेणी असं० है प्रदेशापेक्षा अलोकाकाश आकाश की श्रेणी संख्याती,असंख्याती, अनन्ती है पूर्वादि ४ दिशा में अनन्ती है और ऊंची नीची दिशा में तीन ही प्रकार की।

समुच्चय श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी अनादि अनन्त है। लोकाकाश की श्रेणी तथा ६ दिशा की श्रेणी सादि सान्त है। अलोकाकाश की श्रेणी स्यात् सादि सान्त स्यात् सादि अनन्त स्यात् अनादि सान्त और स्यात् अनादि अनन्त है।

(१) सादि सान्त—लोक के व्याघात में

(२) सादि अनन्त-लोक के अन्तमें अलोक की आदि है परन्तु अन्त नहीं।

(३) अनादि सान्त-अलोक अनादि है परन्तु लोक के पास अन्त है।

(४) अनादि अनन्त-जहा लोक का व्याघात नहीं पड़े वहा चार दिशा में सादि सान्त सिवाय के ३ भागे। ऊंची नीची दिशा में ४ भागा।

द्रव्यापेक्षा श्रेणी कुडजुम्मा है । ६ दिशा में और द्रव्यापेक्षा लोकाकाश की श्रेणी, ६ दिशा की श्रेणी और अलोकाकाश की श्रेणी भी यही है, प्रदेशापेक्षा आकाश श्रेणी तथा ६ दिशा में श्रेणी कुडजुम्मा है प्रदेशापेक्षा लोकाकाश की श्रेणी स्यात् कुडजुम्मा स्यात् दावरजुम्मा है । पूर्वादि ४ दिशा और ऊंची नीची दिशापेक्षा कुडजुम्मा है।

प्रदेशापेक्षा अलोकाकाश की श्रेणी स्यात् कुडजुम्मा जाव स्यात् कलयुगा है। एव ४ दिशा की श्रेणी, परन्तु ऊची नीची दिशा में कलयुगा सिवाय की तीन श्रेणी है।

श्रेणी ७ प्रकार की भी होती है-ऋजु Λएक वक्रा, M दो वक्रा, ⌊ एक कोने वाली, ⌐ दो कोने वाली, ⌒ अर्ध चक्र वाल, O चक्र वाल।

जीव अनुश्रेणी (सम) गति करे, विश्रेणी गति न करे। पुद्गल भी अनुश्रेणी गति ही करे। विश्रेणी गति न करे।

॥ इति आकाश श्रेणी सम्पूर्ण ॥

(५१) वैमानिक " " " " "
(५२) " " इन्द्र " " " "
(५३ तीनों ही काल के इन्द्रों से भी तीर्थंकर की कनिष्ठ अंगुली का बल अनन्त गुणा है। (तत्त्व केवली गम्य)

❀ इति बल का अल्प बहुत्व ❀



समकित के ११ द्वार

१ नाम २ लक्षण ३ आवन (आगति) ४ पावन ५ परिणाम ६ उच्छेद ७ स्थिति ८ अन्तर ६ निरन्तर १० आगरेश ११ क्षेत्र स्पर्शना और अल्प बहुत्व।

१ नाम द्वार–समकित के ४ प्रकार। क्षायक, उपशम, क्षयोपशम और वेदक समकित।

२ लक्षण द्वारः–७ प्रकृति [अनंतानुबन्धी क्रोध मान, माया, लोभ और ३ दर्शन मोहनीय] का मूल से क्षय करने से क्षायक समकित व ६ प्रकृति उपशमावे और समकित मोहनीय वेदे तो वेदक समकित होता है अनंतानु० चोक का क्षय करे और तीन दर्शन मोह को उपशमावे उसे क्षयोपशम समकित कहते हैं।

३ आवन द्वार–क्षायक सम० केवल मनुष्य भव में आवे शेष तीन समकित चार गति में आवे।

४ पावन द्वार–चार ही समकित गति में पावे।

५ परिणाम द्वार–क्षायक समकित अनन्ता [सिद्ध आश्री] शेष तीन समकित वाला असंख्यात जीव

६ उच्छेद द्वार–क्षायक समकित का उच्छेद कभी न होवे। शेष तीन की भजना।

७ स्थिति द्वार क्षायक समकित सादि अनन्त।

उपशम समकित ज० उ० अ० मु०, क्षयोप० और वेदक की स्थिति ज० अ० मुं०, उ० ६६ सागर जाजेरी ।

८ अन्तर द्वार-क्षायक समकित में अन्तर नहीं पडे। शेष ३ में अन्तर पडे तो ज० अ० उ० अनन्त काल यावत् देश न्यून [उणा] अर्ध पुद्गल परावर्त्तन ।

९ निरन्तर द्वारः-क्षायक समकित निरन्तर आठ समय तक आवे शेष ३ समकित आवलिका के असं० में भाग जितने समय निरन्तर आवे ।

१० आगरेश द्वार-क्षायक समकित एक वार ही आवे । उपशम समकित एक भवमें ज० १ वार उ० २ वार आवे और अनेक भव आश्री ज० २ वार आवे शेष २ समकित एक भव आश्री ज० १ वार उ० असख्य वार और अनेक भव आश्री ज० २ वार उ० असख्य वार आवे ।

११ क्षेत्र स्पर्शना द्वारः-क्षायक समकित समस्त लोक स्पर्शे [केवली समु० आश्री] शेष ३ सम० देश उण सात राजू लोक स्पर्शे ।

१२ अल्प बहुत्व द्वारः-सर्व से कम उपशम सम० वाला, उनसे वेदक समकित वाला असख्यात गुणा, उनसे क्षयोप० सम० वाला असख्यात गुणा, उनसे क्षायक सम० वाला अनन्त गुणा (सिद्धापेक्षा) ।

॥ इति समकित के १२ द्वार सम्पूर्ण ॥

ॐ खण्डा जोयणा ॐ

[सूत्र श्री जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति]

'खण्डा 'जोयण 'वासा, 'पव्वय कूडा 'तित्थ'सेढीओ
'विजय 'द्दह "सलिलाओ, पिंडए होई संगहणी ।१।

१ लाख योजन लम्बे चौड़े जम्बू द्वीप के अन्दर (जिसमें हम रहते हैं) १ खण्ड २ योजन ३ वास ४ पर्वत ५ कूट [पर्वत के ऊपर] ६ तीर्थ ७ श्रेणी ८ विजय ९ द्रह १० नदिए आदि कितनी हैं ? इसका वर्णन—

जम्बू द्वीप चक्की के पाट समान गोल है इसकी परिधि ३१६२२७ योजन ३ गाउ १२८ धनुष्य १३॥ आंगुल, एक जव, १ जूँ, १ लीख, ६ बालाग्र और १ व्यवहार परमाणु समान है । इस के चारों ओर एक कोट [जगति] है १ पद्मवर वेदिका, १ वन खण्ड और ४ दरवाजों से सुशोभित है ।

१ खण्ड द्वार—दक्षिण उत्तर भरत जितने [समान] खण्ड कर तो जम्बू द्वीप के १९० खण्ड हो सक्ते हैं ।

नं०	क्षेत्र नाम	खण्ड	योजन कला
१	भरत क्षेत्र	१	५२६—६
२	चूल हेमवन्त पर्वत	२	१०५२-१२
३	हेमवाय क्षेत्र	४	२१०५—५

योजन ऊंची, ५०० धनुष्य चोडी है दानों तरफ नीले पन्नों के स्तम्भ हैं जिन पर सुन्दर पुतलियें और मोती की मालाएं हैं । मध्य भाग के अन्दर पद्मवर वेदिका के दो भाग किये हुवे हैं । [१] अन्दर के विभाग में एक जाति के वृक्षों का वनखण्ड है जिसमें ५ वर्ण का रत्न मय तृण है। वायुके सचार से जिसमें ६ राग और ३६ रागनियें निकलती हैं। इसमें अन्य वावडियें और पर्वत है, अनेक आसन है जहा व्यन्तर देवी-देवता क्रीडा करते है [२] बाहर के विभाग में तृण नहीं है । शेष रचना अन्दर के विभाग समान है।

मेरु पर्वत से चार ही दिशा में ४५-४५ हजार योजन पर चार दरवाजे हैं । पूर्व में विजय, दक्षिण में विजयन्त, पश्चिम में जयन्त और उत्तर में अपराजित नामक हैं प्रत्येक दरवाजा ८ योजन ऊंचा ४ योजन चौडा है । दरवाजे के ऊपर नव भूमि और सफेद घुमट, [गुम्बज] छत्र, चामर, ध्वजा तथा ८-८ मंगलीक हैं । दरवाजों के दोनों तरफ दो दो चौंतरे है जो प्रासाद, तोरण चन्दन, कलश, भारी, धूप, कडछा और मनोहर पुतलियों से सुशोभित है ।

क्षेत्र का विस्तार

[१] भरत क्षेत्र मेरु के दक्षिण में अर्धचन्द्राकारवत् है मध्य में वैताढ्य पर्वत आने से भरत के दो भाग हो

गये हैं। १ उत्तर भरत २ दक्षिण भरत। भरत की मर्यादा (सीमा) करने वाला चूल हेमवन्त पर्वत पर पद्म द्रह है। जिसके अन्दर से गङ्गा और सिन्धु नदी निकल कर तमस्र गुफा और खण्डप्रभा गुफा के नीचे वैतढ्य पर्वत को भेद कर लवण समुद्र में मिलती हैं इनसे भरत क्षेत्र के ६ खण्ड होते हैं।

दक्षिण भरत२३८ योजन ३ कला का है। जिसमें ३ खण्ड हैं-मध्य खण्ड में १४ हजार देश हैं। मध्य भाग में कोशल देश, वनिता [अयोध्या] नगरी है। जो १२ योजन लम्बी, ९ योजन चौंटी है। पूर्व में १ हजार और पश्चिम में १ हजार देश हैं। कुल दक्षिण भारत में १६ हजार देश हैं। इसी प्रकार १६ हजार देश उत्तर भरत में हैं। इस भरत क्षेत्र में काल चक्र का प्रभाव है [६ आरा वत्]।

[२] ऐरावत् क्षेत्र-मेरु के उत्तर में शिखरी पर्वत से आगे भरतवत् है।

[३] महाविदेह क्षेत्र-निषिध और नीलवन्त पर्वत के मध्य में है। पलङ्क के सठाण वत् ३२ विजय हैं। मध्य में १० हजार योजन का विस्तार वाला मेरु है। पूर्व पश्चिम दोनों तरफ २२-२२ हजार यो० भद्रशाल वन है। दोनों तरफ १६-१६ विजय हैं।

मेरु के उत्तर में और दक्षिण में २५०-२५० योजन

का भद्रशाल वन है। दक्षिण में निषिध तक देव कुरु और उत्तर में नीलवन्त तक उत्तर कुरु है। ये दोनों दो दो गजदन्त के कारण अर्धचन्द्राकार है। इस क्षेत्र में युगल मनुष्य ३ गाउ की अवगाहना उत्सेध आंगुल से और ३ पल्य के आयुष्य वाले रहते हैं। देव कुरु में कुड शाल्मली वृक्ष, चित्र विचित्र पर्वत १०० कंचन गिरि पर्वत और ५ द्रह है। इसी प्रकार उत्तर कुरु में भी हैं। परन्तु ये जम्बू सुदर्शन वृक्ष है।

निषिध और महाहिमवन्त पर्वत के मध्य में हरिवास क्षेत्र है। तथा नीलवन्त और रूपी पर्वत के बीच में रम्यक् वास क्षेत्र है। इन दो क्षेत्रों में २ गाउ की अवगाहना और २ पल्य की स्थिति वाले युगल मनुष्य रहते हैं।

महाहेमवन्त और चूल हेमवन्त पर्वत के बीच में हेमवाय क्षेत्र और रूपी तथा शिखरी पर्वत के मध्यमें हिरणवाय क्षेत्र है इन दोनों क्षेत्रों में १ गाउ की अवगाहना वाले और १ पल्य का आयुष्य वाले युगल मनुष्य रहते हैं।

क्षेत्र		द० उ० चौड़ाई	बाह	जीवा	धनुष पीठ
		यो० कला	यो० कला	यो० कला	य० कला
दक्षिण	भरत	२३८ ३	०	९७४८ १२	९७६६ १
उत्तर	"	"	१८९२ ७॥	१४४७१ ६	१४५२८ ११
हेमवाय	क्षेत्र	२१०५ ५	६७५५ ३	३७६७४ १६	३८७४० १०
हरिवास	"	८४२१ १	१३३६१ ६	७३९०१ १७	८४०१६ ४
महाविदेह	"	३३६८४ ४	३३७६७ ७	१०००००	१५८११३ १६

देव कुरु	,,	११८४२ २	०	५३०००	६०४१८ १२
उत्तर कुरु	,,	११८४२ २	०	५३०००	६०४१८ १२
रम्यक वास	,,	८४२१ १	१३३६१ ६	७३९०१ १७	८४०१६ ४
हिरण्य वाय	,,	२१०५ ५	६७५५ ३	३७६७४ १६	३८१४० १०
दक्षिण ऐरावर्त	,,	२३८ ३	१८९२ ७॥	१४४७१ ६	१४५२८ ११
उत्तर ,	,,	२३८ ३	०	१७४८ १२	१७६६ १

(४) पव्वय द्वार (पर्वत)—२६९ पर्वत शाश्वत हैं। देव कुरु में ५ द्रह हैं जिसके दोनों तट पर दश २ कचन गिरि सर्व सुवर्ण मय हैं दश तट पर १०० पर्वत हैं। इसी प्रकार १०० कचन गिरि उत्तर कुरु में हैं तथा दीर्घ वैताढ्य १६ वक्षार पर्वत, ६ वर्षधर पर्वत, ४ गजदन्ता पर्वत, ४ वृतल वैताढ्य, ४ चित्र विचित्रादि और १ मेरु पर्वत एवं २३९ हैं।

३४ दीर्घ वैताढ्य–३२ विजय विदेह १ भरत १ ऐरावर्त के मध्य भाग में हैं। १६ वक्षार-१६ १६ विजय में सीता, सीतोदा नदी से ८ ८ विजय के ४ भाग होगये हैं इसके ७ अन्तर हैं। जिनमें ४ वक्षार पर्वत और ३ अतर नदी हैं। एक एक विभाग में ४ वक्षार पर्वत एवं ४ विभागों में १६ वक्षार हैं। इनके नाम–चित्र विचित्र,निलन, एकशैल, त्रिकुट,वैश्रमण, अजन, मयाजन, अंकावाई, पंवमावाई, आशीविष, सुहावह, चन्द्र, सूर्य, नाग, देव।

६ वर्ष घर–७ मनुष्य क्षेत्रों के मध्य में ६ वर्षधर

(चूल हेमवन्त, महा हेमवन्त, निषिध, नीलवन्त, रूपी और शिखरी) पर्वत हैं।

४ गज दंता पर्वत–देव कुरु उत्तर कुरु और विजय के बीच में आये हुवे हैं। नाम–गंधमर्दन, मालवंत, विद्युत्प्रभा और सुमानस।

४ वृतल वैताढ्य–हेमवास, हिरणवास, हरिवास, रम्यकवास के मध्य में हैं। नाम–सद्दावाई, वयडावाई गन्धावाई, मालवता।

४ चित विचितादि–निषिध पर्वत के पास सीता नदी के दोनों तट पर चित और विचित पर्वत हैं। तथा नीलवत के पास सीतोदा के दो तट पर जमग और समग दो पर्वत हैं।

१ जम्बू द्वीप के बराबर मध्य में मेरु पर्वत है।

पर्वत के नाम	ऊंचाई	गहराई	विस्तार
२०० कंचन गिरि पर्वत	१०० यो.	२५ यो.	१०० यो.
३४ दीर्घ वैताढ्य "	२५ यो.	२५ गाउ	५० यो.
१६ वखार "	५०० यो.	५०० गाउ	५०० यो.
			यो. कला
चूल हेमवत और शिखरी	१०० यो.	२५ यो.	१०५२-१२
महा हेमवंत और रूपी	२०० यो.	५० यो.	४२१० १०
निषिध और नीलवत	४०० यो.	१०० यो	१६८४२-२
४ गजदंता पर्वत "	५०० यो.	१२५ यो.	३०२०६ ६

४ धृतल वैताटा	१००० यो. २५० यो.	१०००-०
चित,विचि.,जमग,मुमग	१००० यो.२५० यो.	१०००-०
मेरु पर्वत	९९००० यो.१०००यो.	१००९० यो.

मेरु पर्वत पर ४ वन हैं—भद्रशाल, नदन, सुमानस और पण्डक वन।

१ भद्रशाल वन—पूर्व—पश्चिम २२००० यो० उत्तर दक्षिण २५० यो० विस्तार है। मेरु से ५० यो. दूर चार ही दिशाओं में ४ सिद्धायतन हैं जिनमें जिन प्रतिमा हैं। मेरु से ईशान में ४ पुष्करणी (वावड़ियें) हैं ५० यो. लम्बी; २५ यो. चौड़ी १० यो. गहरी है। वेदिका वन-खण्ड तोरणादि युक्त हैं। चार वावड़ियों के अन्दर ईशानेन्द्र का महल है। ५०० यो ऊंचा, २५० यो. विस्तार वाला है। नीचे लिखी रचना अनुसार अग्निकोन में ४ वावड़ियें हैं—उत्पला, गुम्मा, निलना, उज्वला के अन्दर शक्रेन्द्र का महल है।

वायु कोन में ४—लिंगा, भिगनासा, अजना, अंजन प्रभा के अन्दर शक्रेन्द्र का प्रासाद सिंहासन है।

नैऋत्य कोन में ४—श्रीकन्ता, श्रीचन्दा, श्रीमहीता, श्रीनलीता में ईशानेन्द्र का प्रासाद सिंहासन है

आठ विदिशा में ८ हस्तिकूट पर्वत हैं। पद्मुत्तर, नीलवत, सुहस्ति, अजनगिरि, कुमुद, पोलाश, विठिस और रोयणगिरि ये प्रत्येक १२५ योजन पृथ्वी में ५००

सुकच्छ ,,	सुवच्छ ,,	सुपद्म ,,	सुविप्रा ,,
महा कच्छ ,,	महा वच्छ ,,	महा पद्म ,,	महा विप्रा ,,
कच्छ वती ,,	वच्छ वती ,,	पद्मवती ,,	विप्रावती ,,
आवर्ता ,,	रमा ,,	संखा ,,	वग्गु ,,
मगला ,,	रमक ,,	कुमुदा ,,	सुवग्गु ,,
पुरकला ,,	रमणीक ,,	निलीका ,,	गन्धीला ,,
पुष्कलावती ,,	मगलावती ,,	सलीलावती ,,	गंधीलाव ,,

प्रत्येक विजय १६५९२ यो०२कला दक्षिणोत्तर लम्बी और २२२।।। यो. पूर्व पश्चिम में चौडी है। ये ३२ तथा १ भरत क्षेत्र, १ ऐरावत् क्षेत्र एवं ३४ चक्रवर्ती हो सकते हैं। इन ३४ विजयों में ३४ दीर्घ वैताढ्य पर्वत, ३४ तमस गुफा, ३४ खण्ड पभा गुफा, ३४ राजधानी ३४ नगरी ३४ कृत माली देव, ३४ नट माली देव, ३४ ऋषभ कूट, ३४ गंगा नदी, ३४ सिन्धु नदी ये सब शाश्वत हैं।

(६) द्रह द्वार—६ वषधर पर्वतों पर छे, छ, ५ देव-कुरु में और ५ उत्तर कुरु में हैं।

द्रह के नाम (कुड)	किस पर्वत पर हैं	लम्बाई यो.	चौड़ाई यो.	गहराई	देवी	कमल
पद्म द्रह	चूल हेमवन्त	१०००	५००	१०	श्री	१२०५०१२०
महा पद्म ,,	महा हेमवन्त	२०००	१०००	१०	ह्री	२४१००२४०
तिगच्छ ,,	निषिध	४०००	२०००	१०	धृति	४८२००४८०
केशरी ,,	नीलवत	,,	,,	,,	बुद्धि	,,

म. पु. ,, रूपी २००० १००० ,, ह्री २४१००२४०
पुंडरीक ,, शिखरी १००० ५०० ,, कीर्ति १२०५०१२०
१० द्रह जमीनपर १००० ५०० ,,१० दे ४१००२४०
कुल १६२८०१६७०

देव कुरु के ५ द्रह—निषेध, देव कुरु, सूर्य, सुलस और विद्युत प्रभ द्रह।

उत्तर कुरु के ५ द्रह—नीलवत, उत्तर कुरु, चन्द्र, ऐरावत और मालवत द्रह।

(१०) नदी द्वार—१४५६०६० नदियें हैं।

विस्तार तीच अनुसार—

नि. ऊ=निकलता ऊंडी प्र. ऊ=समुद्रमें प्रवेश करते ऊंडी
नि. वि= ,, विस्तार प्र. वि= ,, ,, विस्तार

नदी	पर्वत से	कुंड मे	नि ऊ	नि वि	प्र ऊ	प्र वि	परि नदि
१ गङ्गा	चूल हेम	पद्म	०॥गाउ	६। यो	१। यो	६२॥यो	१४०००
२ सिन्धु	,,		,,	,	,		,
३ रोहिता	,,	,	१गाउ	१२॥ यो	२॥ यो	१२५ यो	२८०००
४ रोहितसा	म हेम	म पद्म	,,	,	,		,
५ हरिकन्ता	,,	,,	२ गाउ	२५ यो	५ यो	२५०यो	५६०००
६ हरिसलीला	निषिध	तिगच्छ	,	,	,,	,	,,
७ सीता	,,	,,	४ गाउ	५० यो	१० यो	५००यो	५३२०००
८ सीतोदा	नीलवत	केशरी	,	,	,,		,,
९ नरकता	,,	,	२ गाउ	२५ यो	५ यो,	२५०यो	५६०००
१० नारीकता	रूपी	महापुंड	,,	,	,	,,	,
११ रूपकूला	,,	,,	१ गाउ	१२॥यो	२॥ यो	१२५यो	२८०००
१२ सुवर्णकूला	शिखरी	पुंडरीक	,,	,			,,
१३ रक्ता	,,	,,	०॥गाउ	६। यो	१। यो	६२॥यो	१४०००
१४ रक्तोदा	,,	,,	,,	,,	,,	,	,
७८ विदेह की ६४ नदी	कुंडों से	प्रपातपर	,,	,,	,,	,,	,,

प्रत्येक नदी ऊपर बताये हुवे पर्वत तथा कुंडसे निकल कर आगे बहती हुई गगा प्रभास सिन्धु प्रभास आदि कुड में गिरती है । यहाँ से आगे जाने पर आधे परिवार जितनी नदियें मिलती हैं जिनके साथ बीच में आये हुवे पहाड़ को तोड़ कर आगे बहती हैं जहाँ आधे परिवार की नदियें मिलती हैं जिनके साथ बहकर जम्बूद्वीप की जगति से बाहर लवण समुद्र में मिलती है ।

गंगा प्रभास आदि कुंड में गगा द्वीप आदि नामक एकेक द्वीप हैं जिनमें इसी नाम की एकेक देवी सपरिवार रहती हैं इन कुड, द्वीप और देवियों के नाम शाश्वत हैं ।

यन्त्र के अनुसार ७८ मूल नदियें और उन की परिवार की (मिलने वाली) १४५६००० नदियें हैं इस उपरान्त महाविदेह के ३२ विजयों के २८ अन्तर है जिन में पहले लिखे हुए १६ वखार पर्वत और शेष १२ अतर में १२ अतर नदियें हैं इनके नामः-गृहवन्ती, द्रहवन्ती, पकवन्ती, तत जला, मत जला, उगमजला चीरोदा, सिंह सोता, अतो वहनी, उपमालनी, फेनमालनी और गभीर मालनी । ये प्रत्येक नदियें १२५ यो. चौड़ी, २॥ यो. ऊँडी (गहरी) और १६५९२ यो. २ कला की लम्बी हैं एव कुल नदियें १४५६०९० हैं । विशेष विस्तार जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र से जानना ।

॥ इति खण्डा जोयणा (ना) सम्पूर्ण ॥



धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण

(१) नीति मान होने कारण कि नीति धर्म की माता है।

(२) हिम्मतवान व बहादुर होवे कारण कि कायरों से धर्म बन सकता नहीं।

(३) धैर्यवान होवे किंवा प्रत्येक कार्य में आतुरता न करे।

(४) बुद्धिमान होवे किंवा प्रत्येक कार्य अपनी बुद्धि से विचार कर करे।

(५) असत्य से घृणा करने वाला होवे और सत्य बोलने वाला होवे।

(६) निष्कपटी होवे, हृदय साफ स्फटिकरत्न मय होवे।

(७) विनयवान तथा मधुर भाषी होवे।

(८) गुण ग्राही होवे और स्वात्म-श्लाघा न करे (स्वय अपने गुण अन्य से आदर पाने के लिए न कहे)।

(९) प्रतिज्ञा-पालक होवे अर्थात् जो नियमादि लिए होवें उन्हें बराबर पाले।

(१०) दयावान होवे परोपकार की बुद्धि होवे।

(११) सत्य धर्म का अर्थी होवे और सत्य का पक्ष लेने वाला होवे।

(१२) जितेन्द्रिय होवे कषाय की मन्दता होवे।

(१३) आत्म कल्याण की दृढ इच्छा वाला होवे।

(१४) तत्त्व विचार में निपुण होवे तत्त्व में ही रमन,

(१५) जिसके पास से धर्म की प्राप्ति हुई होवे उसका उपकार कभी भी नहीं भूले और समय आने पर उपकारी के प्रति प्रत्युपकार करने वाला होवे।

॥ इति धर्म के सम्मुख होने के १५ कारण सम्पूर्ण ॥





मार्गानुसारी के ३५ गुण

१ न्याय सपन्न द्रव्य प्राप्त करे २ सात कुव्यसन का त्याग करे ३ अभक्ष्य का त्यागी होवे ४ गुण परीक्षा से सम्बन्ध (ग्र) जोड़े ५ पाप–भीरु ६ देश हित कर वर्तन वाला ७ पर निन्दा का त्यागी ८ अति प्रकट, अति गुप्त तथा अनेक द्वार वाले मकान में न रहे ९ सद्गुणी की संगति करे १० बुद्धि के आठ गुणों का धारक ११ कदाग्रही न होवे (सरल होवे) १२ सेवाभावी होवे १३ विनयी १४ भय स्थान त्यागे १५ आय–व्यय का हिसाब रक्खे १६ उचित (सभ्य) वस्त्राभूषण पहिने १७ स्वाध्याय करे (नित्य नियमित धार्मिक वाचन, श्रवण करे) १८ अजीर्ण में भोजन न करे १९ योग्य समय पर (भूख लगने पर मित, पथ्य नियमित) भोजन करे २० समय का सदुपयोग करे २१ तीन पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) में विवेकी २२ समयज्ञ (द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का ज्ञाता) होवे २३ शांत प्रकृति वाला २४ ब्रह्मचर्य को ध्येय समझने वाला २५ सत्यव्रत धारी २६ दीर्घदर्शी २७ दयालु २८ परोपकारी २९ कृतघ्न न होकर कृतज्ञ होवे (अपकारी पर भी उपकार करे ३० आत्म प्रशंसा न इच्छे, न करे न करावे ३१ विवेकी (योग्यायोग्य का भेद समझने वाला) होवे ३२ लज्जावान होवे ३३ [illegible] ३४ षड्रिपु ([illegible]

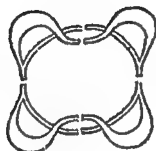
* जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल *

१ मोक्ष की अभिलाषा रखने से २ उग्र तपश्चर्या करने से ३ गुरु मुख द्वारा सूत्र सिद्धान्त सुनने से ४ आगम सुन कर वैसी ही प्रवृत्ति करने से ५ पाँच इन्द्रियों को दमन करने से ६ छकाय जीवों की रक्षा करने से ७ भोजन करने के समय साधु भाइयों की भावना भावने से ८ सद्ज्ञान सीखने व सिखाने से ९ नियाणा रहित एक कोटी से व्रत में रहता हुवा नव कोटी से व्रत प्रत्याख्यान करने से १० दश प्रकार की वैयावृत्य करने से ११ कषाय को पतले करके निर्मूल करने से १२ शक्ति होते हुवे क्षमा करने से १३ लगे हुवे पापों की तुरन्त आलोचना करने से १४ लिये हुवे व्रतों को निर्मल पालने से १५ अभयदान सुपात्र दान देने से १६ शुद्ध मन से शीयल (ब्रह्मचर्य) पालने से १७ निर्वद्य (पाप रहित) मधुर वचन बोलने से १८ ग्रहण किये हुवे संयम भार को अखण्ड पालने से १९ धर्म-शुक्ल ध्यान ध्याने से २० हर महीने ६-६ पौषध करने से २१ दोनों समय आवश्यक (प्रतिक्रमण) करने से २२ पिछली रात्रि में धर्म जागरण करते हुवे तीन मनोरथादि चिंतवने से २३ मृत्यु समय आलोचनादि से शुद्ध होकर समाधि पण्डित मरण करने से ।

इन २३ बोलों को सम्यक् प्रकार से जान कर सेवन करने से जीव जल्दी मोक्ष में जावे।

॥ इति जल्दी मोक्ष जाने के २३ बोल सम्पूर्ण ॥





तीर्थंकर गोत्र (नाम) बान्धने के २० कारण

(श्री ज्ञाता सूत्र, आठवां अध्ययन)

१ श्री अरिहंत भगवान् के गुण कीर्तन करने से-
२ श्री सिद्ध " " "
३ आठ प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) का आराधन करने से।
४ गुणवंत गुरु के गुण कीर्तन करने से।
५ स्थविर (वृद्ध मुनि) के गुण कीर्तन करने से।
६ बहुश्रुत के " "
७ तपस्वी " " "
८ सीखे हुवे ज्ञान को वारवार चिंतवने से।
९ समकित निर्मल पालने से।
१० विनय (७-१०-१३४ प्रकारके) करने से।
११ समय समय पर आवश्यक करने से।
१२ लिये हुवे व्रत प्रत्याख्यान निर्मल पालने से।
१३ शुभ (धर्म-शुक्ल) ध्यान ध्याने से।
१४ बारह प्रकार की निर्जरा (तप) करने से।
१५ दान (अभय दान-सुपात्र दान) देने से।
१६ वैयावृत्य (१० प्रकार की सेवा) करने से।

१७ चतुर्विध संघ को शान्ति–समाधि (सेवा–शोभा) देने से
१८ नया २ अपूर्व तत्त्व ज्ञान पढ़ने से।
१९ सूत्र सिद्धान्त की भक्ति (सेवा) करने से।
२० मिथ्यात्व नाश और समकित उद्योत करने से।

जीव अनंतानंत कर्मों को खपाते हैं। इन सत्कार्यों को करते हुवे उत्कृष्ट रसायण (भावना) भावे तो तीर्थंकर गोत्र कर्म बान्धे।

॥ इति तीर्थंकर गोत्र बान्धने के २० कारण ॥



परम कल्याण के ४० बोल

गुण		दृष्टान्त	सूत्र की साची
१ समकित निर्मल पालने से	परम कल्याण होवे	श्रेणिक महाराज	ठाणाग सूत्र
२ नियाणा रहित तपश्चर्या मे	,,	तामली तापस	भगवती ,,
३ तीन योग निश्चल करने से	,,	गजसुकुमाल मुनि,	अंतगढ ,,
४ समभाव सहित क्षमा करने से	,,	अर्जुन माली	,, ,,
५ पांच महाव्रत निर्मल पालने से	,,	गौतम स्वामी	भगवती ,,
६ प्रमाद छोड़ अप्रमादी होने से	,,	शैलग राजर्षि	ज्ञाता ,,
७ इन्द्रिय दमन करने से	,,	हरकेशी मुनि	उ.ध्यान ,,
८ मित्रों में माया कपट न करने से	,,	मल्लिनाथ प्रभु	ज्ञाता ,,
६ धर्म चर्चा करने से	,,	केशी गौतम	उ.ध्ययन.
१० सत्य धर्म पर श्रद्धा करने से	,,	वरुण नाग नतुये का मित्र	भगवती,,
११ जीवों पर करुणा करने से	,, ,,	मेघ कुमार(हाथी के भव में)	ज्ञाता ,,

२३ चतुर्विध संघकी वैयावच से.	,,	सनतकुमार चक्र० पूर्व भव में	भगवती ,,
२४ उत्कृष्ट भावसे मुनि सेवा करने से	,,	बाहुबल जी पूर्व भव में	ऋषभ देव चरित्र
२५ शुद्ध अभिग्रह करने से	,,	पांच पाण्डव	ज्ञाता सूत्र
२६ धर्म दलाली ,,	,,	श्रीकृष्ण वासुदेव	अंतगढ ,,
२७ सूत्र ज्ञान की भक्ति	,,	उदाई राजा	भगवती ,,
२८ जीव दया पालने से	,,	धर्मरुचि अणगार	ज्ञाता ,,
२९ व्रत से गिरते ही सावधान होने से	,,	श्रेणिक अनगार	अवश्यक
३० आपत्ति आने पर धैर्य रखने से	,,	खंदक अणगार	उत्तराध्ययन ,,
३१ जिन राज की भक्ति करने से	,,	प्रभावती रानी	,, ,,
३२ प्राणों का मोह छोड़ कर भी दया पालने से	,,	मेघरथ राजा	शान्तिनाथ चरित्र
३३ शक्ति होने पर भी क्षमा करने से	,,	प्रदेशी राजा	रायप्रश्नीय सूत्र
३४ सहोदर भाइयों का भी मोह छोड़ने से	,,	राम बलदेव	६३श्ला पु. चरित्र
३५ देवादि के उपसर्ग सहने से	,,	काम देव	उपासक सूत्र

३६ देव गुरु वदन में निर्भीक होने से	सुदर्शन शेठ	अतगढ़ सूत्र
३७ चर्चा से वादियों को जीतने से	मदुक श्रावक	भगवती ,,
३८ मिले हुवे निमित पर शुभ भावना से,,	आर्द्र कुमार	सूत्रकृताग ,,
३६ एकत्व भावना भावने से	नमिराजर्षि	उत्तराध्यान ,,
४० विषय सुख में गृद्ध न होने से	जिनपाल	ज्ञाता ,,

॥ इति परम कल्यान के ४० बोल सम्पूर्ण ॥





२३ चतुर्विध संघकी वैयावच्च से,	,,	सनतकुमार चक्र० पूर्व भव में	भगवती ,,
२४ उत्कृष्ट भावसे मुनि सेवा करने से	,,	बाहुबल जी पूर्व भव में	ऋषभ देव चरित्र
२५ शुद्ध अभिग्रह करने से,,		पांच पाण्डव	ज्ञाता सूत्र
२६ धर्म दलाली ,,	,,	श्रीकृष्ण वासुदेव	अंतगढ ,,
२७ सूत्र ज्ञान की भक्ति ,,		उदाई राजा	भगवती ,,
२८ जीव दया पालने से ,,		धर्मरुचि अणगार	ज्ञाता ,,
२९ व्रत से गिरते ही सावधान होने से	,,	अरणिक अनगार	अवश्यक
३० आपत्ति आने पर धैर्य रखने से	,,	खंदक अणगार	उत्तराध्ययन ,,
३१ जिन राज की भक्ति ,, करने से		प्रभावती रानी	,, ,,
३२ प्राणों का मोह छोड़,, कर भी दया पालने से		मेघरथ राजा	शान्तिनाथ चरित्र
३३ शक्ति होने पर भी ,, क्षमा करने से		प्रदेशी राजा	रायप्रश्नीय सूत्र
३४ सहोदर भाइयों का ,, भी मोह छोड़ने से		राम बलदेव	६३श्ला पु. चरित्र
३५ देवादि के उपसर्ग ,, सहने से		काम देव	उपासक सूत्र

३६ देव गुरु वंदन में निर्भीक होने से ,,	सुदर्शन शेठ	अवगढ़ सूत्र
३७ चर्चा से वादियों को जीतने से ,,	मण्डूक श्रावक	भगवती ,,
३८ मिले हुवे निमित पर शुभ भावना से,,	आर्द्र कुमार	सूत्रकृतांग ,,
३६ एकत्व भावना भावने से ,,	नमिराजर्षि	उत्तराध्यान ,,
४० विषय सुख में गृद्ध न होने से ,,	जिनपाल	ज्ञाता ,,

॥ इति परम कल्यान के ४० बोल सम्पूर्ण ॥



* तीर्थंकर के ३४ अतिशय *

१ तीर्थंकर के केश, नख न बढ़े, सुशोभित रहे २ शरीर निरोग रहे ३ लोही मास गाय के दूध समान होवे ४ श्वासोश्वास पद्म कमल जैसा सुगन्धित होवे ५ आहार निहार अदृश्य ६ आकाश में धर्म चक्र चले ७ आकाश में ३ छत्र शोभे तथा दो चामर उड़े ८ आकाश में पाद पीठ सहित सिंहासन चले ९ आकाश में इन्द्रध्वज चले १० अशोक वृक्ष रहे ११ भामण्डल होवे १२ विषम भूमि सम होवे १३ कण्टक ऊंधे (औंधे) हो जावे १४ छः ही ऋतु अनुकूल होवे १५ अनुकूल वायु चले १६ पांच वर्ण के फूल प्रगट होवे १७ अशुभ पुद्गलों का नाश होवे १८ सुगन्धि वर्षा से भूमि सिंचित होवे १९ शुभ पुद्गल प्रगट होवे २० योजन गामी वाणी की ध्वनि होवे २१ अर्ध मागधी भाषा में देशना देवे २२ सर्व सभा अपनी २ भाषा में समझे २३ जन्म वैर, जाति वैर शान्त होवे २४ अन्यमती भी देशना सुने व विनय करे २५ प्रतिवादी निरुत्तर बने (२६) २५ यो. तक किसी जात का रोग न होवे २७ महामारी (प्लेग) न होवे २८ उपद्रव न होवे २९ स्वचक्र का भय न होवे ३० पर लश्कर का भय न होवे ३१ अतिवृष्टि न होवे ३२ अनावृष्टि

न होवे ३३ दुष्काल न पड़े ३४ पहले उत्पन्न हुवे उपद्रव शान्त होवें।

क्रमशः ४ अतिशय जन्म से होवे, ११ अतिशय केवल ज्ञान उत्पन्न होने बाद प्रगटे और १९ अतिशय देव कृत होवे।

॥ इति तीर्थंकर के ३४ अतिशय सम्पूर्ण ॥



२४ ,, ध्यानों में शुक्ल
　　ध्यान बड़ा ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२५ ,, ज्ञान में केवल
　　ज्ञान ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२६ ,, क्षेत्रों में महा
　　विदेह क्षेत्र ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२७ ,, साधुओं में तीर्थंकर ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२८ ,, गोल पर्वतों में
　　कुंडल पर्वत ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
२९ ,, वृक्षों में सुदर्शन वृक्ष ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
३० ,, वनों में नंदन वन ,, ,, ,, ,, ,,
३१ ,, ऋद्धि में चक्रवर्ती
　　की ऋद्धि ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,
३२ ,, योद्धाओं में वासुदेव ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,,

❀ इति ब्रह्मचर्य की ३२ उपमा सम्पूर्ण ❀



—:देवोत्पत्ति के १४ बोलः—

निम्न लिखित १४ बोल के जीव यदि देव गति में जावें तो कहा तक जा सकें?

मार्गणा	जघन्य	उत्कृष्ट
१ असयति भवि द्रव्य देव	भवनपति में	नव ग्रीयवेक में
२ अविराधिक मुनि	सौधर्म कल्पमें	अनुत्तर विमानमें
३ विराधिक मुनि	भवनपति में	सौधर्म कल्प में
४ अविराधिक श्रावक	सौधर्म कल्पमें	अच्युत कल्प में
५ विराधिक श्रावक	भवनपति में	ज्योतिषी में
६ असंज्ञी तिर्यंच	"	व्यन्तर देवी में
७ कंद मूल भक्षक तापस	"	ज्योतिषी में
८ हासी करने वाले मुनि	"	सौधर्म कल्प में
६ परिव्राजक सन्यासी तापस	"	ब्रह्म देवलोक में
१० आचार्यादि निंदक मुनि	"	लांतक "
११ सज्ञी तिर्यंच	"	आठवें "
१२ आजीविक साधु(गोशालापथी)	"	अच्युत "
१३ यंत्र मंत्र करनेवाले अभोगी साधु	"	" "
१४ स्वलिंगी ववन्नगा (सम्यक् श्रद्धा विहीन)	"	नव ग्रीयवेक में

चौदहवें बोल में भव्य जीव है शेष में भव्याभव्य दोनों हैं।

❀ इति देवोत्पत्ति के १४ बोल सम्पूर्ण ❀

षट्द्रव्य पर ३१ द्वार

१ नाम द्वार २ आदि द्वार ३ संठाण द्वार ४ द्रव्य द्वार ५ क्षेत्र द्वार ६ काल द्वार ७ भाव द्वार ८ सामान्य विशेष द्वार ९ निश्चय द्वार १० नय द्वार ११ निक्षेप द्वार १२ गुण द्वार १३ पर्याय द्वार १४ साधारण द्वार १५ साधर्मी द्वार १६ परिणामिक द्वार १७ जीव द्वार १८ मूर्ति द्वार १९ प्रदेश द्वार २० एक द्वार २१ क्षेत्र क्षेत्री द्वार २२ क्रिया द्वार २३ कर्त्ता द्वार २४ नित्य द्वार २५ कारण द्वार २६ गति द्वार २७ प्रवेश द्वार २८ पृच्छा द्वार २९ स्पर्शना द्वार ३० प्रदेशस्पर्शना द्वार और ३१ अल्प बहुत्व द्वार ।

१ नाम द्वार—१ धर्म २ अधर्म ३ आकाश ४ जीव ५ पुद्गलास्तिकाय ६ काल द्रव्य ।

२ आदि द्वार—द्रव्यापेक्षा समस्त द्रव्य अनादि हैं। क्षेत्रापेक्षा लोक व्यापक हैं। अतः सादि हैं केवल आकाश अनादि है। कालापेक्षा षट् द्रव्य अनादि हैं भावापेक्षा षट् द्रव्य में, उत्पाद व्यय अपेक्षा ये सादिसान्त है ।

३ संठाण द्वार—धर्मास्ति काय का संठाण गाड़े के

oo ओधण, समान ।
oooo
oooooo इस प्रकार बढतेरलोकान्त तक असंख्य प्रदेशी
oooooooo

है। इसी प्रकार अधर्मास्ति काय का सठाण, आकाशास्ति काय का सठाण लोक में गले का भूषण समान अलोक में ओघणाकार, जीव तथा पुद्गल का सम्बन्ध अनेक प्रकार का और काल के आकार नहीं। (प्रदेश नहीं इस कारण)

४ द्रव्य द्वार–गुण पर्याय के समूह युक्त होवे उसे द्रव्य कहते हैं। हरेक द्रव्य के मूल ६ स्वभाव हैं। अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, सत्त्व, अगुरुलघुत्व, उत्तर स्वभाव अनन्त हैं। यथा नास्तित्व, नित्य, अनित्य, एक, अनेक, भेद, अभेद, भव्य, अभव्य, वक्तव्य, परम इत्यादि धर्म, अधर्म, आकाश, एक एक द्रव्य हैं। जीव, पुद्गल और काल अनन्त हैं।

५ क्षेत्र द्वार–धर्म, अधर्म, जीव और पुद्गल लोक व्यापक है। आकाश लोकालोक व्यापक है। और काल २॥ द्वीप में प्रवर्तन रूप है और उत्पाद व्यय रूप से लोकालोक व्यापक है।

६ काल द्वार–धर्म, अधर्म, आकाश द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त हैं। क्रिया पेक्षा सादि सांत हैं। पुद्गल द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त है, प्रदेशापेक्षा सादि सांत है। काल द्रव्य द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त समयापेक्षा सादि सान्त है।

७ भाव द्वार–पुद्गल रूपी है। शेष ५ द्रव्य अरूपी हैं।

८ सामान्य-विशेष द्वार–सामान्य से विशेष ५

वान है । जैसे सामान्यतः द्रव्य एक है । विशेषतः ६-६ धर्मास्तिकाय का सामान्य गुण चलन सहाय है । अधर्मा का स्थिर सहाय, आका. का अवगाहदान, काल का वर्तना, जीव. का चैतन्य, पुद्गल, का जीर्ण गलन विध्वंसन गुण और विशेष गुण छः ही द्रव्यों का अनन्त अनन्त है।

९ निश्चय व्यवहार द्वार–निश्चय से समस्त द्रव्य अपने २ गुणों में प्रवृत होते हैं । व्यवहार में अन्य द्रव्यों की अपने गुण से सहायता देते हैं । जैसे लोकाकाश में रहने वाले समस्त द्रव्य आकाश अवगाहन में सहायक होते हैं । परन्तु अलोक में अन्य द्रव्य नहीं अतः अवगाहन में सहायक नहीं होते प्रत्युत अवगाहन में षट्गुण हानि वृद्धि सदा होती रहती है । इसी प्रकार सब द्रव्यों के विषय में जानना ।

१० नय द्वार–अंश ज्ञान को नय कहते हैं । नय ७ है इनके नाम—१ नैगम २ संग्रह ३ व्यवहार ४ ऋजु सूत्र ५ शब्द ६ समभिरूढ और ७ एव भूत नय, इन सातों नय वालों की मान्यता कैसी है ? यह जानने के लिये जीव द्रव्य ऊपर ७ नय उतारे जाते हैं ।

१ नैगम नय वाला–जीव कहने से जीव के सब नामों को ग्र० करे
२ संग्रह " – " " जीव के असंख्य प्रदेशों को "
३ व्यवहार " – " " से त्रस स्थावर जीवों को "
४ ऋजुसूत्र " – " " सुखदुख भोगने वाले जी.को."

५ शब्द " — " " चायक समकिति जीव "
६ समभिरूढ " — " " केवल ज्ञानी " "
७ एवं भूत " — " " सिद्ध अवस्था के " "

इस प्रकार सातों ही नय सब द्रव्यों पर उतारे जा सकते हैं।

११ निक्षेप द्वार—निक्षेप ४—१ नाम २ स्थापना ३ द्रव्य और भाव निक्षेप।

१ द्रव्य के नाम मात्र को निक्षेप कहते हैं।

२ द्रव्य की सदृश तथा असदृश स्थापना की (आकृति को स्थापना निक्षेप कहते हैं।

३ द्रव्य की भूत तथा भविष्य पर्याय को वर्तमान में कहना सो द्रव्य निक्षेप।

४ द्रव्य की मूल गुण युक्त दशा को भाव निक्षेप कहते हैं षट्द्रव्य पर ये चारों ही निक्षेप भी उतारे जा सकते हैं।

१२ गुण द्वार—प्रत्येक द्रव्य में चार २ गुण हैं।

१धर्मास्ति काय में ४गुण अरूपी,
२अधर्मास्ति " " " — " " "
३आकाशास्ति " " — " "
४जीवास्ति काय " " — " चैतन्य, सक्रिय,
योग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य

परन्तु जीव किसी के कारण नहीं । जैसे-जीव कर्ता और धर्मा० कारण मिलने से जीव को चलन कार्य की प्राप्ति होवे । इसी प्रकार दूसरे द्रव्य भी समझना ।

२५ कर्ता द्वार-निश्चय से समस्त द्रव्य अपने २ स्वभाव कार्य के कर्ता हैं । व्यवहार से जीव और पुद्गल कर्ता हैं । शेष अकर्ता हैं ।

२६ गति द्वार-आकाश की गति (व्यापकता) लोकालोक में है । शेष की लोक में है ।

२७ प्रवेश द्वार-एक २ आकाश प्रदेश पर पांचों ही द्रव्यों का प्रवेश है । वे अपनी २ क्रिया करते जारहे हैं । तो भी एक दूसरे से मिलते नहीं जैसे एक नगर में ५ मानस अपने २ कार्य करते रहने पर भी एक रूप नहीं होजाते है ।

२८ पृच्छा द्वार-श्री गौतम स्वामी श्री वीर प्रभु को सविनय निम्न लिखित प्रश्न पूछते हैं ।

१ धर्मा०के १ प्रदेश को धर्मा०कहते हैं क्या ? उत्तर नहीं (एवंभूत नयापेक्षा) धर्मा० काय के १-२-३, लेकर संख्यात असंख्यात प्रदेश,जहा तक [illegible] १ भी प्रदेश बाकी रहे वहा तक उसे धर्मा०नहीं [illegible] मिले हुवे को [illegible] कहते हैं ।

२ वि [illegible]
हुवे पदार्थ [illegible] मा।

ही द्रव्य कहते हैं। इसी तरह सब द्रव्यों के विषय में भी समझना।

३ लोक का मध्य प्रदेश कहा है ?

उत्तर रत्न प्रभा १८०००० योजन की है। उसके नीचे २०००० योजन घनोदधि है। उसके नीचे असंख्य योजन घनवायु, अस० यो० तन वायु और अस० यो० आकाश है इस आकाश के अस० भाग में लोक का मध्य भाग है।

४ अधोलोक का मध्य प्रदेश कहा है, ? उ० पंक-प्रभा के नीचे व आकाश प्रदेश साधिक में।

५ ऊर्ध्व लोक का मध्य प्रदेश कहा है ? उ० ब्रह्म देवलोक के तीसरे रिष्ट परतल में।

६ तिर्छ लोक का मध्य प्रदेश कहा है ? उ० मेरु पर्वत के ८ रुचक प्रदेशों में।

इसी प्रकार धर्मा०, अधर्मा०, आकाशा० काय द्रव्य के प्रश्नोत्तर समझना. जीव का मध्य प्रदेश ८ रुचक प्रदेशों में है. काल का मध्य प्रदेश वर्तमान समय है।

२६ स्पर्शना द्वार–धर्मास्ति काय अधर्मा० लोकाकाश, जीव और पुद्गल द्रव्य को सम्पूर्ण स्पर्श रहे हैं। काल को कहीं स्पर्शे, कहीं न स्पर्शे, इसी प्रकार शेष ४ अस्तिकाय स्पर्शे काल द्रव्य २॥ द्वीप में समस्त द्रव्यों को स्पर्शे अन्य क्षेत्र में नहीं।

२० प्रदेश स्पर्शना द्वार—

धर्मा० का एक प्रदेश धर्मा० के कितने प्रदेशों को स्पर्शे ? ज ३ प्र उ ६ प्र को स्पर्शे
" " " " अधर्मा० " " " " " ? ज ४ प्र उ ७ प्र को स्पर्शे
" " " " आकाशा० " " " " " ? ज ७ प्र उ ७ प्र " "
" " " " जीव पुद्गल " " " " " ? अनन्त प्रदेशों को स्पर्शे
" " " काल द्रव्य " " " " " ? स्यात् अनन्त स्पर्शे स्यात् नहीं

एवं अधर्मा० प्रदेश स्पर्शना समझनी।

आकाशा० का १ प्रदेश धर्मा० का ज० १-२-३ प्रदेश, उ० ७ प्रदेश को स्पर्शे, शेष प्रदेश स्पर्शना धर्मास्तिकायवत् जानना।

जीव का १ प्रदेश धर्मा० का ज ४ उ ७ प्रदेश को स्पर्शे
पुद्गल० " " " " " " " " " "
काल द्रव्य एक समय " " प्रदेश को स्यात् स्पर्शे, स्यात् नहीं
} शेष प्र० स्पर्शना धर्मास्तिकाय वत्

पुद्गल० क २ प्रदेश " ज० दुगणा से दो अधिक (६) प्रदेश को स्पर्शे और उ० पाच गुणे से २ अधिक ५×२=१०×२=१२ प्रदेश स्पर्शे

इसी प्रकार ३-४-५ जीव अनन्त प्रदेश ज० दुगणे से २ अधिक उ० पांच गुणे से २ अधिक प्रदेश को स्पर्शे।

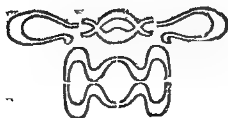
२१ अल्प बहुत्व द्वारः—द्रव्य अपेक्षा—धर्म, अधर्म आकाश परस्पर तुल्य है, उनसे जीव द्रव्य अनन्त गुणा, उनसे पुद्गल अनन्त गुणा और उनसे काल अनन्त।

प्रदेश- अपेक्षा- सर्व से कम धर्म, अधर्म का प्रदेश उनसे जीव के प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे पुद्गल के प्रदेश

अनन्त गुणे, उनसे काल द्रव्य के प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे आकाश-प्रदेश अनन्त गुणा।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अल्पबहुत्व: सर्व से कम धर्म, अधर्म, आकाश के द्रव्य, उनसे धर्म अधर्म के प्रदेश असंख्यात गुणा। उनसे जीव द्रव्य अन० उनसे जीव के प्रदेश अस० उनसे पुद्गल द्रव्य अन० उनसे पु० प्रदेश अस०, उनसे काल के द्रव्य प्रदेश अनं०, उन से आकाश प्रदेश अनन्त गुणा।

॥ इति षट् द्रव्य पर ३१ द्वार सम्पूर्ण ॥



चार ध्यान

ध्यान के ४ भेद-आर्त्त, रौद्र, धर्म और शुक्ल ध्यान

(१) आर्त्त ध्यान के ४ पाये--१मनोज्ञ वस्तु की अभिलाषा करे। २ अमनोज्ञ वस्तु का वियोग चिंतवे। ३ रोगादि अनिष्ट का वियोग चिंतवे ४ पर भव के सुख निमित निगाणा करे।

आर्त्त ध्यान के ४ लक्षण १चिंता शोक करना २ अश्रुपात करना ३ आक्रन्द (विलाप) शब्द करके रोना ४ छाती माथा (मस्तक) आदि कूटकर रोना।

(२) रौद्र ध्यान के ४ पाये-हिंसामें, झूठ में, चोरी में, कारागृह में कसाने में आन द मानना (य पाप करके व कराकर के प्रसन्न होना)।

रौद्र ध्यान के ४ लक्षण--१ तुच्छ अपराध पर बहुत गुस्सा करना, द्वेष करना ४ बड़े अपराध पर अत्यन्त क्रोध द्वेष करे। ३ अज्ञानता से द्वेष करे और ४ जाव-जीव तक द्वेष रक्खे।

(३) धर्म ध्यान के ४ पाये—१वीतराग की आज्ञा का चितवन करे २ कर्म आने के कारण (आश्रव) का विचार करे ३ शुभाशुभ कर्म विपाक को विचारे ४ लोक संस्थान (आकार) का विचार करे।

धर्म ध्यान ४ लक्षण -१ वीतराग आज्ञा की रुचि

२ निसर्ग (ज्ञान से उत्पन्न) रुचि ३ उपदेश रुचि ४ सूत्र-सिद्धान्त-आगम रुचि।

धर्म ध्यान के ४ अवलम्बन-वाचना, पृच्छना परावर्तना और धर्म कथा।

धर्म ध्यान की ४ अनुप्रेक्षा-१एगचाणुपेहा= जीव अकेला आया, अकेला जायगा एव जीव के अकेले पन (एकत्व) का विचार। २ अणिचाणु पेहा=संसार की अनित्यता का विचार ३ असरणाणु पेहा=ससार में कोई किसी को शरण देन वाला नहीं, इसका विचार और ४ संसाराणुपेहा=संसार की स्थिति (दशा का विचार करना।

(४) शुक्ल ध्यान के ४ पाये-१ एक एक द्रव्य में भिन्न भिन्न अनेक पर्याय-उपनवा, विन्हेवा, धुवेवा, आदि भावों का विचार करना २ अनेक द्रव्यों में एक भाव (अगुरु लघु आदि) का विचार करना। ३ अचलावस्था में तीनों ही योगों का निरोध करना (रोकना) ३ चौदहवें गुणस्थानक की सूक्ष्म क्रिया से भी निवर्तन होने का चितवना।

शुक्ल ध्यान के ४ लक्षण-१देवादि के उपसर्ग से चलित न होवे २ सूक्ष्म भाव (धर्म का) सुन, ग्लानि न लावे। ३ शरीर-आत्मा को भिन्न २ चिंतवे और ४ शरीर को अनित्य समझ कर व पुद्गल को पर वस्तु जानकर इनका त्याग करे।

शुक्ल ध्यान के ४ अवलम्बन-१ क्षमा २ निर्लोभता ३ निष्कपटता ४ मदरहितता ।

शुक्ल ध्यान की ४ अनुप्रेक्षा-१ इस जीव ने अनन्त वार संसार भ्रमण किया है ऐसा विचारे २ संसार की समस्त पौद्गलिक वस्तु अनित्य है। शुभ पुद्गल अशुभ रूपसे और अशुभ शुभ रूप से परिणमते हैं, अतः शुभाशुभ पुद्गलों में आसक्त बन कर राग द्वेष न करना ३ संसार परिभ्रमण का मूल कारण शुभ कर्म है कर्म बन्ध का मूल कारण ४ हेतु हैं। ऐसा विचारे। ४ कर्म हेतुओं को छोड़ कर स्वसत्ता में रमण करने का विचार करना- ऐसे विचारों में तन्मय (एक रूप) हो जाने को शुक्ल ध्यान कहते हैं।

॥ इति ४ ध्यान सम्पूर्ण ॥





आराधना पद

श्री भगवतीजी सूत्र, शतक ८ उद्देशा १०

आराधना ३ प्रकार की—ज्ञान की, दर्शन (समकित) की और चारित्र की आराधना।

ज्ञानाराधना—उ० १४ पूर्व का ज्ञान, मध्यम ११ अंग का ज्ञान, ज० ८ प्रवचन का ज्ञान।

दर्शनाराधना—उ० क्षायक समकित, मध्यम क्षयोपशम समकित ज० सास्वादान समकित।

चारित्राराधना—उ० यथाख्यात चारित्र, मध्यम परिहार विशुद्ध चारित्र, ज० सामायिक चारित्र।

उ० ज्ञान आ० में दर्शन आ० दो (उत्कृष्ट और मध्यम)
उ० " " चारित्र " " (" ")
उ० दर्शन " " " तीन (ज० म० उ०)
उ० " " ज्ञान " " (")
उ० चारित्र" " " " (")
उ० " " दर्शन " " (")
उ० ज्ञान " वाला ज० १ भव करे, उ० २ भव करे
म० " " " २ " " " ३ " "
ज० " " " ३ " " " १५ " "

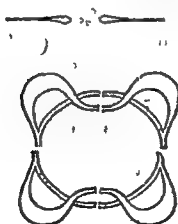
दर्शन और चारित्र की आराधना भी ऊपर अनुसार।

जीवों में ज्ञान, दर्शन और चारित्र की आराधना उत्कृष्ट, मध्यम, और जघन्य रीति से हो सकती है। इस पर निम्न लिखित १७ भागा (प्रकार) हो सकते है।

(इनके चिह्न-उ० ३, म० २, ज० १, समझना, क्रम-ज्ञान, दर्शन, चारित्र समझना)

३-३-३	२-३-२	२-१-२	१-३-१
३-३-२	२-३-१	२-१-१	१-२-२
३-२-२	२-२-२	१-३-३	१-२-१
२-३-३	२-२-१	१-३-२	१-१-२
			१-१-१

❀ इति आराधना पद सम्पूर्ण ❀



ॐ विरह पद ॐ

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, ६ ठा० पद)

ज० विरह पड़े १ समय का, उ० विरह पड़े तो समुच्य ४ गति, सन्नी मनुष्य और सन्नी तिर्यंच में १२ मुहूर्त का १ ली नरक, १० भवनपति, वाण व्यन्तर, ज्योतिषी, १२ देवलोक और असंज्ञी मनुष्य में २४ मुहूर्त का दूसरी नरक में ७ दिन का, तीसरी नरक मे १५ दिन का, चौथी नरक में १ माह का, पाचवी नरक में २ माह का, छट्ठी में ४ माह का और सातवी नरक में, सिद्ध गति तथा ६४ इन्द्रों में विरह पड़े तो ६ माह का।

तीसरे देवलोक में ९ दिन २० मुहूर्त का, चौथे देवलोक में १२ दिन १० मु०
पाचवें ,, २२ ,, १५ ,, छट्ठे ,, ४५ दिन
सातवें ,, ८० ,, का आठवें ,, १००
९—१० ,, सकड़ों माह का ११-१२ ,, सैंकडों वर्षों का
१ ली त्रिक में सं०सैंकड़ों वर्षों का, दूसरी त्रिक में स० हजारां वर्षों का
तीसरी ,, ,, लाखों ,, चार अनुत्तर विमान में पल्य के असख्यातवें भाग का और सवार्थ सिद्ध में पल्य के सख्यातवें भाग का विरह पड़े।

५ स्थावर में विरह नहीं पड़े, ३ विकलेन्द्रिय और असंज्ञी तिर्यंच में अन्तर्मुहूर्त का विरह पड़े चन्द्र सूर्य ग्रहण का विरह पड़े तो ज० ६ माह का उ० चन्द्र का ४२ माह का और सूर्य का ४८ वर्ष का पड़े भरत क्षेत्र में साधु साध्वी, श्रावक, श्राविका का विरह पड़े तो ज० ६३

हजार वर्ष का और अरिहंत, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेवों का० ज० ८४ हजार वर्ष का, उ० देश उणा १८ क्रोड़ा-क्रोड़ सागरोपम का विरह पड़े।

❀ इति विरह पद सम्पूर्ण ❀





संज्ञा पद

(श्री पन्नवणा सूत्र, आठवा पद)

संज्ञा-जीवों की इच्छा संज्ञा १० प्रकार की है। आहार, भय, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, लोक और ओघ संज्ञा।

आहार संज्ञा-४ कारण से उपजे-१ पेट खाली होने से २ क्षुधा वेदनीय के उदय से ३ आहार देखने से ४ आहार की चिंतवना करने से।

भय संज्ञा-४ कारण से उपजे १ अधैर्य रखने से २ भय मोह के उदय से ३ भय उत्पन्न करने वाले पदार्थ देखने से ४ भय की चिंतवना करने से।

मैथुन संज्ञा ४ कारण से उपजे-१ शरीर पुष्ट बनाने से २ वेद मोह के कर्मोदय से ३ स्त्री आदि को देखने से ४ काम भोग का चिंतवन करने से।

परिग्रह संज्ञा ४ कारण से उपजे-१ ममत्व बढाने से २ लोभ मोह के उदय से ३ धन संपति देखने से ४ धन परिग्रह का चिंतवन करने से।

क्रोध, मान माया, लोभ संज्ञा ४ कारण से उपजे-१ क्षेत्र (खुली जमीन) के लिये २ वस्तु (ढंकी हुई जमीन मकानादि) के लिये, ३ शरीर उपाधि के लिये ४ धन्य धान्यादि औषधि के लिये।

लोक संज्ञा-अन्य लोगा को देख कर स्वय वैसा ही कार्य करना।

ओघ संज्ञा-शून्य चित्त से विलाप करे, घास तोड़े प्रथ्वी (जमीन) खोदे आदि।

नरकादि २४ दण्डक में दश दश संज्ञा होवे। किसी में सामग्री अधिक मिल जाने से प्रवृति रूप से है। किसी में सत्ता रूप से है, संज्ञा का अस्तित्व छट्टे गुणस्थान तक है। इनका अल्प बहुत्व—

आहार, भय, मैथुन, और परिग्रह संज्ञा का अन्प बहुत्व

नारकी में सर्व से कम मैथुन, उस से आहार स० उस से परिग्रह सं० भय सं०, संख्या० गुणी।

तिर्यंच में सर्व से कम परिग्रह उससे मैथुन सं० भय सं०, आहार संख्या० गुणी।

मनुष्य में सर्व से कम भय उससे आहार सं०, परिग्रह सं०, मैथुन संख्या० गुणी।

देवता में सर्व से कम आहार उस से भय सं०, मैथुन स०, परिग्रह संख्या० गुणी।

क्रोध, मान, माया और लोभ संज्ञाका अल्प बहुत्व

नारकी में सर्व से कम लोभ, उससे माया सं० मान सं० क्रोध संख्या० गुणी।

तिर्यंच में सर्व से कम मान, उस से क्रोध विशेष, माया विशेष लोभ विशेष अधिक।

मनुष्य में सर्व से कम मान उस से क्रोध विशेष, माया विशेष लोभ विशेष अधिक।

देवता में सर्व से कम क्रोध उस मे मान संज्ञा, माया संज्ञा, लोभ संख्या० गुणी।

॥ इति संज्ञा पद सम्पूर्ण ॥

* वेदना-पद *

(श्री पन्नवणाजी सूत्र ३५ वां पद)

जीव सात प्रकार से वेदना वेदे-१ शीत २ द्रव्य ३ शरीर ४ शाता ५ असाता(दुख) ६ अभूगर्माया ७ निन्दा द्वार ।

१ वेदना३ प्रकार की--शीत, उष्ण और शीतोष्ण समुच्चय जीव ३ प्रकार की वेदना वेदे । १- २--३ नारकी में उष्ण वेदना वेदे । कारण नेरिया शीत योनिया हैं)। चौथी नारकी (नरक) में उष्ण वेदना के वेदक अनेक (विशेष), शीत वेदना वाला कम । (दो वेदका) पांचवी नारकी में उष्ण वेदना के वेदक कम, शीत वेदना के वेदक विशेष । छट्ठी नरक में शीत वेदना और सातवीं नरक में महाशीत वेदना है शेष २३ दण्डक में तीनों ही प्रकार की वेदना पावे ।

२ वेदना चार प्रकार की -द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव से । समुच्चय जीव और २४ दण्डक में चार प्रकार की वेदना वेदी जाती है ।

द्रव्य वेदना=इष्ट अनिष्ट पुद्गलों की वेदना । क्षेत्र वेदना=नरकादि शुभाशुभ क्षेत्र की वेदना । काल वेदना= शीत उष्ण काल की वेदना । भाव वेदना=मंद तीव्र रस (अनुभाग) की ।

३ वेदना तीन प्रकार की शारीरिक, मानसिक और शारीरिक मानसिक । समुचय जीव में ३ प्रकार की वेदना । सञ्ज्ञी के १६ दण्डक में ३ प्रकार की । स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय में १ शारीरिक वेदना ।

४ वेदना ३ प्रकार की -शाता, अशाता और शाता-अशाता । समुच्चय जीव और २४ दण्डक में तीनों ही वेदना होती है ।

५ वेदना ३ प्रकार की–सुख, दुख और सुख–दुख समुचय और २४ दण्डक में तीन ही प्रकार की वेदना वेदी जाती है ।

६ वेदना २ प्रकार की–उदीरणा जन्य (लोच तपश्चर्यादि से ,; २ उदय जन्य (कर्मोदय से) तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में दोनों ही प्रकार की वेदना, शेष २२ दण्डक में उदय जन्य (औपक्रमीय) वेदना होवे ।

७ वेदना २ प्रकार की-निंदा और अनिंदा । नारकी, १० भवनपति और व्यन्तर एव १२ दण्डक में दो वेदना । सञ्ज्ञी निंदा वेदे । असंज्ञी अनिदा वेदे। (सञ्ज्ञी असंज्ञी मनुष्य, तिर्यच में से मर कर गये इस अपेचा समझना) ।

पाच स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय अनिंदा वेदना वेदे (असञ्ज्ञी होने से) । तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में दोनों प्रकार की वेदना, ज्योतिषी और वैमानिक में ..

प्रकार की वेदना। कारण कि दो प्रकार के देवता हैं।

१ अमायी सम्यक दृष्टि--निंदा वेदना वेदते हैं।

२ मायी मिथ्यादृष्टि अनिंदा वेदना वेदते हैं।

* इति वेदना पद सम्पूर्ण *



-:समुद्घात-पद:-

(श्री पन्नवणाजी सूत्र ३६ वाँ पद)

जीव के लिये हुवे पुद्गल जिस जिस रूप मे परिणमते हैं उन्हें उस उस नामसे बताया गया है । जैसे कोई पुद्गल वेदनी रूप परिणमे, कोई कपाय रूप परिणमें, इन ग्रहण किये हुवे पुद्गलों को सम और विषम रूप से परिणम होने को समुद्घात कहते हैं ।

१ नाम द्वार-वेदनी, कपाय, मरणान्तिक, वैक्रिय तैजस्, आहारिक और केवली समुद्घात । ये सात समुद्घात २४ दण्डक ऊपर उतारे जाते हैं ।

समुच्चय जीवों में ७ समु०, नारकी में ४ समु. प्रथम की, देवता के १३ दण्डक में ५ समुद्घात प्रथम की, वायु में ४ समु० प्रथम की, ४ स्थावर ३ विकलेन्द्रिय में ३ समु० प्रथम की, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ५ प्रथम की, मनुष्य में ७ समुद्घात पावे ।

२ काल द्वार-६ समु० का काल असंख्यात समय और केवली समुद्घात का काल ८ समय का ।

(३) २४ दण्डक एकेक जीव की अपेक्षा वेदनी, कपाय, मरणान्तिक, वैक्रिय और तैजस् समु० २४ दण्डक में एक एक जीव भूतकाल में अनन्ती करी और भवि-

में कोई करेगा, कोई नहीं करेगा। करे तो १-२-३ वार संख्यात, असंख्यात और अनन्त करेगा।

आहारिक समु० २३ दण्डक में एकेक जीव भूत काल में स्यात् करे, स्यात् न करे। यदि करे तो १-२-३ वार, भविष्य में जो करे तो १-२-३-४ वार करेगा। मनुष्य दण्डक के एकेक जीव भूत्त काल में की होवे तो १-२-३-४ वार की, शेष पूर्व वत्। केवली समु० २३ दण्डक के एकेक जीव भूतकाल में करे तो १ वार करेगा। मनुष्य में की होवे तो भूत में १ वार, व भविष्य में भी एक वार करेगा।

४ अनेक जीव अपेक्षा २४ दण्डक-पाच (प्रथम की) समु० २४ दण्डक के अनेक जीवों ने भूतकाल में अनन्ती करी भविष्य में अनन्ती करेगा।

आहारिक समु० २२ दण्डक के अनेक जीव आश्री भूतकाल में असंख्याती करी और भविष्य में असंख्याती करेगा। वनस्पति में भूत भविष्य की अनन्ती कहनी मनुष्य में भूत-भविष्य की स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती कहनी।

केवली समु० २२ दण्डक में भूतकाल में नहीं भविष्य में असंख्याती करेगा, वनस्पति में भूतकाल में नहीं करी भविष्य में अनन्त करेगा. मनुष्य के अनेक जीव भूत में करी होवे तो १-२-३ उ० प्रत्येक सौ-चार

भविष्य में स्यात संख्याती स्यात् असंख्याती करेगा।

५ परस्पर की अपेक्षा २४ दण्डक-एक एक नेरिया भूतकाल में नेरिया रूप में अनन्ती वेदनी समु० करी भविष्य में कोई करेगा, कोई नहीं करेगा, जो करेगा तो १-२ ३ संख्याती, असंख्याती अनंती करेगा एवं एकेक नेरिया, असुर कुमार रूप में यावत् वैमानिक देव रूप से कहना।

एकेक असुर कुमार रूप में वेदनी समु० भूतकाल में अनन्ती करी, भविष्य में करे तो जाव अनंती करेगा असुर कुमार देव असुर कुमार रूप में वेदनी समु० भूत में अनंती करी, भविष्य में करे तो १ २-३ जाव अनंती करेगा एवं वैमानिक तक कहना और ऐसे ही २४ दण्डक में समझना।

कषाय समु० एकेक नेरिया नेरिया रूप से भूत में अनंती करी भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा एकेक नेरिया असुर कुमार रूप से भूतकाल में अनंती करी भविष्य में करे तो संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा ऐसे ही व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक रूप से भी भविष्य में करे तो असंख्याती व अनंती करेगा।

उदारिक के १० दण्डक में भूतकाल में अनंती करी भविष्य में करे तो १-२-३ जाव अनंती करे एवं भवन-पति का भी कहना।

एकेक पृथ्वी काय का जीव नारकी रूप से कषाय समु० भूत काल में अनंती करी और भविष्य में करेगा तो स्यात् संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा एवं भवन पति, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक रूप से भी भविष्य में असंख्याती, अनंती करेगा उदारिक के १० दण्डक में भविष्य में स्यात् १-२-३ जाव संख्याती, असंख्याती, अनंती करेगा। एवं उदारिक के १० दण्डक, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक असुर कुमार के समान समझना।

एकेक नेरिया नेरिये रूप में मरणांतिक समु० भूत में अनंती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ संख्याती जाव अनंती करेगा एवं २४ दण्डक कहना परन्तु स्वस्थान परस्थान सर्वत्र १-२-३ कहना, कारण मरणांतिक समु० एक भव में एक ही बार होती है।

एकेक नेरिया नेरिये रूप से वैक्रिय समु० भूत काल में अनंती करी, भविष्य में जो करे तो १-२-३ जाव अनंती करेगा। ऐसे ही २४ दण्डक, १७ दण्डक पने कषाय समु०-समान करे सात दण्डक (४ स्थावर ३ विकलेन्द्रिय) में वैक्रिय समु० नहीं।

एकेक नेरिया नेरिये रूप से तैजस समु० भूत में नहीं करी, भविष्य में नहीं करेगा।

एकेक नेरिया असुर कुमार रूप से भूत काल में

तैजस समु० अनती करी और भविष्य में करे तो १ २ ३ जाव अनती करेगा एवं तैजस समु० १५ दण्डक में मरणातिक अनुसार।

आहारिक समु० मनुष्य सिवाय २३ दण्डक के जीवों ने अपने तथा अन्य २३ दण्डक रूप से नहीं करी और न करेगें, एकेक २३ दण्डक के जीव ने मनुष्य रूप से आहारिक समु० जो करी होवे तो १ २ ३ और भविष्य में जो करे तो १-२-३-४ वार करेंगे।

केवली समु० मनुष्य सिवाय २३ दण्डक के जीवों ने अपने तथा अन्य २३ दण्डक रूप से भूत काल में नहीं करी और न भविष्य में करेंगे, मनुष्य रूप से भूत काल में नहीं की और भविष्य में करें तो १ वार करेंगे। एकेक मनुष्य २३ दण्डक रूपसे केवली समु० करी नहीं और करेंगे भी नहीं। एकेक मनुष्य मनुष्य रूप से केवली समु० करी होवे तो १ वार और करेगें तो भी १ वार।

६ अनेक जीव परस्परः-अनेक नेरियो ने नेरिये रूप से वेदनीय समु० भूत में अनती करी, भविष्य में अनती करेगें एव २४ दण्डकों का समझना। शेप २३ दण्डक में भी नारकी वत्। वेदनी के समान ही कपाय, मरणातिक, वैक्रिय और तैजस समु० का समझना परन्तु वैक्रिय समु० १७ दण्डक में और तैजस समु० १५ दण्डक में कहनी।

अनेक नेरिये २३ दण्डक (मनुष्य सिवाय) रूप से आहा० समु० न की, न करेंगे, मनुष्य रूप से भूतकाल में असं० की, भविष्य में असं० करेंगे। एवं २३ दण्डक (वनस्पति सिवाय) रूप से भी समझना। वनस्पति में अनंती कहनी।

एकेक मनुष्य २३ रूप से आहा० समु० की नहीं और करेंगे भी नहीं। मनुष्य रूप से भूत काल में स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती की और भविष्य में भी करें तो स्यात् संख्या०, स्यात् असं० करेंगे।

अनेक नरकादि २३ दण्डक के जीवों ने अनेक नरकादि २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नहीं और करेंगे भी नहीं मनुष्य रूप से की नहीं, जो करे तो संख्या० असं० करेंगे।

अनेक मनुष्यों ने २३ दण्डक रूप से केवली समु० की नहीं, व करेंगे भी नहीं। और मनुष्य रूप से की होवे तो स्यात् संख्याती की। भविष्य में करें तो स्यात् संख्याती, स्यात् असंख्याती करेंगे।

(७) अल्प बहुत्व द्वार।

समुच्चय अल्प बहुत्व	नरक का अल्प बहुत्व
	१ सर्व से कम मर०स.वाले
१ सर्व से कम आहा. समु. वाले	२ उनसे वैक्रिय समु.अ.गु.
२ केवली समु. वाले संख्या. गुणा	३ ,, कषाय ,, संख्या. ,,

३ तैजस ,, ,, असख्य. ,,
४ वैक्रिय ,, ,, ,, ,,
५ मरणातिक ,, ,, अनंत ,,
६ कपाय ,, ,, अस० ,,
७ वेदनी ,, ,, विशेप ,,
८ असमोहिया ,, ,, अस ,,

मनुष्य का अल्प बहुत्व

१ सर्व सेकम आहा. समु. वाले
२ उनसे के. समु. सख्या. गुणा
३ तैजस ,, ,, असंख्या. ,,
४ ,, वैक्रिय ,, ,, संख्या. ,,
५ ,, मरणातिक ,, ,, असं. ,,
६ ,, वेदनी ,, ,, ,, ,,
७ ,, कपाय ,, ,, संख्या. ,,
८ ,, असमोहिया ,, ,, ,, ,,

४ ,, वेदनी ,, ,, ,,
५ ,, असमो. ,, ,, ,,

देवता का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम तै. समु. वाले
२ उनसे मर. स. वाले अ. गु.
३ ,, वेदनी समु. वाले ,, ,,
४ ,, कपाय ,, ,, सख्या. ,,
५ ,, वैक्रिय ,, ,, ,, ,,
६ ,, असमोहिया ,, ,, ,, ,,

तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय का अ ब.

१ सर्व से कम तै. समु. वाले
२ उनसे वै समु. वाले अ. गु
३ ,, मरणातिक ,, ,, ,, ,,
४ ,, वेदनी ,, ,, ,, ,,
५ ,, कपाय ,, ,, ,, ,,
६ ,, असमो. ,, ,, ,, ,,

पृथ्व्यादि ४ स्था० का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम मरणातिक समु० वाले
२ उनसे कपाय समु० वाले संख्या० गुणा
३ ,, वेदनी ,, ,, विशेपाहया
४ ,, असमोहिया ,, ,, असख्या० ,,

वायु काय का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम वैक्रिय समु० वाले
२ उनसे मरणांतिक समु० वाले असं. गुणा
३ ,, कषाय० ,, संख्या० ,,
४ ,, वेदनी ,, विशेषइया
५ ,, असमोहिया ,, असं० गुणा

विकलेन्द्रिय का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम मरणातिक समुद्घात वाले
२ उनसे वेदनी समुद्घात वाले असंख्यात गुणा
३ ,, कषाय ,, ,, संख्यात ,,
४ ,, असमोहिया ,, ,, असंख्यात ,,

॥ इति समुद्घात पद सम्पूर्ण ॥



उपयोग पद

(श्री पन्नवणाजी सूत्र २६ वां पद)

उपयोग २ प्रकार का-१ साकार उपयोग २ निराकार उपयोग १ साकार उपयोग के ८ भेदः- ५ ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यव और केवल ज्ञान) और ३ अज्ञान (मति, श्रुत, अज्ञान, विभग ज्ञान) अनाकार उप० ४ प्रकार का-चक्षु, अचक्षु, अवधि और दर्शन २४ दण्डक में कितने २ उपयोग पाये जाते है—

दण्डक	नाम	उपयोग	आकार	अनाकार
	समुच्चय जीवों में	२	८	४
१	नारकी में	२	६	३
१३	देवता में	२	६	३
५	स्थावर में	२	२	१
१	बेइन्द्रिय में	२	४	१
१	तेइन्द्रिय में	२	४	१
१	चौरेन्द्रिय में	२	४	२
१	तिर्यच पचेन्द्रिय में	२	६	३
१	मनुष्य में	२	८	४

❀ इति उपयोग पद सम्पूर्ण ❀

उपयोग अधिकार

(श्री भगवतीजी सूत्र शतक १३ उद्देशा १-२)

उपयोग १२-५ ज्ञान, ३ अज्ञान और ४ दर्शन एवं १२ उपयोग में से जीव किस गति में कितने साथ ले जाते हैं, व लाते हैं इसका वर्णन—

(१) १-२-३ नरक में जाते समय ८ उपयोग (३ ज्ञान, ३ अज्ञान, २ दर्शन-अचक्षु और अवधि) लेकर आवे और ७ उपयोग लेकर (ऊपर में से विभंग छोड़ कर) निकले ४ ५ ६ नरक में ८ उपयोग (ऊपरवत्) लेकर आवे और ५ उपयोग (२ ज्ञान २ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन) लेकर निकले ७ वीं नरक में ५ उपयोग (३ ज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग (२ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन) लेकर निकले।

(२) भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिषी देव में ८ उपयोग (३ ज्ञान ३ अज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ५ उपयोग (२ ज्ञान २ अज्ञान १ अचक्षु दर्शन) लेकर निकले १२ देवलोक ६ ग्रीयवेक में ८ उपयोग लेकर आवे और ७ उपयोग (विभग ज्ञान छोडकर) लेकर निकले अनुत्तर विमान में ५ उपयोग (३ ज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और येही ५ उपयोग लेकर निकले।

(३) ५ स्थावर में ३ उपयोग (२ अज्ञान १ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग लेकर निकले ३ विकलेन्द्रिय में ५ उपयोग (२ ज्ञान २ अज्ञान १ दर्शन) लेकर आवे और ३ उपयोग (२ अज्ञान १ दर्शन) लेकर निकले, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ५ उपयोग लेकर आवे और ८ उपयोग लेकर निकले मनुष्य में ७ उपयोग (३ ज्ञान २ अज्ञान २ दर्शन) लेकर आवे और ८ उपयोग लेकर निकले सिद्ध में केवल ज्ञान, केवल दर्शन लेकर आवे और अनंत काल तक आनन्दघन रूप से शाश्वता विराजमान होवे।

❀ इति उपयोग अधिकार सम्पूर्ण ❀



नियंठा

निर्ग्रंथों पर ३६ द्वार—भगवती सूत्र शतक २५ उद्देशा छठा—१ पन्नवणा (प्ररूपणा) २ वेद ३ राग (सरागी) ४ कल्प ५ चारित्र ६ पडिसेवन (दोष सेवन) ७ ज्ञान ८ तीर्थ ६ लिंग १० शरीर ११ क्षेत्र १२ काल १३ गति १४ संयम स्थान-१५ (निकासे) चारित्र पर्याय १६ योग १७ उपयोग १८ कषाय १६ लेश्या २० परिणाम (३) २१ बन्ध २२ वेद २३ उदीरणा २४ उपसंपज्झाण (कहा जावे ?) २५ सन्नाबहुत्ता २६ आहार २७ भव २८ आगरेस (कितनी वार आवे ?) २६ काल स्थिति ३० आन्तरा ३१ समुद्घात ३२ क्षेत्र (विस्तार) ३३ स्पर्शना ३४ भाव ३५ परिणाम (कितने पावे ?) और ३६ अल्प बहुत्व द्वार।

१ पन्नवणा द्वार—निर्ग्रंथ (साधु) ६ प्रकार के प्ररूपे गये हैं यथा—१ पुलाक २ बकुश ३ पडिसेवणा (ना) ४ कषाय कुशील ५ निर्ग्रंथ ६ स्नातक।

१ पुलाक—चावल की शाल समान जिसमें सार वस्तु कम और भूसा विशेष होता है। इसके दो भेद—१ लब्धि पुलाक कोई चक्रवर्ती आदि किसी जैन मुनि की अथवा जिन शासन आदि की अशातना करे तो उसकी सेना आदि को चकचूर करने के लिये लब्धि का प्रयोग करे

उसे पुलाक लब्धि कहते हैं। २ चारित्र पुलाक इसके ५ भेद-ज्ञान पुलाक, दर्शन पुलाक, चारित्र पुलाक, लिं। पुलाक (अकारण लिंग-वेष बदले) और अह सुहम्म पुलाक (मन से भी अकल्पनीय वस्तु भोगने की इच्छा करे।)

वकुश-खले में गिरी हुई शाल वत् इसके ५ भेद- १ आभोग (जान कर दोष लगावे) २ अनाभोग (अजानता दोष लगे) संवुड़ा (प्रकट दोष लगे) ४ असवुडा (गुप्त दोष लगे) ५ अहासुहम्म (हाथ मुंह धोवे, कजल आजे इत्यादि)

३ पडिसेवण- शाल के उफने हुवे खले के समान इसके ५ भेदः- १ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र में अतिचार लगावे ४ लिंग बदले ५ तप करके देवादि की पदवी की इच्छा करे।

४ कषाय कुशील- फोतरे वाली-कचरे बिना की शाल समान इसके ५ भेद-१ ज्ञान २ दर्शन ३ चारित्र में कषाय करे ४ कषाय करके लिंग बदले ५ तप करके कषाय करे।

५-निर्ग्रंथ-फोतरे निकाली हुई व खएडी हुई शाल-वत् इसके ५ भेद-१ प्रथम समय निर्ग्रंथ (दशवें गुण० से ११ वें तथा १२ वें गुण० पर चढ़ता प्रथम समयका) २ अप्रथम समय निर्ग्रंथ (११-१२ गुण० में दो

अधिक हुवा हो) ३ चरम समय (एक समय छद्मस्थपन का बाकी रहाहो) अचरम समय (दो समय से अधिक समय जिसकी छद्मस्थ अवस्था बाकी बची होवे) और ५ अहासुम्म निर्ग्रंथ (सामान्य प्रकारे वर्ते)

६ स्नातक--शुद्ध, अखण्ड, चावल समान, इसके ५ भेद, १ अच्छवी (योग निरोध) २ असबले (सबले दोष रहित) ३ अकम्मे (घातिक कर्म रहित) ४ सशुद्ध (केवली) और ५ अपरिस्सवी (अबंधक)

२ वेद द्वार-१ पुलाक पुरुष वेदी और नपुंसक वेदी २ वकुश पु० स्त्री० नपुं० वेदी ३ पडिसेवणा-तीन वेदी ४ कषाय-कुशील तीन वेदी और अवेदी (उपशान्त तथा क्षीण) ५ निर्ग्रंथ अवेदी (उपशान्त तथा क्षीण) और ६ स्नातक क्षीण अवेदी होवे ।

३ राग द्वार-४ निर्ग्रंथ सरागी, निर्ग्रंथ (पाचवाँ) वीतरागी (उपशान्त तथा क्षीण) और स्नातक क्षीण वीतरागी होवे ।

४ कल्प द्वार-कल्प पांच प्रकार का (स्थित, अस्थित, स्थिवर, जिन कल्प और कल्पातीत) पालन होता है । इसके १० भेद (प्रकार)---१ अचेल, २ उद्देशी, ३ राज पिंड, ४ सेज्जान्तर, ५ मास कल्प, ६ चोमासी कल्प, ७ व्रत, ८ प्रतिक्रमण ६ कीर्ति धर्म १० पुरुषा ज्येष्ट ।

एव १० कल्पों में से प्रथम का और अन्तका तीर्थंकर के शासन में स्थित कल्प होते हैं शेष २२ तीर्थंकर के शासन में अस्थित कल्प है उक्त १० कल्पों में से ४ ७ ६ १० एवं ४ स्थित कल्प है और १ २-३-५ ६ ८ अस्थित कल्प है ।

स्थिवर कल्प=शास्त्रोक्त वस्त्र-पात्रादि रक्खे ।

जिन कल्प=ज. २ उ. १२ उपकरण रक्खे ।

कल्पातीत=केवली, मन पर्यव, अवधि ज्ञानी, १४ पूर्व धारी, १० पूर्व धारी, श्रुत केवली और जातिस्मरण ज्ञानी ।

पुलाक=स्थित, अस्थित और स्थिवर कल्पी होवे ।

वकुश और पडिसेवणा नियठा में कल्प ४, स्थित, अस्थित, स्थिवर और जिन कल्पी ।

कषाय कुशील में ५ कल्प—ऊपर के ४ और कल्पातीत निर्ग्रंथ और स्नातक—स्थित, अस्थित और कल्पातीत में होवे ।

५चरित्र द्वार—चारित्र ५ है । सामायिक २ छेदोपस्थापनीय ३ परिहार विशुद्ध ४ सूक्ष्म सपराय ५ यथाख्यात पुलाक, वकुश, पडिसेवणा में प्रथम दो चारित्र । कषाय-कुशील में ४ चारित्र और निर्ग्रंथ, स्नातक में यथाख्यात चारित्र होवे ।

६ पडिसेवण द्वार—मूल गुण पडि । (महाव्रत

दोष) और उत्तर गुणपडि । (गोचरी आदि में दोष); पुलाक, बकुश, पडिसेवण में मूल गुण, उत्तर गुण दोनों की पडि० शेष तीन नियंठा अपडिसेवी । (व्रतों में दोष न लगावे) ।

७ ज्ञान द्वार--पुलाक, बकुश, पडिसेवण नियंठा में दो ज्ञान तथा तीन ज्ञान, कषाय कुशील और निर्ग्रंथ में २-३ ४ज्ञान और स्नातक में केवल ज्ञान । श्रुत ज्ञान आश्री पुलाक के ज० ९ पूर्व न्यून, उ० ९ पूर्व पूर्ण, बकुश और पडिसेवण के ज० ८ प्रवचन । उ० दश पूर्व० कषाय कुशील तथा निर्ग्रंथ के ज० ८ प्रवचन, उ० १४ पूर्व स्नातक सूत्र व्यतिरिक्त ।

८ तीर्थ द्वार--पुलाक, बकुश, पडिसेवण तीर्थ में होवे । शेष तीन तीर्थ में और अतीर्थ में होवे । अतीर्थ में प्रत्येक बुद्ध आदि होवे ।

९ लिंग द्वार -ये ६ नियंठा (साधु) द्रव्य लिंग अपेक्षा स्वलिंग, अन्य लिंग अपेक्षा गृहस्थ लिंग में होवे। भावापेक्षा स्वलिंग ही होवे ।

१० शरीर द्वार पुलाक, निर्ग्रंथ, और स्नातक में ३ (औ० तै० का०), बकुश, पडिसे० में ४ (औ० वै० तै० का०), कषाय कुशील में ५ शरीर ।

११ क्षेत्र द्वार -६ नियंठा जन्म अपेक्षा १५ कर्म-भूमि में होवे । संहरण अपेक्षा । ५ नियंठा (पुलाक

सिवाय) कर्म भूमि और अकर्म भूमि में होवे। प्रसंगोपात पुलाक लब्धि आहारिक शरीर, साध्वी, अप्रमादो, उपशम श्रेणी वाले, क्षपक श्रेणीवाले और केवली ज्ञान याद संहरण नहीं हो सके।

१२ काल द्वार पुलाक, निर्ग्रंथ और स्नातक अवस० काल में तीसरे चोथे आरे में जन्मे और ३-४-५ वें आरे में प्रवर्ते० उत्स० काल में २-३-४ आरे में जन्मे और ३-४ थे आरे में प्रवर्ते। महा विदेह में सदा होवे।

पुलाक का संहरण नहीं होवे, परन्तु निर्ग्रंथ, स्नातक संहरण अपेक्षा अन्य काल में भी होवें। बकुश पडिसेवण और कषाय कुशील अवस० काल के ३-४ ५ आरे में जन्मे और प्रवर्ते। उत्स० काल के २-३-४आरे में जन्मे और ३-४ आरे में प्रवर्ते महाविदेह में सदा होवे।

नाम	गति		स्थिति	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	सुधर्म देव०	सहस्रार दे०	प्रत्येक पल्य.	१८सा.
बकुश	" "	अच्युत "	"	२२ "
पडिसेवण	" "	" "	"	२२ "
कषाय कुशील	" "	अनुत्तर विमान	"	३३ "
निर्ग्रंथ	अनुत्तरविमान	सार्वार्थ सिद्ध	३१ सागर	३३ "
स्नातक	" "	मोक्ष	३३ "	३३ "

देवताओं में ५ पदवियें है—१ इन्द्र २ लोकपाल

१८ कषाय द्वार–प्रथम ३ नियंठा में सकषायी (सज्वलन का चोक) कषाय कुशील में सज्वलन ४ ३-२ १ निर्ग्रंथ अकषायी (उपशम तथा क्षीण) और स्नातक अकषायी (क्षीण)

१९ लेश्या द्वार–पुलाक, बकुश, पडिसेवण में ३ शुभ लेश्या, कषाय कुशील में ६ लेश्या, निर्ग्रन्थ में शुक्ल लेश्या स्नातक में शुक्ल लेश्या अथवा अलेशी।

२० परिणाम द्वार–प्रथम नियंठा में तीन परिणाम १ हायमान २ वर्धमान ३ अवस्थित-१ घटता २ बढता ३ समान) हाय वर्ध की स्थिति ज० १ समयकी उ० अं० मु० अवस्थित की ज० १ समय उ० ७ समय की, निर्ग्र थ में वर्धमान परिणाम अवस्थित में २ परिणाम स्थिति ज०१ समय, उ० अ० मु० स्नातक में २ (वर्ध० अव०) वर्ध की स्थिति ज० १ समय, उ० अ० मु० अव० की स्थिति ज० अ० मु० उ० देश उणी पूर्व क्रोड की।

२१ बन्ध द्वार–पुलाक ७ कर्म (आयुष्य सिवाय) बान्धे, बकुश और पडिसेवण ७ ८ कर्म बान्धे, कषाय कुशील ६-७ तथा ८ कर्म (आयु–मोह सिवाय) बान्धे निर्ग्रन्थ १ शाता वेदनीय बान्धे और स्नातक शाता वेद-नीय बान्धे अथवा अबन्ध (नहीं बान्धे)

२२ वेदे द्वार–४ नियंठा ८ कर्म वेदे निर्ग्रन्थ ७ कर्म (मोह सिवाय) वेदे स्नातक ४ कर्म (अघाती) वेदे।

२३ उदीरण द्वार—पुलाक ६ कर्म (आयु—मोह सिवाय) को उदी० करे वकुश पडिसेवण ६ ७ तथा ८ कर्म उदेरे कषाय कुशील ५-६-७-८ कर्म उदेरे (५ होवे तो आयु, मोह वेदनीय छोड़कर), निर्ग्रन्थ २ तथा ५ कर्म उदेरे (नाम—गोत्र) और स्नातक अनुदारिक।

२४ उपसंपझण द्वार—पुलाक, पुलाक को छोड़कर कषाय कुशील में अथवा असयम में जावे, वकुश वकुश को छोड़ कर पडिसेवण में, कषाय कुशील में असयम में तथा संयमासयम में जावे। इसी प्रकार चार स्थान पर पडिसेवण नियंठा जावे कषाय कुशील ६ स्थान पर (पु०, व०, पडि०, असय०, सयमास० तथा निर्ग्रन्थ में) जावे निर्ग्रथ निर्ग्रन्थ पने को छोड़ कर कषाय कुशील स्नातक तथा असयम में जावे और स्नातक मोक्ष में जावे।

२५ सज्ञा द्वार पुलाक, निर्ग्रन्थ और स्नातक नोसज्ञा बहुता। वकुश, पडिसेवण और कषाय कुशील सज्ञा बहुता और नोसज्ञा बहुता।

२६ आहारिक द्वार पनियठा आहारिक और स्नातक आहारिक तथा अनाहारिक।

२७ भव द्वार—पुलाक और निर्ग्रन्थ भव करे ज० १ उ० ३ वकुश, पडि०, कषाय कु० ज० १ उ० १५ भव करे और स्नातक उसी भव में मोक्ष जावे।

२८ आगरेस द्वार-पुलाक एक भव में ज० १ वार उ० ३ वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ वार उ० ७ वार आवे बकुश पडि० और कषाय कु० एक भव में ज० १ वार उ० प्रत्येक १०० वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ वार उ० प्रत्येक हजार वार, निर्ग्रन्थ एक भव आश्री ज० १ वार उ० २ वार आवे अनेक भव आश्री ज० २ उ० ५ वार आवे स्नातक पना ज० उ० १ ही वार आवे।

२९ काल द्वार- (स्थिति) पुलाक एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० अ० मु०, अनेक जीव अपेक्षा ज० उ० अन्तर्मुहूर्त की बकुश एक जीव अपेक्षा ज० १ समय उ० देश उणा पूर्व क्रोड, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता पडिसे०, कषाय कु० बकुश वत् निर्ग्रन्थ एक तथा अनेक जीवापेक्षा ज० १ समय उ० अन्तर्मुहूर्त स्नातक एक जीवाश्री ज० अ० मु०, उ० देश उणा पूर्व क्रोड, अनेक जीवापेक्षा शाश्वता है।

३० आन्तरा (अन्तर) द्वारः प्रथम ५ नियंठा में आन्तरा पड़े तो १ जीव अपेक्षा ज० अं० मु०, उ० देश उणा अर्ध पुद्गल परावर्तन काल तक स्नातक में एक जीवापेक्षा अन्तर न पड़े अनेक जीवापेक्षा अ तर पड़े तो पुलाक में ज० १ समय, उ० संख्यात काल, निर्ग्रन्थ में ज० १ समय उ० ६ माह शेष ४ में अन्तर न पड़े।

३१ समुद्घात द्वार पुलाक में ३ समु० (वेदनी,

कषाय मरणांतिक) वकुश में तथा पडिसे० में ५ समु० (वे०, क०, म०, वै० ते०) कषाय कुशील में ६ समु० (केवली समु० नहीं) निर्ग्रन्थ में नहीं स्नातक में होवे तो केवली समुद्घात।

३२ क्षेत्र द्वार-पांच नियंठा लोक के असंख्यातवें भाग में होवे और स्नातक लोक के असंख्यातवें भाग में होवे अथवा समग्र लोक में (केवली समु० अपेक्षा) होवे

३३ स्पर्शना द्वार-क्षेत्र द्वार वत्।

३४ भाव द्वार-प्रथम ४ नियंठा क्षयोपशम भाव में होवे। निर्ग्रन्थ उपशम तथा क्षायिक भाव में होवे और स्नातक क्षायिक भाव में होवे।

३५ परिमाण द्वार-(संख्या प्रमाण) स्यात् होवे, स्यात् न होवे, होवे तो कितना ?

नाम	वर्तमान पर्याय अपेक्षा		पूर्व पर्याय अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पुलाक	१-२-३	प्रत्येक सौ (२०० से ६००	१ २-३	प्रत्येक हजार (२से६ हजार)
वकुश	,,	,,		प्रत्येक सो क्रोड(नियमा)
पडिसेवण	,,	,,	,,	,,
कषाय कुशील	,,	प्रत्येक हजार		प्रत्येक हजार क्रोड़ ,,

साधु परिहार विशुद्ध चारित्र ले । जिनमें से ४ मुनि ६ माह तक तप करे, ४ मुनि वैयावच्च करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । दूसरे ६ माह में ४ वैयावच्ची मुनि तप करे, ४ तप करने वाले वैयावच्च करे और १ मुनि व्याख्यान देवे । तीसरे ६ माह में १ व्याख्यान देने वाला तप करे, १ व्याख्यान देवे और ७ मुनि वैयावच्च करे । तपश्चर्या उनाले में एकान्तर उपवास, शियाले छठ छठ पारणा, चोमासे अठम २ पारणा करे एवं १८ माह तप कर के जिन कल्पी होवे अथवा पुनः गुरुकुल वास स्वीकारे ।

सूक्ष्म संपराय चारित्री के २ भेद–संक्लेश परिणाम–उपशम श्रेणी से गिरने वाले (२) विशुद्ध परिणाम--क्षपक श्रेणी पर चढने वाले ।

५ यथाख्यात चारित्री के २ भेद–(१) उपशान्त वीतरागी ११ वें गुणस्थान वाले (२) क्षीण वीतरागी के २ भेद छद्मस्थ और केवली (सयोगी तथा अयोगी) ।

२ वेद द्वार–सामा०, छेदोप० वाले सवेदी (३ वेद) तथा अवेदी (नववें गुण अपेक्षा) परि० वि०, पुरुष या पुरुष नपुंसक वेदी सूक्ष्म सं० और यथा० अवेदी ।

३ राग द्वार–४ संयती सरागी और यथाख्यात संयती वीतरागी ।

४ कल्प द्वार–कल्प के ५ भेद, नीचे अनुसार--

१ स्थिति कल्प नियंठा में बताय हुवे १० कल्प, प्रथम तथा चरम तीर्थंकर के शासन में होवे।

२ अस्थित कल्प=२२ तीर्थंकर के साधुओं में होवे १० कल्प में से शय्यान्तर, कुतकर्म और पुरुष ज्येष्ट एव ४ तो स्थित हैं और वस्त्रकल्प, उद्देशीक, आहार कल्प, राजपीठ, मासकल्प, चातुर्मासिक कल्प और प्रतिक्रमण कल्प एव ६ अस्थित होवे।

३ स्थिवर कल्प=मर्यादापूर्वक वस्त्र पात्रादि उपकरण से गुरुकुलवास, गच्छ और अन्य मर्यादा का पालन करे।

४ जिनकल्प=जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट उत्सर्ग पक्ष स्वीकार करके, अनेक उपसर्ग पक्ष स्वीकार करके तथा अनेक उपसर्ग सहन करते हुवे जङ्गल आदि में रहे (विस्तार नन्दी सूत्र में से जानना)

५ कल्पातीत=आगम विहारी अतिशय ज्ञान वाले महात्मा जो कल्प रहित भूत-भावि के लाभालाभ देख कर वर्ते।

सामायिक सयति में ५ कल्प, छेदोप० परि० में ३ कल्प (स्थित, स्थिवर, जिनकल्प) सूक्ष्म, यथा० में २ कल्प (अस्थित और कल्पातीत) पावे।

५ चारित्र द्वार-सामा०, छेदो० में ४ नियंठा (पुलाक, बकुश, पडिसेवणा, और कषाय कुशील) परि०, सूक्ष्म० में १ नियंठा (कषाय कुशील) और यथा० में २ नियंठा (निर्ग्रन्थ और स्नातक) पावे।

६ पाडिसेवण द्वार-सामा०, छेदो०, संयति मूल गुण प्रति सेवी (५ महाव्रत में दोष लगावे) तथा उत्तर गुण प्रति सेवी (दोष लगावे) तथा अप्रति सेवी (दोप नहीं भी लगावे) शेष ३ संयति अप्रति सेवी (दोष नहीं लगावें)

७ ज्ञान द्वार—४ संयति में ४ ज्ञान (२-३ ४) की भजना और यथाख्यात में ५ ज्ञान की भजना ज्ञाना-भ्यास अपेक्षा—सामा०, छेदो०, में ज० अष्ट प्रवचन (५ समिति, ३ गुप्ति) उ० १४ पूर्व तक परि० में ज० ६ वें पूर्व की तीसरी आचार वस्तु तक उ० ६ पूर्व सम्पूर्ण सूक्ष्म सं० और यथा० ज० अष्ट प्रवचन तक उ० १४ पूर्व तथा सूत्र व्यतिरिक्त।

८ तीर्थ द्वार—सामायिक और यथाख्यात संयति तीर्थ में, अतीर्थ में, तीर्थंकर में और प्रत्येक बुद्ध में होवे छेदो०, परि०, सूक्ष्म० तीर्थ में ही होवे।

९ लिंग द्वार-परि० द्रव्ये भावे स्वलिंगी होवे शेष चार संयति द्रव्ये स्वलिंगी, अन्यलिंगी तथा गृहस्थ लिंगी होवे परन्तु भावे स्वलिंगी होवे।

१० शरीर द्वार—सामा०, छेदो०, में ३ ४ ५ शरीर होवे शेप तीन में ३ शरीर।

११ क्षेत्र द्वार—सामा०, सूक्ष्म०, तथा०, १५ कर्म भूमि में और छेदो०, परि० ५ भरत ५ ऐरावर्त में होवे

महरण अपेक्षा अकर्म भूमि में भी होवे, परन्तु परिहार विशुद्ध संयति का सहरण नहीं होवे ।

१२ काल द्वार—सामा०अवसर्पिणी काल के ३ ४-५ आरा में जन्में और ३ ४ ५ आरां में विचरे, उत्स० के २ ३ ४ आरा में जन्में और ३-४ आरा में विचरे महा विदेह में भी होवे। सहरण अपेक्षा अन्य क्षेत्र (३० अकर्म भूमि) में भी होवे। छेदो० महाविदेह में नहीं होवे, शेष ऊपर वत् परि० अवस० काल के ३-४ आरा में जन्मे-प्रवर्ते,उत्स० काल के २ ३ ४ आरा में जन्में और ३ ४ आरा में प्रवर्ते सूक्ष्म० यथा० संयति अवस० के ३ ४ आरा में जन्मे और प्रवर्ते। उत्स० काल के २-३-४ आरा में जन्मे और ३-४ आरा में प्रवर्ते महाविदेह में भी पावे, सहरण अन्यत्र भी होवे।

१३ गति द्वार—

स० नाम	गति		स्थिति	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
सामा०छेदोप०	सौधर्म कल्प	अनुत्तर विमान	२ पल्य	३३ सागर
परिहार विशुद्ध	,,	सहस्रार ,,	२ ,,	१८ ,,
सूक्ष्म संपराय	अनुत्तर विमान	अनुत्तर ,,	३१ सागर	३३ ,,
यथा ख्यात	,,	,, ,,	३१ ,,	३३ ,,

देवता में ५ पदवी हैं—इन्द्र, सामानिक त्रियस्त्रिंशक, लोकपाल और अहमेन्द्र, सामा० छेदो० आराधक होवे

तो पाच में से १ पदवी पावे, परि० प्रथम ४ में से १ पदवी पावे। सूक्ष्म० यथा० वाले अहमेन्द्र पद पावे, ज० विराधक होवे तो ४ प्रकार के देवों में उपजे, उ० विराधक होवे तो संसार भ्रमण करे।

१४ संयम स्थान- सामा० छेदो० परि० में असख्यास० स्थान होवे० सूक्ष्म० में अं० मु० के जितने असख्य और यथा० का स० स्थान एक ही है। इनका अल्प बहुत्व।

सर्व से कम यथा० सयति के संयम स्थान
उनसे सूक्ष्म संपराय के सं० स्थान असंख्यात गुणा
,, परि हार वि० ,, ,, ,, ,, ,,
,, सामा० छेदो० ,, ,, ,, ,, ,, परस्पर तुल्य

१५ निकासे द्वार–एकेक संयम क पर्यव (पजवा) अनन्ता अनन्त हैं प्रथम तीन संयति के पर्यव परस्पर तुल्य तथा पट् गुण हानि वृद्धि सूक्ष्म०यथा०से २ सयम अनन्त गुणा न्यून हैं सूक्ष्म० तीनों ही से अनन्त गुणा अधिक है परस्पर पट् गुण हानि वृद्धि और यथा० से अनन्त गुणा न्यून है यथा० चारों ही से अनन्त गुणा अधिक है परस्पर तुल्य है।

अल्प बहुत्व।

१ सर्व से कम सामा०छेदो० के ज० संयम पर्यव(परस्पर तुल्य) उन.

२ परिहार विशुद्ध के	,, ,,	,,	अनन्त गुणा	,,		
३ ,, ,,	,,	उत्कृष्ट	,,	,,	,,	,,
४ सामा० छेदो०	,,	,,	,,	,,	,,	,,
५ सूक्ष्म सपराय	,,	जघन्य	,,	,,	,,	,,
६ ,, ,,	,,	उत्कृष्ट	,,	,,	,,	,,
७ यथा ख्यात	,,	ज० उ०	,,	,,	,,	परस्पर तुल्य

१६ योग द्वार–४ सयति,सयोगी और यथा०सयोगी और अयोगी ।

१७ उपयोग द्वार–सूक्ष्म मे साकार उपयोगी होवे शेप चार में साकार–निराकार दोनों ही उपयोग वाले होवें।

१८ कपाय द्वार–३ सयति सज्वलन का चोक (चारों की कपाय) में होवे सूक्ष्म०संज्व०लोम में होवे और यथा० अकपायी (उपशान्त तथा क्षीण) होवे

१९ लेश्या द्वार–सामा० छेदो० में ६ लेश्या परि० में ३ शुभ लेश्या सूक्ष्म०में शुक्ल लेश्या यथा०में १ शुक्ल लेश्या तथा अलेशी भी होवे ।

२० परिणाम द्वार–तीन सयति में तीनों ही परिणाम उनकी स्थिति हायमान तथा वर्धमान की ज० १ उ० ७ अ० मु० की, अवस्थित की ज० १ समय उ० ७ समय की, सूक्ष्म० में २ परिणाम (हायमान वर्धमान) इनकी स्थिति ज० उ० अं० मु० की, यथा०में २ परिणाम; वर्धमान (ज० उ० अ० मु० की स्थिति) और अवस्थित (ज० १ समय उ० देश उणा क्रोड़ पूर्व की स्थिति)।

ज० अ० मु० उ० देश उणा अर्ध पुद्गल परावर्तन काल, अनेक जीवापेक्षा-सामा०, यथा० में अन्तर नहीं पड़े, छेदो० में ज० ६३००० वर्ष, परि० में ज० ८४००० वर्ष का, दोनों में उ० देश उणा १८ क्रोड़ाक्रोड़ सागर का, और सूक्ष्म० में ज० १ समय उ० ६ माह का अन्तर पड़े।

३१ समुद्घात द्वार-सामा० छेदो० में ६ समु० (केवली समु० छोड़ कर) परि० में ३ प्रथम की, सूक्ष्म० में नहीं और यथा० में १ केवली समुद्घात।

३२ क्षेत्र द्वार-पाचों ही संयति ल
तवें भाग होवे, यथा० वाले केवली सम
लोक प्रमाण होवे।

३३ स्पर्शना द्वार-क्षेत्र द्वार

३४ भाव द्वार-४ संयति च
और यथाख्यात उपशम तथा क्षा

३५ परिणाम द्वार-सात्
नाम वर्तमान अपेक्षा

यथाख्यात „ १६२ „ नियम से „ „ क्रोड❀

३६ अल्प बहुत्व द्वारः-

सर्व से कम सूक्ष्म सपराय सयम वाले, उनसे-

परिहार वि० सयम वाले सख्यात गुणा „

यथाख्यात „ „ „ „ „

छेदोपस्था० „ „ „ „ „

सामायिक „ „ „ „

❀ केवली की अपेक्षा से समझना,

॥ इति सजया (सयति) सम्पूर्ण ॥



❀ अष्ट प्रवचन (५ समिति ३ गुप्तिः) ❀

(श्री उत्तराध्यान सूत्र २४ वाँ अध्ययन)

पाँच समिति-(विधि) के नाम-१ इरिया समिति६ (मार्ग में चलने की विधि) २ भाषा (बोलने की) समिति ३ एषणा (गोचरी की) समिति ४ निक्षेपणा (आदान भंडमत्त वस्त्र पात्रादि देने व रखने की) समिति ५ परिठावणिया (उच्चार, पासवण खेल-जल, मधाण-बड़ीनीत लघुनीत, बलखा लींट आदि परठने की) समिति ।

तीन गुप्ति (गोपना) के नाम-१ मन गु० २ वचन गु० काया गुप्ति ।

१ इर्या समिति के ४ भेद-(१) आलम्बन ज्ञान दर्शन, चरित्र का (२) काल-अहो रात्रि का (३) मार्ग कुमार्ग छोड़ कर सुमार्ग पर चलना (४) यत्ना (जयणा सावधानी) के ४ भेद द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, द्रव्य से छकाय जीवों की यत्ना करके चले क्षेत्र से धुसरी (३॥ हाथ प्रमाण जमीन आगे देखते हुवे चले) काल से रास्ते चलते नहीं बोले और भाव से रास्ते चलते वाचन पूछने (पृच्छना) पर्यट्टण, धर्म कथा आदि न करे और न शब्द, रूप, गंध रस, स्पर्शादि विषय में ध्यान दे ।

२ भाषा समिति के ४ भेद--द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव द्रव्य से आठ प्रकार का भाषा (कर्कश, कठोर,

छेद कारी, भेदकारी, अधार्मिक, मृषा, सावद्य.निश्चयकारी) नहीं बोले क्षेत्र से रास्ते चलते न बोले काल से १ पहर रात्रि बीतने पर जोर से नहीं बोले भाव से राग द्वेष युक्त भाषा न बोले ।

३ एषणा समिति के ४ भेद द्रव्य क्षेत्र,काल भाव द्रव्य से ४२ तथा ९६ दोष टालकर निर्दोष आहार, पानी वस्त्र, पात्र, मकानादि याचे (मागे) क्षेत्र से २ गाउ (कोस) उपरान्त ले जाकर आहार पानी नहीं भोगे, काल मे पहले पहर का आहार पानी चौथे पहर में न भोगवे भाव से माडले के ५ दोष (सयोग, अगाल,धूम, परिमाण, कारण) टाल कर अनासक्तता से भोगवे ।

४ आदान भण्डमत्त निखेवणीया समिति— मुनियों के उपकरण ये हैं-१ रजोहरण २ मुँहपत्ति १ चोल पट्टा (५ हाथ) ३ चादर (पछेड़ी) साध्वी ४ पछेडी रक्खे, काष्ट तुम्बी तथा मिट्टी के पात्र, १ गुच्छा, १ आसन १ सस्तारक (२॥ हाथ लम्बा बिछाने का कपड़ा) तथा ज्ञान, दर्शन, चारित्र वृद्धि निमित्त आवश्यक वस्तुएं ।

(१) द्रव्य से ऊपर कहे हुवे उपकरण यत्ना से लेवे, रक्खे तथा वापरे (काम में लेवे)

(२) क्षेत्र से व्यवस्थित रक्खे जहा तहा बिखरे हुवे नहीं रक्खे ।

(३) काल मे दोनों समय (१ मे और चौथ पहर म) पडिलेहन तथा पूजन करे ।

(४) भाव से ममता रहित संयम साधन समझ कर भोगवे ।

५ उच्चार पासवण खेल जल संघाण परिठावणिया समिति के ४ भेद—(१) द्रव्य मलमूत्रादि १० प्रकार के स्थान पर बैठे नहीं (१ जहा मनुष्यों का आवन जावन हो २ जीवों की जहां घात होवे ३ विषम-ऊँची नीची भूमि पर ४ पोली भूमि पर ५ सचित्त भूमिपर ६ संकड़ी (विशाल नहीं) भूमि पर ७ तुरन्त की (अभी की) अचित्त भूमि पर ८ नगर गाँव के समीप में ९ लीलन फूलन होवे वहा १० जीवों के बिल (दर) होवे वहा-न बैठे) (२) क्षेत्र से वस्ती को दुर्गंछा होवे वहां तथा आमे रास्ते पर न बैठे (३) काल से बैठने की भूमि को कालो काल पडिलेहण करे व पूजे (४) भाव से बैठने को निकले तब आवस्सही ३ वार कहे बैठने के पहिले शकेन्द्र महाराज की आज्ञा मांगे बैठते समय वोसिरे ३ वार कहे और बैठ कर आते समय निस्सही ३ वार कहे जल्दी सूख जावे इस तरह बैठे ।

३ गुप्ति के चार चार भेद ।

१ मन गुप्ति के ४ भेद-(१) द्रव्य से आरंभ समारम में मन न प्रवर्तावे (२) क्षेत्र से समस्त लोक में (३) काल से जाव जीव तक (४) भाव से विषय

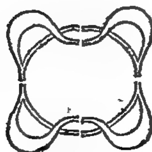
कषाय, आर्त रौद्र राग द्वेष में मन न प्रवर्तावे ।

२ वचन गुप्ति के ४ भेद-(१) द्रव्य से चार विकथा न करे (२) क्षेत्र से समग्र लोक में (३) काल से जाव जीव तक (४) भाव से सावद्य (राग द्वेष विषय कषाय युक्त) वचन न बोले ।

३ काया गुप्ति के ४ भेद-(१) द्रव्य से शरीर की शुश्रूषा (सेवा-शोभा) नहीं करे (२) क्षेत्र से समस्त लोक में (३) काल से जाव जीव तक (४) भाव से सावद्य योग (पाप कारी कार्य) न प्रवर्तावे (न सेवन करे)

॥ इति अष्ट प्रवचन सम्पूर्ण ॥





५२ अनाचार

(श्री दशवैकालिक सूत्र, तीसरा अध्ययन)

(१) मुनि के निमित तैयार किया हुवा आहार, वस्त्र, पात्र तथा मकान भोगवे तो अनाचार लागे।

(२) मुनि के निमित खरीदे हुवे आहार, वस्त्र, पात्र तथा मकान भोगवे तो अनाचार लागे।

(३) नित्य एक घर का आहार भोगवे तो ,, ,,

(४) सामने लाया हुवा ,, ,, ,, ,,

(५) रात्रि भोजन करे तो ,, ,,

(६) देश स्नान (शरीर को पूछ कर तथा सारे शरीरका स्नान करके) करे तो अनाचार लागे

(७) सचित अचित पदार्थों की सुगन्ध लेवे तो ,, ,,

(८) फूल आदि की माला पहिने तो ,, ,,

(९) पंखे आदि से पवन हवा चलावे तो ,, ,,

(१०) तेल घी आदि आहार का संग्रह करे तो ,, ,,

(११) गृहस्थ के वासन में भोजन करे तो ,, ,,

(१२) राजपिण्ड-बलिष्ट आहार लेवे तो ,, ,,

(१३) दान शाला में से आहार आदि लेवे तो ,, ,,

(१४) शरीर का विना कारण मर्दन करे करावे ,, ,,

(१५) दातुन करे तो ,, ,,

(१६) गृहस्थों की सुख शाता पूछ कर खुशामद करे तो ,, ,,

(१७) दर्पण में अंगोपांग निरखे तो ,, ,,

(१८) चोपड शतरञ्ज आदि खेल खेले तो ,, ,,

(१९) अर्थोपार्जन जुगार सट्टा आदि करे तो ,, ,,

(२०) धूप आदि निमित्त छत्री आदि रक्खे तो ,, ,,

(२१) वैद्यगिरि करके आजीविका चलावे तो ,, ,,

(२२) जूतियें मोजे आदि पैरों में पहिने तो ,, ,,

(२३) अग्निकाय आदि का आरंभ (ताप आदि) करे तो ,, ,,

(२४) गृहस्थों के यहां गादी तकियादि पर बैठे तो ,, ,,

(२५) ,, ,, पलंग, खाट आदि ,, ,,

(२६) मकान की आज्ञा देने वाले के यहां से (शय्यान्तर) वहोरे तो ,, ,,

(२७) विना कारण गृहस्थों के यहां बैठ कर कथादि करे तो ,, ,,

(२८) ,, ,, शरीर पर पीठी, मालिस आदि करे तो ,, ,,

(२९) गृहस्थ लोगों की वैयावच्च (सेवा) आदि करे तो ,, ,,

(३०) अपनी जाति कुल आदि बता कर आजीविका करे तो

(३१) सचित्त पदार्थ (लीलोत्री, कच्चा पानी आदि) भोगवे तो ,, ,,

(३२) शरीर में रोगादि होने पर गृहस्थों की सहायता लेवें तो ,, ,,

(३३) मूला आदि सचित लिलोत्री, (३४) सेलड़ी के टुकड़े (३५) सचित कंद (३६) सचित मूल, (३७) सचित फल फूल (३८) सचित बीजआदि (३६) सचित नमक (४०) सेंधा नमक (४१) सांभर नमक (४२) धूलखारा का नमक (४३) समुद्रका नमक (४४) काला नमक ये सर्व सचित नमक भोगवे (खावे व वापरे) तो अनाचार लगे।

(४५) कपड़े को धूप आदि से सुगन्ध मय बनावे तो ,, ,,

(४६) भोजन करके वमन करे तो ,, ,,
(४७) विना कारण रेच [जुलाब] आदि लेवे तो ,, ,,
[४८] गुह्य स्थानों को धोवे, साफ करे तो ,, ,,
[४९] आंख में अञ्जन, सुरमा आदि लगावे तो ,, ,,
[५०] दांतों को रंगावे तो ,, ,,
[५१] शरीर को तेल आदि लगा कर सुन्दर बनावे तो ,, ,,

[५२] शरीर की शोभा के लिये बाल, नख आदि उतारे तो अनाचर लागे।

उपरोक्त बावन अनाचारों को टाल कर साधु साध्वी सदा निर्मल चारित्र पाले।

॥ इति ५२ अनाचार सम्पूर्ण ॥



(२३) कोहे- क्रोध कर के (२४) माने-मान कर (२५) माये--कपट कर के (२६) लोभे लोभ कर के लिया हुवा।

(२७) पुर्व्व पच्छ सथुव--पहले तथा बाद में देने वाले की स्तुति कर के लिया हुवा।

[२८] विज्ञा गृहस्थों को विद्या बताकर लिया हुवा

[२६] मन्त--मन्त्र तन्त्र आदि " " "

[३०] चून--रसायन आदि (एक वस्तु में दुसरी वस्तु मिलाकर तीसरी वस्तु बनाना) मिलाकर लिया हुवा।

[३१] जोगे- लेप, वशीकरण आदि बताकर लिया हुवा।

[३२] मूल कम्मे- गर्भ पात आदि की दवा बता कर लिया हुवा उपरोक्त दोषों में से प्रथम १६ दोष 'उद्गमन' अर्थात् भद्रिक श्रावक भक्ति के कारण अज्ञान साधुओं को लगाते हैं। पीछे के १६ दोष 'उत्पात' है। ये मुनि स्वयं लगा लेते हैं।

अब दश दोष नीचे लिखे जाते हैं, जो साधु और गृहस्थ दोनों के प्रयोग से लगाये जाते हैं।

(३३) संकिए--जिसमें साधु तथा गृहस्थ को शुद्धता (निर्दोषता) की शङ्का होवे।

[३४] मंक्खिए वहोराने वाले के हाथ की रेखा अथवा बाल सचित से भीजे हुवे होवे तो।

[३५] निक्खित्ते–सचित्त वस्तु पर अचित्त आहार–रक्खा होवे।

[३६] पहिये -अचित्त वस्तु सचित्त से ढकी होवे वो।

[३७] मिसीये–सचित्त–अचित्त वस्तु मिली होवे।

[३८] अपरिणिये पूरा अचित्त आहार जो न हुवा हो

[३६] सहारिये–एक बर्तन से दूसरे बर्तन (नहीं वपराया हुवा) में लेकर दिया हुवा।

[४०] दायगो–अंगोपांग से हीन ऐसे गृहस्थों से लेवे कि जिन्हें चलने फिरने से दुःख होता होवे।

[४१] लीत्त तुरन्त के लीपे हुवे आगन पर से लिया हुवा।

[४२] छाडिये–पहोरावने के समय वस्तु नीचे गिरती-टपकती होवे।

आवश्यक सूत्र में बताये हुवे ५ दोष।

[१] गृहस्थों के दरवाजे आदि खुला कर लेवे तो।

[२] गौ, कुत्ते आदि के लिए रक्खी हुई रोटी लेवे तो।

[३] देवी देवता के नैवेद्य व बलिदान निमित बनी हुई वस्तु लेवे तो।

[४] बिना देखी चीज–वस्तु लेवे तो।

[५] प्रथम निरस आहार पर्याप्त आया हुवा होवे तो

(२३) कोहे- क्रोध कर के (२४) माने-मान कर (२५) माये -कपट कर के (२६) लोभे लोभ कर के लिया हुवा ।

(२७) पुव्वं पच्छ संथुव-पहेले तथा बाद में देने वाले की स्तुति कर के लिया हुवा ।

[२८] विज्जा गृहस्थों को विद्या बताकर लिया हुवा

[२९] मंत्त-मन्त्र तन्त्र आदि　"　"　"

[३०] चून्न--रसायन आदि (एक वस्तु में दूसरी वस्तु मिलाकर तीसरी वस्तु बनाना) सिखाकर लिया हुवा ।

[३१] जोगे- लेप, वशीकरण आदि बताकर लिया हुवा ।

[३२] मूल कम्मे- गर्भ पात आदि की दवा बता कर लिया हुवा ऊपरोक्त दोषों में से प्रथम १६ दोष ' उद्गमन ', अर्थात भद्रिक श्रावक भक्ति के कारण अज्ञान साधुओं को लगाते हैं । पीछे के १६ दोष ' उत्पात ' है । ये मुनि स्वयं लगा लेते हैं ।

अब दश दोष नीचे लिखे जाते हैं जो साधु और गृहस्थ दोनों के प्रयोग से लगाये जाते हैं ।

(३३) संकिए--जिसमें साधु तथा गृहस्थ को शुद्धता (निर्दोषता) की शङ्का होवे ।

[३४] मंक्खिए वहोराने वाले के हाथ की रेखा अथवा बाल सचित से भीजे हुये होवे तो ।

[३५] निक्खित्ते–सचित्त वस्तु पर अचित्त आहार-रक्खा होवे।

[३६] पहिये अचित्त वस्तु सचित्त से ढकी होवे वो।

[३७] मिसीये–सचित्त–अचित्त वस्तु मिली होवे।

[३८] अपरिणिये पूरा अचित्त आहार जो न हुवा हो

[३९] सहारिये–एक वर्तन से दूसरे वर्तन (नहीं वपराया हुवा) में लेकर दिया हुवा।

[४०] दायगे- अंगोपाग से हीन ऐसे गृहस्थों से लेवे कि जिन्हें चलने फिरने से दुःख होता होवे।

[४१] लीत्तु तुरन्त के लीपे हुवे आंगन पर से लिया हुवा।

[४२] छडिये- पहोरावने के समय वस्तु नीचे गिरती-टपकती होवे।

आवश्यक सूत्र में बताये हुवे ५ दोष।

[१] गृहस्थों के दरवाजे आदि खुला कर लेवे तो।

[२] गौ, कुत्ते आदि के लिए रक्खी हुई रोटी लेवे तो।

[३] देवी देवता के नैवेद्य व बलिदान निमित्त बनी हुई वस्तु लेवे तो।

[४] बिना देखी चीज–वस्तु लेवे तो।

[५] प्रथम निरस आहार पर्याप्त आया हुवा होवे

[२१] अप्रतीतकारी [स्त्री पुरुष दुराचारी होवे ऐसे कुलका] का आहार लेवे तो।

[२२] जिसने अपने घर पर आने के लिये मना किया होवे ऐसे गृहस्थ के घर का आहार लेवे तो

[२३] मदिरादि वस्तु की गोचरी करे तो–महा दोष है

–ः श्री आचारांग सूत्र मे बताये हुवे ८ दोषः–

[१] महेमान निमित्त बनाये हुवे आहार में से उनके जीमने के पहिले आहार लेवे तो।

[२] त्रस जीवों का मास [जो सर्वथा निषिद्ध है] लेवे तो महादोष।

[३] पुन्यार्थ धन–धान्य में से बनाया हुवा आहार लेवे तो।

[४] रसोई [ज्योनार–जीमनवार] में से आहार लेवे तो।

[५] जिस घर पर बहुतसे भिखारी–भोजनार्थी इक्ठे हुवे हो उस घर में से आहार लेवे तो।

[६] गरम आहार को फूंक देकर वहोराया

(७) भूमि गृह (भोंयरा–ऊंडी भू

हुवा आहार लेवे तो

(८) पंखे आदि से ठण्डे

श्री भगवती सूत्र में

(१) सयोग दोष–आये हुवे

के लिये अन्य चीजें मिलावे (दूध में शकर आदि मिलावे)

(२) द्वेष-दोष-निरस आहार मिलने से घृणा लावे तो
(३) राग-दोष-सरस „ „ „ खुशी „ „
(४) अधिक प्रमाण में [ठूंस २ कर] आहार करे तो
[५] कालातिक्रम दोष-पहले पहेर में लिये हुवे का ४ थे पहेर में आहार करे तो।
[६] मार्गातिक्रम दोष-दो गाउ से अधिक दूर लजाकर आहार करे तो।
[७] सूर्योदय पहले सूर्योदय पश्चात् आहार करे तो।
[८] दुष्काल तथा अटवी में दानशालाओं का „ लेवे तो।
[९] „ में गरीबों के लिये किया हुवा आहार „ „
[१०] ग्लान-रोगी प्रमुख „ „ „ „ „ „
[११] अनाथों के लिये „ „ „ „ „
[१२] गृहस्थ के आमन्त्रण से उसके घर जाकर आहार लेवे तो।

श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र में बताये हुवे ५ दोष

[१] मुनिके निमित्त आहार का रूपान्तर करके देवे तो
[२] „ „ „ „ „ पर्याय पलट „ „ „
[३] गृहस्थ के यहां से अपने हाथ द्वारा आहार लेवे तो
[४] मुनि के निमित्त भडारिये आदि के अन्दर से निकाल कर दिया हुवा आहार लेवे तो।

[५] मधुरवचन बोल कर [खुशामद करके] आहार का याचना करके लेवे तो।

श्री निशीथ सूत्र में बताये हुवे ६ दोष।

[ ] गृहस्थ के यहां जाकर 'इस बर्तन में क्या है' इस प्रकार पूछ २ कर याचना करे तो।

(२) अनाथ, मजूर के पास से दीनतापूर्वक याचना करके आहार ले तो।

(३) अन्य तीर्थी (बावा–साधु) की भिक्षा में से याचकर आहार लेवे तो।

(४) पासत्था (शिथिलाचारी) के पास से याचकर लेवे तो।

(५) जैन मुनियों की दुर्गछा करने वाले कुल में से आहार लेवे तो।

(६) मकान की आज्ञा देने वाले-को (शय्यातर) साथ लेकर उसकी दलाली से आहार लेवे तो।

श्री दशा श्रुत स्कन्ध सूत्र में बताये हुवे २ दोष

(१) बालक निमित्त बनाया हुवा-आहार लेवे तो

(२) गर्भवन्ती " " " " " "

श्री बृहत्कल्प सूत्र में बताया हुवा १ दोष

(१) चार प्रकार का आहार रात्रि को वासी रखकर दूसरे रोज भोगवे तो दोष।

एव ४२×५+२+२३+८+१२+५×६×२×१=१०६ इनमें ५ माडला का और १०१ गोचरी का दोष जानना।

॥ इति आहार के १०६ दोष सम्पूर्ण ॥



साधु-समाचारी

तथा

साधुओं के दिन कृत्य और रात्रि कृत्य
श्री उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन २६

समाचारी १० प्रकार की:-(१) आवस्सिय (२) निसिहिय (३) आपुच्छणा (४) पडि पुच्छणा (५) छंदणा (६) इच्छा कार (७) मिच्छा कार (८, तहकार (६) अब्भु-ठणा और (१०) उप-संपया समाचारी ।

(१) आवास्सिय-साधु आवश्यक-जरूरी (आहार निहार, विहार) कारण से उपाश्रय से बाहर जावे तब 'आवस्सिय' शब्द बोल कर निकले ।

(२) निसिहिय-कार्य समाप्त होने पर लोट कर जब पुनः उपाश्रय में आवे तब 'निसिहिय' शब्द बोल कर आवे ।

(३) आपुच्छणा-गोचरी, पडिलेहण आदि अपने सर्व कार्य गुरु की आज्ञा लेकर करे ।

(४) पाडपुच्छणा-अन्य साधुओं का प्रत्येक कार्य गुरु की आज्ञा ले कर करना ।

(५) छंदणा-आहार पानी गुरु की आज्ञानुसार दे देवे और अपने भाग में आये हुवे आहार को

भी गुरुजनों आदि को आमन्त्रित करने के बाद खावे।

(६) इच्छाकार-[पात्रलेपादि] प्रत्येक कार्य में गुरु की इच्छा पूछ कर करे।

(७) मिच्छाकार-यत्किंचित् अपराध के लिये गुरु समक्ष आत्म निंदा करके 'मिच्छा मि दुक्कड़' दे।

(८) तहकार-गुरु के वचन को सदा 'तहत्त' प्रमाण कह कर प्रसन्नता से कार्य करे।

(९) अब्भुठणा-गुरु, रोगी, तपस्वी आदि की ग्लानता (घृणा) रहित वैयावच्च करे।

(१०)उपसंपया-जीवन पर्यन्त गुरुकुल वास करे (गुरु आज्ञानुसार विचरे)

दिन कृत्य

चार पहर दिन के और चार पहर रात्रि के होते है। दिन तथा रात्रि के चोथे भाग को पहर कहना।

(१) दिन निकलते ही प्रथम पहर के चोथे भाग में सर्व उपकरणों का पडिलेहण करे (२) तत्पश्चात् गुरु को पूछे कि मैं वैयावच्च करूं अथवा सज्झाय ? गुरु की आज्ञा मिलने पर वैसा ही १ पहर तक करे। (३) दूसरे पहर में ध्यान (किये हुवे स्वाध्याय की चिंतवन) करे (४) तीसरे पहर में गोचरी करे, प्रासुक आहार लाकर गुरु को बतावे, संविभाग करे और बडों को आमन्त्रित करके आहार

(५) चोथे पहर के ३ भाग तक स्वाध्याय करे (६) चोथे भाग में उपकरणों का पडिलेहण करे तथा पठाने की भूमि भी पडिलेहे, तत्पश्चात् (७), देवसी प्रतिक्रमण करे (६ श्रावश्यक करे)।

रात्रि कृत्य

देवसी प्रति क्रमण करने के बाद प्रथम पहर में अस-ज्झाय टाल कर स्वाध्याय करे दूसरे पहर में ध्यान करे, स्वाध्याय का अर्थ चिंतवे तत्पश्चात् निद्रा आवे तो तीसरे पहर में सविध यत्ना पूर्वक संथारा संस्तरी कर स्वल्प निद्रा लेकर चोथे पहर की शुरूआत में उठे, निद्रा के दोष टालने के निमित्त काउसग्ग करे, पोन पहर तक स्वाध्याय सज्झाय करे. चोथे पहर में चोथे (अंतिम) भाग में रायसि प्रति-क्रमण करे पश्चात् गुरु वदन करके पचखाण करे।

॥ इति साधु समाचारी सम्पूर्ण ॥





अहोरात्रि की घडियों का यन्त्र

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र २६ वा अध्ययन)

७ स्वासोश्वास का १ थोव, ७ थोव का १ लव, ३८॥ लव की १ घड़ी (२४ मिनिट) प्रति दिन २॥ लव लव और २॥ थोव दिन बढता और घटता है, इसका यन्त्र।

	दिन कितनी घड़ी का				रात्रि कितनी घडी की			
माह	वदि ७	अ.	शुदि ७	पूर्णिमा	विदि७	अ.	शु. ७	पूर्णि.
आषाढ	३४॥	३५	३५॥	३६	२५॥	२५	२४॥	२४
श्रावण	३५॥	३५	३४॥	३४	२४॥	२५	२५॥	२६
भाद्रपद	३२॥	३३	३२॥	३२	२६॥	२७	२७॥	२८
आश्विन	३१॥	३१	३०॥	३०	२८॥	२९	२९॥	३०
कार्तिक	२९॥	२९	२८॥	२८	३०॥	३१	३१॥	३२
मागशीर्ष	२७॥	२७	२६॥	२६	३२॥	३३	३३॥	३४
पोष	२५॥	२५	२४॥	२४	३४॥	३५	३५॥	३६
माघ	२४॥	२५	२५॥	२६	३५॥	३५	३४॥	३४
फाल्गुन	२६॥	२७	२७॥	२८	३३॥	३३	३२॥	३२
चैत्र	२८॥	२९	२९॥	३०	३१॥	३१	३०॥	३०
वैशाख	३०॥	३१	३१॥	३२	२९॥	२९	२८॥	२८
ज्येष्ठ	३२॥	३३	३३॥	३४	२७॥	२७	२६॥	२६

॥ इति अहोरात्रि की घडियों का यन्त्र सम्पूर्ण ।

14 पूर्व का यंत्र

१४ पूर्व के नाम	पद संख्या	वस्तु	चूलिका	हाथी शाही [स्याही] हस्ति	विषय-वर्णन
उत्पाद	क्रोड़	१०	४	१	सर्व द्रव्य, गुण पर्याय की उत्पति और नाश
अग्रणीय	७० लाख	१४	१२	२	स० द्र० गु० प० का ज्ञान
वीर्य	६० ”	८	८	४	जीवों के वीर्य का वर्णन
आस्ति नास्ति	१ क्रोड़	१८	१०	८	आस्ति नास्ति का स्वरूप और स्याद्वाद
ज्ञान प्रमाद	२ ”	१२	०	१६	पाच ज्ञान का व्याख्यान
सत्य ”	२६ ”	२	०	३२	सत्य संयम का ”
आत्मा ”	१ ” ८० ला	१६	०	६४	नय प्रमाण दर्शन सहित आत्म स्वरूप
कर्म ”	८४ लाख	३०	०	१२८	कर्म प्रकृति, स्थिति अनुभाग, मूल उतर प्रकृति
प्रत्याख्यान प्रमाद	१क्रो १६०	२०	०	२५६	प्रत्याख्यान का प्रतिपादन
विद्या प्रमाद	२६ क्रोड़	१५	०	५१२	विद्या के अतिशय का व्याख्यान
कल्याणक ”	१ ”	१२	०	१०२४	भगवान के कल्याणका ”
प्राणावाय ”	६ ”	१२	०	२०४८	भेदस, दृतप्राणके ० का
क्रियावशा०	१क्रो ०ला.	३०	०	४०१६	क्रिया का व्याख्यान
लोक बिंदु-सार	६६ लाख	२५	०	८१६२	बिन्दु में लोक स्वरूप, -सर्व अक्षर सन्निपात

(पहिले नम्बर और कुम्भस्याही)

अम्बाडी सहित हाथी के समान स्याही के ढगले से १ पूर्व लिखाया जाता है एवं १४ लिखने के लिये कुल १६३८३ हाथी प्रमाण स्याही की जरूरत होती है इतनी स्याही से जो लिखा जाता है उस ज्ञान को १४ पूर्व का ज्ञान कहते हैं।

॥ इति १४ पूर्व का यन्त्र सम्पूर्ण ॥

ꕥ सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल ꕥ

(श्री उत्तराध्ययन सूत्र २९ वां अध्ययन)

(१) वैराग्य तथा मोक्ष पहुंचने की अभिलाषा।

(२) विषय भोग की अभिलाषा से रहित होना।

(३) धर्म करने की श्रद्धा।

(४) गुरु स्वधर्मी की सेवा- भक्ति करना।

(५) पाप का अलोचन करना।

(६) आत्म दोषों की आत्म--साक्षी से निन्दा करना।

(७) गुरु के समीप पाप की निन्दा करना।

(८) सामायिक (सावद्य पाप से निवृत होने की मर्यादा) करे।

(९) तीर्थंकरों की स्तुति करे।

(१०) गुरु को वंदन करे।

(११) पाप निवर्तन--प्रति क्रमण करे।

(१२) काउसग्ग करे (१३) प्रत्याख्यान करे (१४) संध्या समय प्रतिक्रमण करके नमोत्थुण कहे, स्तुति मंगल करे (१५) स्वाध्याय का काल प्रतिलेखे (१६) प्रायश्चित लेवे (१७) क्षमा मागे (१८) स्वाध्याय करे (१९) सिद्धान्त की वाचनी देवे (२०) सूत्र -अर्थ के प्रश्न पूछे (२१) वार-वार सूत्र ज्ञान फेरे (२२) सूत्रार्थ चिंतवे (२३) धर्म कथा कहे (२४) सिद्धान्त की आराधना करे (२५) एकाग्र

मन की स्थापना करे (२६) सत्तरह भेद से संयम पाले (२७) बारह प्रकार का तप करे (२८) कर्म टाले (२९) विषय सुख टाले (३०) अप्रतिबन्धपना करे (३१) स्त्री पुरुष नपुंसक रहित स्थान भोगवे (३२) विशेषतः विषय आदि से निवर्ते (३३) अपना तथा अन्य का लाया हुवा आहार वस्त्रादि इकट्ठे करके बांट लेवे इस प्रकार के संभोग का पच्चखाण करे (३४) उपकरण का पच्चखाण करे (३५) सदोष आहार लेने का पच्चखाण करे (३६) कषाय का पच्चखाण करे करे (३७) अशुभ योग का पच्च० (३८) शरीर शुश्रूषा का पच्च० (३९) शिष्य का पच्च० (४०) आहार पानी का पच्च० (४१) दिशा रूप अनादि स्वभाव का पच्च० ४२) कपट रहित यति के वेष और आचार में प्रवर्ते (४३) गुणवन्त साधु की सेवा करे (४४) ज्ञानादि सर्व गुण संपन्न होवे (४५) राग द्वेष रहित प्रवर्ते (४६) क्षमा सहित प्रवर्ते (४७) लोभ रहित प्रवर्ते (४८) अहङ्कार रहित प्रवर्ते (४९) कपट रहित (सरल-निष्कपट) प्रवर्ते (५०) शुद्ध अन्तःकरण (सत्यता) से प्रवर्ते (५१) करण सत्य (सविधि क्रिया काण्ड करता हुवा) प्रवर्ते (५२) योग (मन, वचन, काया) सत्य प्रवर्ते (५३) पाप से मन निवृत कर मनगुप्ति से प्रवर्ते (५५) काय-गुप्ति से प्रवर्ते (५६) मन में सत्य भाव स्थापित करके प्रवर्ते (५७) वचन (स्वाध्यादि) पर सत्य भाव स्थापित करके प्रवर्ते (५८) काया को सत्य भाव से

प्रवर्तावे (५६) श्रुत ज्ञानादि से सहित होवे (६०) समकित सहित होवे (६१) चारित्र सहित होवे (६२) श्रोत्रेन्द्रिय-(६३) चक्षुइन्द्रिय (६४) घ्राणेन्द्रिय-(६५) रसेन्द्रिय-(६६) स्पर्शेन्द्रिय-का निग्रह करे (६७-७०) क्रोध, मान, माया, लोभ जीते (७१) राग द्वेष और मिथ्यात्व को जीते (७२) मन, वचन, काया के योगों का रोकते हुवे शैलेषी अवस्था धारण करके और (७३) कर्म रहित होकर मोक्ष पहुँचे।

एवं आत्मा ७३ बोलों के द्वारा क्रमशः मोक्ष प्राप्त करके शीतलीभूत होती है।

॥ इति सम्यक् पराक्रम के ७३ बोल सम्पूर्ण ॥





१४ राज लोक

लोक असंख्यात क्रोड़ा क्रोड़ योजन के विस्तार में है जिसमें पचास्ति काय भरी हुई है अलोक में आकाश सिवाय कुछ नहीं है। लोक का प्रमाण बताने के लिये 'राज' संज्ञा दी जाती है।

३,८१,१२,६७० मन का एक भार, ऐसे १००० भार वजन के एक गोले को ऊंचा फेके तो ६ महिने ६ दिन, ६ पहर, ६ घड़ी, ६ पल में जितना नीचे आवे उतने क्षेत्र को १ राजु कहते हैं ऐसे १४ राजु का लम्बा (ऊंचा) यह लोक है।

'राज' के ४ प्रकार है-(१) घनराज=लम्बाई, चौड़ाई ऊंचाई एकेक राजु (२) परतर राज=घन राज का चोथा भाग (३) सूचि राज=परतर राज का चोथा भाग (४) खंड राज=सूचि राज का चौथा भाग।

अधो लोक ७ राजु जाड़ा (ऊचा) है जिसमें एकेक राजु की जाड़ी ऐसी ७ नरक है।

नाम	जाड़ी	चौड़ाई	घनराज	परतरराज	सूचिराज	खंडराज
रत्न प्रभा	१राजु	१ राजु	१ राजु	४ राजु	१६ राजु	६४ राजु
शर्कर "	"	२॥ "	६। "	२५ "	१०० "	४०० "
वालु "	"	४ "	१६ "	६४ "	२५६ "	१०२४ "

पंक	"	"	५ "	२५ "	१०० "	४०० "	१६०० "
धूम	"	"	६ "	३६ "	१४४ "	५७६ "	२३०४ "
तम	"	"	६॥ "	४२। "	१६९ "	६७६ "	२७०४ "
तमतमा"		"	७ "	४९ "	१९६ "	७८४ "	३१३६ "

अधो लोक में कुल १७५॥ घनराज, ७०२ परतर राज, २८०८ सूचि राज, ११२३२ खण्ड राज है।

१८०० योजन जाड़ा व १ राज विस्तार वाला तिर्छा लोक है जिसमें असंख्यात द्वीप समुद्र (मनुष्य तिर्यच के स्थान), और ज्योतिषी देव है तिर्छा और ऊर्ध्वे लोक मिल कर ७ राजु है।

समभूमि से १॥ राजु ऊचा १–२ देवलोक है यहा से १ राजु ऊँचा तीसरा–चौथा देवलोक है यहां से ०॥ राजु ऊचा ब्रह्म देवलोक है ०। राजु ऊचा लातक देवलोक यहाँ से ०। राजु ऊचा सातवाँ देवलोक, ०। राजु ऊचा आठवाँ, ०॥ राजु ऊचा ९-१० वाँ देवलोक, ०॥ राजु ऊचा ११-१२ देवलोक, १ राजु ऊचा नव ग्रीयवेक १ राजु ऊचा ५ अनुत्तर विमान आते है इनका क्रमशः घढता घटता विस्तार यन्त्रानुसार है—

स्थान	जाड़ा	विस्तार	घनराज	परतरराज	सूचिराज	खंडराज
सम भूमिसे	०॥	१	०॥	२	८	३२
यहा से	०॥	१॥	१ १/८	४।	१८	७२
"	०।	२	१	४	१६	६४

योजन की है परतु पृथ्वी पिंड १ ली नरक का १८००००
यो०, दूसरी का १३२००० यो०, तीसरी का १२८०००
यो०, चोथी का १२०००० यो०, पांचवीं का ११८०००
यो०, छट्ठी का ११६००० यो०, और सातवीं का
१०८००० योजन का पृथ्वी पिण्ड है ।

(६) करण्ड द्वार-पहेली नरक में ३ कारण्ड हैं (१)
खरकरण्ड १६ जात का रत्न मय १६ हजार योजन का
(२) आपुल बहूल पानी (जल) मय ८० हजार योजन को
(३) पंक बहूल कर्दम मय ८४ हजार योजन का कुल
१८०००० योजन है शेप ६ नरकों में करण्ड नहीं ।

७ पाथड़ा ८ आन्तरा द्वार-पृथ्वी पिण्ड में से
१००० योजन ऊपर और १००० योजन नीचे छोड़ कर
शेप पोलार में आन्तरा और पाथड़ा है । केवल ७ वीं
नरक में ५२५०० यो० नीचे छोड़ कर ३००० योजन
का एक पाथडा है ।

पहेली	नरक	में	१३	पाथडा,	१२	आन्तरा है
दूसरी	,,	,,	११	,, ,	१०	,, ,,
तीसरी	,,	,,	६	,, ,	८	,, ,,
चोथी	,,	,,	७	,, ,	६	,, ,,
पांचवीं	,,	,,	५	,, ,	४	,, ,,
छट्ठी	,,	,,	३	,, ,	२	,, ,,

पहेली नरक के १२ आन्तरा में से २ ऊपर के छोड़

कर शेष १० आन्तराओं में दश जाति के भवन पति रहते हैं। शेष नरकों में भवन पति देवताओं के वास नहीं हैं। प्रत्येक पाथड़ा ३००० योजन का है जिसमें १००० योजन ऊपर, १००० योजन नीचे छोड़ कर मध्य के १००० योजन के अन्दर नेरिये उत्पन्न होने की कुम्भियें हैं।

९ एकेक पाथडे का अन्तर पहेली नरक में ११५८३ $\frac{1}{3}$ यो०, दूसरी में ९७०० यो०, तीसरी में १२७५० यो०, चोथी में १६१६६ $\frac{2}{3}$ यो०, पाचवीं में २५२५० यो०, छट्ठी में ५२५०० यो०, का अतन्र है सातवीं में एक ही पाथड़ा है।

१० घनोदधि द्वार–प्रत्येक नरक के नीचे २० हजार योजन का घनोदधि है।

११ घनवायु द्वार–प्रत्येक नरक के घनोदधि नीचे असंख्य योजन का घनवायु है।

१२ तनवायु द्वार- प्रत्येक नरक के घनवायु नीचे असंख्य योजन का तनवायु है।

१३ आकाश द्वार -प्रत्येक नरक के तनवायु नीचे, असंख्य योजन का आकाश है।

१४ नरक- नरक का अन्तर -एक नरक में दूसरी नरक से असंख्य योजन का अन्तर है।

१५ नरक वासा द्वार—पहेली नरक में ३० लाख, दूसरी में २५ लाख, तीसरी में १५ लाख, चोथी में १० लाख, पाचवी में ३ लाख, छठी में ९९९९५ और सातवीं नरक में ५ नरक वासा है। इनमें $\frac{४}{५}$ नरकवासा असख्यात योजन का है जिनमें असंख्यात नेरिये है। $\frac{१}{५}$ नरक वासा सख्यात योजन का है और उनमें सख्यात नेरिया हैं।

तीन चिमटी बजाने में जम्बूद्वीप की २१ वार प्रदक्षिणा करने की गति वाले देवों को ज. १-२-३ दिन० उ० ६ माह लगे कितनों का अन्त आवे और कितनों का नहीं आवे, एवं विस्तार वाला असंख्य योजन का कोई २ नरक वासा है।

१६ अलोक अन्तर—१७ वलीया द्वार—अलोक और नरक में अन्तर है, जिसमें घनोदधि, घनवायु और तनुवायु का तीन वलय (चूड़ी कड़ा) के आकार समान आकार है—

नरक	रत्न प्र०	शर्कर प्र०	वालु प्र०	पक प्र०	धूम प्र०	तम प्र०	तमतमा प्र०
अलोक अ०	१२यो	१२$\frac{२}{३}$यो०	१३$\frac{१}{३}$यो	१४ यो	१४$\frac{२}{३}$यो	१५$\frac{१}{३}$यो	१६ यो०
वलय स०	३	३	३	३	३	३	३
घनोदधि	६ यो	६$\frac{१}{३}$यो०	६$\frac{२}{३}$यो०	७ यो०	७$\frac{१}{३}$यो	७$\frac{२}{३}$	८ यो०
घनवात	४॥ यो०	४॥। "	५ "	५। "	५॥ "	५॥। "	६ "
तनवात	१॥ "	१॥$\frac{१}{१२}$ "	१॥$\frac{२}{१२}$ "	१॥। "	१॥।$\frac{१}{१२}$ "	१॥।$\frac{२}{१२}$ "	२ "

१८ क्षेत्र वेदना द्वार–दश प्रकार की है–अनन्त क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दाह (जलन), ज्वर, भय, चिंता, खुजली, और पराधीनता. एक से दूसरी में, दूसरी से तीसरी में (इस प्रकार) अनन्त अनन्त गुणी वेदना सातवीं नरक तक है नरक के नाम के अनुसार पदार्थों की भी अनंन्ती वेदना है ।

१६ देव कृत वेदना - १ २ ३ नरक में परमाधामी देव पूर्व कृत पाप याद करा २ कर विविध प्रकार से मार–दुख देते हैं शेष नरक के जीव परस्पर लड़ २ कर कटा करते हैं ।

२० वैक्रिय द्वार–नेरिये खराब (तीक्ष्ण) शस्त्र के समान रूप बनाते है अथवा वज्रमुख कीड़े रूप होकर अन्य नेरियों के शरीरों में प्रवेश करते है अन्दर जाने बाद बड़ा रूप बना कर शरीर के टुकड़े २ कर डालते हैं ।

२१ अल्प बहुत्व द्वार–सबसे कम सातवीं नरक के नेरिये, उससे ऊपर ऊपर के असंख्यात गुणे नेरिये जानना. शेष विस्तार २४ दण्डकादि थोकड़ों में से जानना ।

॥ इति नारकी का वर्णन सम्पूर्ण ॥

भवनपति विस्तार

भवनपति देवों के २१ द्वार—१ नाम, २ वासा, ३ राजधानी ४ सभा ५ भवन संख्या ६ वर्ण ७ वस्त्र ८ चिन्ह ९ इन्द्र १० सामानिक ११ लोकपाल १२ त्रयस्त्रिंश १३ आत्म रक्षक १४ अनीका १५ देवी १६ परिषद १७ परिचारणा १८ वैक्रिय १९ अवधि २० सिद्ध २१ उत्पन्न द्वार।

१ नाम द्वार—१० भेद—१ असुर कुमार २ नाग कुमार ३ सुवर्ण कुमार ४ विद्युत कुमार ५ अग्नि कुमार ६ द्वीप कुमार ७ दिशा कुमार ८ उदधि कुमार ९ वायु कुमार १० स्तनित कुमार।

२ वासा द्वार—पहेली नरक के १२ आन्तराओं में से नीचे के १० आन्तराओं में दश जाति के भवनपति रहते हैं।

३ राजधानी द्वार—भवनपति की राजधानी तिर्छे लोक के अरुण वर द्वीप-समुद्रों में उत्तर दिशा के अन्दर 'अमर चंचा' बलेन्द्र की राजधानी है और दूसरे नव निकाय के देवों की भी राजधानियें हैं। दक्षिण दिशा में 'चमर चंचा' चमरेन्द्र की और नव निकाय के देवों की भी राजधानियें हैं।

४ सभा द्वार—एकेक इन्द्र के पाच सभा हैं—

(१) उत्पात सभा (देव उत्पन्न होने क स्थान), (२) अभिषेक सभा (इन्द्र के राज्याभिषेक का स्थान) (३) अलकार सभा (देवों के वस्त्र भूषण–अलकार सजने के स्थान) (४) व्यवसाय सभा (देवयोग्य धर्म नीति की पुस्तकों का स्थान) और (५) सौधर्मी सभा (न्याय-इन्साफ करने का स्थान)

५ भवन संख्या-कुल भवन ७७२००००० हैं जिन में ४ क्रोड ६ लाख भवन दक्षिण में और ३ क्रोड ६६ लाख भवन उत्तर दिशा में है विस्तार यन्त्र से समझना।

६ वर्ण, ७ वस्त्र ८ चिन्ह ६ इन्द्र द्वार–यन्त्र से जानना–

नाम	भवन लाख	भवन लाख	वर्ण	वस्त्र वर्ण	चिन्ह	इन्द्र दो २ उतर के	दक्षिण के
असुरकुमार	३०	३४	काला	रक्त	चूडामणि	बलेन्द्र	चमरेन्द्र
नाग "	४०	४४	श्वेत	नीला	नागफण	भूतेन्द्र	धरणेन्द्र
सुवर्ण "	३४	३८	सुवर्ण	श्वेत	गरुड	वेणुशाली	वेणु देव
विद्युत "	३६	४०	रक्त	नीला	वज्र	हरिसिंह	हरिकन्त
अग्नि "	३६	४०	"	'	कलश	अग्नि मानव	अग्निसिंह
द्वीप "	३६	४०	,	"	सिंह	विशेष्ट	पूर्ण
दिशा "	३६	४०	पाडुर	"	अश्व	जल प्रभ	जलकन्त
उदधि "	३६	४०	सुवर्ण	श्वेत	गज	अमृत वाहन	अमृत गति
पवन "	४६	५०	श्यामपं	वर्ण	मगर	प्रभंजन	वेलंब
स्तनित "	३६	४०	सुवर्ण	श्वेत	वर्धमान	महाघोष	घोष

१७ परिचारण द्वार-(मैथुन) पाच प्रकार का-मन, रूप शब्द, स्पर्श और काय परिचारण (मनुष्य वत् देवी के साथ भोग)

१८ वैक्रिय करे तो-चमरेन्द्र देव-देवियों से समस्त जंबूद्वीप भरे, असख्य द्वीप भरने की शक्ति है परन्तु भरे नहीं ।

बलेन्द्र देव-देवियों से साधिक जंबुद्वीप भरे, असंख्य भरने की शक्ति है परन्तु भरे नहीं ।

१८ इन्द्र देव-देवियों से समस्त जंबूद्वीप भरे सख्यात द्वीप भरने की शक्ति है परन्तु भरे नहीं ।

लोकपाल देवियों की शक्ति सख्यात द्वीप भरने की शेप सबों की सामानिक,त्रयस्त्रिंश देव-देवी और लोकपाल देव की वैक्रिय शक्ति अपने इन्द्रवत्, वैक्रिय का काल १५ दिन का जानना ।

१६ अवधि द्वार-असुर कुमार देव ज० २५ यो० उ० ऊर्ध्व सौधर्म देवलोक, नीचे तीसरी नरक, तीर्च्छा असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने व देखे शेप ६ जाति के भवनपति देव ज० २५ यो० उ० ऊचा ज्योतिषी के तले तक, नीचे पहली नरक, तीर्च्छा संख्यात द्वीप समुद्र तक जाने-देखे ।

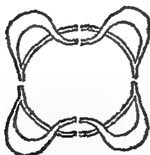
२० सिद्ध द्वार-भवनपति में से निकले हुवे देव

मनुष्य होकर १ समय में १० जीव मोक्ष जासके भवन-पति-देवियों में से निकली हुई देवियें (मनुष्य होकर) पाँच जीव मोक्ष जा सके ।

२१ उत्पन्न द्वार-सर्व प्राण, भूत, जीव सत्य भवन-पति देव व देवी रूप से अनन्त वार उत्पन्न हुवे परन्तु सत्य ज्ञान बिना गरज सरी नहीं (उद्देश्य पूर्ण हुवा नहीं)

शेष विस्तार लघुदण्डक आदि थोकड़े से जानना चाहिये ।

॥ इति भवनपति विस्तार सम्पूर्ण ॥



वाण व्यन्तर विस्तार

वाण व्यन्तर के २१ द्वार-१ नाम २ वास ३ नगर ४ राजधानी ५ सभा ६ वर्ण ७ वस्त्र ८ चिन्ह ९-इन्द्र १० सामानिक ११ आत्म रक्षक १२ परिषद १३- देवी १४ अनीका १५ वैक्रिय १६ अवधि १७ परिचारण १८ सुख १९ सिद्ध २० भव २१ उत्पन्न द्वार।

१ नाम द्वार-१६ व्यन्तर-१ पिशाच २ भूत ३ यक्ष ४ राक्षस ५ किन्नर ६ किंपुरुष ७ महोरग ८ गंधर्व ९ आणपन्नी १० पान पन्नी ११ ईसीवाय १२ भूय वाय १३ कन्दिय १४ महा कन्दिय १५ कोदण्ड १६ पयंग देव।

२ वासा द्वार-रत्न प्रभा नरक के ऊपर का १ हजार योजन का जो पिण्ड है उसमें १०० योजन ऊपर १०० योजन नीचे छोड़ कर ८०० योजन में ८ जाति के वाण-व्यन्तर देव रहते हैं और ऊपर के १०० यो० पिण्ड में १० यो० ऊपर, १० यो० नीचे छोड़कर ८० यो० में ९ से १६ जाति के व्यन्तर देव रहते हैं। (एकेक की यह मान्यता है कि ८०० यो० में व्यन्तर देव और ८० यो० में १० जृम्भका देव रहते हैं।)

३ नगर द्वार-ऊपर के वासाओं में वाणव्यन्तर

देवों के असख्यात नगर हैं जो सख्याता संख्याता योजन के विस्तार वाल और रत्नमय है।

४ राजधानी द्वार—भवनपति से कम विस्तार वाली प्रायः १२ हजार योजन की तीर्च्छे लोक के द्वीप समुद्रों में रत्नमय राजधानियें हैं।

५ सभा द्वार—एकेक इन्द्र के ५-५ सभा है भवन पति वत्।

६ वर्ण द्वार—यक्ष, पिशाच, महोरग, गंधर्व का श्याम वर्ण, किन्नर का नील, राक्षस और किंपुरुष का श्वेत, भूत का काला। इन वाण व्यन्तर देवों के समान शेप ८ व्यन्तर देवों के शरीर का वर्ण जानना।

७ वस्त्र द्वार—पिशाच, भूत, राक्षस के नीले वस्त्र, यक्ष किन्नर किंपुरुप के पीले वस्त्र, महोरग गन्धर्व के श्याम वस्त्र एव शेप व्यन्तरों के वस्त्र जानना।

८ चिन्ह और ९ इन्द्र द्वार—प्रत्येक व्यन्तर की जाति के दो २ इन्द्र हैं।

व्यन्तर देव	दक्षिण इन्द्र	उत्तर इन्द्र	ध्वजा पर चिन्ह
पिशाच	कालेन्द्र	महा कालेन्द्र	कदम वृक्ष
भूत	सुरूपेन्द्र	प्रति रुपेन्द्र	सुलक्ष „

किन्नर	किन्नर	किंपुरुष	अशोक वृक्ष
किंपुरुष	सापुरुष	महापुरुष	चंपक ,,
महोरग	अतिकाय	महाकाय	नाग ,,
गंधर्व	गति रति	गति यश	तुंबरु ,,
आणपन्नी	सन्निहि	सामानी	कदंब ,,
पाण पन्नी	धाई	विधाई	सुलग ,,
ईसी वाय	ऋषि	ऋषि पाल	वड ,,
भूय वाय	ईश्वर	महेश्वर	तटंक उपकर
कन्दिय	सुविच्छ	विशाल	अशोक वृक्ष
महाकान्देय	हास्य	हास्यरति	चंपक ,,
कोदण्ड	श्वेत	महाश्वेत	नाग ,,
पयग देव	पतंग	पतंग पति	तुंबरु ,,

१० सामानिक द्वार–सर्व इन्द्रों के चार चार हजार सामानिक हैं।

११ आत्म रक्षक द्वार–सर्व इन्द्रों के सोलह सोलह हजार आत्म रक्षक देव हैं।

१२ परिषदा द्वार–भवन पति समान इनके भी तीन प्रकार की सभा हैं। (१) आभ्यन्तर (२) मध्यम (३) बाह्य।

सभा	देव संख्या	स्थिति	देवी संख्या	स्थिति
आभ्यन्तर	८०००	०॥ पल्य	१००	०। पल्य जाजेरी
मध्यम	१००००	०॥ " से न्यून	१००	०। "
बाह्य	१२०००	०। पल्य जा०	१००	०। " से न्यून

१३ देवी द्वार–प्रत्येक इन्द्र के चार चार देवी, एक एक देवी हजार के परिवार सहित सब देवियें हजार हजार वैक्रिय रूप कर सकती हैं।

१४ अनीका द्वार–हाथी, घोडे आदि ७ प्रकार अनीका है प्रत्येक में ५०८००० देव होते हैं।

१५ वैक्रिय द्वार–समग्र जम्बू द्वीप भरा जाय इतने रूप बनावे, सख्यात द्वीप समुद्र भरने की शक्ति है।

१६ अवधि द्वार–ज० २५ यो०, उ० ऊंचा ज्यो-तिषी का तला, नीचे पहली नरक और तीर्च्छे सख्यात द्वीप समुद्र जाने देखे।

१७ परिचारण द्वार–(मैथुन) ५ प्रकार से भवन पति समान।

१८ सुख द्वार–अव्याबाधित मनुष्यों के सुखों से अनन्त गुणा सुख है।

१९ सिद्ध द्वार–वाण व्यन्तर देवों में से निकल कर १ समय में १० सिद्ध हो सके व देवियों में से ५ हो सके।

२० भव द्वार–ससार भ्रमण करे तो १-२-३ जीव अनन्त भव करे।

२१ उत्पन्न द्वार–सर्व जीव अनन्ती वार वाण व्यन्तर में उत्पन्न हो आये हैं परन्तु इन पौद्गलिक सुखों से सिद्धि नहीं हुई।

॥ इति वाण-व्यन्तर विस्तार सम्पूर्ण ॥

ज्योतिषी देव विस्तार

ज्योतिषी देव २॥ द्वीप में (चर चलने वाले) और २॥ द्वीप बाहर स्थिर है ये पक्की ईंट के आकारवत् है सूर्य-सूर्य के और चन्द्र-चन्द्र के एकेक लाख योजन का अन्तर है चर ज्योतिषी से स्थिर ज्यो० आधी क्रान्ति वाले है चन्द्र के साथ अभिच नक्षत्र और सूर्य के साथ पुष्य नक्षत्र का सदा योग है मनुष्योत्तर पर्वत से आगे और अलोक से ११११ योजन इस तरह उसके बीच में स्थिर ज्यो० देव-विमान हैं परिवार चर ज्यो० समान जानना।

ज्यो० के ३१ द्वार-१ नाम २ वासा ३ राजधानी ४ सभा ५ वर्ण ६ वस्त्र ७ चिन्ह ८ विमान चौड़ाई ९ विमान जाड़ाई १० विमान वाहक ११ माडला १२ गति १३ ताप क्षेत्र १४ अन्तर १५ संख्या १६ परिवार १७ इन्द्र १८ सामानिक १९ आत्म रक्षक २० परिषदा २१ अनीका २२ देवी २३ गति २४ ऋद्धि २५ वैक्रिय २६ अवधि २७ परिचारणा २८ सिद्ध २९ भव ३० अल्प बहुत्व ३१ उत्पन्न द्वार।

१ नाम द्वार-१ चन्द्र २ सूर्य ३ ग्रह ४ नक्षत्र और ५ तारा

२ वासा द्वार--तीर्च्छे लोक में समभूमि से ७९०

योजन ऊँचे पर ११० यो० में और ४५ लाख यो० के विस्तार में ज्यो०देवों के विमान हैं जैस–७६० यो० ऊँचे पर ताराओं के विमान, यहाँ से १० यो० ऊँचे पर सूर्य का यहाँ से८०यो० ऊँचा चन्द्र का, यहाँ से ४ यो० ऊँचा नक्षत्र के यहाँ से ४ यो० ऊँचा बुध का यहाँ से ३ यो० शुक्र का यहाँ से ३ यो० बृहस्पती का, ३ यो० मंगल का और यहाँ से ३ यो० ऊँचा शनिश्चर का विमान है सर्व स्थानों पर ताराओं के विमान ११० योजन में हैं।

३ राजधानी तीर्छे लोक में असंख्यात राजधानियें हैं।

४ सभा द्वार ज्योतिषी के इन्द्रों के भी ५–५ सभा हैं। (भवनपति समान)

५ वर्ण द्वार- ताराओं के शरीर पंचवर्णी हैं। शेष ४ देवों का वर्ण सुवर्ण समान है।

६ वस्त्र द्वार–सर्व वर्ण के सुन्दर, कोमल वस्त्र सब देवताओं के होते हैं।

७ चिन्ह द्वार–चन्द्र पर चन्द्र मंडल, सूर्य पर सूर्य मंडल, एवं सर्व देवताओं के मुकुट पर अपना अपना चिन्ह है।

८ विमान चौड़ाई और ९ जाड़ाई द्वार–एक यो० के ६१ भागों में से ५६ भाग (५६/६१ यो०) चन्द्र विमान की चौड़ाई, ४८ भाग सूर्य विमान की, दो गाउ

ग्रह वि० की, १ गाउ नक्षत्र वि० की और ०।। गाउ तारा वि० की चौड़ाई है। जाड़ाई इस से आधी २ जानना सर्व विमान स्फटिक रत्न मय हैं।

१० विमान वाहक—ज्योतिषी विमान आकाश के आधार पर स्थित रह सक्ते हैं परन्तु स्वामी के बहुमान के लिये जो देव विमान उठाकर फिरते हैं उनकी संख्या—चन्द्र सूर्य के विमान के १६–१६ हजार देव, ग्रह के विमान के ८–८ हजार देव, नक्षत्र विमान के ४–४ हजार और तारा विमान के २–२ हजार देव वाहक हैं। ये समान २ संख्या में चारों ही दिशाओं में मुहँ करके–पूर्व में सिंह रूप से, पश्चिम में वृषभ रूप से, उत्तर में अश्व रूप से, और दक्षिण में हस्ति रूप से, देव रहते हैं।

११ मांडला द्वार -चन्द्र सूर्य आदि की प्रदक्षिणा (चारों ओर चक्कर लगाना)-दक्षिणायन से उत्तरायण जाने के मार्ग को 'मांडला' कहते हैं। मांडले का क्षेत्र ५१० यो० का है। जिसमें ३३० यो० लवण समुद्र में और १८० यो० जंबूद्वीप में है। चन्द्र के १५ मांडले हैं। जिनमें से १० लवण में, ५ जंबू द्वीप में है। सूर्य के १८४ मांडलों में से ११९ लवण में और ६५ जंबू द्वीप में हैं। ग्रह के ८ मांडलों में से ६ लवण में और २ जंबू द्वीप में हैं। जंबू द्वीप में ज्योतिषी के मांडले हैं वे निषिध और नील वन्त पर्वत के ऊपर हैं। चन्द्र के मांडलों का

अन्तर ३५$\frac{३०}{६१}$ योजन का है। सूर्य के प्रत्येक मंडल से दूसरे मंडल का अन्तर दो २ योजन का है।

१२ गति द्वार- सूर्य की गति कर्क संक्रांति को (आषाढी पूर्णिमा) १ मुहूर्त में ५२५१$\frac{२९}{६१}$ क्षेत्र तथा मकर संक्राति (पोष पूर्णिमा) को १ मुहूर्त में ५३०५$\frac{१}{६१}$ क्षेत्र है। चन्द्र की गति कर्क संक्रांति को १ मु० में ५०७३$\frac{७५४}{१३७२५}$ और मकर संक्राति को ५१२५ $\frac{६९९०}{१३७२५}$ है।

१३ ताप क्षेत्र--कर्क संक्राति को ताप क्षेत्र ९७५२६ $\frac{२६}{६१}$ और उगता सूर्य ४७२०३ $\frac{२१}{६१}$ योजन दूर से दृष्टि गोचर होता है। मकर संक्राति को ताप क्षेत्र ६३६६३ $\frac{१६}{१६}$ उगता सूर्य ३१८३१ $\frac{३८॥}{६१}$ यो० दूर से दृष्टि गोचर होता है।

१४ अन्तर द्वार अन्तर दो प्रकार का पड़े १ व्याघात-किसी पदार्थ का बीच में आजाने से और २ निर्व्याघात-बिना किसी के बीच में आये व्याघात-अपेक्षा ज० २६६ योजन का अन्तर कारण-निषिध नीलवन्त, पर्वत का शिखर २५० यो० है और यहा से ८-८ योजन दूर ज्यो० चलते हैं अर्थात् २५०×८+८=२६६ उ० १२२४२-योजन कारण-मेरु शिखर १० हजार यो० का है और ८८

से ११२१ यो० दूर ज्यो० विमान फिरते हैं। अर्थात् १००००+११२१+११२१=१२२४२ यो० का अन्तर है। अलोक और ज्यो० देवों का अन्तर ११११ यो० का, माडलापेक्षा अन्तर मेरु पर्वत से ४४८८० यो० अन्दर के मांडल का और ४५३३० यो० बाहर के मंडल का अन्तर है। चन्द्र चन्द्र के मडल का ३५ $\frac{३०४}{६१७}$ यो० का और सूर्य सूर्य का मंडल का दो यो० का अन्तर है निर्व्याघात अपेक्षा ज० ५०० धनुष्य का और उ० २ गाउ का अन्तर है।

१५ संख्या द्वार–जम्बू द्वीप में २ चंद्र, २ सूर्य हैं लवण समुद्र में ४ चंद्र, ४ सूर्य है धातकी खण्ड में १२ चंद्र, १२ सूर्य है कालोदधि समुद्र में ४२ चंद्र, ४२ सूर्य हैं पुष्करार्ध द्वीप में ७२ चंद्र, ७२ सूर्य हैं एवं मनुष्य क्षेत्र में १३२ चद्र १३२ सूर्य हैं आगे इसी हिसाब से समझना अर्थात् पहले द्वीप व समुद्र में जितने चद्र तथा सूर्य होवें उनको तीन से गुणा करके पीछे की संख्या गिनना (जोड़ना)।

दृष्टांत—कालोदधि में चंद्र सूर्य जानने के लिये उससे पहले धात की खण्ड में १२ चद्र १२ सूर्य हैं उन्हें १२+३=३६ में पीछे की संख्या (लवण समुद्र के ४ और जम्बू द्वीप के २ एवं ४+२=६) जोड़ने से ४२ हुवे।

१६ परिवार द्वार–एकेक चद्र और एकेक सूर्य के

२८ नक्षत्र, ८८ ग्रह और ६६६७५ क्रोड़ा क्रोड तारों का परिवार है।

१७ इन्द्र द्वार-असंख्य चंद्र, सूर्य हैं ये सर्व इन्द्र हैं परंतु क्षेत्र अपेक्षा १ चंद्र इन्द्र और १ सूर्य इन्द्र है।

१८ सामानिक द्वार-एकेक इन्द्र के ४-४ हजार सामानिक देव हैं।

१९ आत्म रक्षक द्वार-एकेक इन्द्र के १६-१६ हजार आत्म रक्षक देव हैं।

२० परिषदा-तीन-तीन हैं अभ्यन्तर सभा में ८००० देव, मध्य सभा में १० हजार और बाह्य सभा में १२ हजार देव है देवियें तीनों ही सभा की १००-१०० हैं प्रत्येक इन्द्र की सभा इसी प्रकार जानना।

२१ अनीका द्वार-एकेक इद्र के ७-७ अनीका है व प्रत्येक अनीका में ५ लाख ८० हजार देवता हैं सात अनीका भवनपति वत्।

२२ देवी द्वार-एकेक इद्र की ४-४ अग्र महिषी हैं एकेक पटरानी के चार चार हजार देवियों का परिवार है एकेक देवी ४—४ हजार रूप वैक्रिय करे अर्थात् ४+४०००=१६०००+४०००=६४००००० देवी, रूप एकेक इद्र के हैं।

२३ जाति द्वार-सर्व से मंद जाति चंद्र की, उससे सूर्य की शीघ्र (तेज) उस से ग्रह की तेज, उससे नक्षत्र की तेज और उससे तारा की तेज गति है।

२४ ऋद्धि द्वार–सर्व से कम ऋद्धि तारा की उससे उत्तरोत्तर महा ऋद्धि ।

२५ वैक्रिय द्वार–वैक्रिय रूप से सम्पूर्ण जम्बू द्वीप भरते हैं सख्याता जम्बू द्वीप भरने की शक्ति चंद्र सूर्य, सामानिक और देवियों में भी है ।

२६ अवधि द्वार–तीर्छा ज० उ० संख्यात द्वीप समुद्र ऊंचा अपनी ध्वजा पताका तक और नीचे पहली नरक तक जाने–देखे ।

२७ परिचारणा–पांचों ही (मनुष्य वत्) प्रकार से भोग करे ।

२८ सिद्ध द्वार–ज्योतिषी देव से निकल कर १ समय में १० जीव और ज्योतिषी देवियों से निकल कर १ समय में २० जीव मोक्ष जा सक्ते हैं ।

२६ भव द्वार–भव करे तो ज० १ २ ३ उ० अनन्ता भव करे ।

३० अल्प बहुत्व द्वार–सर्व से कम चंद्र सूर्य, उन से नक्षत्र, उन से ग्रह और उन से तारे (देव) सख्यात संख्यात गुणा हैं ।

३१ उत्पन्न द्वार–ज्योतिषी देव रूप से यह जीव अनन्त अनन्त वार उत्पन्न हुवा परन्तु वीतराग आज्ञा का आराधन किये बिना आत्मिक सुख नहीं प्राप्त कर सका ।

॥ इति ज्योतिषी देव विस्तार सम्पूर्ण ॥

वैमानिक देव

विमान वासी देवों के २७ द्वार—१ नाम २ वासा ३ सस्थान ४ आधार ५ पृथ्वीपिण्ड ६ विमान ऊँचाई ७ विमान संख्या ८ विमान वर्ण ९ विमान विस्तार १० इन्द्र नाम ११ इन्द्र विमान १२ चिन्ह १३ सामानिक १४ लोक पाल १५ त्रायस्त्रिंशक १६ आत्म रक्षक १७ अनीका १८ परिषदा १९ देवी २० वैक्रिय २१ अवधि २२ परिचारणा २३ पुन्य २४ सिद्ध २५ भव २६ उत्पन्न २७ अल्प बहुत्व द्वार।

१ नाम द्वार—१२ देव लोक—सौधर्म ईशान, सनत्कुमार, महेन्द्र ब्रह्म, लतक, महाशुक्र, सहस्रार, आणत प्राणत, आरण, अच्युत नव ग्रीयवेक—भद्द, सुभद्द, सुजाने सुमानसे, सुदर्शने, प्रियदमण, अमोहे, सुप्रतिवुद्ध और यशोधरे ५ अनुत्तर-विमान-विजय, विजयत जयत, अपराजित, और सर्वार्थसिद्ध, पांचवें देव लोक के तीसरे परतर में नव लोकांतिक देव हैं और ३ किल्विषी मिल कर कुछ ३८ जाति के वैमानिक देव हैं।

२ वासा द्वार—ज्योतिषी देवों से असख्य क्रोडा क्रोड यो० ऊँचा वैमानिक देवों का निवास है। राज धानियें और ५-५ सभाएं अपने देवलोक में ही हैं। शकेन्द्र, ईशानेन्द्र के महल, उनके लोकपाल और देवियों की राजधानियें तीर्छे लोक में भी है।

३ सठाण द्वार—१, २, ३, ४, और ९, १०, ११, १२, एव ८ देव लोक अर्ध चंद्राकार हैं । ५, ६, ७, ८ देव लोक और ९ ग्रीयवेक पूर्ण चन्द्राकार हैं । चार अनुत्तर विमान त्रिकोन चारों ही तरफ हैं और बीच में सर्वार्थ सिद्ध विमान गोल च द्राकार है ।

४ आधार द्वार-विमान और पृथ्वी पिण्ड रत्न मय है । १—२ देव लोक घनोदधि के आधार पर है । ३—४—५ देव घन वायु के आधार से है । ६—७-८ देव० घनोदधि घनवायु के आधार से है । शेष विमान आकाश के आधार पर स्थित हैं ।

५ पृथ्वी पिण्ड ६ विमान ऊंचाई, ७ विमान और परतर, ८ वर्ण द्वार—

विमान	पृथ्वी पिण्ड	वि० ऊंचाई	वि० सख्या	परतर	वर्ण
१	२७०० यो०	५०० यो०	३२ लाख	१३	५ वर्ण
२	२७०० "	५०० "	२८ "	१३	५ "
३	२६०० "	६०० "	१२ "	१२	४ "
४	२६०० "	६०० "	८ "	१२	४ "
५	२५०० "	७०० "	४ "	६	३ "
६	२५०० ,	७०० ,,	५० हजार	५	३ ,,
७	२४०० ,,	८०० ,,	४० ,,	४	२ ,,
८	२४०० ,,	८०० ,,	६ ,,	४	२ ,,
९	२३०० ,,	९०० ,,	४००	४	१ ,,
१०	२३०० ,,	९०० ,,		४	१ ,,

११	२३०० ,,	६०० ,,	३००	४	१	,,
१२	२३०० ,,	६०० ,,		४	१	,,
९ ग्रै	२२०० ,,	१००० ,,	३१८	६	१	,,
५ अनु०	२१०० ,,	११०० ,,	५	१	१	,,

९ विमान विस्तार–कितने ही विमानों का विस्तार (चार भाग का) असं० योजन का और कितने ही का (एक भाग का संख्यात योजन के विस्तार का है परन्तु सर्वार्थ सिद्ध विमान १ लाख यो० के विस्तार में है।

१० इन्द्र द्वार–१२ देवलोक के १० इन्द्र हैं आगे सर्व अहमेन्द्र हैं।

११ विमान द्वार–तीर्थंकरों के कल्याण के समय मृत्युलोक में वैमानिक देव जो विमान में बैठकर आते हैं उनके नाम–पालक, पुष्प, सुमानस, श्रीवत्स, नन्दी वर्तन, कामगमनाम, मनोगम, प्रियगम, विमल, सर्वतोभद्र।

१२ चिह्न १३ सामानिक १४ लोकपाल १५ त्रयस्त्रिंश १६ आत्म रक्षक—

इन्द्र	चिन्ह	सामानिक	लोक पाल	त्रयस्त्रिंश	आत्म रक्षक
शक्रेन्द्र	मृग	८४ हजार	४	३३	३३६०००
ईशानेन्द्र	महिष	८० ,,	४	३३	३२००००
सनत्कु० इन्द्र	शूकर	७२ ,,	४	३३	२८८०००
महेन्द्र	सिंह	७० ,,	४	३३	२८००००
ब्रह्मेन्द्र	अज (बकरा)	६० ,,	४	३३	२४००००

लतकेन्द्र	मंडूक(मेंडक)	५०	,,	४	३३	८०००००
महा शुक्रेन्द्र	अश्व	४०	,,	४	३३	१६००००
सहस्रेन्द्र	हस्ति	३०	,,	४	३३	१२००००
प्राणतेन्द्र	सर्प	२०	,,	४	३३	८००००
अच्युतेन्द्र	गरुड़	१०	,,	४	३३	४००००

१७ अनीका-प्रत्येक इंद्र की अनीका ७ ७ प्रकार की है प्रत्येक अनीका में देवता उन इंद्रों के सामानिक से १२७ गुणा होते हैं।

१८ परिषदा द्वार-प्रत्येक इंद्र के तीन २ प्रकार की परिषदा होती है।

इन्द्र	अभ्यन्तर देव	मध्यम देव	बाह्य प० देव	देवियें
१	१२ हजार	१४ हजार	१६ हजार	शक्रेन्द्र
२	१० ,,	१२ ,,	१४ ,,	७००
३	८ ,,	१० ,,	१२ ,,	६००
४	६ ,,	८ ,,	१० ,,	५००
५	४ ,,	६ ,,	८ ,,	ईशानेन्द्र
६	२ ,,	४ ,,	६ ,,	६००
७	१ ,,	२ ,,	४ ,,	८००
८	५००	१ ,,	२ ,,	७००
९	२५०	५००	१ ,,	शेष ८ इन्द्रों के
१०	१२५	२५०	५००	देवियें नहीं

१९ देवी द्वार-शक्रेन्द्र के आठ अग्रमहिषी देवियें है एकेक देवी के १६-१६ हजार देवियों का परिवार है। प्रत्येक देवी १६ १६ हजार वैक्रिय करे इसी प्रकार ईशानेन्द्र की भी ८×१६०००=१२८०००×१६०००=२०

४८००००००० जानना शेष में देवियें नहीं होवे केवल पहले दूसरे देव लोक रहे और ८ वें देव लोक तक जाया करे।

२० वैक्रिय द्वार-शक्रेन्द्र वैक्रिय के देव-देवियों से २ जम्बू द्वीप भर देते हैं, ईशानेन्द्र २ जंबू द्वीप जाजेरा सनत्कुमार ४ जम्बू० महेन्द्र ४ जंबू०जाजेरा, ब्रह्मेन्द्र ८ जंबू० लंतकेन्द्र ८ जबू० जाजेरा, महाशुक्र १६ जंबू० सहस्रेन्द्र १६ जम्बू० जाजेरा प्राणतेन्द्र ३२ जबू०, अच्युतेंद्र ३२ जबू० जाजेरा भरे० (लोक पाल, त्रयस्त्रिंश, देवियें आदि अपने इंद्रवत्) असख्य जंबूद्वीप भरदेने की शक्ति है परंतु इतने वैक्रिय नहीं करते हैं।

२१ अवधि द्वार-सर्व इंद्र ज० अङ्गुल के असख्यातवें भाग अवधि से जाने-देखे० उ० ऊचा अपने विमान की ध्वजा पताका तक-तीर्छा असंख्य द्वीप समुद्र तक जाने देखे और नीचे-१-२ देवलोक वाले पहली नरक तक, ३-४ देव० दूसरी नरक तक, ५-६ देव० तीसरी नरक तक, ७ ८ देव० चोथी नरक तक, ९ से १२ देव० पाचवीं नरक तक, ९ ग्रीयवेक छट्ठी नरक तक, ४ अनुत्तर विमान ७ वीं नरक तक और सर्वार्थ सिद्ध वाले त्रस नाली सम्पूर्ण (पाताल कलश) जाने देखे।

२२ परिचारणा-१-२ देव में पाच (मन, शब्द, रूप, स्पर्श और काय) परिचारणा, ३-४ देव० में स्पर्श

परि०, ५-६ देव-में रूप परि०, ७-८ देव-में शब्द परि० ९ से १२ देव० में मन परि०, आगे नहीं ।

२३ पुन्य द्वार-जितने पुन्य व्यंतर देव १० वर्ष में क्षय करते हैं उतने पुन्य नागादि ९ देव २०० वर्ष में, असुर० ३०० वर्ष में, ग्रह-नक्षत्र-तारा ४०० वर्ष में, चंद्र सूर्य ५०० वर्ष में, सौधर्म ईशान १००० वर्ष में, ३—४ देव० २००० वर्ष में, ५-६ देव. ३००० वर्ष में, ७-८ देव. ४००० वर्ष में, ९ से १२ दे. ५००० वर्ष में, १ ली. त्रिक १ लाख वर्ष में दूसरी त्रिक २ लाख वर्ष में, तीसरी त्रिक ३ लाख वर्ष में, ४ अनु. वि. ४ लाख वर्ष में और सर्वार्थ सिद्ध के देवता ५ लाख वर्ष में इतने पुन्य क्षय करते हैं ।

२४ सिद्ध द्वार-वैमानिक देव में से निकले हुवे मनुष्य में आकर एक समय में १०८ सिद्ध हो सके हैं देवी में से निकल कर २० सिद्ध हो सके है ।

२५ भव द्वार-वैमानिक देव होने के बाद भव करे तो ज० १ २ ३ संख्यात, असंख्यात यावत् अनन्त भव भी करे ।

२६ उत्पन्न द्वार-नव ग्रीयवेक वैमानिक देव रूप में अनन्ती वार यह जीव उत्पन्न हो चुका है ४ अनु० वि० में जाने के बाद संख्यात (२-४) भव में और सर्वार्थ सिद्ध से १ भव में मोक्ष जावे ।

२७ अल्प बहुत्व द्वार-सर्व से कम ५ अनुत्तर विमान के देव, उनसे उतरते २ नववें देवलोक तक संख्यात गुणा, ८ में से उतरते दूसरे देवलोक तक असंख्यात गुणा देव, उनसे दूसरे देव की देवियें संख्यात गुणी, उनसे पहले देवलोक के देव संख्यात गुणा और उनसे पहले देवलोक की देवियें संख्यात गुणी।

॥ इति वैमानिक देवाधिकार सम्पूर्ण ॥



संख्यादि २१ बोल अर्थात् डालापाला

संख्या के २१ बोल हैः—१ जघन्य संख्याता २ मध्यम संख्याता ३ उत्कृष्ट संख्याता असंख्याता के नव भेद

१ ज० प्र० असंख्यात	४ ज० युक्ता अ०	७ ज० अ० अ०
२ म० ,, ,,	५ म० ,, ,,	८ म० ,, ,,
३ उ० ,, ,,	६ उ० ,, ,,	९ उ० ,, ,,

अनंता के ९ भेद

१ ज० प्रत्येक अनंता	४ ज० युक्ता अनंत	७ ज० अनंता अ-
२ म० ,, ,,	५ म० ,, ,,	८ म० ,, ,,
३ उ० ,, ,,	६ उ० ,, ,,	९ उ० ,, ,,

ज० संख्याता में एक दो तक गिनना म० संख्याता में तीन से आगे यावत् उ० संख्याता में एक न्यून उ० संख्याता के लिये माप बताते हैं -

चार पाला- (१) शीलाक (२) प्रति शीलाक (३) महा शीलाक (४) अनवस्थित इनमें से प्रत्येक पाला धान्य मापने की पाली के आकार वत् है किन्तु प्रमाण में १ लक्ष योजन लम्बे चौडे ३१६२२७ यो० अधिक की परिधि वाला, १० हजार यो०गहरा८ यो०की जगती कोट जिसके ऊपर०॥ यो० की वेदिका इस प्रकार पाला की कल्पना करना तथा इनमें से अनवस्थित पाला को सरसव के दानों से सम्पूर्ण भर कर कोई देव उठावे,

जम्बूद्वीप से शुरू करके एकेक दाना एकेक द्वीप और समुद्र में डालता हुवा चला जावे अन्त में १ दाना बच जाने पर द्वीप व समुद्र में डालने में रुके बचा हुवा दाना शीलाकवाला के अन्दर डाले जितने द्वीप व समुद्र तक डालता हुआ पहुँच चुका है उतना बड़ा लम्बा और चोड़ा पाला किन्तु १० हजार यो० गहरा ८ यो० जगती०॥ यो० की वेदिका वाला बनावे इसे सरसव से भर कर आगे के द्वीप व समुद्र में एकेक दाना डालता जावे एक दाना बच जाने पर ठहर जावे बचे हुवे दाने को शालाक पाले में डाले पुनः उतने ही द्वीप तथा समुद्र के विस्तार वत् (गहराई जगती ऊपर वत्) बनाकर सरसव से भरकर आगे के एकेक द्वीप व एकेक समुद्र में एकेक दाना डालता जावे बचे हुवे एक दाने को डाल कर शीलाक को भर देवे भर जाने पर उसे उठा कर अन्तिम (नाकी भरे हुवे) द्वीप तथा समुद्र से आगे एकेक दाना डाल कर खाली कर एक दाना बचने पर पुनः उसे प्रति शीलाक पाले में डाले इस प्रकार आगे २ के द्वीप समुद्र को अनवस्थित पाला बनावे बचे हुवे एक दाने से शीलाक भरे शीलाक की बचत के एकेक दाने से प्रति शीलाक को भरे प्रति शीलाक को खाली करते हुवे बचत के एकेक दाने से महा शीलाक को भरे इस प्रकार महा शीलाक का भर देवे पश्चात् प्रति शीलाक, शीलाक

और अनवस्थित को क्रम से भर देवे।

इस तरह चार ही पाले भर देवे अन्तिम दाना जिस द्वीप व समुद्र में पड़ा होवे वहां से प्रथम द्वीप तक डाले हुवे सब दानों को एकत्रित करे और चार ही पालों के एकत्रित किये हुवे दानों का एक ढेर करे इस में से एक दाना निकाल ले तो उत्कृष्ट संख्याता, निकाला हुवा एक दाना डाल दे तो जघन्य प्रत्येक असंख्याता जानना इस दाने की संख्या को परस्पर गुणाकार (अभ्यास) करे और जो संख्या आवे वो जघन्य युक्ता असंख्याता कहलाती है इस में से एक दाना न्यून वो उ० प्र० असंख्याता दो दाना न्यून वो मध्यम प्र० असंख्याता (१ आवलिका का समय ज० युक्ता असंख्याता जानना)।

जघन्य युक्ता असंख्याता की राशि (ढेर) को परस्पर गुणा करने से ज० असंख्याता असंख्यात संख्या निकलती है इस में से १ न्यून वो उ० युक्ता असंख्यात दो न्यून वाली म० युक्ता असंख्याता जानना।

ज० असं० असंख्याता की राशि को परस्पर गुणित करने से ज० प्रत्येक अनंता संख्या आती है इस में से २ न्यून वाली संख्या म० असं० असंख्याता और १ न्यून वाली उ० असं० असंख्याता जानना।

ज० प्र० अनन्ता की राशि को परस्पर गुणित करने से ज० युक्ता अनन्ता, इस मे से २ न्यून म० प्र० अनन्ता, १ न्यून उ० प्र० अनन्ता जानना।

ज० यु० अनन्ता को परस्पर गुणित करने से ज० अनन्तानन्त सख्या होती है जिसमें म २ न्यून वाली म० युक्ता अनन्ता १ न्यून वाली उ० युक्ता अनन्ता जानना।

ज० अनन्तानन्त को परस्पर गुणाकार करने से म० अनन्तानन्त संख्या निकलती है और परस्पर गुणाकार करे तो उ० अनन्तानन्त सख्या जानना परन्तु ससार में उत्कृष्ट अनन्तानन्त सख्या वाले कोई पदार्थ नहीं है।

तत्व केवली गम्य।

॥ इति सख्यादि २१ बोल सम्पूर्ण ॥



प्रमाण—नय

श्री अनुयोग द्वार-सूत्र तथा अन्य ग्रन्थो के आधार पर २४ द्वार कहे जाते हैं ।

(१) सात नय (२) चार निक्षेप (३) द्रव्य गुण पर्याय (४) द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव (५) द्रव्य-भाव (६) कार्य कारण (७) निश्चय-व्यवहार (८) उपादान-निमित्त (९) चार प्रमाण (१०) सामान्य-विशेष (११) गुण-गुणी (१२) ज्ञेय-ज्ञान, ज्ञानी (१३) उपनेवा, विइनेवा, धुनेवा (१४) आधेय-आधार (१५) आविर्भाव-तिरोभाव (१६) गौणता-मुख्यता (१७) उत्सर्ग-अपवाद (१८) तीन आत्मा (१९) चार ध्यान (२०) चार अनुयोग (२१) तीन जागृति (२२) नय व्याख्या (२३ आठ पक्ष (२४) सप्त-भंगी ।

१ नय-(पदार्थ के अंश को ग्रहण करना) प्रत्येक पदार्थ के अनेक धर्म होते हैं और इनमें से हर एक को ग्रहण करने से एकेक नय गिना जाता है—इस प्रकार अनेक नय हो सकते हैं परन्तु यहा संक्षेप से ७ नय कहे जाते हैं ।

नय के मुख्य दो भेद है-द्रव्यास्तिक (द्रव्य को ग्रहण करना) और पर्यायास्तिक (पर्याय को ग्रहण करना) द्रव्यास्तिक नय के १० भेद—१ नित्य २ एक ३ सत् ४ वक्तव्य ५ अशुद्ध ६ अन्वय ७ परम ८ शुद्ध ९ सत्ता

१० परम-भाव-द्रव्यास्तिक नय-पर्यायास्तिक नय के ६ भेद-१ द्रव्य २ द्रव्य व्यंजन ३ गुण ४ गुण व्यजन ५ स्वभाव ६ विभाव-पर्यायास्तिक नय। इन दोनों नयों के ७०० भेद हो सक्ते हैं।

नय सात-१ नैगम २ सग्रह ३ व्यवहार ४ ऋजु-सूत्र ५ शब्द ६ समभिरूढ ७ एव भूत नय इनमें से प्रथम ४ नयों को द्रव्यास्तिक, अर्थ तथा क्रिया नय कहते हैं और अन्तिम तीन को पर्यायास्तिक शब्द तथा ज्ञान नय कहते हैं।

१ नैगम नय-जिसका स्वभाव एक नहीं, अनेक मान, उन्मान, प्रमाण से वस्तु माने तीन काल, ४ निक्षेप सामान्य-विशेष आदि माने इसके तीन भेद—

(१) अंश-वस्तु के अंश को ग्रहण करके माने जैसे निगोद को सिद्ध समान माने।

(२) आरोप—भूत, भविष्य और वर्तमान, तीनों कालों को वर्तमान में आरोप करे।

(३) विकल्प—अध्यसाय का उत्पन्न होना एव ७०० विकल्प हो सक्ते है।

शुद्ध नैगम नय और अशुद्ध नैगम एवं दो भेद भी हैं।

२ संग्रह नय-वस्तु की मूल सत्ता को ग्रहण करे जैसे सर्व जीवों को सिद्ध समान माने, जैसे

आत्मा एक है। (एक समान स्वभाव अपेक्षा) ३ काल ४ निक्षेप और सामान्य को माने, विशेप न माने।

३ व्यवहार नय—अन्तःकरण (आन्तरिक दशा) की दरकार (परवाह) न करते हुवे व्यवहार माने जैसे जीव को मनुष्य तिर्यंच, नरक, देव माने। जन्म लेने वाला मरन वाला आदि, प्रत्यक्ष रूपी पदार्थों में वर्ण, गन्ध आदि २० बोल सत्ता में हैं परन्तु बाहर जो दिखाई देवे केवल उन्हें ही माने जैसे हस को श्वेत, गुलाब को सुगन्धी शर्कर को मीठी माने। इसके भी शुद्ध अशुद्ध दो भेद सामान्य के साथ विशेप माने, ४ निक्षेप, तीन ही काल की बात माने।

४ ऋजु सूत्र—भूत, भविष्य की पर्यायों को छोड़ कर केवल वर्तमान—सरल पर्याय को माने वर्तमान काल, भाव निक्षेप और विशेप को ही माने जैसे साधु होते हुवे भोग में चित्त जाने पर भोगी और गृहस्थ होते हुवे त्याग में चित्त जाने से उसे साधु माने।

ये चार द्रव्यास्तिक नय हैं। ये चारों नय, समकित, देश व्रत, सर्व व्रत, भव्य अभव्य दोनों में होवे परन्तु शुद्धोपयोग रहित होने से जीव का कल्याण नहीं होता।

५ शब्द नय—समान शब्दों का एक ही अर्थ करे विशेप, वर्तमान काल और भाव निक्षेप को ही माने। लिंग भेद नहीं माने। शुद्ध उपयोग को ही माने जैसे शक्र;

न्द्र देवेन्द्र, पुरेन्द्र, सचापति इन सबों को एक माने ।

६ समभिरुढ नय-शब्द के भिन्न २ अर्थों को माने जैसे—शुक सिंहासन पर बैठे हुवे को ही शक्रन्द्र माने एक अंश न्यून होवे उसे भी वस्तु मान लेवे, विशेष भाव निक्षेप और वर्तमान काल को ही माने,

७ एव भूत नय-एक अंश भी कम नहीं होवे उसे वस्तु माने । शप को अवस्तु माने, वर्तमान काल और भाव निक्षेप को ही माने ।

जो नय से ही एकान्त पक्ष ग्रहण करे उसे नयाभास (मिथ्यात्वी) कहते हैं । जैसे ७ अन्धों ने १ हाथी को दंतुशल, सूण्ड, कान, पेट, पाँव, पूछ और कुंभस्थल माना वे कहने लगे कि हाथी मूसल समान, हड्डमान समान, सूप समान कोठी समान, स्तम्भ समान, चामर समान तथा घट समान है । सम दृष्टि तो सबों को एकान्त वादी समझ कर मिथ्या मानेगा परन्तु सर्व नयों को मिलाने पर सत्य स्वरूप बनता है अतः वही समदृष्टि कहलाता है ।

२ निक्षेप चार-एकेक वस्तु के जैसे अनंत नय हो सक्ते हैं वैसे ही निक्षेप भी अनंत हो सक्ते हैं परंतु यहा मुख्य चार निक्षेप कहे जाते हैं । निक्षेप-सामान्य रूप प्रत्यक्ष ज्ञान है वस्तु तत्व ग्रहण में अति आवश्यक है इसके चार भेद

१ नाम निक्षेप-जीव व अजीव का अर्थ शून्य, यथार्थ तथा अयथार्थ नाम रखना ।

२ स्थापना निक्षेप-जीव व अजीव की सदृश (सद् भाव) तथा असदृश (असद् भाव) स्थापना (आकृति व रूप] करना सो स्थापना निक्षेप।

(३) द्रव्य निक्षेप-भूत और वर्तमान काल की दशा को वर्तमान में भाव शून्य होते हुवे कहना व मानना; जैसे युवराज तथा पदभ्रष्ट राजा को राजा मानना, किसी के कलेवर (लाश) को उसके नाम से जानना।

(४) भाव निक्षेप-सम्पूर्ण गुण युक्त वस्तु को ही वस्तु रूप से मानना।

दृष्टान्त-महावीर नाम सो नाम निक्षेप किसी ने अपना यह नाम रक्खा हो, महावीर लिखा हो, चित्र निकाला हो, मूर्ति होवे अथवा कोई चीज रख कर महावीर नाम से सम्बोधित करते हों तो यह महावीर का स्थापना निक्षेप केवल ज्ञान होने के पहिले संसारी जीवन को तथा निर्वाण प्राप्त करने के बाद के शरीर को महावीर मानना सो महावीर का द्रव्य निक्षेप और महावीर स्वयं केवल ज्ञान दर्शन सहित विराजमान हों उन्हीं को ही महावीर मानना [कहना] सो भाव निक्षेप इस प्रकार जीव, अजीव आदि सर्व पदार्थों का चार निक्षेप लगाकर ज्ञान हो सकता है।

(३) द्रव्य गुण पर्याय द्वार-धर्मास्ति काय आदि जैसे ६ द्रव्य है, चलन सहाय आदि स्वभाव यह प्रत्येक

का अलग २ गुण है और द्रव्यों में उत्पाद व्यय, ध्रुव आदि परिवर्तन होना सो पर्याय है।

दृष्टान्त-जीव-द्रव्य, ज्ञान, दर्शन आदि गुण, मनुष्य, तिर्यंच, देव, साधु आदि दशा यह पर्याय समझना

४ द्रव्य, क्षेत्र काल भाव द्वार द्रव्य-जीव अजीव आदि, आकाश प्रदेश यह क्षेत्र, समय यह काल [घड़ी जाव काल चक्र तक समझना] वर्ण, गन्ध, रस स्पर्श आदि सो भाव। जीव, अजीव सभी पर द्रव्य क्षेत्र काल भाव घट (लागु हो) सक्ता है।

५ द्रव्य-भाव द्वार- भाव को प्रकट करने मे द्रव्य सहायक है। जैसे द्रव्य से जीव अमर, शाश्वत भाव से अशाश्वत है। द्रव्य से लोक शाश्वत है भाव से अशाश्वत है। अर्थात् द्रव्य यह मूल वस्तु है, सदैव शाश्वती है भाव यह वस्तु की पर्याय है अशाश्वती है।

जैसे भौंरे के लकड कुतरते समय ' क ' ऐसा आकार बनजाता है सो यह द्रव्य ' क ' और किसी पण्डित ने समझ कर ' क ' लिखा सो भाव ' क ' जानना।

६ कारण-कार्य द्वार-साध्य को प्रगट कराने वाला, तथा कार्य को सिद्ध करानेवाला कारण है। कारण विना कार्य नहीं हो सक्ता। जैसे घट बनाना यह कार्य है और इस लिये मिट्टी, कुम्हार, चाक (चक्र) आदि कारण अवश्य चाहिय अतः कारण मुख्य है।

७ निश्चय व्यवहार-निश्चय को प्रगट करानेवाला व्यवहार है। व्यवहार बलवान है व्यवहार से ही निश्चय तक पहुँच सके है जैसे निश्चय में कर्म का कर्ता कर्म है व्यवहार से जीव कर्मों का कर्ता माना जाता है जैसे निश्चय से हम चलते हैं। किन्तु व्यवहार से कहा जाता है कि गाँव आया, जल चूता है परन्तु कहा जाता है कि छत चूती इत्यादि है

८ उपादान- निमित्त-उपादान यह मूल कारण हैं जो स्वय कार्य रूप में परिणमता है। जैसे घट का उपादान कारण मिट्टी और निमित यह सहकारी कारण जैसे घट बनाने में कुम्हार, पावडा, चाक आदि। शुद्ध निमित्त कारण होवे तो उपादान को साधक होता है और अशुद्ध निमित्त हावे तो उपादान को बाधक भी होता है।

९ चारप्रमाण-प्रत्यक्ष, आगम, अनुमान उपमा, प्रमाण। प्रत्यक्ष के दो भेद- १ इन्द्रिय प्रत्यक्ष (पाच इन्द्रियों से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान) और २ नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष (इन्द्रियों की सहायता के बिना केवल आत्म-शुद्धता से होने वाला प्रत्यक्ष ज्ञान) इसके २ भेद- १ देस से (अवधि और मनः पर्यव) और २ सर्व से (केवल ज्ञान)

आगम प्रमाण-शास्त्र वचन, आगमों के कथन को प्रमाण मानना।

अनुमान प्रमाण– जो वस्तु अनुमान से जानी जावे इसके ५ भेद–

१ कारण से–जैसे घट का कारण मिट्टी है, मिट्टी का कारण घट नहीं ।

२ गुण से– जैसे पुष्प में सुगन्ध, सुवर्ण में कोमलता, जीव में ज्ञान ।

३ आसरण– जैसे धूँवे से अग्नि, बिजली से बादल आदि समझना व जानना ।

४ आवयवण– जैसे दंतूशल से हाथी चूड़ियों से स्त्री, शासन शान्ति से ममाकृति जानना ।

दिट्ठि सामन्न– सामान्य से विशेष को जाने जैसे १ रुपये को देख कर अनेक रुपय जाने । १ मनुष्य को देखने से समस्त देश के मनुष्यों को जाने ।

अच्छे बुरे चिन्ह देख कर तीनों ही काल के ज्ञान की कल्पना अनुमान से हो सकती है ।

उपमा प्रमाण– उपमा देकर समान वस्तु से ज्ञान (जानना) करना । इसके ४ भेद–(१) यथार्थ वस्तु को यथार्थ उपमा (२) यथार्थ वस्तु को अयथार्थ उपमा (३) अयथार्थ वस्तु को यथार्थ उपमा और (४) अयथार्थ वस्तु को अयथार्थ उपमा ।

२० सामान्य विशेष– सामान्य से विशेष बलवान है । समुदाय रूप जानना सो सामान्य । विविध

भेद से जानना सो विशेष। जैसे द्रव्य सामान्य जीव अजीव, ये विशेष । जीव द्रव्य सामान्य, संसारी सिद्ध विशेष इत्यादि ।

११ गुण गुणी–पदार्थ में जो खास वस्तु (स्वभाव) है वो गुण और जो गुण जिसमें होता वो वस्तु (गुण धारक) गुणी है। जैसे ज्ञान यह गुण और जीव गुणी, सुगन्ध गुण और पुष्प गुणी। गुण और गुणी अभेद (अभिन्न) रूप से रहते हैं।

१२ ज्ञेय ज्ञान ज्ञानी– जानने योग्य (ज्ञान के विषय भूत) सर्व द्रव्य ज्ञेय। द्रव्य का जानना सो ज्ञान है और पदार्थों का जानने वाला वो ज्ञानी। ऐसे ही ध्येय ध्यान ध्यानी आदि समझना।

१३ उपन्नेवा, विगनेवा, धूवेवा– उत्पन्न होना, नष्ट होना और निश्चल रूप से रहना जैसे जन्म लेना मरना व जीव याने कायम (अमर) रहना।

१४ आधेय–आधार–धारण करने वाला आधार और जिसके आधार से (स्थित) रहे वो आधेय। जैसे– पृथ्वी आधार, घटादि पदार्थ आधेय, जीव आधार, ज्ञानादि आधेय।

१५ आविर्भाव-तिरोभाव–जो पदार्थ गुण दूर है वो तिरो भाव और जो पदार्थ गुण समीप में है वो आविर्भाव। जैसे दूध में घी का तिरोभाव है और मक्खन में घी का आविर्भाव है।

१६ गौणता- मुख्यता अन्य विषयों को छोड कर आवश्यक वस्तुओं का व्याख्यान करना सो मुख्यता और जो वस्तु गुप्त रूप मे अप्रधानता से रही हुई हो वो गौणता। जैसे ज्ञान से मोक्ष होता ऐसा कहने में ज्ञान की मुख्यता रही और दर्शन, चारित्र तपादि की गौणता रही।

१७ उत्सर्ग–अपवाद–उत्सर्ग यह उत्कृष्ट मार्ग है और अपवाद उसका रक्षक है। उत्सर्ग मार्ग से पतित अपवाद का अवलम्बन लेकर फिर से उत्सर्ग (उत्कृष्ट) मार्ग पर पहुँच सकता है। जैसे सदा ३ गुप्ति से रहना यह उत्सर्ग मार्ग है और ५ समिति यह गुप्ति के रक्षक-सहायक अपवाद मार्ग है। जिन कल्प उत्कृष्ट मार्ग है, स्थविर कल्प अपवाद मार्ग। इत्यादि षट् द्रव्य में भी जानना चाहिये।

१८ तीन आत्मा–बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा।

बहिरात्मा- शरीर, धन, धान्यादि समृद्धि, कुटुम्ब परिवार आदि में तल्लीन होवे सो मिथ्यात्वी।

अन्तरात्मा–बाह्य वस्तु को अन्य समझ कर उसे त्यागना चाहे व त्यागे वो अन्तरात्मा ४ से १२ गुणस्थान वाले।

परमात्मा–सर्व कार्य जिसके सिद्ध हो गये हों व कर्म मुक्त हो कर जो स्व-स्वरूप में लीन है वो सिद्ध परमात्मा।

१६ चार ध्यान–१ पदस्थ–पंच परमेष्टि के का ध्यान करना सो पदस्थ ध्यान।

२ पिंडस्थ–शरीर में रहे हुवे अनन्त गुण युक्त चैतन्य का अध्यात्म–ध्यान करना ।

३ रूपस्थ–अरूपी होते हुवे भी कर्म योग से आत्मा संसार में अनेक रूप धारण करती है । एवं विचित्र संसार अवस्था का ध्यान करना व उससे छूटने का उपाय सोचना ।

४ रूपातीत–सच्चिदानन्द, अगम्य, निराकार, निरंजन सिद्ध प्रभु का ध्यान करना ।

२० चार अनुयोग–१ द्रव्यानुयोग–जीव, अजीव, चैतन्य जड़ (कर्म) आदि द्रव्यों का स्वरूप का जिसमें वर्णन होवे २ गणितानुयोग–जिसमें क्षेत्र, पहाड़, नदी, देवलोक, नारकी, ज्योतिषी आदि के गणित–माप का वर्णन होवे ३ चरण करणानुयोग–जिसमें साधु श्रावक का आचार, क्रिया का वर्णन होवे ४ धर्म कथा–नुयोग–जिसमें साधु श्रावक, राजा रंक, आदि के वैराग्य मय बोध दायक जीवन प्रसंगों का वर्णन होवे

२१ जागरण तीन–(१) बुध जाग्रिका तीर्थंकर और केवलियों की दशा (२) अबुध जाग्रिका छद्मस्थ मुनियों की और (३) सुदाखु जाग्रिका–श्रावकों की (अवस्था) ।

२२ व्याख्या नव—एकेक वस्तु की उपचार नय से ९–९ प्रकार से व्याख्या हो सकती है ।

(१) द्रव्य में द्रव्य का उपचार–जैसे काष्ट में वंशलोचन
(२) द्रव्य में गुण का " – " जीव ज्ञानवन्त है

(३) " " पर्याय का " — " " स्वरूपवान है
(४) गुण में द्रव्य का " — " अज्ञानी जीव है
(५) " " गुण " " — " ज्ञानी होने पर भी क्षमावत है।
(६) गुण में पर्याय का " — " यह तपस्वी बहुत स्वरूपवान है।
(७) पर्याय में द्रव्य का " — " यह प्राणी देवता का जीव है।
(८) " " गुण का " — " यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है।
(९) " " पर्याय का " — " यह मनुष्य श्याम वर्ण का है इत्यादि।

२३ पक्ष आठ—एक वस्तु की अपेक्षा से अनेक व्याख्या हो सकती है। इस में मुख्यतया आठ पक्ष लिये जा सकते हैं। नित्य, अनित्य, एक, अनेक, सत्, असत्, वक्तव्य और अवक्तव्य ये आठ पक्ष निश्चय व्यवहार से उतारे जाते हैं।

पक्ष	व्यवहार नय अपेक्षा	निश्चय नय अपेक्षा
नित्य	एक गति में घूमने से नित्य है	ज्ञान दर्शन अपेक्षा नित्य है
अनित्य	समय २ आयुष्य क्षय होने से अनित्य है	अगुरु लघु आदि पर्याय से अनित्य है
एक	गति में वर्तन दशा से एक है	चैतन्य अपेक्षा जीव एक है
अनेक	पुत्र पुत्री, भाई आदि स से स है	असंख्य प्रदेशापेक्षा अनेक
सत्	स्वगति, स्वक्षेत्रापेक्षा सत है	ज्ञानादि ...

भाषा—पद

(श्रीपन्नवणा सूत्र के ११ वे पद का अधिकार)

(१) भाषा जीव को ही होती है । अजीव को नहीं होती किसी प्रयोग से (कारण से) अजीव में से भी भाषा निकलती हुई सुनी जाती है । परन्तु यह जीव की ही सत्ता है ।

(२) भाषा की उत्पत्ति—औदारिक, वैक्रिय, और आहारिक इन तीन शरीर द्वारा ही हो सकती है ।

(३) भाषा का संस्थान—वज्र समान है भाषा के पुद्गल वज्र संस्थान वाले है ।

(४) भाषा के पुद्गल उत्कृष्ट लोक के अन्त (लोकान्त) तक जाते हैं ।

(५) भाषा दो प्रकार की है—पर्याप्त भाषा (सत्य असत्य) और अपर्याप्त भाषा (मिश्र और व्यवहार भाषा)

(६) भाषक—समुच्चय जीव और त्रस के १६ दण्डक में भाषा बोली जाती है । ५ स्थावर और सिद्ध भगवान अभाषक हैं । भाषक अल्प हैं । अभाषक इन से अनन्त हैं ।

(७) भाषा चार प्रकार की है—सत्य, असत्य, मिश्र और व्यवहार भाषा १६ दण्डकों में चार ही भाषा तीन दण्डकों (विकलेन्द्रिय) में व्यवहार भाषा है ५ स्थावर में भाषा नहीं ।

(८) स्थिर अस्थिर—जीव जो पुद्गल भाषा रूप में लेते हैं वे स्थिर है या अस्थिर ? आत्मा के समीप रहे हुवे स्थिर पुद्गलों को ही भाषा रूप से ग्रहण किये जाते हैं। द्रव्य क्षेत्र, काल भाव अपेक्षा चार प्रकार से ग्रहण होता है।

१ द्रव्य से अनन्त प्रदेशी द्रव्य को भाषा रूप से ग्रहण करते हैं।

२ क्षेत्र से असंख्यात आकाश प्रदेश अवगाहे ऐसे अनन्त प्रदेशी द्रव्य को भाषा रूप में लेते हैं।

३ काल से १-२-३-४-५-६-७-८-९-१० सं-ख्याता और असंख्याता समय की एवं १२ बोल की स्थिति वाले पुद्गलों को भाषा रूप से लेते हैं।

४ भाव से—५ वर्ण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श वाले पुद्गलों को भाषा रूप में ग्रहण करते हैं। यह इस प्रकार एकेक वर्ण, एकेक रस, और एकेक स्पर्श के अनन्त गुणा अधिक के १३ भेद करना अर्थात् वर्ण के ५×१३ =६५, गन्ध के २×१३=२६, रस के ५×१३=६५ और स्पर्श के ४×१३=५२ बोल हुवे ॥

इन में द्रव्य का १ बोल, क्षेत्र का १ और काल के १२ बोल मिलाने से २२२ बोल हुवे ये २२२ बोल वाले पुद्गल द्रव्य भाषा रूप से ग्रहण होवे हैं—(१) स्पर्श किये हुवे (२) आत्म अवगाहन किये हुवे (३

अवगाहन किये हुवे (४) अणु वा सूक्ष्म (५) बादर स्थूल (६) ऊर्ध्व दिशा का (७) अधो दिशा का (८) तीर्छी दिशा का (६) आदि का (१०) अन्त का (११) मध्य का (१२) स्वविषय का (भाषा योग्य) (१३) अनुपूर्वी [क्रमश] (१४) त्रस नाली की ६ दिशा का (१५) ज. १ समय उ. असख्यात समय की अं. मु के सान्तर पुद्गल (१६) निरन्तर ज. २ समय ज. २ समय उ. असंख्य समय की अं. मु. का (१७) प्रथम के पुद्गलों को ग्रहण करे, अन्त समय त्यागे मध्यम कहे और छोड़ता रहे ये १७ बोल और ऊपर के २२२ मिल कर कुल २३६ बोल हुवे समुच्चय जीव और १६ दण्डक एव २० गुणा करने से २३६ ×२०=४७८० बोल हुवे

(६) सत्य भाषा पने पुद्गल ग्रहे तो समुच्चय जीव और १६ दण्डक ये १७ बोल २३६ प्रकार से [ऊपर अनुसार] ग्रहे अर्थात् १७×२३६=४०६३ बोल इसी प्रकार असत्य भाषा के ४०६३ बोल और मिश्र भाषा के ४०६३ बोल, तथा व्यवहार भाषा के समुच्चय जीव और १६ दण्डक एव २०+२३६= ४७८० बोल, कुल मिल कर २१७४६ बोल एकवचनापेक्षा और २१७४६ बहु वचनापेक्षा, कुल ४३४६८ भागा भाषा के हुवे ॥

[१०] भाषा के पुद्गल मुँह में से निकलते जो वो भेदाते निकलें तो रास्ते में से अनन्त गुणी वृद्धि होवे २

लोक के अन्त भाग तक चले जाते हैं, जो अभेदाते पुद्गल निकलें तो संख्यात योजन जाकर [विध्वंसी] लय पा जाते हैं ॥

(११) भाषा के भेदाते पुद्गल निकलें। वो ५ प्रकार से (१) खण्डा भेद-पत्थर, लोहा, काष्ट आदि के टुकडे वत् (२) परतर भेद-अभ्रख के पुडवत् (३) चूर्ण भेद-धान्य कठोर वत् (४) अणुतटिया भेद-तालाब की सूखी मिट्टी वत् (५) उक्करिया भेद-कठोल आदि की फलीया फटन के समान इन पांचों का अल्प बहुत्व-सर्व से कम उक्करिया, उनसे अणुतटिया अनन्त गुणा, उनसे चूर्णिय अनन्त गुणा, उनसे परतर अनन्त गुणा, उनसे खण्डा-भेद भेदाते पुद्गल अनन्त गुणा।

(१२) भाषा पुद्गल की स्थिति ज० अ० मु० की

(१३) भाषक का आन्तरा ज० अं० मु०; अनन्त काल का (वनस्पति में जाने पर)।

(१४) भाषा पुद्गल काया योग से ग्रहण किये जाते हैं।

(१५) भाषा पुद्गल वचन योग से छोड़े जाते हैं।

(१६) कारण-मोह और अन्तराय कर्म के क्षयोपशम और वचन योग से सत्य और व्यवहार भाषा बोली जाती है। ज्ञानावरण और मोहकर्म के उदय से और वचन-योग से असत्य और मिश्र भाषा बोली जाती है। केवली, सत्य और व्यवहार भाषा ही बोलते हैं। उनके चार घातिक

कर्म चय हुवे हैं। विकलेन्द्रिय केवल व्यवहार भापा संसार रूप ही बोलते हैं और १६ दण्डक के जीव चारों ही प्रकार की बोलते है।

(१७) जीव जिस प्रकार की भापा रूपमें द्रव्य ग्रहण करते है वे उसी प्रकार की भापा बोलते हैं।

(१८) वचन द्वार—बोलने वाले—व्याख्यानदाताओं को नीचे का वचन ज्ञान करना (जानना) चाहिए एक वचन द्वि वचन, वहु वचन; स्त्री वचन, पुरुप वचन, नपुंसक वचन, अध्यवसाय वचन, वर्ण (गुण, कीर्तन), अवर्ण (अवर्ण वाद), वर्णावर्ण (प्रथम गुण करने के बाद अवर्ण वाद), अवर्ण वर्ण (प्रथम अवगुण करके पश्चात् गुण कहना), भूत—भविष्य—वर्तमान काल वचन, प्रत्यच—परोच वचन, इन १६ प्रकार के सिवाय विभक्ति तद्धित, धातु, प्रत्यय आदि का ज्ञाता होवे।

(१६) शुभ इरादे से चार प्रकार की भापा बोलने वाला आराधक हो सकता है।

(२०) चार भापा के ४२ नाम है. सत्य भापा के १० प्रकार—१ लोक भापा २ स्थापना सत्य (चित्रादि के नाम से कहलाने वाली] ३ नाम सत्य [गुण होवे या नहीं होवे जो नाम होवे वो कहना] ४ रूप सत्य [तादृर्श रूप समान कहना जैसे हनुमान समान- रूप पुतले को

हनुमान कहना] ५ अपेक्षा सत्य ६७ व्यवहार सत्य [८] भाव सत्य [९] योग सत्य [१०] उपमा सत्य।

असत्य वचन के १० प्रकार–१ क्रोध से २ मान से ३ माया से ४ लोभ से ५ राग से ६ द्वेष से ७ हास्य से ८ भय से [इन कारणों से बोली हुई भाषा–आत्म ज्ञान भूलकर] बोली हुई होने से सत्य होने पर भी असत्य है। ९ पर परिताप वाली १० प्राणातिपात [हिंसक] भाषा एवं १० प्रकार की भाषा असत्य है।

मिश्र भाषा के १० प्रकार—इस नगरमें इतने मनुष्य पैदा हुवे, इतने मरे, आज इतने जन्म मरण हुवे, ये सर्व जीव हैं, ये सर्व अजीव है, इनमें आधे जीव हैं, आधे अजीव हैं, यह वनस्पती समस्त अनन्त काय है वह सर्व परित्त काय है, पोरसी दिन आगया, इतने वर्ष व्यतीत होगये, तात्पर्य यह कि जब तक जिस बात का निश्चय न होवे (चाहे कार्य हुआ हो) वहा तक मिश्र भाषा

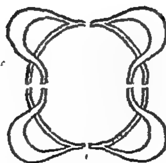
व्यवहार भाषा के १२ प्रकार १ सबाधित भाषा [हे वीर, हे देव इ०] २ आज्ञा देना ३ याचना करना ४ प्रश्नादि पूछना ५ वस्तु–तत्त्व- प्ररूपणा करनी ६ प्रत्याख्यानादि करना ७ सामने वाले की इच्छानुसार बोलना " जहासुहं " ८ उपयोग शून्य बोलना ९ इरादा पूर्वक व्यवहार करना १० शका युक्त बोलना ११ अस्पष्ट बोलना १२ स्पष्ट बोलना. जिस भाषा में असत्य न होवे

और संपूर्ण या निश्चय सत्य न होवे तो उसे व्यवहार भाषा जानना ।

२१ अल्प बहुत्व-सर्व से कम सत्य भाषक, उनसे मिश्र भाषक असंख्यात गुणा, उससे असत्य भाषक असंख्यात गुणा, उनसे व्यवहार भाषक असंख्यात गुणा और उनसे अभाषक (सिद्ध तथा एकेन्द्रिय) अनन्त गुणा ।

॥ इति भाषा पद सम्पूर्ण ॥





ॐ आयुष्य के १८०० भागा ॐ

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, पद छट्ठा)

पांच स्थावर में जीव निरन्तर उत्पन्न होवे और इनमें से निरन्तर निकले १९ दण्डक में जीव सान्तर और निरन्तर उपजे और सान्तर तथा निरन्तर निकले सिद्ध भगवान सान्तर और निरन्तर उपजे परन्तु सिद्ध में से निकले नहीं ४ स्थावर समय समय असंख्याता जीव उपजे और असंख्याता चवे, वनस्पति में समय समय अनन्ता जीव उपजे और अनन्त चवे १९ दण्डक में समय समय १-२-३ यावत् संख्याता, असंख्याता जीव उपजे और चवे। सिद्ध भगवान १-२-३ जाव १०८ उपजे परन्तु चवे नहीं।

आयुष्य का बन्ध किस समय होता है ? नारकी, देवता, और युगलिये आयुष्य में जब ६ माह शेष रहे तब पर भव का आयुष्य बान्धे शेष जीव दो प्रकार बान्धे-सोपक्रमी और निरुपक्रमी। निरुपक्रमी तो नियमा तीसरा भाग आयुष्य का शेष रहने पर बान्धे और सोपक्रमी आयुष्य के तीसरे, नवमें, सत्तावीश वें, एकाशीवें, २४३ वें भाग में तथा अन्तिम अन्तर्मुहूर्त में परभव का आयुष्य बान्धे आयुष्यकर्म के साथ साथ ६ बोल (जाति, गति, स्थिति, अवगाहना, प्रदेश और अनुभाग) का बन्ध होता है।

समुच्चय जीव और २४ दण्डक के एकेक जीव ऊपर

दण्डक में भी विना उपक्रम से चवे, स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य एवं १० दण्डक के जीव तीनों ही उपक्रम से चवे ।

४ नारकी स्वात्म ऋद्धि (नरकायु आदि) से उत्पन्न होवे कि पर ऋद्धि से ? स्वऋद्धि से और निकले (चवे) भी स्वऋद्धि से एवं २३ दण्डक में जानना ।

५ २४ दण्डक के जीव स्वप्रयोग (मन वचन काय) से उपजे और निकले, पर प्रयोग से नहीं ।

६ २४ दण्डक के जीव स्वकर्म से उपजे और निकले (चवे), पर कर्म से नहीं ।

॥ इति सोपक्रम निरुपक्रम सम्पूर्ण ॥



* हियमाण-वद्धमाण *

श्री भगवती सूत्र, शतक ५ उ० ८

(१) जीव हियमान (घटना) है या वर्द्धमान (बढना) ? न तो हियमान है और न वर्द्धमान परन्तु अवस्थित (वध-घट विना जैसे का तैसा रहे) है।

(२) नेरिया हियमान, वर्धमान और अवस्थित भी हैं एवं २४ दण्डक, सिद्ध भगवान वर्धमान और अवस्थित है।

(३) समुच्चय जीव अवस्थित रहे तो शाश्वता नेरिया हियमान, वर्धमान रहे तो ज० १ समय उ० आवलिका के असख्यातवें भाग और अवस्थित रहे तो विरह काल से दुगणा (देखो विरह पद का थोकड़ा) एवं २४ दण्डक में अवस्थित काल विरह काल से दूना, परन्तु ५ स्थावर में अवस्थित काल हियमान वत् जानना। सिद्धों में वर्धमान ज० १ समय, उ० ८ समय और अवस्थित काल ज० १ समय उत्कृष्ट ६ माह।

॥ इति हियमाण वद्धमाण सम्पूर्ण ॥

सावचया सोवचया

(श्री भगवती सूत्र; शतक ५, उ० ८)

१ सावचया [वृद्धि] २ सोवचया [हानि] ३ सावचया सोवचया [वृद्धि-हानि] और ४ निरूवचया [न तो वृद्धि और न हानि] इन चार भागों पर प्रश्नोतर समुच्चय जीवों में चौथा भागा पावे, शेष तीन नहीं. २४ दण्डक में चार ही भागा पावे। सिद्ध में भागा २ (सावचया-और निरुवचया-निरवचया)

समुच्चय जीवों में जो निरुवचया-निरवचया है वो सर्वाध है। और नारकी में निरुवचया-निरवचया सिवाय तीन भागों की स्थिति ज० १ समय की उ० आवलिका के असंख्यात भाग की तथा निरुवचया-निरवचया की स्थिति विरह द्वार वत्, परन्तु पाच स्थावर में निरुवचया-निरवचया भी ज० १ समय, उ० आवलिका के असंख्यातवें भाग सिद्ध में सावचया ज० १ समय उ० ८ समय की और निरुवचया-निरवचया की ज० १ समय की उ० ६ माह की स्थिति जानना।

नोट—पाच स्थावर में अवस्थित काल तथा निरुवचया निरवचया काल आवलिका ये असंख्यातवें भाग कही हुई है यह परकायापेक्षा है। स्वकाय का विरह नहीं पड़ता।

॥ इति सावचया सोवचया सम्पूर्ण ॥

क्रत संचय

(श्री भगवती सूत्र, शतक २०, उद्देशा १०)

(१) क्रत संचय जो एक समय में दो जीवों से संख्याता जीव उत्पन्न होते हैं।

(२) अक्रत संचय-जो एक समय में असंख्याता अनन्ता जीव उत्पन्न होते हैं

(३) अवक्तव्य संचय-एक समय में एक जीव उत्पन्न होता है।

१ नारकी (७), १० भवन पति, ३ विकलेन्द्रिय, १ तिर्यंच पंचेन्द्रिय, १ मनुष्य, १ व्यंतर, १ ज्योतिषी और १ वैमानिक एवं १६ दण्डक में तीनों ही प्रकार के संचय।

पृथ्वी काय आदि ५ स्थावर में अक्रत संचय होता है। शेष दो संचय नहीं होते कारण समय समय असंख्य जीव उपजते हैं। यदि किसी स्थान पर १-२-३ आदि संख्याता कहे हों तो वो परकायापेक्षा समझना।

सिद्ध क्रत संचय तथा अवक्तव्य संचय है, अक्रत संचय नहीं।

अल्प बहुत्व

१ नारकी में सर्व से कम अवक्तव्य संचय उनसे क्रत संचय,संख्यात गुणा उनसे अक्रत संचय असंख्यात गुणा एवं १६ दण्डक का अल्प बहुत्व जानना

५ स्थावर में अल्प बहुत्व नहीं ।

सिद्ध में सर्व से कम कत संचय, उनसे अवक्तव्य संचय संख्यात गुणा ।

॥ इति कृत संचय संपूर्ण ॥





द्रव्य-(जीवा जीव)

(श्री भगवती सूत्र, शतक २५ उ० २)

द्रव्य दो प्रकार का है-जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य।

क्या जीव द्रव्य संख्याता, असंख्याता तथा अनन्ता है? अनन्ता है कारण कि जीव अनन्त है।

अजीव द्रव्य संख्याता, असंख्याता तथा क्या अनन्ता है? अनन्ता है। कारण कि अजीव द्रव्य पांच हैः-धर्मास्ति काय अधर्मास्ति काय, असंख्याता प्रदेश हैं आकाश और पुद्गल के अनन्त प्रदेश हैं। और काल वर्तमान एक समय है भूतभविष्यापेक्षा अनन्त समय है इस कारण अजीव द्रव्य अनन्ता है।

प्र०-जीव द्रव्य, अजीव द्रव्य के काम में आते हैं कि अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते हैं?

उ०-जीव द्रव्य अजीव द्रव्य के काम में नहीं आते, परन्तु अजीव द्रव्य जीव द्रव्य के काम में आते हैं। कारण कि-जीव अजीव द्रव्य को ग्रहण करके १४ बोल उत्पन्न करते हैं यथा-१ औदारिक २ वैक्रिय ३ आहारिक ४ तेजस ५ कार्मण शरीर, ५ इन्द्रिय, ११ मन, १२ वचन, १३ काया और १४ श्वासो श्वास।

प्र० अजीव द्रव्य के नारकी के नेरिये काम आते

हैं कि नेरिये के अजीव द्रव्य काम आते हैं ?

उ०—अजीव द्रव्य के नेरिये का। नहीं आते, परन्तु नरिये क अजीव द्रव्य काम आते हैं। अजीव का ग्रहण करके नेरिये १२ बोल उत्पन्न करते हैं।

(३ शरीर, इन्द्रिय, मन, वचन और श्वासोश्वास)

देवता के १३ दण्डक के प्रश्नोत्तर भी नारकीवत् (१२ बोल उपजावे)

चार स्थावर के जीव ६ बोल (३ शरीर स्पर्शेन्द्रिय काय और श्वासोश्वास) उपजावे वायु काय के जीव ७ बोल ऊपर के ६ और वैक्रिय) उपजावे।

बेइन्द्रिय जीव ८ बोल उपजावे (३ शरीर, २ इन्द्रिय, २ योग, श्वासो श्वास।)

त्रि-इन्द्रिय जीव ९ बोल उपजावे (३ शरीर, ३ इन्द्रिय २ योग, श्वासो श्वास)।

चौरिन्द्रिय जीव १० बोल उपजावे (३ शरीर, ४ इन्द्रिय २ योग, श्वासो श्वास)।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय १३ बोल उपजावे (४ शरीर, ५ इन्द्रिय, ३ योग, श्वासो श्वास।)

मनुष्य बोल

॥ इति

संस्थान--द्वार

(श्री भगवतीजी सूत्र, शतक २५ उद्देशा ३)

सस्थान=आकृति इसके दो भेद १ जीव सस्थान और २ अजीव सस्थान जीव सस्थान के ६ भेद—१ समचौरस २ सादि ३ निग्रोध परिमण्डल ४ वामन ५ कुब्जक ६ हुड सस्थान । अजीव मस्थान के ६ भेद—१ परिमडल (चूड़ी के समान गोल) २ वट्ट (लड्डु समान गोल) ३ त्रस (त्रिकोन) ४ चौरंस (चौरस) ५ आयतन (लकड़ी समान लम्बा) ६ अनवस्थित (इन पाचों से विपरीत) ।

परिमण्डल आदि छः ही सस्थानों के द्रव्य अनन्त है संख्याता या असख्याता या असख्याता नहीं ।

इन सस्थानों के प्रदेश भी अनन्त है, सख्याता असख्याता नहीं ।

६ सस्थानो का द्रव्यापेक्षा अल्प बहुत्व

सर्व से कम परिमडल संस्थान के द्रव्य । उनसे वट्ट के द्रव्य सख्यात गुणा उनसे चौरस के द्रव्य सख्यात गुणा उनसे त्रस के द्रव्य संख्यात गुणा उनसे आयतन के द्रव्य सख्यात गुणा, उनसे अनवस्थित के द्रव्य असंख्यात गुणा ।

प्रदेशापेक्षा अल्प बहुत्व भी द्रव्यापेक्षावत् जानना ।

द्रव्य-प्रदेशापेक्षा का एक साथ अल्प बहुत्व

सर्व से कम परिमंडल द्रव्य, उनसे वट्ट द्रव्य संख्यात गुणा उनसे चौरस द्रव्य संख्यात गुणा उनसे त्र्यंस द्रव्य " " " आयतन " " . " " अनवस्थित " असं. गुणा. " परिमंडल प्रदेश असंख्यात " वट्ट प्रदेश सं० " " चौरस " संख्यात " त्र्यस " " " " आयन " " . " अनवस्थित असंख्यात गुणा ।

॥ इति संस्थान द्वार सम्पूर्ण ॥





संस्थान के भांगे

(श्री भगवती जी सूत्र, शतक २५ उद्देशा ३)

सस्थान ५ प्रकार का है-१ परिमंडल २ वट्ट ३ त्रैस ४ चौरस ५ आयतन ये पांचों ही सस्थान सख्याता, असख्याता नहीं परन्तु अनन्ता हैं ।

७ नारकी, १२ देवलोक, ६ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान, सिद्ध शिला और पृथ्वी के ३५ स्थान में पाच प्रकार के अनन्ता अनन्ता सस्थान हैं एव ३५+५=१७५ भागे हुवे ।

एक यवमध्य परिमंडल सस्थान में दूसरा परिमडल संस्थान अनन्त हैं । एव यावत् आयतन सस्थान तक अनन्त अनन्त कहना । इसी प्रकार एक यवमध्य परिमडल के समान अन्य ४ संस्थानों की व्याख्या करना । एक संस्थान में दूसरे पांचों ही सस्थान अनन्त है अतः प्रत्येक के ५+५=२५ बोल । इन उक्त ३५ स्थानों में होवे अर्थात् ३५+२५=८७५ और १७५ पहले के मिल कर १०५० भागे हुवे ।

॥ इति सस्थान के भागे सम्पूर्ण ॥

खेताणु---वाई

(श्रीपन्नवणा जी सूत्र, तीसरा पद)

तीन लोकों के ६ भेद (भाग) करके प्रत्येक भाग में कौन रहता है ? यह बताया जाता है।

(१) ऊर्ध्व लोक (ज्योतिषी देवता के ऊपर के तले से ऊपर) में १२ देवलोक, ३ किल्विषी, ६ लोकांतिक, ६ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान इन ३८ देवों के पर्याप्ता, अपर्याप्ता (७६ देव) तथा मेरु की वापी अपेक्षा बादर तेऊ के पर्याप्ता, अपर्याप्ता सिवाय ४६ जाति के तिर्यंच होवे, एवं ७६+४६=१२२ भेद (प्रकार) के जीव होते हैं।

(२) अधो लोक (मेरु की समभूमि से ६०० योजन नीचे तीर्छा लोक उससे नीचे) में जीव के भेद ११५ है-७ नारकी के १४ भेद, १० भवनपति १५ परमाधामी के पर्या० अपर्या० एवं ५० देव, सलीलावति विजय अपेक्षा (१ महाविदेह का पर्या० अपर्या० और समूर्छिम मनुष्य) ३ मनुष्य और ४८ तिर्यंच के भेद मिल कर १४ +५०+३+४८=११५ हैं।

(३) तीर्छा लोक (१८०० योजन) में ३०३ मनुष्य, ४८ तिर्यंच और ७२ देव (१६ व्यन्तर, १० जृंभका १० ज्योतिषी इन ३६ के पर्या० अपर्या०) कुल ४२३ भेद के जीव है।

(४) ऊर्ध्व तीर्छा लोक-(ज्योतिषी के ऊपर के तला के प्रदेशी प्रतर क बीच में) में देव गमनागमन के समय और जीव चवकर ऊर्ध्व लोक में तथा तीर्छे लोक जाते गमनागमन के समय स्पर्श करते हे।

(५) अधो -तीर्छे लोक में भी दोनों प्रतरों को चव कर जाते आते जीव स्पर्शते हैं।

(६) तीनों ही लोक (ऊर्ध्व, अधो और तीर्छा लोक) का देवता, देवी तथा मरणातिक समुद्‌घात करते जीव एक साथ स्पर्श करते हैं।

२४ दण्डक के जीव उपरोक्त ६ लोक में कहाँ न्यूनाधिक है! इसका अल्प बहुत्व।

२० बोल (समुच्चय एकेन्द्रिय, ५ स्थावर ये ६ समुच्चय, ६ पर्याप्ता, ६ अपर्याप्ता, १ समुच्चय और १ समुच्चय तिर्यंच) का अल्प बहुत्व।

सर्व से कम ऊर्ध्व तीर्छे लोक में, उनसे अधो तीर्छे लोक में विशेष उमसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीनों लोक में असंख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीनों अधो लोक में विशेष।

३ बोल (समुच्चय नारकी, पर्याप्ता और अपर्याप्ता नारकी का अल्प बहुत्व-सर्व से कम तीन लोक में अधो तीर्छे लोक में असंख्यात,अधो लोक में असंख्यात गुणा।

६ बोल-भवनपति के (१ समुच्चय, १ पर्याप्ता,

१ अपर्याप्ता एव ३ देवी के) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा, उनसे तीनों लोक में सख्यात गुणा। उनसे अधो -तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असख्यात गुणा। उनसे अधो लोक में असंख्यात गुणा।

४ बोल (तिर्यचनी, समुच्चय देव, समुच्चय देवी, पंचेन्द्रिय, के पर्याप्ता) का अल्प बहुत्व सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व- तीर्छे लोक में असख्यात गुणा उनसे तीनों लोक में संख्यात गुणा। उनसे अधो-तीर्छे लोक में सख्यात गुणा उनस अधो लोक में संख्यात गुणा। उनसे तीर्छे लोक में ३ बोल सख्यात गुणा और पचेन्द्रिय का पर्याप्ता असंख्यात गुणा।

एव तीन मनुष्यनी के) बोल—सर्व से कम तीनों लोक में, उनसे ऊर्ध्व—तीर्छे लोक में मनुष्य असख्यात गुणा मनु ष्यनी संख्यात गुणी उनसे अधो—तीर्छे लोक में सख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में सख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में संख्यात गुणा।

६ बोल—व्यन्तर के (समु० व्यन्तर देव पर्याप्ता अपर्याप्ता एव ३ देवी के) बोल—सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में, उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असख्यात गुणा उनसे तीन लोक में सख्यात गुणा उनसे अधो—तीर्छे लोक में असख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में सख्यात गुणा।

६ बोल ज्योतिषी के (३ देवके, ३ देवी के ऊपर वत्) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में असं० गुणा उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा, उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा

६ बोल-वैमानिक (३ देवी के ऊपर वत्) के- सर्व से कम ऊर्ध्व तीर्छे लोक में उनसे तीन लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में असंख्यात गुणा।

६ बोल तीन विकलेन्द्रिय के (३ पर्याप्ता, ३ अपर्याप्ता) सर्व से कम ऊर्ध्व लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा उनसे अधो लोक में संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में संख्यात गुणा।

५ बोल (समुच्चय पंचेन्द्रिय, समु० अपर्याप्ता समु०त्रस, त्रस के पर्या० अपर्याप्ता) सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक-में संख्यात गुणा उनसे अधो-तीर्छे लोक में संख्यात गुणा उनसे ऊर्ध्व लोक में संख्यात गुणा उनसे अधो लोक म संख्यात गुणा उनसे तीर्छे लोक में असंख्यात गुणा।

पुद्गल क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व–तीर्छे लोक में अनं० गुणा उनसे आधो- तीर्छे लोक में विशेष लोक में उनसे तीर्छे " " अस० उन से ऊर्ध्व लोक में असं०गुणा उन से अधो लोक में विशेष ।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम तीन लोक में उनसे ऊर्ध्व-तीर्छे लोक में अनंत गुणा उनसे अधो तीर्छे लोक में विशेष उनसे ऊर्ध्व लोक में अनत गुणा उन से अधो तीर्छे लोक में अनत गुणा उनसे ऊर्ध्व तीर्छे लोक में अनत गुणा ।

पुद्गल दिशापेक्षा

सर्व से कम ऊर्ध्व दिशा में उनसे अधो दिशा में विशेष उनसे ईशान नैऋत्य कोन में असं० गुणा उनसे अग्नि वायव्य कोन में विशेष उनसे पूर्व दिशा में असं० गुणा उनसे पश्चिम दिशा में विशेष । उनसे दक्षिण दिशा में विशेष और उनसे उत्तर दिशा में विशेष पुद्गल जानना ।

द्रव्य क्षेत्रापेक्षा

सर्व से कम द्रव्य अधो दिशा में उनसे ऊर्ध्व दिशा में अनन्तगुणा उन से ईशान नैऋत्य कोन में अनन्तगुणा उन से अग्नि वायु कोन में विशेष उन से पूर्व दिशा में असंख्यात गुणा उन से पश्चिम दिशा में विशेष उन से दक्षिण दिशा में विशेष उन से उत्तर दिशा में विशेष, ।

॥ इति श्वेताणु वाई सम्पूर्ण ॥

अवगाहन का अल्प बहुत्व

१ सर्व से कम सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता की ज. अवगाहना उनसे
२ सूक्ष्म वायु काय के अपर्याप्ता की ज „ असं गुणी „
३ „ तेऊ „ „ „ „ „ „ „ „ „
४ „ अप „ „ „ „ „ „ „ „ „
५ „ पृथ्वी „ „ „ „ „ „ „ „ „
६ बादर वायु „ „ „ „ „ „ „ „ „
७ „ तेऊ „ „ „ „ „ „ „ „ „
८ „ अप „ „ „ „ „ „ „ „ „
९ „ पृथ्वी „ „ „ „ „ „ „ „ „
१० „ निगोद „ „ „ „ „ „ „ „ „
११ प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पति के अ० की „ „ „ „ „
१२ सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता की „ „ „ „ „
१३ „ „ „ अपर्या „ उ „ विशेष „
१४ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „ „
१५ „ वायुकाय „ „ „ ज „ असं गुणी „
१६ „ „ „ „ अपर्या „ उ „ विशेष „
१७ „ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „
१८ „ तेऊ „ „ „ „ ज „ असं गु „
१९ „ „ „ „ अपर्याप्ता „ उ „ विशेष „
२० „ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „
२१ „ अप „ „ „ „ ज „ असं गुणी „
२२ „ „ „ „ अपर्याप्ता „ उ „ विशेष „
२३ „ „ „ „ पर्याप्ता „ „ „ „ „
२४ „ पृथ्वी „ „ „ „ ज „ असं गुणी „
२५ „ „ „ „ अपर्या „ उ „ विशेष

२६ ,, ,, ,, ,,	पर्याप्ता ,,	,,	,, ,,	,,
२७ बादर वा.,, ,, ,,	,,	ज	,, असं गुणी	,,
२८ ,, ,, ,, ,,	अपर्याप्ता,,	उ	,, विशेष	,,
२९ ,, ,, ,, ,,	पर्याप्ता ,,	उ	,, ,,	,,
३० ,, तेऊ,, ,, ,,	,,	ज	,, असं गुणी	,,
३१ ,, ,, ,, ,,	अपर्या. ,,	उ	,, विशेष	,,
३२ ,, ,, ,, ,,	पर्या. ,,	,,	,, ,,	,,
३३ ,, अप ,, ,, ,,	,,	ज	,, असं गुणी	,,
३४ ,, ,, ,, ,,	अपर्या ,,	उ	,, विशेष	,,
३५ ,, ,, ,, ,,	पर्या. ,,	उ	,, ,,	,,
३६ बादर पृ,, ,, ,,	,,	ज	,, असं गुणी	,,
३७ ,, ,, ,, ,,	अपर्या. ,,	उ	,, विशेष	,,
३८ ,, ,, ,, ,,	पर्या ,,	,,	,, ,,	,,
३९ ,, निगोद ,,	पर्या ,,	ज	,, असं गुणी	,,
४० ,, ,,	,, अपर्या ,,	उ	,, विशेष	,,
४१ ,, ,,	,, पर्या ,,	,,	,, ,,	,,
४२ प्रत्येक शरीरी बादर वन.	पर्या का	ज	,, असं गुणा	,,
४३ ,, ,, ,, ,,	अपर्या	उ	,, ,, ,,	,,
४४ ,, ,, ,, ,,	पर्या	,,	,, ,, ,,	,,

॥ इति अवगाहना अल्प बहुत्व ॥



चरम पद

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, दशवाँ पद)

चरम की अपेक्षा अचरम है और अचरम की अपेक्षा चरम है । इनमें कम से कम दो पदार्थ होने चाहिये । नीचे रत्नप्रभादि एकेक पदार्थ का प्रश्न है । उत्तर में अपेक्षा से नास्ति है । अन्य अपेक्षा से अस्ति है । इसी को स्याद्वाद धर्म कहते हैं ।

पृथ्वी ८ प्रकार की है–७ नारकी और ईशी प्राग-भारा (सिद्ध शिला)

प्रश्न–रत्न प्रभा क्या (१) चरम है ? (२) अचरम है ? (३) अनेक चरम है ? (४) अनेक अचरम है ? (५) चरम प्रदेश है ? (६) अचरम प्रदेश है ?

उत्तर—रत्नप्रभा पृथ्वी द्रव्यापेक्षा एक है । अतः चरमादि ६ बोल नहीं होवे । अन्य अपेक्षा रत्नप्रभा के मध्य भाग और अन्त भाग ऐसे दो भाग करके उत्तर दिया जाय तो–चरम पद का अस्तित्व है । जैसे–रत्न-प्रभा पृथ्वी द्रव्यापेक्षा (१) चरम है । कारण कि मध्य भाग की अपेक्षा बाहर का भाग (अन्त भाग) चरम है । (२) अचरम है । कारण कि अन्त भाग की अपेक्षा मध्य भाग अचरम है । क्षेत्रापेक्षा (३) चरम प्रदेश है । कारण कि मध्य प्रदेशापेक्षा अन्त प्रदेश चरम है और (४) अच-

रम प्रदेश है। कारण कि अन्त प्रदेशापेक्षा मध्य का प्रदेश अचरम है।

रत्नप्रभा के समान ही नीचे के ३६ बोलों को चार चार बोल लगाये जासक्ते हैं। ७ नारकी, १२ देव लोक, ६ ग्रीयवेक, ५ अनुत्तर विमान, १ सिद्ध शिला, १ लोक और १ अलोक एवं ३६×४=१४४ बोल होते हैं।

इन ३६ बोलों की चरम प्रदेश में तारतम्यता है। इसका अल्प बहुत्व–

रत्न प्रभा के चरमाचरम द्रव्य और प्रदेशों का अल्प बहुत्व–सर्व से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असंख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, सर्व से कम चरम प्रदेश, उनसे अचरम प्रदेश असंख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

द्रव्य और प्रदेश का एक साथ अल्प बहुत्व, सर्व से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असंख्यात गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष, इसी प्रकार लोक सिवाय ३५ बोलों का अल्प बहुत्व जानना।

अलोक में

द्रव्य का अल्प बहुत्व–सर्व से कम अचरम द्रव्य, उन

से चरम द्रव्य असख्य गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष।

प्रदेश का अल्प बहुत्व-सर्व से कम चरम प्रदेश, उनमे अचरम प्रदेश अनन्त गुणा,उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

द्रव्य प्रदेश का अल्प बहुत्व-सर्व से कम अचरम द्रव्य, उनसे चरम द्रव्य असख्य गुणा, उनसे चरमाचरम द्रव्य विशेष,उनसे चरम प्रदेश असख्य गुणा, उनसे अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे चरमाचरम प्रदेश विशेष।

लोकालोक में चरमाचरम द्रव्य का अल्प बहुत्व

सर्व से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य असख्य गुणा, उन से अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनमे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष।

लोकालोक में चरमाचरम प्रदेश का अल्प बहुत्वः-सर्व से कम लोक के चरम प्रदेश, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उन से लोक के अचरम प्रदेश असख्य गुणा,उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उन से लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष।

लोकालोक में द्रव्य-प्रदेश चरमाचरम का अल्प बहुत्व-सर्व से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उन से लोक के चर असं० गुणा, उनसे अलोक

के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरमाचरम प्रदेश विशेष।

एवं ९ बोल, सर्व द्रव्य प्रदेश और पर्याय १२ बोलों का अल्प बहुत्व—

सर्व से कम लोकालोक के चरम द्रव्य, उनसे लोक के चरम द्रव्य असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम द्रव्य विशेष, उनसे लोकालोक के चरमाचरम द्रव्य विशेष, उनसे लोक के चरम प्रदेश असंख्य गुणा, उनसे अलोक के चरम प्रदेश विशेष, उनसे लोक के अचरम प्रदेश असंख्य गुणा, उन से अलोक के अचरम प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे लोकालोक के चरम चरम प्रदेश विशेष, उनसे सर्व द्रव्य विशेष, उनसे सर्व प्रदेश अनन्त गुणा, उनसे सर्व पर्याय अनन्त गुणी।

॥ इति चरम पद सम्पूर्ण ॥

चरमा-चरम

(श्री पन्नवणा जी सूत्र, दसवां पद)

द्वार ११-१ गति २ स्थिति ३ भव ४ भाषा ५ श्वासोश्वास ६ आहार ७ भाव ८ वर्ण ९ गंध १० रस ११ स्पर्श द्वार ।

१ गति द्वार-गति अपेक्षा जीव चरम भी है और अचरम भी है । जिस भव में मोक्ष जाना है वो गति चरम और अभी भव बाकी है सो अचरम, एक जीव अपेक्षा और २४ दण्डक अपेक्षा ऊपरवत जानना अनेक जीव तथा २४ दण्डक के अनेक जीव अपेक्षा भी चरम अचरम ऊपर अनुसार जानना ।

२ स्थिति द्वार-स्थिति अपेक्षा एकेक जीव, अनेक जीव, २४ दण्डक के एकेक जीव और २४ दण्डक के अनेक जीव स्यात् चरम, स्यात् अचरम है ।

३ भव द्वार-इसी प्रकार एकेक और अनेक जीव अपेक्षा समुच्चय जीव और २४ दण्डक भव अपेक्षा स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है ।

४ भाषा द्वार-भाषा अपेक्षा १९ दण्डक(५ स्थावर सिवाय) एक और अनेक जीव चरम भी है

५ श्वासोश्वास द्वार-श्वासोश्वास अपेक्षा सब चरम भी है, अचरम भी है।

६ आहार-अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के जीव चरम भी है, अचरम भी है।

७ भाव-(औदयिक आदि) अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के जीव चरम भी है, अचरम भी है।

८ से-११ वर्ण,गन्ध,रस,स्पर्श के २० बोल अपेक्षा यावत् २४ दण्डक के एकेक और अनेक जीव चरम भी है, अचरम भी है।

॥ इति चरमाचरम सम्पूर्ण ॥



❀ जीव परिणाम पद ❀

(श्री पन्नवणा सूत्र, तेरहवां पद)

जिस परिणति से परिणमे उसे परिणाम कहते हैं। जैसे जीव स्वभाव से निर्मल, सच्चिदानन्द रुप है। तथापि पर प्रयोग मे कषाय में परिणमन हो कर कषायी कहलाता है। इत्यादि। परिणाम दो प्रकार का है- १ जीव परिणाम २ अजीव परिणाम।

१ जीव परिणाम—१० प्रकार का है-गति,इन्द्रिय, कषाय, लेश्या, योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वेद परिणाम। विस्तार से गति के ४, इन्द्रिय के ५, कषाय के ४, लेश्या के ६, योग के ३, उपयोग के २ (साकार ज्ञान और निराकार दर्शन), ज्ञान के ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान), दर्शन के ३ (सम-मिथ्या-मिश्र दृष्टि), चारित्र के ७ (५ चारित्र, १ देश व्रत और अव्रत), वेद के ३, एव कुल ४५ बोल है। और समुच्चय जीव में १ अनेन्द्रिय २ अकषाय ३ अलेशी ४ अयोगी और ५ अवेदी। एव ५ बोल मिलाने से ५० बोल हुवे।

समुच्चय जीव एव ५० बोल पने परिणमते है। अब ये २४ दण्डक पर उतारे जाते हैं।

(१) सात नारकी के दण्डक में २६ बोल पावे १ नरक गति, ५ इन्द्रिय ४ कषाय, ३ लेश्या, ३ ~

२ उपयोग, ६ ज्ञान (३ ज्ञान, ३ अज्ञान) ३ दर्शन, १ असंयम-चारित्र, १ वेद नपुंसक एवं २६ बोल ।

(११) १० भवन पति १ व्यन्तर एवं ११ दण्डक में ३१ बोल पावे-नारकी के २६ बोलों में १ स्त्री वेद और १ तेजो लेश्या बढाना।

(३) ज्योतिषी और १-२ देवलोक में २८ बोल; ऊपर में से ३ अशुभ लेश्या घटाना।

(१०) तीसरे से बारहवें देव लोक तक २७ बोल-ऊपर में से १ स्त्री वेद घटाना ।

(१) नव ग्रीयवेक में २६ बोल-ऊपर में से १ मिश्र दृष्टि घटानी ।

(१) पाच अनुत्तर विमान में २२ बोल । १ दृष्टि और ३ अज्ञान घटाना।

(३) पृथ्वी, अप, वनस्पति में १८ बोल । १ गति, १ इन्द्रिय, ४ कषाय, ४ लेश्या, १ योग, २ उपयोग, २ अज्ञान, १ दर्शन, १ चारित्र, १ वेद एव १८ ।

(२) तेउ-वायु में १७ बोल -ऊपर में से १ तेजो लेश्या घटाना ।

(१) बेइन्द्रिय में २२ बोल-ऊपर के १७ बोलों में से १ रसेन्द्रिय, १ वचन योग, २ ज्ञान, १ दृष्टि एव ५ बढ़ाने से २२ हुये ।

(१) त्रि-इन्द्रिय में २३ बोल ऊपरोक्त २२ में १ घ्राणेन्द्रिय बढ़ानी ।

(१) चौरिन्द्रिय में २४ बोल-२३ में १ चक्षु इन्द्रिय बढ़ानी ।

(१) तिर्यंच पचेन्द्रिय में ३५ बोल १ गति, ५ इन्द्रिय,४ कषाय, ६ लेश्या, ३योग, २ उपयोग,६ज्ञान, ३ दर्शन, २ चारित्र, ३ वेद एवं ३५ बोल ।

(१) मनुष्य में ४७ बोल-५० में से ३ गति कम शेष सर्व पावे ।

॥ इति जीव परिणाम पद सम्पूर्ण ॥



❀ अजीव परिणाम ❀

(श्री पन्नवणाजी सूत्र, १३ वाँ पद)

अजीव=पुद्गल का स्वभाव भी परिणमन का है इसके परिणाम के १० भेद है १ बन्धन २ गति ३ सस्थान ४ भेद ५ वर्ण ६ गन्ध ७ रस ८ स्पर्श ९ अगुरुलघु और १० शब्द ।

१ बन्धन—स्निग्ध का बन्धन नहीं होवे, (जैसे घी से घी नहीं बधाय) वैसे ही रुच (लूखा) रुच का बन्धन नहीं होवे (जैसे राख से राख तथा रेती से रेती नहीं बन्धाय) परन्तु स्निग्ध और रुच दोनों मिलने से बन्ध होता है ये भी आधा आधा (सम प्रमाण में) होवे तो बन्ध नहीं होवे विषम (न्यूनाधिक) प्रमाण में होवे तो बन्ध होवे;जैसे परमाणु परमाणु से नहीं बन्धाय परमाणु दो प्रदेशी आदि स्कन्ध से बन्धाय ।

२ गति—पुद्गलों की गति दो प्रकार की है, (१) स्पर्श करते चले (जैसे पानी का रेला और (२) स्पर्श किये बिना चले (जैसे आकाश में पक्षी)

३ संस्थान-(आकार) कम से कम दो प्रदेशी जाव अनन्ता परमाणु के स्कन्धों का कोई न कोई सस्थान होता है । इस के पाच भेद O परिमंडल, O वट्ट, △ त्रिकोन ☐ चोरस । आयतन

४ भेद—पुद्गल पांच प्रकार से भेदे जाते हैं (भेदाते हैं) (१) खंडा भेद (लकड़ी पत्थर आदि के टुकड़े समान (२) परतर भेद (अबरख समान पुड़) (३) चूर्ण भेद (अनाज के आटे समान) (४) उकालिया भेद (कठोल की फालिया सूख कर फटे उस समान) (५) अणनूंडिया (तालाब की सूखी मिट्टी समान)

५ वर्ण—मूल रंग पांच हैं-काला नीला लाल, पीला, सफेद, इन रंगों के संयोग से अनेक जाति के रंग बन सकते हैं जैसे-बादामी, केशरी, तपखीरी, गुलाबी, खाखी आदि।

६ गंध—सुगन्ध और दुर्गन्ध (ये दो गन्ध वाले पुद्गल होते हैं।

७ रस—मूल रस पांच हैं-तीखा, कड़वा कषायला, खट्टा, मीठा और क्षार (नमक का रस) मिलाने से षट् रस कहलाते हैं।

८ स्पर्श—आठ प्रकार का है कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, रुक्ष, स्निग्ध।

९ अगुरु लघु—न तो हलका और न भारी जैसे परमाणु प्रदेश, मन भाषा, कार्मण शरीर आदि के पुद्गल।

१० शब्द—दो प्रकार के हैं-सुस्वर और दुःस्वर।

॥ इति अजीव परिणाम सम्पूर्ण ॥



बारह प्रकार का तप

(श्री उववाईजी सूत्र)

तप १२ प्रकार का है। ६ बाह्य तप (१ अनशन २ उनोदरी ३ वृत्तिसंक्षेप ४ रस परित्याग ५ काया क्लेश ६ प्रति संलिनता) और ६ आभ्यन्तर तप (१ प्रायश्चित २ विनय ३ वैयावच्च ४ स्वाध्याय ५ ध्यान ६ काउसग्ग।)

१ अनशन के २ भेद—१ इत्वरीक अल्प काल का तप २ अवकालिक-जावजीव का तप। इत्वरीक तप के अनेक भेद हैं—एक उपवास, दो उपवास यावत् वर्षी तप (१ वर्ष तक के उपवास)। वर्षी तप प्रथम तीर्थंकर के शासन में हो सक्ता है। २२ तीर्थंकर के शासन में ८ माह और चरम (अन्तिम) तीर्थंकर के समय में ६ माह उपवास करने का सामर्थ्य रहता है।

अवकालिक—(जावजीव का) अनशन व्रत के २ भेद १ एक भक्त प्रत्याख्यान और २ पादोपगमन प्रत्याख्यान। एक भक्त प्रत्या० के २ भेद—(१) व्याघातउपद्रव आने पर अमुक अवधि तक ४ आहार का पच्चखाण करे जैसे अर्जुनमाली के भय से सुदर्शन शेठ ने किया था। (२) निर्व्याघात—(उपद्रव रहित) के दो भेद (१) जावजीव तक ४ आहार का त्याग करे (२)

नित्य सेर, आधासेर तथा पाव सेर दूध या पानी की छूट रख कर जावजीव का तप करे।

पादोपगमन-(वृक्ष की कटी हुई डाल समान हलन चलन किये बिना पड़े रहे। इस प्रकार का संथारा करके स्थिर हो जाना) अनशन के दो भेद-१ व्याघात (अग्नि-सिंहादि का उपद्रव आने से) अनशन कर जैसे सुकोशल तथा अति सुकुमाल मुनियों ने किया। २ निर्व्याघात (उपद्रव रहित) जावजीव का पादोपगमन करे। इनको प्रति क्रमणादि करने की कुछ आवश्यकता नहीं एक प्रत्याख्यान अनशन वाला जरुर करे।

२ उनोदरी तप के दो भेद- द्रव्य उनोदरी और भाव उनोदरी द्रव्य उनोदरी के २ भेद(१)उपकरण उनोदरी (वस्त्र, पात्र और इष्ट वस्तु जरुरत से कम रक्खे-भोगवे) २ भात उनोदरी के अनेक प्रकार हैं। यथा अल्पाहारी ८ कवल (कव) आहार करे, अल्प अर्ध उनोदरी वाले १२ कवल ले, अर्ध उनोदरी करे तो १६ कवल ले, पौन उनोदरी करे तो २४ कवल ले, एक कवल उनोदरी करे तो ३१ कवल ले. ३२ कवल का पूरा आहार समझना इस से जितने कवल कम लेवे उतनी ही उनोदरी होवे उनोदरी से रसेन्द्रिय जीताय, काम जीताय, निरोगी होवे।

भाव उनोदरी के अनेक भेद-अल्प क्रोध,

मान, अल्प माया, अल्प लोभ, अल्प राग, अल्प द्वेष, अल्प सोवे, अल्प बोले आदि ।

३ वृत्ति सक्षेप (भिक्षाचर्या) के अनेक भेद— अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे जैसे द्रव्य से अमुक वस्तु ही लेना, अमुक नहीं लेना। क्षेत्र से अमुक घर, गाँव के स्थान से ही लेने का अभिग्रह । काल से अमुक समय, दिन को व महिने में ही लेने का अभिग्रह। भाव से अनेक प्रकार के अभिग्रह करे जैसे बर्तन में से निकालता देवे तो कल्पे, बर्तन में डालता देवे तो कल्पे, अन्य को देकर पीछे फिरता देवे तो कल्पे, अमुक वस्त्र आदि वाले तथा अमुक प्रकार से तथा अमुक भाव से देवे तो कल्पे इत्यादि अनेक प्रकार के अभिग्रह धारण करे ।

४ रस परित्याग तप के अनेक प्रकार है-विगय (दूध, दही, घी, गुड, शक्कर, तेल, शहद, मक्खन आदि) का त्याग करे । प्रणीत रस (रस झरता हुवा आहार) का त्याग करे, निवि करे, एकासन करे, आंय बिल करे, पुरानी वस्तु, बिगडा हुवा अन्न, लूखा पदार्थ आदि का आहार करे । इत्यादि रस वाले आहार को छोड़े ।

५ काया क्लेश तप के अनेक भेद है-एक ही स्थान पर स्थिर हो कर रहे, उक्कु-गोदुह-मयुरासन पद्मा-सन आदि ८४ प्रकार का कोई भी आसन कर के बैठे ।

साधु की १२ पडिमा पालना, आतापना लेना वस्त्र रहित रहना, शीत-उष्णता (तड़का) सहन करना परिषह सहना। थूकना नहीं, कुल्ला करना नहीं, दान्त धोने नहीं, शरीर की सार समाल करना नहीं। सुन्दर वस्त्र पहिरना नहीं, कठोर वचन गाली, मार प्रहार सहना, लोच करना नंगे पैर चलना आदि।

६ प्रति संलिनता तप के चार भेद—१ इन्द्रिय संलिनता २ कषाय संलिनता, ३ योग संलि० ४ विविध शयनासन संलि० (१) इन्द्रिय संलिनता के ५ भेद-(पांचों इन्द्रियों को अपने २ विषय में राग द्वेष करते रोकना) (२) कषाय संलि० के चार भेद-१ क्रोध घटा कर क्षमा करना। २ मान घटा कर विनीत बनना ३ माया को घटा कर सरलता धारण करना ४ लोभ को घटा कर संतोष धारण करना। (३) योग प्रति संलिनता के तीन भेद-मन, वचन, काया को बुरे कामों से रोक कर सन्मार्ग में प्रवर्तावना। (४) विविध शयासन सेवन प्रति संलि० के अनेक भेद हैं-उद्यान चैत्य, देवालय, दुकान, वखार, श्मशान, उपाश्रय आदि स्थानों पर रह कर पाट, पाटले, बाजोट, पाटिये, बिछाने, वस्त्र-पात्रादि फासुक स्थान अंगीकार करके विचरे।

आभ्यन्तर तप का अधिकार

१ प्रायश्चित के १० भेद—१ गुर्वादि

पाप प्रकाशे २ गुरु के बताये हुवे दोप और पुनः ये दोप नहीं लगाने की प्रतिज्ञा करे ३ प्रायश्चित प्रतिक्रमण करे ४ दोपित वस्तु का त्याग करे ५ दश, वीश, तीश, चालीश लोगस्स का काउसग्ग करे ६ एकाशन, आयबील यावत् छमासी तप करावे, (७) ६ छमास तक की दीक्षा घट वे ८ दीक्षा घटा कर सब से छोटा बनावे ६ समुदाय से बाहर रख कर मस्तक पर श्वेत कपड़ा (पाटा) बन्धवा कर साधुजी के साथ दिया हुआ तप करे १० साधु वेप उतरवा कर गृहस्थ वेप में छमाह तक साथ फेर कर पुनः दीक्षा देवे ।

२ विनय के भेद्–मति ज्ञानी, श्रुत ज्ञानी अवधि ज्ञानी, मनः पर्यव ज्ञानी, केवल ज्ञानी आदि की अशातना करे नहीं, इनका बहुमान करे, इनका गुण कीर्तन कर के लाभ लेना । यह ज्ञान विनय जानना ।

चारित्र विनय के ५ भेद्–पाच प्रकार के चारित्र वालों का विनय करना ।

योग विनय के ६ भेद्–मन, वचन, काया ये तीनों प्रशस्त और अप्रशस्त एवं ६ भेद है । अप्रशस्त काय विनय के ७ प्रकार—अयत्ना से चले, बोले, खड़ा रहे, बैठे, सोवे, इन्द्रिय स्वतन्त्र रक्खे, तथा अंगोपाग का दुरुपयोग करे ये सातों अयत्ना से करे तो अप्रशस्त विनय और यत्ना पूर्वक प्रवर्तावे सो प्रशस्त विनय ।

व्यवहार विनय के ७ भेद—१ गुर्वादि के विचार अनुसार प्रवर्ते, २ गुरु आदि की आज्ञानुसार वर्ते ३ भात पानी आदि लाकर देवे ४ उपकार याद कर के कृतज्ञता पूर्वक सेवा करे ५ गुर्वादि की चिन्ता—दुख जान कर दूर करने का प्रयत्न करे ६ देश काल अनुसार उचित प्रवृत्ति करे ७ निंद्य (किसी को खराब लगे ऐसी) प्रवृत्ति न करे

३ वैयावच्च (सेवा) तप के १० भेद—१आचार्य की २ उपाध्याय की ३ नव दीक्षित की ४ रोगी की ५ तपस्वी की ६ स्थविर की ७ स्वधर्मी की ८ कुल गुरू की ६ गणावच्छेदक की १० चार तीर्थ की वैयावच्च (सेवा—भक्ति) करे ।

४ स्वाध्याय तप के ५ भेद—१ सूत्रादि की वाचना लेवे व देवे २ प्रश्नादि पूछकर निर्णय करे ३ पढे हुवे ज्ञान को हमेशा फेरता रहे ४ सूत्र-अर्थ का चिंतवन करता रहे ५ परिषदा में चार प्रकार की कथा कहे ।

५ ध्यान तप के ४ भेद—आर्त ध्यान, रौद्र ध्यान, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान ।

आर्त्त ध्यान के चार भेद—१ अमनोज्ञ (अप्रिय) वस्तु का वियोग चिंतवे २ मनोज्ञ (प्रिय) वस्तु का संयोग चिंतवे ३ रोगादि से घबरावे ४ विषय भोगों में आसक्त बना रहे उसकी गृद्धि से दुख होवे। चार लक्षण— १ आक्रंद करे २ शोक करे ३ रुदन करे ४ विलाप करे।

रौद्र ध्यान के चार भेद–हिंसा में, असत्य में, चोरी में, और भोगोपभोग में आनन्द माने। चार लक्षण १ जीव हिंसा का २ असत्य का ३ चोरी का थोडा बहुत दोष लगावे ४ मृत्यु–शय्या पर भी पाप का पश्चाताप नहीं करे।

धर्म ध्यान के भेद–चार पाये–१ जिनाज्ञा का विचार २ रागद्वेष उत्पत्ति के कारणों का विचार ३ कर्म विपाक का विचार ४ लोक संस्थान का विचार।

चार रुचि–१ तीर्थंकर की आज्ञा आराधन करने की रुचि २ शास्त्र श्रवण की रुचि ३ तत्त्वार्थ श्रद्धा की रुचि ४ सूत्र सिद्धान्त पढ़ने की रुचि।

चार अवलम्बन–१ सूत्र सिद्धान्त की वाचना लेना व देना २ प्रश्नादि पूछना ३ पढ़े हुवे ज्ञान को फेरना ४ धर्म कथा करना चार अनुप्रेक्षा–१ पुद्गल को अनित्य नाशवन्त जाने २ संसार में कोई किसी को शरण देने वाला नहीं ऐसा चिंतवे ३ मैं अकेला हूं ऐसा सोचे ४ संसार स्वरुप विचारे एव धर्म ध्यान के १६ भेद हुवे।

शुक्ल ध्यान के १६ भेद–१ पदार्थों में द्रव्य गुण पर्याय का विविध प्रकार से विचार करे २ एक पुद्गल का उन्मादादि विचार बदले नहीं ३ सूक्ष्म ईर्यावहि क्रिया लागे परन्तु अकषायी होने से बन्ध न पड़े ४ सर्व क्रिया

का छेद करके अलेगी बन । चार लक्षण-१ जीव को शिव रुप-शरीर से भिन्न समझे २ सर्व मग को त्यागे ३ चपलता पूर्वक उपसर्ग सहे ४ मोह रहित वर्ते। चार अवलम्बन-१ पूर्ण क्षमा २ पूर्ण निर्लोभता ३ पूर्ण सरलता ४पूर्ण निरभिमानता चार अनुप्रेक्षा-१ प्राणातिपात आदि पाप के कारण सोचे २ पुद्गल की अशुभता चितवे ३ अनन्त पुद्गल परावर्तन का चिंतन करे ४ द्रव्य के बदलने वाले परिणाम चितवे।

६ कायोत्सर्ग तप के दो भेद १ द्रव्य कायोत्सर्ग २ भाव कायोत्सर्ग। द्रव्य कायोत्सर्ग के चार भेद १ शरीर के ममत्व का त्याग करे २-सम्प्रदाय के ममत्व का त्यागकरे ३ वस्त्र पात्रादि उपकरण का ममत्व त्यागे ४ आहार पानी आदि पदार्थों का ममत्व त्यागे। भाव कायोत्सर्गके ३ भेद १ कषाय कायोत्सर्ग (४ कषाय का त्याग करे) २ संसार कायोत्सर्ग (४ गति में जाने के कारण बन्ध करना) ३ कर्म कायोत्सर्ग (८ कर्म बन्ध के कारण जान कर त्याग करे)

इस प्रकार कुल बारह प्रकार के तप के सर्व ३५४ भेद उववाई सूत्र से जानना।

॥ इति बारह तप का विस्तार ॥

इति संग्रह समाप्त

वीर भगवान् की पवित्र वाणी का
अपूर्व संग्रह

निर्ग्रंथ-प्रवचन

संग्रह कर्ता प्रखर पंडित मुनिश्री चौथमलजी महाराज

यह ग्रंथ भगवान महावीर के उपदेश रूप समुद्र से निकाले हुए अपूर्व धर्म रत्नों का खजाना है । ग्रंथकारने अपने जीवन के अनुभव और परिश्रम का पूर्ण उपयोग करके इस संग्रह को तैयार किया है ।

इसमें गृहस्थ धर्म, मुनि धर्म, आत्म शुद्धि, ब्रह्मचर्य, लेश्या, षट् द्रव्य, नर्क स्वर्ग आदि अनेक विषयों पर जैन सूत्रों में से खोज खोज कर गाथाएं संग्रह की गई हैं । पहिले मूल गाथा और उसका अर्थ और फिर उसका सरल भावार्थ देकर प्रत्येक विषयको स्पष्ट रूपमे समझाया गया है । अन्त में जिन सूत्रों से गाथाएं संग्रह की गई हैं उनका नाम और अध्याय न० देकर सोने में सुगन्ध ही कर दिया है । इस एक ग्रंथ द्वारा ही अनेक सूत्रों का सार सहज में प्राप्त होजायगा ।

२५० पृष्ठ और सुनहरी जिल्दमे सुसज्जित इस ग्रंथ का मूल्य केवल ॥) मात्र । शीघ्र मंगाइए अन्यथा दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करना पड़ेगी ।

पता–श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम